मयूर-प्रकाशन

झाँसी की रानी—लक्ष्मीबाई

(ऐतिहासिक उपन्यास)

★
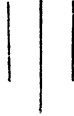
"She was the best and the bravest of them all"

-Sir Hugh Rose.

★
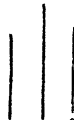
श्रीवृन्दावनलाल वर्मा, एडवोकेट

प्रकाशक
सत्यदेव वर्मा, बी. ए. एल-एल. बी.
'मयूर-प्रकाशन'
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

प्रथमावृत्ति—१९४६
द्वितीयावृत्ति—१९४८

मूल्य—छै रुपया

मुद्रक—
द्वारिकाप्रसाद मिश्र 'द्वारिकेश'
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

परिचय

दीवान आनन्दराय मेरे परदादा थे। रानी लक्ष्मीबाई की ओर से लड़ते लड़ते सन् १८५८ में मऊ की लड़ाई में मारे गये थे। जब मैं ८, ९ वर्ष का था तब मेरी परदादी का देहान्त हुआ। परदादी से रानी के विषय में बहुत सी कहानियां सुना करता था। उन्होंने रानी को देखा था।

उन कहानियों की धरोहर मेरी दादी के पास रही। वह समय समय पर उनसे मुझको मिलती रही। जब दादी का देहान्त हुआ, मुझको वकालत आरम्भ किये छः वर्ष के लगभग हो चुके थे।

वह धरोहर अद्भुत होते हुये भी अस्पष्ट थी और उसकी रूपरेखा धुँधली, तथा सत्य के आधार पर कम, और भक्ति के ऊपर अधिक। इधर इतिहास के अध्ययन और तथ्य के अनुशीलन ने उस धरोहर के मूल्य को कम कर दिया। सामने केवल पारसनीस की पुस्तक 'रानी लक्ष्मीबाई का जीवन चरित' थी। वह इतिहास का कंकाल मात्र न थी, परन्तु दादी-परदादी की बतलाई हुई परम्परा के विरुद्ध थी। पारसनीस के अन्वेषण अत्यन्त मूल्यवान होते हुये भी उनका विचार कि रानी झांसी का प्रबन्ध अंग्रेज़ों की ओर से 'ग़दर' के ज़माने में करती रहीं, परदादी और दादी की बतलाई हुई परम्पराओं के सामने मन में खपता नहीं था। तो भी मैं सोचता था, शायद ये परम्परायें जनता के इच्छा-संकल्पों (wishful thinking) का फल हैं, इसलिये छुटपन से जिस मूर्ति की मन में निष्ठापूर्वक पूजा करता चला आ रहा था, उसके प्रति कुछ नास्तिकता उत्पन्न हो गई।

सुनता रहता था कि रानी स्वराज के लिए लड़ी थीं, पारसनीस के ग्रंथ में पढ़ा कि उनका शौर्य विवशता की परिस्थिति में उत्पन्न हुआ था। मैं जब बोर्डिङ्ग हाउस के जीवन में था, एक रात स्वप्न देखा कि हौकी-ग्राउण्ड पर युद्ध हो रहा है और मैं रानी की तरफ़ से, 'स्वराज' के लिए लड़ता हुआ घायल हो गया हूं, तब जागने पर बड़ा अचम्भा हुआ, क्यों कि खेल में उस दिन हौकी का डण्डा भी नहीं खाया था।

यह स्वप्न भी मुझको प्रायः ठिक किया करता था ।

सन् १९३२ तक यह उथल-पुथल अर्ध-सुप्त रूप में मन के किसी कोने में पड़ी रही ।

एक दिन एक साहब ने कहा, 'जजी कचहरी की एक अलमारी में चालीस-पचास चिट्ठियां रक्खी हुई हैं जो १८५८ में किसी अंग्रेज़ फ़ौजी अफ़सर ने लै० गवर्नर के पास झांसी को अधिकृत कर लेने के बाद रोज़ रोज़ भेजी थीं ।'

मैंने उन चिट्ठियों की नक़ल करवाई । उनमें कोई खास बात तो नहीं मिली, परन्तु एक विश्वास जगह करने लगा--रानी का शौर्य विवशता की परिस्थिति में उत्पन्न नहीं हुआ था ।

कचहरी में नवाब बन्ने नाम के एक अर्ज़ीनवीस काम करते थे । यह मुझको प्रायः रोज़ ही कचहरी में मिलते थे । वह राजा रघुनाथराव के लड़के नवाब अलीबहादुर की लड़की के लड़के निकले ! मैंने सोचा शायद इनके पास रानी सम्बन्धी कोई सामग्री हो । पूछने पर उन्होंने बतलाया कि नवाब अलीबहादुर का रोज़नामचा इत्यादि घर पर रक्खे हैं । मैं उत्सुकता के मारे परेशान हो गया । रोज़नामचा देखने को मिला । उसे मैंने पढ़वाया । नवाब अलीबहादुर कैसे थे और उनका नौकर पीरअली किस तरह का आदमी था, यह तो उनके रोज़नामचे से प्रकट होता ही था, परन्तु रानी लक्ष्मीबाई की विलक्षणता और तत्कालीन समाज की प्रगति और रहन-सहन का भी उससे पता चला । रोज़नामचा दीमक के हमलों से जर्जर हो चुका था, और अब तो, उसके शुरू का भाग नष्ट ही हो गया है, परन्तु मैंने नोट ले लिये ।

१८५८ में नवाब अलीबहादुर ने अपनी राजभक्ति के प्रमाण में कुछ बयान दिये थे । उन बयानों में पीरअली का भी ज़िकिर किया था । वे बयान भी मुझको मिल गये ।

इससे बढ़कर, मुझको एक व्यक्ति मिले—मुं० तुराबअली दारोग़ा । ये, ८, १० वर्ष हुये तब परलोकगामी हुये ११५ वर्ष की आयु में ।

'ग़दर' के ज़माने में तुराबअली साहब अंग्रेज़ों की ओर से पुलिस के थानेदार थे। इनसे मुझको रानी के विषय में बहुत बातें मालूम हुई—दादी परदादी की परम्पराओं की पोषक! और अंग्रेज़ों के दारोग़ा से!

उन्हीं दिनों झांसी में एक बुड्ढा और मिला। नाम अज़ीमुल्ला। यह रानी के विषय में तुराबअली की अपेक्षा कहीं अधिक बातें जानता था। इसने रानी को देखा था, परन्तु वह उस समय छोटा था। तुराबअली ने तो रानी को सैकड़ों ही बार देखा था।

इसके उपरान्त मैंने झांसी के बुड्ढे बुढ़ियों को परेशान करना शुरू कर दिया। परन्तु वे जिस उत्साह और भक्ति के साथ रानी की बातें बतलाते थे उससे मैं यह सोचता हूं कि वे परेशान न हुए होंगे।

सवाल था—रानी स्वराजके लिए लड़ीं, या अंग्रेज़ों की ओर से झांसी का शासन करते करते उनको जनरल रोज़ से विवश होकर लड़ना पड़ा?

रानी ने बानपूर के राजा मर्दनसिंह को जो चिट्ठी युद्ध में सहायता करने के लिए लिखी थी उसमें 'स्वराज' का शब्द आया है। यह चिट्ठी इस प्रश्न का सदा के लिए स्पष्ट उत्तर देती है। खेद है कि मैं इस संस्करण में भी उस चिट्ठी का चित्र न दे सका—बानपूर के राजा के वंशज ने वह चिट्ठी या उसका फोटो मेरे हवाले नहीं किया, परन्तु अगले संस्करण में दे सकने की मुझको आशा है।

राजा गङ्गाधरराव का हस्ताक्षर मुझको राजा साहब कटेरा ने अपनी एक सनद दिखला कर सुलभ कर दिया। कृतज्ञ हूं। सनद की नक़ल भी मेरे पास है। उस समय, ९५ वर्ष पहले लगभग आज ही की तरह की हिन्दी लिखी जाती थी, इस सनद से पता लगता है।

मराठी में विष्णुराव गोडशे का 'माझा प्रवास' एक छोटा सा प्रबन्ध है। गोडशे रानी के साथ क़िले में था, जब रोज़ के मुकाबिले में रानी लड़ीं। मैंने अपनी पुस्तक में "माझा प्रवास" का भी उपयोग किया है।

मोतीबाई ऐतिहासिक है। मुझको उसका पता अकस्मात ही चला। ओरछे दरवाज़े एक मसजिद है। ज़िमीन का झगड़ा क़चहरी में चला।

मैं मसजिद वालों की तरफ़ से वकील था। ज़िमीन का खेवट झांसी में न था। ग्वालियर में था। वहां से नक़ल मगवाई। उसमें ज़िमीन की पूर्व स्वामिनी निकली मोतीबाई नाटकशाला वाली। गङ्गाधरराव को नाटक खेलने और खिलवाने का बहुत शौक़ था। स्त्रियों का अभिनय स्त्रियां ही करती थीं। इनमें मोतीबाई भी थी। मोतीबाई का पता लगाते लगाते जूही, दुर्गा और मुन्दर भी निगाह में आए। इन सबके सम्बन्ध की घटनाओं का सार सच्चा है।

सन् १९३२ से मैं इन अनुसन्धानों में लगा।

एक दिन रानी लक्ष्मीबाई के भतीजे मुझको झांसी में घर पर ही मिले, वे रानी के ऊपर हिन्दी में कुछ लिखना चाहते थे। रानी क्यों लड़ीं, इस समस्या पर हम दोनों एक मत थे।

फिर एक दिन डाक्टर सावरकर के एक सेक्रेटरी मुझको झांसी में ही मिले। वे मराठी में 'सत्तावनी' लिख रहे थे। रानी के सम्बन्ध की जो सामग्री उनके लिए आवश्यक थी, मैंने दी। मैं सोचता था कि रानी के विषय में बहुत लोगों ने कुछ न कुछ लिखा है और लिख रहे हैं, मैं क्यों कुछ प्रयत्न करूँ। कुछ दिनों बाद मेरी यह धारणा बदल गई।

कलक्टरी में कुछ सामग्री मिली। १८५८ में लोगों के बयान लिये गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ।—रानी 'स्वराज' के लिये लड़ी थीं।

मेरा वह स्वप्न—जिसकी भूमिका हौकी ग्राउण्ड पर थी, फिर ताज़ा हुआ। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूँगा, ऐसा जो इतिहास के रग–रेशे से सम्मत हो और उसके संदर्भ में हो। इतिहास के कंकाल में मांस और रक्त का संचार करने के लिए मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस साधन को मैंने जो कुछ रूप दे पाया है वह पाठकों के सामने है।

यदि आनन्दराय ने रानी के लिए गोली खाई और मेरी क़लम ने थोड़ी सी स्याही ही—तो इस अन्तर को पाठक अवश्य ध्यान में रखने की कृपा करें।

वृन्दावनलाल वर्मा

कृतज्ञता—ज्ञापन

कठिन परिस्थितयों में इस पुस्तक की छपाई हुई। टाइप ढालने वालों ने बेहद परेशान किया। फिर काग़ज़ वालों का नम्बर आया। इन सब हैरानियों से पार पायी तो इस छोटे से प्रेस की दिक्कतों का सामना करना पड़ा।

मैं अपने कम्पोज़िटरों, प्रेस मैन, और अन्य कर्मचारियों को किन शब्दों में धन्यवाद दूं! मुझे उनकी लगन को देखकर विस्मय होता था। पर वे अपनी रानी के सम्बन्ध की पुस्तक तैयार कर रहे थे। कभी कभी तो रो तक देते थे।

मेरे पुत्र चि: सत्यदेव ने जो अथक परिश्रम, अपने थोड़े से साधनों के प्रश्रय से, किया है उसके लिये क्या कहूं? नया रिवाज़ धन्यवाद का है, परन्तु हम दोनों ज़रा पुरानी संस्कृति में सने हैं, इसलिये उसकी पीठ पर केवल हाथ फेरता हूं।

श्री कालीचरण वर्मा झांसी के होनहार चित्रकार हैं। रानी के युद्ध का उन्होंने जो चित्र दिया है उस पर बहुत परिश्रम किया है। मैं कृतज्ञ हूं। हम दोनों झांसी के हैं और वह मुझसे आयु में छोटे हैं, इसलिए और क्या कहूं।

झांसी, }
२८ अक्टूबर, १९४६ } वृन्दावनलाल वर्मा

दूसरा संस्करण

टाइप और मशीनों सम्बन्धी कठिनाइयां अब वे नहीं रहीं और प्रूफ की ग़लतियों का भी अब कारण नहीं रहा, परन्तु पहले संस्करण वाली मेरी कृतज्ञता अक्षुण्ण है।

झांसी }
२८ अप्रिल १९४८ } वृन्दावनलाल वर्मा

प्रस्तावना

[१]

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रतिनिधि ने झांसी के शासक रामचन्द्रराव के पास ख़रीता भेजा, 'नवाब गवर्नर जनरल साहब, लार्ड विलियम बेण्टिक ने आपको आज से राजा की उपाधि दी है। कम्पनी सरकार की मित्रता के प्रतीक रूप में यूनियन–जैक झण्डा आपको भेंट किया जाता है। इसके गौरव की रक्षा कीजिएगा।'

झांसी के क़िले वाले महल के मैदान में, धूमधाम और तड़क–भड़क के साथ जो दरबार सन् १८३२ में हुआ था, उसमें उपरोक्त घोषणा सुनाई गई थी। रामचन्द्रराव ने उपाधि और पताका सहर्ष ग्रहण कीं। झांसी के शासक के साथ कम्पनी की सबसे पहली सन्धि सन् १८०४ में हुई थी। उस समय पन्तप्रधान (पेशवा) बाजीराव द्वितीय की मातहती में शिवराव भाऊ झांसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। यह सन्धि परस्पर मैत्री और सहायता के आधार पर की गई थी! पेशवाई निर्बल हो चुकी थी; सूबेदार सशक्त थे। बुन्देलखण्ड को अधिकृत करने के लिए अंग्रेज़ों को झांसी के सूबेदार की मित्रता अभीष्ट थी।

इस सन्धि का बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों पर प्रभाव पड़ा।

सन् १८१७ के जून में पन्तप्रधान बाजीराव से अंग्रेज़ों की अन्तिम सन्धि हुई। इस सन्धि ने पेशवा के सम्पूर्ण अधिकार, टोंस और खोखले, जो उसको बुन्देलखण्ड में प्राप्त थे, ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिए।

बाजीराव को इस सन्धि द्वारा आठ लाख रुपये वार्षिक पेन्शिन, बिठूर खास की जागीर और पूना त्याग कर बिठूर का प्रवास मिला।

उसी साल नवम्बर के महीने में शिवराव भाऊ के पौत्र रामचन्द्रराव के साथ, जो उस समय नाबालिग़ था, दूसरी सन्धि हुई, जिसमें पेशवा का स्थानापन्न कम्पनी सरकार को मनवाया गया। एक शर्त उस सन्धि में यह भी थी कि झांसी का राज्य रामचन्द्रराव के कुटुम्ब में 'दवाम' के लिए रहेगा, चाहे वारिस औरस सन्तान हो, चाहे सगोत्रज हो अथवा गोद लिए हुए हो।

सन् १८३२ में रामचन्द्रराव और उसके वारिसों को राजा की उपाधि दी गई।

उस दरबार में शिवराव भाऊ के लड़के रघुनाथराव और गङ्गाधरराव भी थे। शिवराव भाऊ का जेठा लड़का कृष्णराव था। उसका देहान्त हो चुका था। रामचन्द्रराव कृष्णराव का पुत्र था। शिवराव भाऊ के जेठे लड़के की सन्तान होने के कारण झांसी की गद्दी उसको मिली थी।

राजा की उपाधि मिलने के उपलक्ष में जो दरबार हुआ था, उसमें राज्य के छोटे-बड़े सब जागीरदार पुरस्कृत किए गए। छोटे जागीरदारों में मऊ का एक युवक आनन्दराय कायस्थ था। उसके घराने में ताम्रपत्रों की सनदों द्वारा जो माफ़ी लगी थी वह पुष्ट की गई। कुछ बढ़ा भी दी गई। गायक, वादक और नर्तकियों पर भी पुरस्कार बरसाए गए।

रामचन्द्रराव की नाबालिग़ी के ज़माने में शासनसूत्र उसकी माँ सखूबाई के हाथ में था। जब वह वयस्क होगया तब भी सखूबाई अधिकार-लोलुपता का त्याग न कर सकी।

रामचन्द्रराव ने राजा की स्थायी उपाधि पाते ही शासन सूत्र, पूरे तौर पर, अपने हाथ में ले लिया और दो–एक दिन में ही खज़ाने को लगभग रीता कर दिया। सखूबाई को खजाने का खाली होना इतना नहीं अखरा जितना अपने हाथ से राज्य की बागडोर का चला जाना।

सखूबाई ज़रा ढली आयु की प्रचण्डवेगमयी राजमाता थी। माथे और चेहरे की शिकनें राजदण्ड के निरन्तर कठोर उपयोग और क्रोध के आवेशों के व्यवहार की कथा कहती थीं। उसकी कठोरता विख्यात थी।

सखूबाई से रामचन्द्रराव का राजा होना नहीं सहा गया। उसने रामचन्द्रराव को मरवा डालने का षड्यन्त्र रचा।

झांसी के लक्ष्मी–फाटक के बाहर लक्ष्मी–तालाब के दक्षिण–पश्चिमी सिरे पर महालक्ष्मी का मन्दिर है। इस मन्दिर के चौपड़े में सखूबाई ने अपने लड़के का वध करने के लिए भाले गड़वाए। रामचन्द्रराव को तैरने का बहुत शौक़ था—विशेषकर रात में। सखूबाई को विश्वास था कि उस रात रामचन्द्रराव चौपड़े में तैरने के लिए सटार लगायगा—और समाप्त हो जायगा।

परन्तु लालू कोंदेलकर नाम के एक मराठा युवक और मऊ के उपरोक्त आनन्दराय की सहायता के कारण रामचन्द्रराव बच गया। आनन्दराय तो अपने घर मऊ निकल भागा, पर कोंदेलकर को दो दिन बाद सखूबाई ने मरवा डाला। लालू कोंदेलकर के तीन दरिद्र नातेदार थे। वे झांसी से भागे। लालू के देहान्त के कुछ समय उपरान्त इन तीनों के एक एक लड़की हुई। इन बालिकाओं के नाम थे काशी, सुन्दर और मुन्दर। तीनों बालिकाएँ सुन्दर थीं। परन्तु इनका लालन–पालन बड़ी दरिद्रता में हुआ। सखूबाई का क्रोध कोंदेलकर ही तक सीमित न था, उसके नातेदार भी आतङ्कग्रस्त थे और राज्याश्रय से वञ्चित।

रामचन्द्रराव अपनी माँ के साथ, इतना सब होने पर भी, कठोर बर्ताव नहीं करना चाहता था। परन्तु उसके दोनों काका—रघुनाथराव

और गङ्गाधरराव—तथा दीवान, सखूबाई को स्वतंत्र नहीं छोड़ना चाहते थे। वह क़ैद करदी गई। लालू कोदेलकर के नाटतौर झांसी बुला लिए गए और मऊ के आनन्दराय को संरक्षण मिल गया।

रामचन्द्रराव सन् १८३५ में निस्सन्तान मरा। उसकी विधवा रानी ने कृष्णराव नामक एक बालक को गोद लिया। कम्पनी सरकार ने इस गोद को नहीं माना। रघुनाथराव को उत्तराधिकारी क़रार देकर, गद्दी दी। गङ्गाधरराव रघुनाथराव से छोटे थे।

जब शिवराव भाऊ के जेठे भाई रघुनाथ हरि (१७५९-१७९६) झांसी के सूबेदार होकर आए तब जो लगान किसानों पर बांधा गया, ज्यादा था। सबका-सब कभी वसूल नहीं होता था। पूरा बीस लाख रुपया साल सखूबाई ने ही रामचन्द्रराव की नाबालिगी के समय में वसूल करने का प्रयास किया। गांवकी पञ्चायतें हाहाकार कर उठीं। परन्तु उस सामन्तयुग में बेचारे किसान लुटेरों और बटमारों के सन्ताप के मारे कुछ कर ही नहीं सकते थे।

रामचन्द्रराव के राज्यकाल में लगान उत्तरोत्तर कम वसूल किया जाने लगा। खज़ाने में जो कुछ रुपया था उसका एक अंश सखूबाई ने दाब लिया और अधिकांश रामचन्द्रराव ने खर्च कर डाला। बाकी रघुनाथराव के शिथिल शासन में साफ़ होगया।

रघुनाथराव रङ्गीली प्रकृति के रईस थे। उनकी वेश्याओं में से लच्छो नाम की एक मुसलमान वेश्या थी। इससे दो लड़के और लड़कियां हुई। बड़े लड़के का नाम नवाब अलीबहादुर था। जब रघुनाथराव सन १८३५ में झांसी के राजा हुए अलीबहादुर की आयु २२ वर्ष की थी। लच्छो की क़बर आंतिया ताल के बँध के नीचे मेंहदी-बाग़ में है।* एक समय था जब लच्छो नईबस्ती के महल में रहती थी

* झांसी के सदर अस्पताल के अहाते में जिस गजरा वेश्या की क़बर है उसको गङ्गाधररावके पिता शिवरावभाऊ रक्खे थे न कि रघुनाथ-राव या गङ्गाधरराव, जैसा कि अनेक इतिहास लेखकों का भ्रम है।

और मेहदीबाग़ के फूल उस पर न्योछावर होते थे---अब उसकी टूटी क़बर पर घास और जङ्गली पौधे खड़े हुए हैं। रघुनाथराव और लच्छो के महल खण्डहल हो गए हैं और उनमें झांसो म्युनिस्पैलटी की कूड़ा-गाड़ियां रक्खी जाती है, बैल बांधे जाते हैं और उनके लिए घास-चारा भरा जाता है।

सखूबाई के शासनकाल में रघुनाथराव और गङ्गाधरराव—दोनों भाइयों—की मनोवृत्तिया आमोद-प्रमोद की ओर झुकीं, बढ़ी और उसी में तल्लीन हुई। लड़ाइयां लड़नी नहीं थीं कि जिस कारण प्रजा को—खासकर किसानों को—सन्तुष्ट रक्खा जावे।

कुराज्य था, कुशासन था। परन्तु गावटी पञ्चायतें बनी हुई थी। पूरा लगान वसूल नहीं होता था। पञ्चायत की रक्षा प्रत्येक ग्रामीण को सहज ही प्राप्य थी। पञ्चायतों के अधिकार ज़ब्त होकर अदालतों के हवाले नहीं हुए थे। ज़रा ज़रा-सी सड़ी-गली बात के लिए राज्य के पदाधिकारियों के घरों पर हाज़िरी नहीं देनी पड़ती थी। बड़े मामलों के लिए बँधे हुए हक़-दस्तूरों—रिश्वतों—के छेदों में होकर जनता अपने नित्य के जीवन में आराम और निभाव को खींचती-घसीटती चली जाती थी।

शासन-शक्ति का केन्द्रीकरण नहीं हुआ था। लोगों को अपने औसान और पराक्रम का सहारा पकड़ने के बहुधा अवसर मिलते रहते थे। समाज में सन्तुलन यथेष्ट नहीं था—असमानता, विषमता स्पष्ट थी। परन्तु आर्थिक शृङ्खलाओं की कड़ियां मज़बूती के साथ जुड़ी हुई थीं। धन एक जगह इकट्ठा हो होकर बँट-बँट जाता था। एक-एक आश्रय पर शत-शत आश्रित टँगे हुए, लिप्त और संलग्न थे। आश्रय और आश्रित सब क्रियाशील। जहां आश्रय श्रमहीन, प्रयत्नरहित और दुश्शील हुआ कि गया और उसका स्थान दूसरे प्रबल सबल स्थानापन्न ने ग्रहण किया। खोखला गौरव अपनी कहानी बहुत अल्प समय तक ही कह सकता था।

उस समय के इस प्रकार के वह आश्रय--रघुनाथराव---अपनी निष्क्रियता में मुश्किल से दो वर्ष टिक पाए थे कि झांसी के अड़ौस-पड़ौस तक में लूटमार, भम्भड़ और दङ्गा-फ़साद होने लगा। झांसी राज्य पर अनेक साहूकारों का बहुत क़र्ज़ा चढ़ गया। इसलिए सन् १८३७ में झांसी राज्य कोर्ट कर लिया गया।

रघुनाथराव ने राज्य के कोर्ट होने के पहले ही झांसी का बचा-खुचा खज़ाना आड़-भर्गातयों में वितरित कर दिया और अपने पुत्र नवाब अलीबहादुर को करेरा, पिछोर तथा डामरोन परगनों के ८५ गांव जागीर में लगा दिए, जिसकी आय साढ़े छहत्तर हजार रुपये वार्षिक समझी जाती थी।

रघुनाथराव ने एक काम और किया---सक्खूबाई को क़ैद से मुक्त कर दिया।

सन् १८३८ में रघुनाथराव का देहान्त होगया।

महाराजा गङ्गाधरराव

[२]

रघुनाथराव के उपरान्त राज्य के लिए चार मुख्य दावेदार खड़े हुए—गङ्गाधरराव (भाई), कृष्णराव (रामचन्द्रराव का कथित दत्तक पुत्र), अलीबहादुर और रघुनाथराव की विधवा रानी।

कृष्णराव की पीठ पर सखूबाई थी। बन्दीगृह के जीवन ने सखूबाई का दमन नहीं कर पाया था, प्रत्युत वह अधिक सतर्क, सतेज और सनकीली हो गई थी।

रघुनाथराव की अन्त्येष्टि क्रियाएँ भी साङ्गोपाङ्ग न हो पाई थीं कि सखूबाई ने किले पर अधिकार कर लिया, खज़ाने पर अपने संत्री बिठला दिए, तोपों पर अपने तोपचियों को और सिलहखाने पर अपने सिलेदारों को नियुक्त कर दिया।

गङ्गाधरराव शहर वाले महल में थे। उनको ऐसा लगता था जैसे अपने ही घर में क़ैद हों।

सखूबाई को क़ैद करने का निर्णय जिन लोगों ने दिया था, उनमें गङ्गाधरराव भी थे। सखूबाई की प्रतिहिंसा के भय से और साधनहीन होने के कारण गङ्गाधरराव झांसी से भागे और अंग्रेज़ों के पास सीधे कानपूर पहुँचे। उस समय कानपूर अंग्रेज़ों की बढ़ी हुई शक्ति का काफ़ी बड़ा अड्डा था।

अलीबहादुर ने करेरा के दुर्ग में शरण ली और वह वहां से सैन्य-संग्रह करने लगे। उस समय मध्यभारत के लिए गवर्नर-जनरल का एजेण्ट साइमन फ्रेज़र था—सन् १८५७ के विप्लवकाल में यह आगरे का लैफ्टिनेण्ट गवर्नर होगया था।

इस गड़बड़ की खबर पाकर फ्रेज़र झांसी आया। कम्पनी सरकार के प्रबल सङ्गठन और बल के आतङ्क ने उसके कर्मचारियों को उद्धत बना दिया था। वह दो-एक चोबदारों को लेकर सखूबाई के पास क़िले में पहुँचा और उसने सखू को धमकाया।

सखू ने कोई परवाह नहीं की।

मधुमास का महीना था। होली हो चुकी थी। जनता अपने रङ्ग में मग्न थी। सखूबाई के इशारे पर फ्रेज़र की किले से बाहर निकलने ही बहुत दुर्गति हुई।

फ्रेज़र सेना और तोपखाना लेकर लौटा। सखूबाई क़िला छोड़कर भाग गई। अलीबहादुर करेरा त्याग कर कम्पनी की शरण में आगए और उनको ५००) मासिक पैंशिन देना तै होगया। झांसी राज्य का मामला तै करने के लिए एक कमीशन बैठा। कमीशन ने उत्तराधिकार का निश्चय गङ्गाधरराव के हक़ में किया।

गङ्गाधरराव कानपूर से झाँसी आगए। धूमधाम के साथ उनका अभिषेक हुआ। परन्तु झाँसी राज्य पर कुप्रबन्ध और ऋण का इतना बोझ बढ़ गया था कि फिर कोर्ट होगया। बात सन् १८३९ की है।

गङ्गाधरराव साहित्य और ललित-कलाओं के पूरे रसिक थे। सुखलाल काछी उनका चित्रकार था। पढ़ा-लिखा कम, परन्तु क़लम और कूँची की सही विधि, कोमलता और हथौटी का आचार्य। गायक—वादक, खासकर ध्रुवपद, वीणा और पखावज के उस्ताद और रीतिकाल तथा भक्तिरस की ओट वाले कवि गङ्गाधरराव की महफ़िल को आबाद करने लगे। उन्होंने दूर दूर से नाना-प्रकार के हस्त—लिखित ग्रन्थ इकट्ठे करवाए और विशाल पुस्तक—भाण्डार से अपने पुस्तकालय को भर दिया। वेद, उपनिषद, दर्शन, पुराण, तन्त्र, आयुर्वेद, ज्योतिष, व्याकरण, काव्य इत्यादि के इतने ग्रन्थ उनके पुस्तकालय में थे कि लोग दूर-दूर से उनकी प्रतिलिपि के लिए आने लगे।

नाटकों का उन्हें विशेष शौक़ था। वे संस्कृत—नाटकों का अनुवाद हिन्दी और मराठी में करवाया करते थे और उनका अभिनय भी करवाते थे। शहर के महल के ठीक पीछे पश्चिमी दिशा में नाटकशाला थी।*

---

* अब यह खण्डहल है। गिरजाघर के उत्तर में, केवल सड़क बीच में है।

गङ्गाधरराव स्वयं अभिनय करते थे। पुरुष के अभिनय से सन्तोष नहीं होता था, इसलिये स्त्री की भूमिका में भी आ जाते थे। स्त्रियों का अभितय करने के लिये उन्होने बहुत सुन्दर नाचने गाने-वाली नियुक्त कर रक्खी थी। इनमें मोतीबाई बहुत प्रसिद्ध थी। ❀

उसका सौन्दर्य अप्सरा सा था। फूलों जैसी कोमलांगी। स्वर लहरी सी मोहक और चञ्चल। परन्तु वेश्या पुत्री होने पर भी वह कुमारी थी और नाटकशाला के बाहर परदे में रहती थी। बहुत कुशल अभिनेत्री थी, परन्तु इसको भी गङ्गाधरराव अपने उदाहरण से यथावत अभिनय सिखलाते थे।

गङ्गाधरराव की नाटकशाला में मोतीबाई छोटी उम्र में आ गई थी। जो लोग गङ्गाधरराव की कृपा से नाटकशाला में खेल देखने जाया करते थे वे बाहर आकर उसके रूप की, नृत्य और संगीत की, उसके हाव भाव तथा अभिभय की प्रशंसा करते नहीं अघाते थे।

❀ झांसी के खेवट में वह मोतीबाई नाटकशाला वाली के नाम से विख्यात है।

[३]

झांसी की गद्दी पर राजा गङ्गाधरराव को बैठे और झांसी राज्य के शासन को अंग्रेज़ों द्वारा चलते सात–आठ साल हो गये। नगर का शासन गङ्गाधरराव के हाथ में था और राज्य का कम्पनी के कर्मचारियों के हाथ में।

चैत लग गया था। बसन्त ने पत्थरों और कंकड़ों तक पर फुलबा–ड़ियां पसार दीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज को सजा दिया और धरती पर रंग बिरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभंजन में भी महक समा गई। रात और दिन संगीत से पुलकित हो उठे।

उस रात नाटकशाला में रत्नावली का अभिनय था। हिंदी अनुवाद द्वारा। मोतीबाई को रत्नावली का रूपक करना था। निर्देशन स्वयं राजा का। गायनवादन और नृत्य बड़े उस्तादों के दिग्दर्शन में तैयार हुए थे।

दर्शक सब निमन्त्रण पर आये थे। राजा गङ्गाधरराव सबसे आगे बैठे थे। उनकी आयु इस समय जीवन के लगभग बीचोंबीच थी। सुन्दर, स्वस्थ और राजसी। पीछे, परन्तु पास ही उनके संगी खुदाबख्श, दीवान रघुनाथसिंह, राव दूल्हा जू, दीवान जवाहरसिंह इत्यादि दाएं बाएं बैठे हुये थे। सब नौ जवान। स्वास्थ्य और यौवन की उमंगों में भरे हुये। मोतीबाई के छलकते मदमाते यौवन और सौन्दर्य को देखने के लिये आतुर। पर्दा खुला। सूत्रधार का मंगल गान हुआ। कुछ समय बाद रत्नावली की भूमिका में मोतीबाई इठलाती हुई रंगमञ्च पर आई। खुदाबख्श के मुँह से यकायक 'वाह !' निकल पड़ा। मोतीबाई ने खुदा–बख्श को देखा। खुदाबख्श ने आंखें गड़ाईं। जब जब मोतीबाई रंगमञ्च पर जिस जिस दृश्य में आई उसने दर्शकों पर से दृष्टि को समेट कर खुदाबख्श पर केन्द्रित किया।

मोतीबाई ने नृत्य भी बहुत मोहक किया। नृत्य के समय चितवन की कोरों को मस्ती से भरने का प्रयत्न किया। और, पलकों को अनेक बार

अर्ध मुकुलित झपकियां दीं। खुदाबख्श के मुँह से फिर 'वाह !' निकली। राजा को अच्छा नहीं लगा। बोले, 'तुम मूर्ख हो। जिस रत्नावली का विवाह राजा के साथ होने वाला है उसको क्या वेश्याओं जैसा नयन मटकौअल करना चाहिये ?

दर्शकों की सम्मति थी कि सारा नाटक सफल अभिनय और मनोहर गायनवादन तथा नृत्य के साथ समाप्त हुआ है। दर्शक नाटकशाला के बाहर गये। राजा गंगाधरराव रंगमञ्च के शृंगार-कक्ष में पहुंचे। मोतीबाई ने नत मस्तक प्रणाम किया। उसको विश्वास था कि आज सब कार्य कला के सर्वांग सहित पूरा किया है। प्रफुल्लता के मारे उसका चेहरा दमक रहा था। राजा के मुँह से प्रशंसा के दो शब्द सुनने की ललक थी।

राजा ने कहा, 'आज क्या शराब पीकर आई थी ?'

मोतीबाई सन्नाटे में आ गई। चेहरा उतर गया। जैसे एकदम कुम्हला गई हो। धीमें, कोमल, मधुर स्वर में बोली, 'श्रीमन्त सरकार, मैंने शराब तो कभी भी नहीं पी है। आज क्यों पीती ?'

'फिर आंखों को आज इतना ढाल क्यों दिया ?' राजा ने प्रश्न किया।

एक छोटी सी आह को भीतर ही दबाकर मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'मैं भूल गई।'

राजा कुछ शान्त हुये। बोले, 'जिस भूमिका का अभिनय करना हो उसके चरित्र को कभी न भूलो। अभिनय सफल तभी कहलावेगा जब पात्र अपने को तो बिल्कुल भूल जावे परन्तु अपनी भूमिका की एक एक रेखा को अच्छी तरह स्मरण रक्खे। उसमें तन्मय हो जावे। मैंने पहले भी बतलाया है। समझी ?' मोतीबाई के मन में एक प्रतिवाद उठा, परन्तु उसने अपने को पूरी तौर से संयत करके विनय की, 'हाँ सरकार। आगे कभी भूल न होगी।'

राजा ने कहा, 'अब की बार कालिदास का अभिज्ञान शाकुन्तल होगा। तुमको शकुन्तला का अभिनय करना है।'

मोतीबाई की उदासी चली गई। बालकों जैसी सरल प्रफुल्लता के साथ उसने कहा, 'महाराज मैं भरसक प्रयत्न करूंगी। सरकार के दिग्दर्शन का अपमान न होगा।'

राजा प्रसन्न होकर चले गये। पात्रों और पात्रियों ने जय-जयकार किया 'श्रीमन्त सरकार महाराजा गंगाधरराव बहादुर की जय।'

नियुक्त तिथि और समय पर शकुन्तला नाटक का अभिनय हुआ। लगभग वे ही सब दर्शक उपस्थित।

आभूषण विहीन परन्तु पुष्पों से लदी हुई मोतीबाई तपोवन की सहेलियों के साथ बेलों और लताओं को सींचते ही दर्शकों के मन को मद सा वितरित करने लगी। परन्तु, खुदाबख्श उस रात की रत्नावली की प्रमत्त आंख की झलक देखने के लिए व्याकुल था।

होते होते नाटक के अन्तिम दृश्यों की बारी आई।

सुरासुर संग्राम में इन्द्र की सहायता करने के उपरान्त दुष्यन्त लौटा। आश्रम में सिंह के बच्चों के साथ खेलता हुआ-लड़का मिला। स्नेह उमड़ा। बालक के हाथ से गण्डा खिसक गया। दुष्यन्त ने उठा लिया। गण्डा सांप के आकार में परिवर्तित नहीं हुआ। इस व्यापार को देखने वाली शकुन्तला की एक सहेली को विस्मय हुआ। दुष्यन्त को उस बालक की माता का नाम मालूम हो गया। मलिन वेशधारिणी शकुन्तला भी बाल बिखेरे आश्रम से बाहर निकल आई। दुष्यन्त ने पहिचान लिया। उसको परिताप हुआ। शकुन्तला ने अपनी विपत्ति का कारण अपने दुर्भाग्य को बतलाया। परन्तु उससे दुष्यन्त को सन्तोष नहीं हुआ। क्षमा प्राप्ति और प्रायश्चित करने के लिए दुष्यन्त शकुन्तला के पैरों पर गिर पड़ा।

दुष्यन्त के पैरों पर गिरते ही मोतीबाई की एक दृष्टि एक क्षणके लिये

खुदाबख्श पर गई। उसकी आंखें तरल थीं। और अनेक दर्शक भी अपने आंसुओं से, मानों स्त्रियों के साथ किये गये दुर्व्यवहारों का प्रायश्चित्त कररहे थे। मोतीबाई की आंखों में बड़े बड़े आंसू आ गये। गंगाधरराव ने खुदाबख्श की ओर गर्दन मोड़ी। कहा, 'क्यों रे कैसा रहा ?

मोतीबाई की आंख के आंसुओं की ओर ज़रा सी निगाह फिर डाल कर खुदाबख्श ने रुद्ध स्वर में कहा, 'महाराज, बहुत अच्छा' 'पर आज 'वाह' 'वाह' नहीं निकली ?' राजा ने पूछा। खुदाबख्श ज़रा झेंपा। झेंप को दबाने के लिये मुस्करा कर बोला, 'हुजूर उसके लिये कोई जगह नहीं पाई।'

राजा इस बात को पीकर रह गये। खेल की समाप्ति पर दर्शक नाटक शाला के बाहर हुये और गंगाधरराव शृंगार कक्ष में। मोतीबाई अब भी मलिन वेष में थी। अभिनय के विषय में सम्मति सुनने के लिये प्रणाम करती हुई राजा के सम्मुख आई। उन्होंने उसकी पीठ पर थपकी देकर शाबाशी दी। कहा, 'तुम्हारा आज का अभिनय बहुत अच्छा और स्वाभाविक रहा। कालिदास महान हैं। उन्होंने उस समय शकुन्तला के हृदय को जो आंसू दिये थे, तेरे बड़े नेत्रों ने ब्याज के साथ लौटा दिये।' मोतीबाई प्रसन्नता के मारे फूल गई। बिना पुष्पों के ही पुष्पों से लदी जान पड़ी।

राजा ने उसको एक बड़ा बाग़ जारीर में लगा दिया। ❀

दूसरे दिन राजा गंगाधरराव ने खुदाबख्श को राजदरबार से अलग कर दिया और घोषणा करवाई कि यदि खुदाबख्श फिर कभी झांसी शहर में दिखलाई पड़ा तो उसके नंगे शरीर पर कोड़े लगाये जांयगे।

❀ यह बाग़ ओरछे दरवाज़े के भीतर, दरवाज़े से लगा हुआ था। आजकल इसके एक सिरे पर सड़क के किनारे मसज़िद है। बाक़ी में अब साग भाजी की खेती होती है।

लोगों को इस आज्ञा पर आश्चर्य था। परन्तु लोग राजा के सुलभ कोपी स्वभाव को जानते थे, इसलिये किसी खास कारण को जानने की लालसा जनता के मन में नहीं हुई।

दीवान रघुनाथसिंह और राव दूल्हाजू के मन में असली कारण के विषय में जो शंका थी, उन्होंने किसी पर प्रकट नहीं की। उन्होंने सोचा कि इस नाटकशाला से दूर ही रहना चाहिये, परन्तु राजा के निमन्त्रण की अवज्ञा भी कैसे कर सकते थे?

मोतीबाई सावधानी और लगन के साथ नाटकशाला में काम करती रही। परन्तु दर्शकों में खुदाबख्श को उसने फिर कभी नहीं देखा। और फिर न कभी गंगाधरराव ने मोतीबाई को किसी विशेष दर्शक पर आंख को केन्द्रित करते पाया। इच्छा रखते हुये भी मोतीबाई रंगमञ्च पर फिर कभी बड़े बड़े आँसू नहीं निकाल सकी।

इन दिनों नाटकशाला में जूही नाम की एक अल्प-वयस्का नर्तकी और आई। परन्तु उसको अपने घर पर नाचने गाने की और अधिक तालीम पाने की अनुमति मिल गई थी। जूही उनाव दरवाजे भीतर मेवातीपुरा के सिरे पर रहती थी। इसका भवन माधवराव भिड़े के बाग़ से लगा हुआ था। उसने अभी अल्हड़पन से बाहर क़दम नहीं रक्खा था। रंगमञ्च पर इसका नृत्य और गायन अधिक होता था, अभिनय कम।

उदय

[१]

वर्षा का अन्त हो गया। कुवांर उतर रहा था। कभी-कभी झीनी-झीनी बदली हो जाती थी। परन्तु उस सन्ध्या के समय आकाश बिलकुल स्वच्छ था। सूर्यास्त होने में थोड़ा-सा विलम्ब था। बिठूर के बाहर गङ्गा के किनारे तीन अश्वारोही तेज़ी के साथ चले जारहे थे। तीनों बाल्यावस्था में। एक बालिका, दो बालक। एक बालक की आयु लगभग १६,१७ वर्ष, दूसरे की १४ से कुछ ऊपर। बालिका की तेरह से कम।

बड़ा बालक कुछ आगे निकला था कि बालिका ने अपने घोड़े को एड़ लगाई। बोली, 'देखूँ कैसे आगे निकलते हो।' और वह आगे हो गई। बालक ने बढ़ने का प्रयास किया तो उसका घोड़ा ठोकर खागया, और बालक धड़ाम से नीचे जा गिरा। एक सूखी लकड़ी के टुकड़े से सिर भिड़ गया। खून बहने लगा। घोड़ा लौट कर घर की ओर भाग गया। बालक चिल्लाया, 'मनू मैं मरा।'

बालिका ने तुरन्त अपने घोड़े को रोक लिया। मोड़ा, और उस बालक के पास पहुँची। एक क्षण में तड़ाक से कूदी और एक हाथ

से घोड़े की लगाम पकड़े हुये झुक कर घायल बालक को ध्यान पूर्वक देखने लगी। माथे पर गहरी चोट आई थी और खून बह रहा था। बालिका मिठास के साथ बोली, 'घबराओ मत, चोट बहुत गहरी नहीं है। लोहू बहने का कोई डर नहीं।'

मझला बालक भी पास आ गया। उतर पड़ा और विह्वल होकर अपने साथी की चोट को देखने लगा।

'नाना तुमको तो बहुत लग गई है।' उस बालक ने कहा।

'नहीं, बहुत नहीं है' बालिका मुस्करा कर बोली, 'अभी लिए चलती हूँ। कोठी पर मरहम पट्टी हो जायगी और बहुत शीघ्र चंगे हो जांयगे।'

'कैसे ले चलोगी मनू?' बड़े लड़के ने कातर स्वर में कराहते हुये पूछा।

मनू ने उत्तर दिया, 'तुम उठो। मेरे घोड़े पर बैठो। मैं उसकी लगाम पकड़े तुम्हें अभी घर लिये चलती हूँ।'

'मेरा घोड़ा कहां है?' घायल ने उसी स्वर में प्रश्न किया।

मनू ने कहा, भाग गया। चिन्ता मत करो बहुत घोड़े हैं। मेरे घोड़े पर बैठो। जल्दी। नाना, जल्दी।'

नाना बोला, 'मनू मैं सध नहीं सकूंगा।'

मनू ने कहा, 'मैं साध लूंगी। उठो।' नाना उठा। मनू एक हाथ से घोड़े की लगाम थामें रही, दूसरे से उसने खून में तर नाना को बिठलाया और बड़ी फुर्ती के साथ उचट कर स्वयं पीछे जा बैठी। एक हाथ से घोड़े की लगाम संभाली। दूसरे से नाना को थामा और गांव की ओर चल दी। पीछे पीछे मझला बालक भी चिंतित, व्याकुल चला। जब ये गांव के पास आ गये तब कई सिपाही घोड़ों पर सवार इन बालकों के पास आ पहुँचे।

'लगी तो नहीं?'

'ओफ़ बहुत खून निकल आया।'

'आओ मैं लिये चलता हूँ।'

'घर पर घोड़े के पहुँचते ही हम समझ गये थे कि कोई दुर्घटना हो गई है।' इत्यादि उद्‌गार इन आगन्तुकों के मुंह से निकले। इन लोगों के अनुरोध करने पर भी मनू नाना को अपने ही घोड़े पर संभाले हुये ले आई। पहुँचते ही कोठी के फाटक पर एक उतरती अवस्था के और दूसरे अधेड़ वय के पुरुष मिले दोनों त्रिपुण्ड लगाये थे। उतरती अवस्था वाला रेशमी वस्त्र पहिने था और गले में मोतियों का कण्ठा। अधेड़ सूती वस्त्र पहिने था। उतरती अवस्था वाले को कुछ कम दिखता था। उसने अपने अधेड़ साथी से पूछा, 'क्या ये सब आगये मोरोपन्त ?'

'हाँ महाराज!' मोरोपन्त ने उत्तर दिया। जब ये बालक और निकट आ गये तब मोरोपन्त नामक व्यक्ति ने कहा, 'अरे यह क्या! मनू और नाना साहब दोनों लोहूलुहान हैं।

जिसको मोरोपान्त ने 'महाराज' कहकर सम्बोधन किया था, वह पेशवा बाजीराव द्वितीय थे। उन्होंने भी दोनों बच्चों को रक्त में सना हुआ देख लिया। घबरा गये।

सिपाहियों ने झटपट नाना को मनू के घोड़े पर से उतारा। मनू भी कूद पड़ी।

मोरोपन्त ने उसको चिपटा लिया। उतावले होकर पूछा, 'मनू कहां लगी है बेटी।'

मुझको तो बिलकुल नहीं लगी काका,' मनू ने ज़रा मुस्करा कर कहा, 'नाना को अवश्य चोट आई है; परन्तु बहुत नहीं है।'

'कैसे लगी मनू ?' बाजीराव ने प्रश्न किया।

कोठी में प्रवेश करते करते मनू ने उत्तर दिया, 'उँह साधारण सी बात थी। घोड़े ने ठोकर खाई। वह संभाल नहीं सके। जा गिरे।'

घोड़ा भाग गया। घोड़ा ऐसा भागा, ऐसा भागा कि मुझको तो हँसी आने को हुई।'

मोरोपन्त ने मनू के इस अल्हड़पने पर ध्यान नहीं दिया। नाना को मनू अपने घोड़े पर ले आई, वे इस बात पर मन ही मन प्रसन्न थे। बाजीराव को सुनाते हुये मोरोपन्त ने पूछा, 'तू नाना साहब को कैसे उठा लाई ?'

मनू ने उत्तर दिया 'कैसे भी नहीं। वह बैठ गए। मैं पीछे से सवार हो गई। एक हाथमें लगाम पकड़ ली, दूसरे हाथसे नाना को थाम लिया। बस।'

नाना को मुलायम बिछौनों में लिटा दिया गया। तुरन्त घाव को धोकर मरहम पट्टी कर दी गई। घाव गम्भीर न होने पर भी लम्बा और ज़रा गहरा था। बाजीराव बहुत चिंतित थे। उन्होंने रो तक दिया।

मोरोपन्त को विश्वास था कि चोट भयप्रद नहीं है तो भी वह सहानुभूति के कारण बाजीराव के साथ चिंताकुल हो रहे थे।

जब मनूबाई और मोरोपन्त उसी कोठी के एक भाग में, जहां उनका निवास था अकेले हुये, मनू ने कहा, 'इतनी ज़रा सी चोट पर ऐसी घबराहट और रोना पीटना।'

'बेटी, चोट ज़रा सी नहीं है। कितना रक्त बह गया है !'

'आप लोग जो हमको पुराना इतिहास सुनाते हैं उसमें युद्ध क्या रेशम की डोरों और कपास की पौनियों से हुआ करते थे ?'

'नहीं मनू। पर यह तो बालक है।'

'बालक है ! मुझसे बड़ा है। मलखंब और कुश्ती करता है। बाला गुरू उसको शाबाशी देते हैं। अभिमन्यु क्या इससे बड़ा था ?'

'मनू, अब वह समय नहीं रहा।'

'क्यों नहीं रहा काका ? वही आकाश है, वही पृथ्वी। वही सूर्य-चन्द्रमा और नक्षत्र। सब वही हैं।'

'तू बहुत हठ करती है।'

'जब मैं सवाल करती हूँ तो आप इस प्रकार मेरा मुँह बन्द करने लगते हैं। मैं ऐसे तो नहीं मानती। मुझको समझाइये, अब क्या हो गया है।'

'अब इस देश का भाग्य लौट गया है। अंग्रेज़ों के भाग्य का सूर्योदय हुआ है। उन लोगों के प्रताप के सामने यहां के सब जन निस्तेज हो गये हैं।'

'एक का भाग्य दूसरे ने नहीं पढ़ा है। यह सब मन-गढ़न्त है। डरपोकों का ढकोसला।'

'तू जब और बड़ी होगी तब संसार का अनुभव तुझको यह स्पष्ट कर देगा।'

'मैं डरपोक कभी नहीं हो सकती। आप कहा करते हैं—मनू तू ताराबाई बनना, जीजाबाई और सीता होना। यह सब भुलावा क्यों? अथवा क्या ये सब डरपोक थीं?'

'बेटी ये सब सती और वीर थीं, परन्तु समय बदलता रहता है बदल गया है।'

'यह तो हेर फेर कर वही सब मनमाना तर्क है।'

'फिर कभी बतलाऊंगा।'

'मैं ऐसी ग़लत-सलत बात कभी नहीं सुनने की।'

'तो सोवेगी या रात भर सवाल करती रहेगी!' अन्त में खीझ कर परन्तु मिठास के साथ मोरोपन्त ने कहा। मनू खिलखिला कर हँस पड़ी। बोली, 'काका आपने तो टाल दिया। मैं इस प्रसंगपर फिर बात करूंगी। अभी अवश्य करवट लेते ही सोई, यह सोई।' फिर एक क्षण उपरान्त मनू ने अनुरोध किया, 'काका देख आइए नाना सो गया या नहीं। आपको नींद आ रही हो तो मैं दौड़ कर देख आऊं।' मोरोपन्त ने मनू को नहीं जाने दिया। स्वयं गए। देख आये। बोले, 'नाना साहब सो गए हैं।'

मनू सो गई। मोरोपन्त जागते रहे। उन्होंने सोचा, 'मनू की

बुद्धि उसकी अवस्था के बहुत आगे निकल चुकी है। अभी तक कोई योग्य वर हाथ नहीं लगा। दक्षिण जाकर देखना पड़ेगा।' इसी विचार के लौट फेर में मोरोपन्त का बहुत समय निकल गया। कठिनाई से अन्तिम पहर में नींद आई।

[२]

मनूबाई सबेरे नाना को देखने पहुँच गई। वह जग उठा था, पर लेटा हुआ था मनू ने उसके सिर पर हाथ फेरा। स्निग्ध स्वर में पूछा, 'नींद कैसी आई ?'

'सोया तो हूँ पर नींद आई-गई बनी रही। कुछ दर्द है।' नानाने उत्तर दिया।

मनू —'वह दोपहर तक ठीक हो जायगा। तीसरे पहर घूमने चलोगे न ? सन्ध्या से पहले ही लौट आयँगे।'

नाना—'सवारी की धमक से पीड़ा बढ़ने का डर है।'

मनू—'आरम्भ में कदाचित् थोड़ी सी पीड़ा हो, परन्तु शीघ्र उसको दाब लोगे और जब लौटोगे याद भी नहीं रहेगी कि कभी चोट लगी थी।'

नाना—'यदि पीड़ा बढ़ गई तो ?'

मनू—'तो सह लेना, फिर कभी गिरोगे तो चोट कम आवेगी।'

नाना—'और यदि आज ही फिर फिसल पड़ा तो ?'

मनू—'तो मैं तुमको फिर उठा लाऊंगी। चिन्ता मत करो।'

नाना—'और जो तुम खुद गिर पड़ीं तो ?'

मनू—'तब मैं फिर सवार हो जाऊँगी। किसी की सहायता नहीं लेनी पड़ेगी और घर आ जाऊँगी।'

नाना—'मेरे बस का नहीं।'

मनू— लड्डू खाओगे ?'

नाना—'इच्छा नहीं।'

मनू—'तब क्या इच्छा है ?'

नाना—'मुझे चुपचाप पड़ा रहने दो।'

मनू—'कबतक ?'

नाना—'तीन-चार दिन लग जाएंगे।'

मनू—'किसने कहा ?'

नाना—'काका कहते थे। वैद्य ने भी कहा था।'

मनू— वैद्य तो लोभवश कहता होगा, पर दादा क्यों कहते थे ?'

नाना—'उनसे ही पूछ लेना। मेरा सिर मत खाओ।'

मनू हँस पड़ी। फिर दाईं ओर का ओठ थोड़ा सा—बिलकुल ज़रा सा—दबाकर बोली, 'तुम कहते थे—बाजी प्रभु देशपांडे की कीर्ति से बढ़कर कीर्ति कमाऊंगा, तानाजी मालसुरे को पछाड़ूंगा, स्वर्ग निवासी छत्रपति शिवाजी को अपने कृत्यों से फड़का दूँगा, श्रीमन्त पन्त प्रधान प्रथम बाजीराव की बराबरी करूंगा,.........'

इतने में वहां बाजीराव आ गये। मनू इतनी तीक्ष्णता के साथ बोल रही थी कि बाजीराव ने उसका अन्तिम वाक्य सुन लिया।

बोले, 'तेरी चपलता न जाने कब कम होगी ? यह सब क्या बक जा रही है ?'

मनू रञ्चमात्र भी नहीं दबी। बोली, 'इसको दादा आप बकना कहते हैं ? आप ही हम लोगों को यह सब छुटपन से सुनाते आये हैं। मैं उसी को दुहरा रही हूं। अब इसे आप बकवास समझने लगे हैं ! यह क्यों दादा ?'

बाजीराव ने कहा, 'बेटी क्या आज उन बातों के स्मरण से जीवन को चलाने का समय रहा है ? महाभारत की कथाएँ सुनो और अपने पुरखों की बातें सुनो। अच्छी भली बनो। मन बहलाओ और जीवन को पवित्र सुख से सुखी बनाओ। नाना को चिढ़ाओ मत।

मनू ने मुस्करा कर ओठ ज़रा सा दबाया, थोड़ी सी त्यौरी संकुचित की और बाजीराव के बिलकुल पास आकर बोली, 'क्या हम लोगों को अब सोकर, खाकर ही जीवन बिताना सिखलाइयेगा दादा ?,' बाजीराव को हँसी आई। कुछ कहना ही चाहते थे कि मोरोपन्त कहते हुये आ गये, 'नाना साहब को हाथी पर बिठला कर थोड़ा सा घूम आने दीजिये। बाहर तैयार खड़ा है।'

बाजीराव ने प्रश्न किया, 'हाथी की सवारी में चोट को धमक तो नहीं लगेगी ?'

मोरोपन्त ने उत्तर दिया, 'नहीं, पलकिया में बहुत मुलायम गद्दी तकिये लगा दिये हैं और हाथी बहुत धीरे चलाया जावेगा।,

मनू हाथी को देखने बाहर दौड़ गई। नाना निस्तार इत्यादि के लिए उठ गया। मनू ने हाथी पहले भी देखे थे, फिर भी वह इस हाथी को बार बार चारों ओर से घूम घूमकर देख रही थी। और उसके डील-डौल पर कभी मुस्करा रही थी, कभी हँस रही थी।'

थोड़ी देर बाद बाजीराव नाना को लिये बाहर आये। साथ में छोटा लड़का भी था, मोरोपन्त पीछे पीछे। हाथी पर पहले नाना को बिठला दिया गया। फिर छोटे को। महावत ने हाथी को अंकुश छुलाई। हाथी उठा।

मनू ने मोरोपन्त से कहा, 'काका मैं हाथी पर बैठूंगी।'

बाजीराव के घुटनों से लिपट कर बोली, 'दादा मैं बैठूंगी।'

नाना हौदे में महावत के पास बैठा था। उसने महावत को अविलम्ब चलने का आदेश किया। मनू की ओर देखा भी नहीं। बाजीराव ने नाना से कहा, 'लिये जाओ न मनू को!'

नाना ने मुँह फेर लिया। तब बाजीराव ने दूसरे बालक से कहा, 'रावसाहब, मनू को ले लेते तो अच्छा होता।,'

महावत कुछ ठमका तो नाना ने उसकी पसलियों में उँगली चुभोकर बढ़ने की आज्ञा दी। वह नाना साहब और रावसाहब—दोनों लड़कों—को लेकर चल दिया। मनू की आंखों में क्षोभ उतर आया मोरोपन्त का हाथ पकड़ कर बोली, 'हाथी लौटाओ काका। मैं हाथी पर अवश्य बैठूंगी।'

बाजीराव कोठी में चले गये।

मोरोपन्त को भी क्षोभ हुआ, परन्तु उन्होंने उसको नियन्त्रित करके कहा, वह चला गया बेटी।'

मनू मोरोपन्त का हाथ पकड़ कर खींचने लगी, 'महावत को पुकारिये वह रुक जायगा। मैं बिना बैठे नहीं मानूगी।'

मोरोपन्त का क्षोभ भड़का। उन्होंने उसका फिर दमन किया। मनू ने फिर हाथी पर बैठने का हट किया। मोरोपन्त ने क्रुद्ध स्वर में मनू को डाटा, 'तेरे भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। क्यों व्यर्थ हठ करती है?'

मनू तिनक कर सीधी खड़ी हो गई। तमक कर कुछ कहना चाहती थी। एक क्षण ओठ नहीं खुल सके।

मोरोपन्त ने शान्त करने के प्रयोजन से, भरसक धीमें स्वर में, परन्तु क्रोध के सिलसिले में कहा, 'सैकड़ों बार कहा कि समय को देखकर चलना चाहिए। हम लोग न तो छत्रधारी हैं और न सामन्त—सरदार। साधारण गृहस्थों की तरह संसार में रहन-सहन रखना है। पढ़ी लिखी होने पर भी न जाने सुनती-समझती क्यों नहीं है। कह दिया कि भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। हठ मत किया कर।'

मनू के ओठ सिकुड़े। चिनौती सी देती हुई बोली, 'मेरे भाग्य में एक नहीं दस हाथी लिखे हैं।'

मोरोपन्त का क्रोध-क्षोभ भीतर सरक गया। हँस पड़े। मनूबाई को पेट से चिपका लिया। कहा, 'अब चल कोई शास्त्र-पुराण पढ़। तब तक वे दोनों लौटे आते हैं।'

मनू मचली। बोली, 'मैं अपने घोड़े पर बैठ कर सैर को जाऊँगी और उस हाथी को तङ्ग करूँगी।'

मोरोपन्त सीधे शब्दों में वर्जित करना चाहते थे, परन्तु इस उपकरण में सफलता के चिन्ह न पाकर उन्होंने तुरन्त बहाना बनाया, 'घोड़े से यदि हाथी चिढ़ गया तो तू भले ही बच कर निकल आवे, पर नाना साहब, रावसाहब तथा महावत मारे जावेंगे।'

वह मान गई।

'तब तक कुछ और करूँगी' मनूबाई ने कहा, 'पुस्तकें तो नहीं पढूंगी। बन्दूक़ से निशाना बाज़ी करूंगी।'

[३]

थोड़ी देर में घंटा बजाता हुआ हाथी लौट आया। मनू दौड़ कर बाहर आई। एक क्षण ठहरी और आह खींच कर भीतर चली गई। नाना, और राव, दोनों बालक, अपनी जगह चले गए। बाजीराव ने नाना को पुचकार कर पूछा 'दर्द, बढ़ा तो नहीं ?'

'नहीं बढ़ा' नाना ने उत्तर दिया, 'अच्छा लग रहा है। मनू कहां गई ?'

बाजीराव ने कहा, 'भीतर होगी।'

रावसाहब—'उसे बुरा लगा होगा। नाना ने साथ नहीं लिया, मैंने तो कहा था।'

नाना—वह मुझको सबेरे से ही चिढ़ा रही थी।'

बाजीराव—'क्या ? कैसे ?'

नाना—'उसका स्वभाव है।'

कुछ क्षण उपरान्त मनू वहां आगई।

नाना ने हँसते हुए कहा, 'छबीली, तुम क्या कोई ग्रन्थ पढ़ रही थीं ?'

मनू जल उठी। बोली, 'मुझसे छबीली मत कहा करो।'

नाना ने और भी हँसकर कहा, 'क्यों नहीं कहा करूं ? यह तो तुम्हारा छुटपन का नाम है।' मनू की आंख लाल हो गई। बोली, 'मुझको इस नाम से घृणा है।'

नाना गंभीर हो गया। बोला, 'मुझको तो यही नाम सुहावना लगता है। छबीली, छबीली।'

'इस नाम को कभी नहीं सुनूंगी।' कहकर मनू वहां से जाने को हुई। बाजीराव ने उसको पकड़ लिया। मनू ने भागना चाहा। न भाग सकी। तब नाना ने भी पकड़ लिया।

'क्या मनू बुरा मान गई ?' नाना ने स्नेह के साथ पूछा।

मनू ओठ सिकोड़ कर, रुखाई के साथ बोली, 'अवश्य। आगे इस नाम से मेरा सम्बोधन कभी मत करना।'

इसी समय पहरे वाले ने बाजीराव को सूचना दी, 'झांसी से एक सज्जन आए हैं। नाम तात्या दीक्षित बतलाते हैं।'

नाना बोला, 'मनू एक से दो तात्या हुए।'

मनू का क्षोभ घुला। बाजीराव ने प्रहरी से झांसी के आगन्तुक को बिठलाने के लिए कह दिया।

मनू ने कहा, 'झांसी वाला तात्या कुश्ती लड़ता होगा?'

रावसाहब—'झांसी में बाला गुरू होंगे तो कुश्ती का भी चलन होगा। वह तो राज्य ठहरा।'

नाना—'बड़ा राज्य है?'

बाजीराव—बड़ा तो नहीं है, पर खासा है। हमारे पुरखों का प्रदान किया हुआ है, जानते होंगे।'

रावसाहब—'अपने को फिर नहीं मिल सकता है?'

मनू—'दान किया हुआ फिर कैसे वापिस होगा?'

बाजीराव—'हां वापिस नहीं हो सकता। झांसी के राजा हमारे सूबेदार थे। इस समय अपना बस होता तो झांसी में हम लोगों का काफ़ी मान होता। परन्तु झांसी तो बहुत दिनों से अंग्रेज़ों की मातहती में है।

मनू—'ग्वालियर, इन्दौर, बड़ोदा, नागपुर, सतारा इत्यादि के होते हुए भी थोड़े से अंग्रेज़ों ने आप सबको दाब लिया।'

बाजीराव—'यह मानना पड़ेगा कि वे लोग हमसे ज्यादा चालाक हैं हथियार उनके पास अधिक अच्छे हैं। शूरवीर भी हैं और भाग्य उनके साथ है। और आपसी फूट हमारे साथ।'

मनू—'दादा क्या भाग्य में शूरवीर होना लिखा रहता है? यदि ऐसा है तो अनेक सिंह स्यार होते होंगे और अनेक स्यार सिंह?'

बाजीराव—'जब स्यार पागल हो जाता है तब सिंह भी उससे डरने लगता है।'

मनू—'वह भाग्य से पागल होता है अथवा और किसी कारण से?'

बाजीराव हँसने लगे।

इसी समय मोरोपन्त ने आकर कहा, 'बाबा साहब तात्या दीक्षित झांसी से आये हैं।' बाजीराव बोले, 'मैंने उनको बिठला लिया है। यहीं ठहरने, भोजन इत्यादि का प्रबन्ध कर दिया जावे।'

मोरोपन्त ने कहा, 'तात्या मुझको एक बार काशी में मिले थे। यात्रा के लिए गए हुए थे। विद्या विदग्ध हैं, सज्जन हैं। राजा के यहाँ उनका मान है।'

मनू ने हँसकर पूछा, 'कुश्ती लड़ते हैं? तलवार बन्दूक चलाते हैं? घोड़े पर चढ़ते हैं?'

'दुर पगली', मोरोपन्त ने कहा, 'जो यह सब न जानता हो वह क्या कुछ है ही नहीं। दीक्षित जी पक्के ब्राह्मण हैं। शास्त्री, आचार्य।'

नाना ने मनू की ओर देखते हुए कहा, 'और यदि ब्राह्मण हथियार बांध उठे तो वह पक्के से कच्चा हो जायगा? मनू! तुम बतलाओ।'

मनू हँसी। बाजीराव भी हँसे। मोरोपन्त ने मुस्करा कर कहा, 'इस लड़की जैसी वाचाल तो शायद ही कोई हुई हो।'

मनू ने ओंठों की समेट में मुस्कराहट को दबाकर गरदन मोड़ी, फिर, विशाल नेत्र संकुचित करके बोली, 'आप ही कहा करते हैं, ताराबाई ऐसी थीं, जीजाबाई ऐसी थीं, अहिल्या ऐसी, मीरा ऐसी। मैं पूछती हूँ क्या ये सब मुँह पर मुहर लगाए रहती थीं?'

[४]

भोजनोपरान्त तात्या दीक्षित से बाजीराव और मोरोपन्त मिले।

तात्या दीक्षित ज्योतिष और तत्व के शास्त्री थे। काशी, नागपुर, पूना इत्यादि घूमे हुए थे। महाराष्ट्र समाज से काफ़ी परिचित थे। बिठूर (ब्रह्मावर्त) में बाजीराव के साथ दक्षिणी ब्राह्मणों का एक बड़ा परिवार आ बसा था।* उस कालमें मलखम्भ और मल्लयुद्ध के आचार्य बाला गुरू का अखाड़ा दक्षिणियों और हिन्दुस्थानियों से भरा रहता था और गुरू बल, यौवन और स्वाभिमान को वितरित सा करते रहते थे। वह स्वयं इतने दृढ़, बलिष्ठ और स्वाभिमानी थे कि उनको लेटने तक में चित होने से नफ़रत थी! औंधे लेटा करते थे।

मोरोपन्त ने अवसर निकाल कर तात्या दीक्षित से प्रार्थना की, 'दीक्षित जी, मुझे अपनी कन्या मनूबाई के विवाह की बड़ी चिंता लग रही है। मैंने बहुत खोज की है परन्तु कोई योग्य वर नहीं मिला। अब भी खोज में लग रहा हूँ। आपका संसार में बहुत परिचय है। आप इस कन्या के लिए योग्य वर ढूँढ़ दीजिए। बड़ा अनुग्रह होगा।

बाजीराव ने भी कहा, 'कन्या बहुत सुन्दर है। बड़ी कुशाग्र बुद्धि और होनहार। उसके लिए अच्छा वर ढूँढ़ना ही चाहिए।'

मोरोपन्त बोले, 'सब हथियार चलाना बहुत अच्छी तरह जानती है। घोड़े की सवारी में पुरुषों के कान पकड़ती है। जब चार वर्ष की थी इसकी मां का देहान्त हो गया था। इसलिए मैंने स्वयं उसकी दिन रात देख भाल की है, लालन पालन किया है। मराठी, संस्कृत और हिन्दी पढ़ाई है। शास्त्रों में उसकी रुचि है।

---

* इनकी संख्या लगभग आठ सहस्र थी। बाजीराव की पैंशन का एक बड़ा भाग इन लोगों पर खर्च होता था।

बाजीराव ने कहा, 'बालिका है, इसलिए इस आयु में जितना पढ़ सकती थी उतना ही पढ़ा है, परन्तु तेज़ बहुत है। पूजा पाठ मन लगा कर करती है।'

पूजापाठ सम्बन्धी रुचि पर बाजीराव ने ज्यादा ज़ोर दिया। अश्वारोहण इत्यादि पर बहुत कम।

तात्या दीक्षित ने जन्मपत्री मांगी। मोरोपन्त ने ला दी। दीक्षित ने उसकी परीक्षा करके कहा, 'ऐसी जन्मपत्री मैंने कदाचित् ही पहले कभी देखी हो। इसको कहीं की रानी होना चाहिए।'

मोरोपन्त फूल गए। बाजीराव को भी सन्तोष हुआ। बोले, 'जब आप जाएं साथ में जन्मपत्री लेते जावें। योग्य वर से मेल खाने पर हम को सूचित करें।

दीक्षित ने स्वीकार किया।

उसी समय रावसाहब के साथ वहां मनू भी आ गई।

बाजीराव ने दीक्षित से कहा, 'यह वही कन्या है।'

दीक्षित ने मनूबाई के विशाल नेत्र, भौंरे को लजाने वाले चमकीले बाल, स्वर्ण सा रङ्ग और सम्पूर्ण चेहरे का अतीव सुन्दर बनाव देखकर प्रसन्नता प्रकट की।

दीक्षित ने ममता प्रदर्शित करते हुए कहा, 'आ बेटी आ! तूने शास्त्र पढ़े हैं? उच्च कुल की ब्राह्मण कन्या के लिए यह उपयुक्त ही है।'

मनू और रावसाहब बाजीराव के पास मसनद पर बैठ गए।

मनू बिना किसी संकोच के बोली, 'मैंने शास्त्र आँखों से देख भर लिए हैं। मुझको तुलसीदास की रामायण बड़ी प्रिय लगती है, परन्तु तलवार चलाना, मलखम्भ भांजना, घोड़े की सवारी ये उससे भी बढ़कर भाते हैं...'

बाजीराव ने हंस कर टोका, 'और बात बनाना, चबड़-चबड़ करना इन सबसे बढ़कर अच्छा लगता है।'

मोरोपन्त के मन में क्षणिक रोष आया। वह चाहते थे कि लड़की तात्या दीक्षित के सामने ऐसी बर्ते कि शील संकोच का अवतार जान पड़े।

'परन्तु', दीक्षित ने हँसकर कहा, 'बालिका है। अभी संसार का इसने देखा ही क्या है।'

'बिलकुल अबोध है', मोरोपन्त बोले, 'सयानी होने पर, अपने घर-द्वार का खूब प्रबन्ध करेगी।'

तात्या दीक्षित ने उत्साहित होकर भविष्यद्वाणी सी की, 'यह किसी राज्य की रानी होगी।'

रावसाहब अभी तक मनू के पीछे चुप बैठा था। बोला, 'राज्य तो सब अंग्रेज़ों ने ले लिए हैं। नए राज्य कहां से बनेंगे ?'

'राज्यों की और राज्य बनाने वालों की न कमी रही है और न रहेगी।' तात्या दीक्षित ने हँसकर कहा।

मनूबाई मुस्करा कर बोली, 'पर कुछ लोग तो कहते हैं कि अंग्रेज़ों ने ऐसा ज़ोर बांध लिया है कि कोई सिर ही नहीं उठा सकता।'

बाजीराव विषयान्तर करना चाहते थे। बोले, 'झांसी में बाग़ बगीचे कितने हैं ?'

तात्या दीक्षित—'बहुत हैं। राजा के बगीचे हैं। सरदारों और सेठ साहूकारों के हैं। नगर के भीतर ही अनेक हैं।'

मनू – 'सेना बड़ी है ?'

दीक्षित—'खासी है।'

मनू—'घोड़े अच्छे है ?'

रावसाहब—'हाथी ?'

दीक्षित—बहुत से हैं।'

मनू—'कितने ?'

इतने में वहाँ सुगठित शरीर का एक युवक आया।

बाजीराव ने पूछा, 'क्या है तात्या ?'

अपने नाम के एक और मनुष्य को सम्बोधित होते देखकर दीक्षित चौंका।

मनू ने बेधड़क कहा, 'यह हमारे गुरु के अखाड़े के प्रधान हैं। आपके नामधारी।'

तात्या दीक्षित ने मन में चाहा कि लड़की और अधिक बात न करे।

युवक तात्या ने पेशवा से विनय की, 'महाराज, गुरु जी ने कहलवाया है कि झांसी में जो आचार्य आए हैं वे हमारे अखाड़े को देखने की कृपा करें।

दीक्षित ने हामी भरी। तीसरे पहर सब लोग बाला गुरू के अखाड़े पर गए। मलखम्भ और मल्लयुद्ध का प्रदर्शन हुआ।

[५]

महाराष्ट्र में सतारा के निकट बाई नाम का एक गाँव है। पेशवा के राज्य काल में वहां के कृष्णराव ताम्बे को एक ऊँचा पद प्राप्त था। कृष्णराव ताम्बे का पुत्र बलवन्तराव पराक्रमी था।

उसको पेशवा की सेना में उच्चपद मिला। बलवन्तराव के दो लड़के हुए,—एक मोरोपन्त और दूसरा सदाशिव। ये दोनों पूना दरबार के कृपापात्रों में थे।

उस समय पेशवा बाजीराव द्वितीय पूना में रहते थे। सन् १८१८ में अंग्रेज़ों ने पेशवाई खत्म करके बाजीराव को आठ लाख रुपया वार्षिक पैन्शन और बिठूर की जागीर दी। बाजीराव ब्रह्मावर्त (बिठूर) चले आए। बाजीराव के निज भाई चिमाजी आपा साहब थे, वे बनारस चले गए। मोरोपन्त ताम्बे पर चिमाजी की बड़ी कृपा थी। मोरोपन्त चिमाजी के साथ पूना से काशी चले आए और उनका काम काज करते रहे। इसके उपलक्ष में मोरोपन्त को पचास रुपया मासिक वेतन मिलता था। यही मोरोपन्त मनूबाई के पिता थे।

मोरोपन्त की पत्नी का नाम भागीरथीबाई था। सुशील, चतुर, रूपवती।

मनूबाई कार्तिक बदी १४ सं० १८९१ (१९ नवम्बर सन् १८३५) के दिन काशी में इन्हीं से उत्पन्न हुई थी।

चिमाजी का शरीरान्त हो गया। मोरोपन्त को अपने कुटुम्ब के पालन के लिए कोई सहारा काशी में नहीं दिखलाई पड़ रहा था। बाजीराव ने काशी से बिठूर बुला लिया। मोरोपन्त पर बाजीराव की भी बहुत कृपा रही।

मनूबाई चार वर्ष की ही थी जब उसकी माता—भागीरथीबाई—का देहान्त हो गया। मनू के पालन-पोषण और लाड़ दुलार का सम्पूर्ण भार मोरोपन्त पर आ पड़ा। मोरोपन्त ने मनू को बहुत प्यार के साथ पाला। लड़के से बढ़कर।

मनू इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उसको स्नेहवश 'छबीली' के नाम से पुकारते थे।

बाजीराव के अपनी कोई सन्तान न थी। इसलिए उन्होंने नाना धोंडूपन्त नाम के एक बालक को गोद लिया। नाना तीन भाई थे— नाना, बाला और रावसाहब। बाला उस समय बिठूर में न था। छोटा सहोदर रावसाहब था।

मनू और ये दोनो लड़के साथ खेलते-खाते और पढ़ते थे। मलखम्भ कुश्ती, तलवार-बन्दूक का चलाना, अश्वारोहण, पढ़ना-लिखना इत्यादि सब इन तीनों ने छुटपन से साथ साथ सीखा। मनू चपल, हठीली और बहुत पैनी बुद्धि की थी। कम आयु की होने पर भी वह इन हुनरों में उन दोनों बालकों से बहुत आगे निकल गई। स्त्रियों की सङ्गति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज संकोच की अतीन्द्रिय दबन और झिझक से दूर हटती गई थी।

नाना आठ लाख वार्षिक पेंशन अपने और अपने भाइयों की परम्परा के जीवन सुख के लिए काफ़ी से अधिक समझता होगा। बाजीराव को पेंशन 'उसको और उसके कुटुम्ब के लिए दी गई थी।' बिना किसी प्रयत्न प्रयास के आठ लाख वार्षिक मिलते जावें तो फिर किस महत्वाकांक्षा की जोखिम के लिए और अधिक हाथ-पैर हिलाए जावें?

मनूबाई ऐसा नहीं सोचती थी। छत्रपति शिवाजी इत्यादि के आधुनिक और अर्जुन-भीम इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनू की कल्पना को एक अस्पष्ट और अगम्य गुदगुदी दे रक्खी थी।

[६]

तात्या दीक्षित आदर और भेंट सहित बिठूर से झांसी लौट आए। उन्हें मालूम था कि मनूबाई के लिए जितना अच्छा वर ढूंढ़ कर दूंगा, उतना ही अधिक बाजीराव सतुष्ट होंगे। और उस संतोष का फल उनका जेब के लिए उतना ही महत्वपूर्ण होगा।

दीक्षित ने मन में कई वर टटोले। जिसको स्थिर करते उसी के लिए प्रश्न उठता—'क्या पेशवा इसको पसन्द कर लेंगे?' जी उच्चट जाता। सरदार श्रेणी के ब्राह्मणों में कुछ की टीपनाएं लाकर मिलाईं, पर मेल न खाया।

सोचा, 'श्रीमन्त सरकार गङ्गाधरराव की जन्मपत्री मिला कर देखूं, शायद टक्कर खा जाय।' टीपना प्राप्त हो गई। मिल गई। परन्तु एक असमंजस हुआ, गङ्गाधरराव की पहली पत्नी का देहान्त काफ़ी दिन पहले हो चुका था। वह विधुर थे। विवाह करना चाहते थे। परन्तु अपने कठोर स्वभाव के कारण बहुत बदनाम थे। भांड़-मरासियों, खवासियों इत्यादि के हँसी–मज़ाक, आमोद-प्रमोद में उनका काफ़ी समय जाता था। नाटक-शाला में तो रात का अधिकांश प्रायः बीतता ही था। इसलिए जितना वह करते थे, उससे कहीं अधिक की, उनकी बदनामी फैल गई थी।

नाटकशाला में बहुत रुचि रखने के कारण ख़ास तौर पर वेश्याओं, गायिकाओं और नर्तकियों के नाटकशाला में नौकर रखते हुए भी स्त्रियों की भूमिका में अभिनय करने की वजह से उनकी झूठी बदनामी बहुत कर दी गई थी। इस पर, फिर उनका कठोर बर्ताव। दीक्षित सोचते थे कि विवाह सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हो जाऊं तो सदा याद किया जाऊंगा। मोरोपन्त तो हमेशा कृतज्ञ रहेंगे ही, बाजीराव भी मानते ही रहेंगे, झांसी राज्य में कितना सम्मान होगा! मनूबाई? सुन्दर है, रानी बनने योग्य सब गुण उसमें है। चपल, चञ्चल और उद्धत है। मुंहज़ोर है। किसी और घर में जायगी तो न ख़ुद सुखी हो सकेगी

और न अपने पति को मुर्ख बना सकेगी। गङ्गाधरराव की रानी बनने पर चपलता न रह सकेगी। जीवन में संयम आजावेगा। वह १३, १४ साल की है और गङ्गाधरराव चलीस से कुछ ऊपर। परन्तु उनका स्वास्थ्य अच्छा है। स्वभाव कठोर सही है, लेकिन ऐसी उग्र स्त्री के लिए तो ऐसा ही पति चाहिए। घोड़े की सवारी, तीर-तमंचा, मलखंभ और क्या क्या यह सब झांसी के राज्य ही में मिल सकेगा, और कहां असम्भव है। यह सब सोचकर दीक्षितने झांसी के राजा के साथ मनूबाई का विवाह सम्बन्ध कराने में किसी प्रकार की भी कसर न लगाने का निश्चय किया। गङ्गाधरराव के पास गए। एकान्त पाकर बोले, 'महाराज से एक निवेदन करने आया हूँ।'

राजा ने कहा, 'कहिए दीक्षित जी।'

दीक्षित—'रनवास को सूना हुए काफ़ी समय हो गया है। अब···'

राजा—'मैं क्या करूं? जन्मपत्री में मेरे इतने तेजस्वी ग्रह हैं कि मेल ही नहीं खाती। एकाध जगह मिली तो लड़की का भुखमरा पिता चाहता था कि मैं सब काम धाम छोड़ कर, बाप-बेटी की पूजा-अर्चा में ही बाक़ी का जीवन बिताऊं। इससे तो मेरी नाटकशाला ही अच्छी। अप्सराओं के सुन्दर अभिनय। सुखलाल के बनाए नए नए पर्दे। सुरीला-गायन-वादन और सुहावना नृत्य। आपने तो अनेक बार रंगशाला में अभिनय देखे हैं।'

दीक्षित—'श्रीमन्त सरकार, वंश परम्परा बनाए रखने के लिए शास्त्रों का विधान अनिवार्य है। प्रजा अपने राजा की बग़ल में अपना राजकुमार देखने की लालसा रखती है। सरकार का आमोद-प्रमोद भी चलता रह सकता है।'

'हां ठीक है।' कह कर गङ्गाधरराव सोचने लगे!

कुछ क्षण बाद बोले, 'दीक्षितजी आप तो काव्यरसिक हैं। श्री हर्षदेव रचित रत्नावली नाटिका कितनी कोमल, मधुर, मंजु कल्पना

है, और मोतीबाई अब भी कितना सुन्दर, कितना मनोहर अभिनय करती है।'

दीक्षित ने सोचा अब खतरे में पड़े। मोतीबाई के प्रति राजा का ऐसा उत्साह देख कर दीक्षित कुण्ठित हुए।

धीरज पकड़ कर दीक्षित कह गए, 'परन्तु सरकार महल सूना है। उसमें तो दिवाली कोई सजातीय कन्या ही जगमगा सकती है।'

गङ्गाधरराव की आंख बड़ी थी और डोरे लाल। दीक्षित ने उनके डरते देखा। डोरे कुछ और रक्तिम हो गए।

राजा ने कहा, 'मैं क्या करूं? सजातीय की कन्या को जबरदस्ती पकड़ लूं?'

दीक्षित ने तुरन्त उत्तर दिया, 'नहीं महाराज मैंने जन्मपत्रियों की परीक्षा कर ली है, बिलकुल मिल गई हैं। कन्या भी देख आया हूँ! बहुत सुन्दर और कुशाग्रबुद्धि है। उसमें रानी होने योग्य समस्त गुण हैं।'

'कहां पर?' राजा ने ज़रा मुस्करा कर पूछा।

दीक्षित का साहस बढ़ा। उत्तर दिया, 'महाराज वह इस समय बिठूर में है। श्रीमन्त पन्तप्रधान पेशवा का काम-काज देखने पर उसका पिता मोरोपन्त ताम्बे नियुक्त है। पढ़ी-लिखी है और समयोचित सभी गुण उसमें हैं।'

राजा ने प्रश्न किया, 'ताम्बे कुलीन होते हैं यह मैं जानता हूँ, लेकिन मोरोपन्त भट्टभिक्षुक तो नहीं है?'

दीक्षित ने जवाब दिया, 'श्रीमन्त पेशवा की यज्ञशाला पर एक राजभट्ट गोडशे है। वह मोरोपन्त का मित्र है। उसने मोरोपन्त की पुत्री को विद्याभ्यास भर कराया है। इसके सिवाय मोरोपन्त का रामभट्ट या किसी भट्ट से और कोई सम्बन्ध नहीं है।'

गङ्गाधरराव ने ज़रा तीखेपन से कहा, 'मैं पूछता हूं मोरोपन्त भिक्षुक है या नहीं?'

दीक्षित ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, 'कदापि नहीं सरकार।'

गङ्गाधरराव ने दूसरा प्रश्न किया, 'पेशवा और मोरोपन्त में कैसा सम्बन्ध है?'

दीक्षित—'बहुत घनिष्ठ। मित्रा जैसा। कोई नहीं कह सकता कि पेशवा मालिक हैं और मोरोपन्त नौकर। कन्या को पेशवा ने बिलकुल अपनी पुत्री की तरह मान रक्खा है। मैं स्वयं देख आया हूँ।'

राजा—'वे लोग सम्बन्ध को स्वीकार कर रहे हैं?'

दीक्षित—'कर लेंगे। मुझको विश्वास है।'

राजा—'तब सगाई मगनी इत्यादि के लिए आपको ही बिठूर जाना पड़ेगा।'

हर्ष के मारे दीक्षित का दिमाग़ चक्कर खा गया। बोले, 'अवश्य जाऊंगा सरकार।' फिर गला भर आया। आंख में एक आंसू।

'यह क्या दीक्षित जी?' राजा ने मिठास के साथ कहा।

दीक्षित गला संयत करके बोले, 'झांसी की जनता को यह समाचार बहुत हर्ष देगा श्रीमन्त।'

[७]

राज्य के अन्य कर्मचारियों के साथ तात्या दीक्षित बिठूर गए। मोरोपन्त और बाजीराव को संवाद सुनाया। उन्होंने स्वीकार कर लिया। गंगाधरराव की आयु का कोई लिहाज़ नहीं किया गया।

मनूबाई का शृङ्गार कराया गया। रंगीन रेशमी साड़ी। स्वर्ण के आभूषण। मानिक मोती के हार। बाजीराव ने अपने ये सब आभरण मनूबाई से फिर वापिस नहीं लिए।

मनूबाई के बड़े बड़े गोल नेत्र मणि मुक्ताओं की भी आभा दे रहे थे। दुर्गा सी जान पड़ती थी।

सगाई वाग्दान की रीति होने के बाद मनूबाई नाना साहब और रावसाहब एक ही कमरे में इकट्ठे हुए। वे दोनों लड़के भी रेशमी-वस्त्रों और आभूषणों से लदे थे। सगाई का उत्सव बाजीराव ने धूम-धाम से करवाया। बालकों में बातचीत होने लगी।

नाना—'अब तो मनू तू झांसी से हाथियों पर बैठ कर ब्रह्मावर्त आया करेगी।'

मनू—'एक हाथी पर या दस पर?'

नाना—'एक पर बैठेगी, बाकी पर मन्त्री, सेनापति इत्यादि बैठ आवेंगे।'

मनू—'मुझको तो घोड़े की सवारी पसन्द है।'

नाना—'झांसी में बैठ पावेगी?'

मनू—'कौन रोक लेगा?'

नाना—'सुनता हूँ राजा बड़ा क्रोधी है।'

मनू—'तो क्या मुझे शूली मिलेगी?'

रावसाहब—'अरे नहीं। पर नव कर झुक कर चलना पड़ेगा।'

मनू ने नव कर झुक कर कमरे का एक चक्कर काटा। हँस कर बोली, 'ऐसे? ऐसे चलना पड़ेगा?'

वे दोनों लड़के भी हँस दिए। मनू की कान्ति से वह घर झिलमिला उठा। और जब वे बालक हँसे उनके दांतों की दीप्ति से वह घर दमक उठा।

रावसाहब—'मनू तुम्हारे चले जाने पर हम लोगों को सब तरफ़ सूना सूना लगेगा।'

मनू—'तो साथ चले चलना।'

नाना—'काका एकाध महीने के लिए जाने दे सकते हैं, अधिक समय के लिए नहीं।'

मनू—'अधिक समय तो यहां रहना चाहिए। बाला गुरु से तुमको अभी बहुत बहुत सीखना है। आया ही क्या है? मलखंभ कुश्ती इत्यादि से शरीर को खूब कमाओ। अच्छी तरह से हथियार चलाना सीखो......'

नाना—'और फिर दिल्ली पर धावा बोलदो।'

मनू—'दिल्ली में क्या रक्खा है! दादा, काका और अखाड़े के सब समझदार लोग चर्चा करते हैं कि दिल्ली के कटघरे में अब एक कठपुतली भर रह गई है।'

नाना—'अब तो सब तरफ़ अंग्रेजों का बोलबाला है।'

मनू हँस पड़ी।

रावसाहब ने कहा, 'तो क्या अंगरेज़ हमको वैसे ही निगल जायगे?'

मनू हँसते हँसते बोली, 'नानासाहब को कदाचित् विश्वास नहीं होता कि अंगरेज भी हराए जा सकते हैं।'

नाना ज़रा क्रुद्ध गया। कहने लगा, 'छबीली को सिवाय घमंड मारने के और कुछ आता ही नहीं।'

उन उज्वल विशाल नेत्रों को और भी विस्तार मिला। मनू बोली, 'फिर छबीली कहा?'

नाना हँस पड़ा। 'आजतो तुमने अपने ही मुँह से छबीली कह दिया! ओह मात खा गई!' नाना ने कहा।

मनू भी हँसी। बोली, 'आगे कभी मत कहना।'

नाना ने गंभीर मुख मुद्रा करके कहा, 'अब तो झांसी की रानी कहा करूंगा।'

मनू मुस्कराई।

उस मुस्कान में झांसी का कितना महान और कैसा अमर इतिहास छिपा पड़ा था!

उसी समय वहां बाजीराव और मोरोपन्त आगए। बाजीराव प्रसन्न थे और मोरोपन्त आनन्द विभोर। उन बच्चों को सुखी देखकर वे लोग उस कमरे के वातावरण में समा गए। बाजीराव के मुँह से निकल पड़ा, 'मनू तू ऐसी भाग्यवती हो कि भाग्यों को बांटती रहे।'

मोरोपन्त ने मनू को चिढ़ाने के तात्पर्य से कहा, 'श्रीमन्त ने इसका छुटपन में क्या नाम रक्खा था? मैं तो भूल ही गया।'

मनू ने गर्दन मोड़कर ओंठ सिकोड़े। आंखों में क्रोध लाने की चेष्टा की। 'ऊँ' निकला और मुस्करा दी।

बाजीराव बोले, 'क्या नाम था मनू? तू ही बतलादे बेटी।'

बाजीराव के पेट पर अपना सिर रखकर मनू ने कहा, 'नहीं दादा। छबीली नाम अच्छा नहीं लगता।'

खिलखिला कर सब हँस पड़े।

उसी समय तात्या ने आकर कहा, 'सरकार! लोग इकट्ठे हो गए हैं। बातचीत होनी है।'

वे तीनों चले गए। बैठक में ब्रह्मावर्त निवासी महाराष्ट्र प्रमुख ब्राह्मण विवाह की शर्तों की चर्चा कर रहे थे।

मोरोपन्त के पास सोना-चांदी नहीं था, पर जो कुछ था वह उसे विवाह में लगा देने को तय्यार थे। बिठूर के इन प्रतिष्ठित ब्राह्मणों की मध्यस्थता में तै हुआ कि विवाह का व्यय झांसी के राजा वहन करेंगे और विवाह झांसी में होकर होगा। यह भी तै हुआ कि मोरोपन्त झांसी

में ही स्थायी तौर पर रहा करेंगे और उनकी गणना झांसी के सरदारों में होगी।

झांसी के मिहमान मोरोपन्त को कन्या सहित अपने साथ लिवा ले जाना चाहते थे। लेकिन यह ठीक न समझकर मोरोपन्त उन लोगों के साथ नहीं गए। अपने सुभीते के लिए उन्होंने कुछ समय उपरान्त झांसी आने का संकल्प प्रकट किया। विवाह का मुहूर्त निश्चित करके मिहमान झांसी चले गए। बाजीराव ने बाला गुरू के अखाड़े वाले तात्या को झांसी में मोरोपन्त के लिए निवास-स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिए उन लोगों के साथ भेजा। यह ब्राह्मण था। आगे चलकर इतिहास में यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

[८]

झांसी में उस समय मन्त्रशास्त्री, तन्त्रशास्त्री, वैद्य, रणविद इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ थे। शाक्त, शैव, वाम मार्गी, वैष्णव सभी काफ़ी तादाद में। अधिकांश वैष्णव और शैव। और ऐसे लोगों की तो बहुतायत ही थी जो 'गृहे शाक्ता:, बहिर् शैवा:, सभा मध्येच वैष्णवा:' थे। इन सब के संघर्ष में अनेक जातियां और उपजातियां जिनको शूद्र समझा जाता था उन्नति की ओर अग्रसर हो रही थीं। व्यक्तिगत चरित्र का सुधार, घरेलू जीवन को अधिक शांत और सुखी बनाना तथा जातियों की श्रेणी में ऊंचा स्थान पाना यह उस प्रगति की सहज आकांक्षा थी। ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ पहिनते हैं। यह उनकी ऊंचाई की निशानी है, जो न पहिनता हो वह नीचा। इसलिए उन जातियों के कुछ लोगों ने, जिनके हाथ का छुआ पानी और पूड़ी मिष्ठान्न आम तौर पर ऊंची जाति के हिन्दू ग्रहण कर सकते थे, जनेऊ पहिनने आरम्भ कर दिए। उनके इस काम में कुछ बुन्देलखंडी और महाराष्ट्र ब्राह्मणों का समर्थन था। झांसी नगर में ब्राह्मण काफ़ी संख्या में थे। अकेले महाराष्ट्र ब्राह्मणों के ही तीन सौ घर थे। इन सबका बहुत बड़ा भाग इस प्रगति के विरुद्ध था।

आन्दोलन उठा। शूद्र जनेऊ के अधिकारी नहीं हैं, अधिकांश पंडित इस मत के थे। आन्दोलन के पक्ष में एक विद्वान तान्त्रिक नारायण शास्त्री नाम का था! वह शृंगार शास्त्र का भी पारङ्गत समझा जाता था। उसने शिवाजी के प्रसिद्ध अमात्य बालाजी आवजी के पक्ष में दी हुई महापंडित विश्वेश्वर भट्ट* की व्यवस्था को जगह जगह उद्धृत किया।

यह वाद विवाद कुछ दिनों अपनी साधारण गति से चलता रहा।

* पूरा नाम—ब्रह्मदेव विश्वेश्वर भट्ट कलियुग के व्यास। महाराष्ट्र में गङ्ग भट्ट के नाम से विख्यात।

गङ्गाधरराव के पास भी खबर पहुँची। वह तटस्थ से थे, और कट्टर-पंथियों के नायकों का उन्होंने मज़ाक भी उड़ाया। पर इससे कट्टरपन्थ की धार को ज़रा और तेज़ी मिली। घर घर वाद-विवाद होने लगा अमुक वर्ग शूद्र है, अमुक सवर्ण इस बात पर खूब ले-दे मची। घरों के बाहर के चबूतरों पर, बैठकों में, तम्बोलियों की दूकानों पर, मन्दिरों में, पाठशालाओं में, दावतों-जेवनारों में, बाज़ार-बाज़ार में, चर्चा का यही प्रधान विषय। उस समय झांसी में दो अच्छे कवि थे। एक हीरालाल व्यास, दूसरे 'पजनेश'। हीरालाल ने अपना नाम 'हृदयेश' रक्खा था। हृदयेश वैसे उदार विचारों के थे, उस समय के लिहाज़ से राष्ट्रवादी।

पजनेश श्रृङ्गार-रस के कवि थे। अन्य जाति की एक सुन्दरी रक्खे हुए थे और नारायण शास्त्री के मित्र थे। दोनों रसिक। इसलिए कट्टर-पन्थियों के प्रतिकूल थे। पजनेश ने इस विषय पर कुछ छन्द भी बनाए परन्तु समय की हवा के खिलाफ़ होने के कारण पजनेश के तर्क-वितर्क वाले थोड़े से छन्द बिलकुल पिछड़ गए और हृदयेश का कट्टरपन्थी पक्षपात छन्दों की बाढ़ में बहने लगा।

दुर्गा लावनी वाली एक वेश्या थी। अच्छी गायिका और विलक्षण नर्तकी। उसने बहुमत का साथ दिया। हृदयेश के छन्द गाती और कभी अपनी बनाई हुई लावनियों में उस पक्षपात को चमकाती। नारायण शास्त्री दांत पीसते और सिरतोड़ परिश्रम अपने पक्ष की पुष्टि के लिए करते। पजनेश ने उस पक्ष के समर्थन में कविता करना बन्द कर दिया। हृदयेश को गली-कूचे, हाट-बाज़ार और मन्दिरों में इतना महत्व मिलते उन्हें अच्छा नहीं लगा। खासतौर पर दुर्गा सरीखी प्रसिद्ध नर्तकी और सुन्दरी द्वारा हृदयेश के बनाए हुए छन्दों का गायन। वह नारायण शास्त्री के घर अब और अधिक आने-जाने लगे और अधिक समय तक बैठने-उठने लगे। नारायण शास्त्री का शास्त्रोक्त समर्थन सीख सीखकर वद-विवाद में पूरी मुँहजोरी के साथ उद्धृत करने लगे। एक दिन

उनके एक क्षुब्ध विरोधी ने सब दलीलों का एक जवाब देते हुए तड़ाक से कहा, 'नारायण शास्त्री जिसकी तुम बार बार दुहाई देते हो ब्राह्मण ही नहीं है।'

पजनेश ने अधिकतर क्षुब्धस्वर में पूछा, 'क्यों नहीं है?'

उत्तर मिला, 'वह एक भंगिन को रक्खे हुए है!'

यह अपवाद खुसफुस के रूप में फैला। परन्तु धीरे धीरे। कुछ कट्टरपंथियों ने इसको अपना लिया और कुछ ने असम्भव कह कर अस्वीकृत कर दिया। पजनेश ने सोचा, 'मैं स्वयं निर्धार करूंगा।' नारायण शास्त्री ने भी अपनी बदनामी सुन ली।

[९]

एक दिन जरा सवेरे ही पजनेश नारायण शास्त्री के घर पहुचे। शास्त्री अपनी पौर में बैठे थे जैसे किसी की बाट देख रहे हों। पजनेश को कई बार आओ आओ कहकर बिठलाया, परन्तु पजनेश ने यदि शास्त्री की आंख की कोर को बारीकी से परखा होता तो उनको मालूम हो जाता कि उनके आने पर शास्त्री का मन प्रसन्न नहीं हुआ था। पजनेश पौर के चबूतरे पर दरवाज़े की ओर पीठ करके बैठ गए। शास्त्री दरवाज़े की ओर मुँह किए बैठे थे। शास्त्री ने पान खाने के लिए पानदान बढ़ाया। पजनेश के जी में एक क्षणिक झिझक उठी। उसको दबा लिया और पान लगाकर खा लिया।

शास्त्री ने पूछा, 'कोई नया समाचार ?'

'अब तो आपके चरित्र पर ही लांछन लगाया जाने लगा है।' पजनेश उत्तर देकर पछताए। उस प्रसङ्ग का प्रवेश और किसी तरह करना चाहते थे।

शास्त्री ने आंख चढ़ाकर कहा, 'मैंने भी सुन लिया है।'

पजनेश ने दम ली। शास्त्री कहने गए, 'मूर्खों के पास जब युक्ति नहीं रहती तब वे गालियों पर आजाते हैं। मैं क्या गाली-गलौज के दबाव में शास्त्र-चर्चा को छोड़ दूँगा ? बदमाशों को मुँहतोड़ जवाब दूँगा। उस पक्ष के जितने शास्त्री हैं, चाहे महाराष्ट्र हों चाहे एतद्देशीय, सब इन बनियों-महाजनों और सरदारों के किसी न किसी प्रकार आश्रित हैं। और ये आश्रयदाता हैं—पुरानी लीकों के पुजारी। मक्षिकास्थाने मक्षिका वाले। ये लोग शास्त्र का परायण नहीं करते, अथवा करते हैं तो सच बात न कहकर यजमानों को सन्तुष्ट करने के लिए केवल उनकी मुँह-देखी कहते हैं। तन्त्रशास्त्र वालों का मूल, ज्ञान-विज्ञान और सत्य में है; वे अवश्य पुराणियों और कथा-वाचकों के साथ असत्य की सोंझ नहीं करते।'

पजनेश—'परन्तु इस अपवाद का दमन ज़रूरी है।'

शास्त्री—'व्यर्थ है। बकने दो। मैं परवाह नहीं करता। अपना काम देखो।'

पजनेश—'मेरी समझ में श्रीमन्त सरकार से फ़रियाद करनी चाहिए वे जब कठोर दण्ड देंगे तब यह बदनामी खत्म होगी।'

शास्त्री—'मैं ऐसी सड़ियल बात को राजा के सामने नहीं ले जाना चाहता। राजा तो यों भी उन कथावाचकों की दिल्लगी उड़ाया करते हैं।'

पजनेश—'तब मैं कहूँगा।'

शास्त्री को प्रस्ताव पसन्द नहीं आया; बोले, 'यह और भी बुरा होगा। राजा कहेंगे कि कुछ रहस्य अवश्य है तब तो स्वयं फ़रियाद न करके मित्र से करवाई।' फिर विषयान्तर के लिए कहा, 'आज घर से इतनी जल्दी कैसे निकल पड़े?'

पजनेश ने उत्तर दिया, 'कान नहीं दिया गया तो इसी चर्चा के लिए आपके.........'

पजनेश का वाक्य पूरा नहीं हो पाया था—कि उतरती अवस्था की एक स्त्री डलिया झाड़ू लिए दरवाज़े पर आई। वह बाहर ही रह गई। उसके पीछे उससे सटी हुई एक युवती थी। वह कुछ अच्छे वस्त्र पहिने थी, थोड़े से आभूषण भी। साफ़ सुथरी। युवती उतरती अवस्था वाली स्त्री को एक ओर करके मुस्कराती हुई पौर में आ गई। प्रवेश करते समय उसने पजनेश को नहीं देखा था। परन्तु भीतर घसते ही पजनेश की झांई पड़ गई। ठिठकी। लौटने के लिए मुड़ी और फिर खड़ी रह गई। दूसरी स्त्री से बोली, 'कोंसा पौर में तो कोई कूड़ा नहीं।'

कोंसा ने कहा, 'मैं आती हूँ। ठहरना।'

पजनेश ने देखा ऊँची जाति की सुन्दर स्त्रियों जैसी सुन्दर है। नायिका भेद की कुछ उपमाएँ स्मरण हो आईं, कमलगात, मृगनयन, कपोत-ग्रीवा, कमलनालकटि। परन्तु नायिका भेद का साहित्य और आगे साथ न दे सका। कवि का मन आकर्षण और ग्लानि की खींचतान में पड़ गया।

शास्त्री ने अपनी घबराहट को किसी तरह नियन्त्रित करके उस युवती से कहा, 'थोड़ी देर में आना तब तुम्हारा काम कर दूँगा। समझी छोटी ?'

युवती के खरे रंग पर लाली दौड़ गई। वह 'हां' कहकर गजगति से नहीं, बिल्ली की तरह वहां से भाग गई।

शास्त्री और कवि दोनों किसी एक बड़े बोझ से मानों दब गए। पजनेश के मुँह से वाक्य फूट पड़ा, 'यह कौन है ?'

शास्त्री—'छोटी।'

पजनेश—'यह तो उसका नाम है। वह है कौन ?'

शास्त्री—'स्त्री।'

पजनेश—'यह तो मैं भी देखता हूँ। कौन स्त्री ?'

शास्त्री—'एक काम से आई थी।'

पजनेश—'खैर मुझको कुछ मतलब नहीं, परन्तु यदि······'

शास्त्री ने बात काटकर पूछा, 'परन्तु यदि क्या ? आप क्या इसके सम्बन्ध में मेरे ऊपर सन्देह करते हैं ?'

पजनेश ने एक क्षण सोचकर उत्तर दिया, 'बस्ती के लोग क्या इसी स्त्री की चर्चा करते हुए आप पर लांछन लगा रहे हैं ? यदि ऐसा है तो आपको सावधान हो जाना चाहिए। उस स्त्री की जातिवाले उसका सर्वनाश कर डालेंगे और राजा आपका।'

शास्त्री ने कहा, 'झूठा आरोप है। मैं किसी से नहीं डरता।'

'आप जानें', पजनेश बोले, 'मेरा कर्तव्य था सो कह दिया।'

पजनेश उठे। शास्त्री ने एक पान और खाने का अनुरोध किया, परन्तु पजनेश बिना पान खाए चले गए। बाहर निकल कर उनकी आंख ने इधर उधर उस युवती को ढूंढ़ा, परन्तु वह न दिखलाई पड़ी। उन्हें आश्चर्य था, 'इस जाति में भी पद्मिनी का होना सम्भव है !'

[१०]

पजनेश जिस पक्ष का अभी तक ज़ोरदार समर्थन करते चले आए थे उसको उन्होंने छोड़ दिया। नारायण शास्त्री लगभग खामोश हो गए। नए उपनीतों ने लड़ाई स्वयं अपने हाथों में लेली और एकाध जगह वह लड़ाई जीभ से खिसक कर हाथ और डण्डे पर आ बैठी। झंझट का रूप ज़रा भयानक हो गया। मामला गङ्गाधरराव के पास पहुचा। जाति और धर्म का झगड़ा था, इसलिए उन्होंने दखल देने की ठानी। नए जनेऊ वाले लोग बुलाए गए। प्रमुख ब्राह्मण भी।

उस दिन कुछ वाद विवाद हुआ, पर राजा किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचे। छोटी जाति के कहे जाने वाले जनेऊ धारियों ने नारायण शास्त्री को पेश करने की मुहलत मांगी। एक दिन का समय मिला। उन लोगों ने नारायण शास्त्री को सहज ही राज़ी कर लिया। उसी दिन बिठूर से तात्या दीक्षित और युवक तात्या झांसी आए। दीक्षित ने बिठूर का सब समाचार राजा को सुनाया। राजा ने सब शर्तें मंजूर करलीं। मगनी की रस्म बिठूर में हो आई थी, परन्तु सीमन्ती इत्यादि विवाह की अन्य रीतियां झांसी में किसी मकान में होकर होंगी इसका प्रबन्ध राजा ने अपने कर्मचारियों के सुपुर्द कर दिया। इसके लिए युवक तात्या को झांसी में दो एक दिन के लिए ठहरना पड़ा।

दूसरे दिन जनेऊ सम्बन्धी झगड़े की पेशी होने को थी। युवक तात्या भी इस विलक्षण मुक़द्दमे को सुनना चाहता था। दरबार में गया। उसको फौज़ी अफ़सर की पोशाक पसन्द थी। खास तौर पर लोहे की फ्रांसीसी टोपी।

गङ्गाधरराव ने उसको आदर के साथ बिठलाया। बाजीराव पेशवा का कर्मचारी और भविष्य की ससुराल से आया हुआ मिहमान। राजा अपने पदाभिमान के आतंक में आगए और शास्त्रियों के थोड़े से ही विवाद के सुनने के बाद वे न्याय-निष्ठुरता पर जम गए।

राजा ने अपराधियों से पूछा, 'क्या ब्राह्मण बनना चाहते हो ?'

अपराधियों में एक अधिक साहस वाला था। उसने उत्तर दिया, 'नहीं तो सरकार !'

'फिर यह अनुचित काम क्यों किया ?'

'अनुचित तो नहीं है सरकार।'

'क्यों रे अनुचित नहीं है ?'

'सरकार ! ब्राह्मणों के अलावा और अनेक जातियां भी तो जनेऊ पहिनती हैं।'

'अबे बदमाश, उन जातियों की बराबरी करता है ?'

वह चुप रहा।

गङ्गाधरराव का क्रोध चढ़ लेने पर उतरना मुश्किल से था। बोले, 'जनेऊ तोड़कर फेंक दे और फिर कभी आगे न पहिनना।

उसने हाथ जोड़े और सिर नीचा कर लिया।

राजा ने कड़क कर कहा, 'क्या कहता है ? अपने हाथ से तोड़ता है या तुड़वाऊँ ?'

उसने उत्तर दिया, 'अपने हाथों तो हम लोग अपने जनेऊ नहीं तोड़ेंगे चाहे प्राण भले ही निकल जावें। आप राजा हैं, चाहे जो करें।' गङ्गाधरराव की आंखों के लाल डोरे रक्त हो गए। चोबदार को हुक्म दिया, 'एक पतला तार लाओ। तांबा, लोहा किसी का भी। जल्दी लाओ।'

वह दौड़कर ले आया। आगी मगवाई गई। तार को जनेऊ का आकार बनाकर गरम किया गया। आज्ञा दी, 'यह गरम जनेऊ इसको पहिनाओ।'

अपराधी ने गर्व से सिर ऊँचा किया। आकाश की ओर एक क्षण के लिए हाथ बांधकर देखा और फिर नतमस्तक हो गया। वह गरम जनेऊ उसके कन्धे को छुलाया ही गया था कि युवक तात्या ने विनय की, 'महाराज धर्म की रक्षा करिए। यह ठीक नहीं है।'

गङ्गाधरराव ने वह गरम जनेऊ तुरन्त अलग कर दिया। युवक से बोले, श्रीमन्त पेशवा भी तो यही दण्ड देते।'

'नहीं सरकार', युवक ने निर्भयता के साथ सम्मति दी, 'धर्म अपने अपने विश्वास की बात है। इसमें राज्य को तटस्थ रहना चाहिए।'

'लोकाचार भी?' गङ्गाधरराव ने ज़रा मुस्करा कर प्रश्न किया।

'हां महाराज', युवक ने विनीत और मधुर स्वर में उत्तर दिया, 'लोकाचार समय-समय पर बदलते रहते हैं।'

गङ्गाधरराव के क्रोध ने कुछ ठण्डक पाई। उनकी दृष्टि उस युवक के टोप पर जा टिकी। कुछ क्षण ठहरी। कुतूहलवश पूछा, 'यह टोप क्यों लगाते हो?'

युवक ने उत्तर दिया, 'मैं सिपाही हूँ।'

राजा को इस उत्तर पर हँसी आई। बोले, 'हमारे यहां तात्या दीक्षित एक शास्त्रज्ञ ब्राह्मण है, सो जानते ही हो। तुम सिपाही ब्राह्मण हो, परन्तु नाम से बुलाने में कभी कभी गड़बड़ हो सकती है इसलिए तुमको तात्या टोपीवाले या सीधा टोपे कहें तो कैसा!'

हँसकर युवक ने जवाब दिया, 'श्रीमन्त सरकार, मुझको इसी छोटे से नाम से लोग पुकारते हैं।'

'मुझे भी पसन्द है।' राजा ने कहा। फिर जनेऊ वाले अपराधियों को बनावटी रूखे स्वर में डाटते हुए बोले, 'इस युवक ने तुमको बचा लिया—भाग जाओ।'

वे लोग चले गए। राजा ने तात्या तोपे को नाटकशाला के लिए आमन्त्रित करते हुए कहा, 'टोपे आज रात को हमारी नाटकशाला में रत्नावली नाटक खेला जायगा। आना। बहुत अच्छा अभिनय, गायन-वादन और नृत्य है। पहले कभी देखा?'

'नहीं सरकार', टोपे ने उत्तर दिया।

'पढ़ा है?' दूसरा प्रश्न किया गया।

'नहीं सरकार', टोपे ने फिर उत्तर दिया।

'समय से ज़रा पहले आ जाना', राजा ने प्रस्ताव किया, मैं तुमको कथानक वहीं बतलाऊंगा।'

संध्या के कुछ घड़ी पीछे तात्या टोपे नाटकशाला पहुंच गया। राजा ने रत्नावली का कथानक उत्साहपूर्वक सुनाया और रंगमंच पर आने वाले अभिनेताओं के नाम और गुण बतलाए। कहा, 'रानी वासवदत्ता का अभिनय मोतीबाई करेगी। बड़ी कलावती है, और सागरिका अर्थात रत्नावली का अभिनय जूही करेगी। नृत्य बहुत अच्छा करती है। गानी भी है। नाटकशाला में हाल ही में आई है।' नाटक समय पर शुरू हो गया।

राजा के निकट बैठे हुए नवागन्तुक तात्या टोपे को सभी पात्र बहुधा देखते थे। सुन्दर, बलिष्ठ और किसी उमंग में तना हुआ। और, सिर पर विलक्षण टोपी!

रानी वासवदत्ता का अभिनय मोतीबाई ने बहुत अच्छा किया। सागरिका (रत्नावली) का अभिनय जूही ने खूब निभाया। नाची भी बहुत अच्छा। टोपे को वह सब बहुत भला लगा। परन्तु उसके मुंह से 'वाह' या 'आह' कुछ भी नहीं निकला।

नाटक की समाप्ति पर गङ्गाधरराव रङ्गशाला के शृंगार-कक्ष में नहीं गए। टोपे से पूछा, 'कैसा रहा!'

टोपे ने जवाब दिया, 'सरकार ने जैसा कहा था, ठीक वैसा ही सब हुआ है।'

'नृत्य कैसा था जूही का?' राजा ने सवाल किया।

टोपे ने सावधानी के साथ जवाब दिया, 'मैंने तो इससे पहले नृत्य देखे ही नहीं हैं। मुझे तो बड़ा विलक्षण जान पड़ा।'

राजा प्रसन्न हुए। उन्होंने प्रस्ताव किया, 'थोड़े दिन ठहर न जाओ झांसी में? कुछ और अच्छे अच्छे अभिनय देखने को मिलेंगे। टोपे ने कृतज्ञतापूर्ण स्वीकार किया।

[१७]

जनेऊ विरोधी पक्ष वाले क़िले से परम प्रसन्न लौटे। अपने पक्ष की विजय का समाचार बहुत गम्भीरता के साथ सुनाना शुरू करते थे और फिर पक्ष की मिट्टी पलीत होने की बात खिल-खिलाकर हँसते हुए समाप्त करते थे। शहर भर में धूम मच गई, 'तामे और लोहे के जनेऊ आगी में लाल कर-करके राजा ने पहिनाए। नहीं तो इन्होंने आज जनेऊ पहिने थे, कल वेदों की ऋचाएं आल्हा की तरह गली गली बकते फिरते।'

कोई कहते थे, 'अजी बड़ी कुशल समझो, बिठूर वाले मिहमान दरबार में न होते तो राजा सिर काटकर फेंक देने का हुकुम दे चुके थे।'

नारायण शास्त्री यह सब वाङ्मय चुपचाप सुनते हुए घर आए। उदास थे। किवाड़ लटका कर पौर के चबूतरे की चटाई पर लेट गए। देर तक लेटे रहे। संध्या हो गई। अंधेरा छा गया। वह उठे। दियाबत्ती की। कुछ खा-पीकर फिर पौर में आ बैठे। किसी ने धीरे से साकल खटकाई

नारायण शास्त्री ने किवाड़ खोले। छोटी थी।

भीतर आ गई। शास्त्री ने किवाड़ बन्द करके सांकल चढ़ाली। छोटी चबूतरे पर बैठ गई। शास्त्री की उदासी जा चुकी थी। छोटी के नेत्रों में कटाक्ष सरल था, परन्तु सरल चितवन में ही मद बहुत।

छोटी ने अपने एक घुटने पर ठोढ़ी टेक कर नज़र उठाई। बरौनियां भोंहो के ऊपर जाने को हुईं। बोली, 'मैं तो बड़ी हैरान हूँ। लोग बहुत तङ्ग करते हैं। छेड़ते हैं। आपका नाम ले-ले कर आवाज़ें कसते हैं।'

शास्त्री ने भोंह सिकोड़ कर कहा, 'उँह बकने दो छोटी! ज़रा भी परवाह मत करो।'

मुझको आप ही की फ़िकर रहती है', छोटी बोली, 'अपने लिए कोई खटका नहीं। मेरी जात वाले लोग मुझको जात बाहर करना चाहते हैं। सुग-सुग चल रही है।'

'फिर क्या करोगी?'

'क्या करूंगी—आप ही बतलाइए।'

'देखा जायगा।'

'कब?'

'जब बात सामने आवेगी तब।'

'और ये लोग जो मुझ से छेड़-छाड़ करते हैं, उनका क्या करूं?'

उनसे आंख बरकाओ। कान मूंदकर, अपना रास्ता लिया करो।'

'ऐसी छेड़-छाड़ को तो मैं अनसुनी कर सकती हूँ, करती ही रहती हूं, परन्तु वे प्रेम की बातें करते हैं।'

'अच्छा!'

हां। कोई अप्सरा कहता है। कोई कविता न्योछावर करने की बात कहता है। कोई सौगन्ध खाता है कि तेरे लिए सब कुछ छोड़ने को तैयार हूँ।'

'तुम क्या जवाब देती हो?'

'किसी को कुछ, किसी को कुछ,। कुछ से मैंने पूछा, जनेऊ भी उतार देने को तैयार हो?'

उन लोगों ने इस सवाल के पल्टे में क्या कहा?'

'उन्होंने कहा उतार देंगे।'

छोटी मुस्कराई। शास्त्री को गुस्सा आया। थोड़ा देर सोचते रहे। कभी सिर खुजलाते और कभी छोटी को देखते थे। बोले, 'छोटी यदि बात ऊपर ही आजावे तो मैं मारे जाने तक के लिए तैयार हूँ। तुम पक्की हो?'

उसने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, क्या आपने कभी कोई कचाहट पाई?'

शास्त्री ने नीची गर्दन करके कहा, वैसे ही पूछा था। एक काम करना होगा।

'क्या?' निश्चिन्तता के साथ छोटी ने प्रश्न किया।

शास्त्री ने प्रश्न के रूप में उत्तर दिया, 'क्या इन लोगों के जनेऊ उतरवा सकोगी ?'

छोटी सहज वृत्ति से बोली, 'जनेऊ उतरवाने के बदले में कुछ देना न पड़ेगा ? क्या बड़े बड़े लोग यों ही जनेऊ उतार कर दे देंगे ?'

'कौन कौन लोग हैं ? जाति और नाम तो बतलाओ ।' शास्त्री ने कहा।

छोटी ने ब्योरेवार बतलाया । लम्बी सूची थी । बतलाने में समय लगा । शास्त्री को फिर क्रोध आया । थोड़ी देर जलते-भुनते रहे ।

उसी समय ऐसा जान पड़ा जैसे किसी ने बाहर से सांकल चढ़ा दी हो। छोटी चौंकी । उसने शास्त्री को इशारा किया । शास्त्री धीरे से किवाड़ों के पास गए । आहट ली । बाहर कुछ खुसफुसाहट और पैरों का शब्द सुनाई पड़ा । छोटी को संकेत किया, वह आंगन में चली गई । शास्त्री ने भीतर की सांकल खोलकर किवाड़ खोलना चाहा । न खुला । बाहर से सांकल चढ़ी हुई थी । उन्होंने भीतर की सांकल फिर चढ़ाली । आंगन में छोटी के पास गए ।

कहा, 'ये लोग किसी पाजीपन पर तुले हुए हैं ।'

छोटी ज़रा आतुरता के साथ बोली, 'मैंने अभी-अभी पूछा था कि ऐसा समय आने पर क्या करूँ । समय आगया । अब बतलाइए ।'

शास्त्री ऊपर से दृढ़ और भीतर से घबराए हुए थे । चुप रहे ।

छोटी शान्ति के साथ बोली, 'आप मेरी चिन्ता छोड़ें । किसी तरह अपने को बचावें । मुझको चाहे मार कर घर के कुएँ में डालदें । कहदें कि छोटी यहां कभी आई ही नहीं ।'

शास्त्री ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'क्या कहती है छोटी ? मेरे भीतर अभी कुछ बाक़ी है, जो मुझको मरने के समय भी धीरज दे सकता है । अब सब उघर गया । राजा के सामने जाना पड़ेगा । मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा बाल बांका न हो । कह देना कि शास्त्री ने ज़बरदस्ती की । मैं वैसे भी मारा जाऊँगा । तुम इस तरह बच जाओगी ।'

'कभी नहीं', छोटी गर्व के साथ बोली, 'अगर हमारी जात में कोई गुण है तो एक--हम लोग बेईमानी कभी नहीं कर सकते।'

शास्त्री सोच-विचार में पड़ गए।

कुछ देर बाद उन्होंने एक अनुरोध किया, 'कुछ न कुछ झूठ बनाना पड़ेगा।'

छोटी बोली, 'सिवाय उस झूठ के और जो कहिए कह दूँगी।'

शास्त्री ने कहा, 'तुम कुछ ब्राह्मणों, बनियों इत्यादि के नाम लेकर कह सकती हो कि इन-इन लोगों ने अपने जनेऊ उतार कर तुम्हारे हवाले किए हैं।'

छोटी ने उत्तर दिया, 'जिन जिन लोगों ने मेरा धर्म मांगा, उन्हीं-उन्हीं लोगों का नाम लूंगी। औरों के नहीं। पर जनेऊ कहां हैं?'

शास्त्री ने समाधान किया, 'जनेऊ मैं देता हूँ। नए हैं, उनको मैला कर लेना। कुछ उतारे हुए भी हैं, उनको नयों में मिला लेना।'

छोटी बोली, 'जल्दी करिए। अभी तो मैं निकल जाऊँगी।'

शास्त्री ने पूछा, 'कैसे?'

छोटी ने कहा, 'आप अपना काम देखिए। मैं निकल जाऊँगी।'

शास्त्री ने बहुतसे नए-पुराने जनेऊ छोटी को दे दिए।

छोटी ने प्रस्ताव किया, 'आप पौर का दिया भीतर रख दीजिए। किवाड़ खुलवाने का उपाय कीजिए। तब तक मैं खपरैल पर से कूदकर घर जाती हूं। देर लगेगी तो ये लोग मेरी जाति वालों को दरवाज़े पर इकट्ठा कर देंगे, और फिर मैं बहुत मारी-पीटी जाऊँगी। अभी तो मुझको कोई न छुएगा।'

शास्त्री ने मान लिया। उन्होंने किवाड़ खोलने की कोशिश की, परन्तु न खुले। हल्ला करना ठीक न समझा। छोटी खपरैल से कूदकर निकल गई। परन्तु उसके मार्ग में रुकावट डाली गई। फिर भी वह अपने घर पहुंच गई, यद्यपि घिरी हुई थी।

[१२]

जनेऊ का प्रश्न समाप्त नहीं हुआ था कि यह विकट रौरा खड़ा हो गया। जिन थोड़े से लोगों का जीवन विविध समस्याओं के कांटों पर होकर सफलता पूर्वक गुज़र रहा था, वे तो नारायण शास्त्री के कृत्य की निन्दा करते ही थे, परन्तु जिनका भीतरी जीवन—बाहरी छल से भिन्न था—जो जीवन के कांटों पर गुलाब की सेजों को अंगूरी की—या महुए की—मोहक सिंचाई से मीठा बना बनाकर हर घड़ी को मौजों में बांट बांटकर, चल रहे थे—उन्होंने नारायण शास्त्री की सबसे ज्यादा बुराई की। पाखण्डी है, पाजी है, धर्म-द्रोही, राक्षस है, इत्यादि—और उसको कम से कम प्राणदण्ड मिलना चाहिए। और छोटी को? उसके टुकड़े टुकड़े करके स्यारों को खिला देना चाहिए, क्योंकि उसीने तो एक विद्वान ब्राह्मण को पतित किया! इतनी बड़ी बात बिना विलम्ब राजा के पास न पहुंचे, यह असम्भव था। राजा ने जब सुना, कभी हँसी आती थी और कभी उनको क्षोभ—सन्ताप होता था।

छोटी और नारायण शास्त्री बुलाए गए। मालूम होता था जैसे शास्त्री कुछ घण्टों में ही बूढ़े हो गए हों। छोटी चिन्तित थी, परन्तु उसके पैर जम—जमकर क़िले की ओर गए थे। जब वह गङ्गाधरराव के सामने पहुँची, तब उसको पसीना ज़रूर आगया था।

इस मामले का निर्धार सुनने के लिए भी तात्या टोपे गया।

नारायण शास्त्री को उस बीभत्स में डूबा देखकर राजा को बड़े ज़ोर की हँसी आने को हुई। उन्होंने कठोरता के साथ अपना दुस्सह संयम किया। पूछ-ताछ शुरू की।

राजा—'यह क्या हुआ शास्त्री?'

शास्त्री—'जो होना था होगया सरकार।'

राजा—'कैसे हुआ?'

शास्त्री—'क्या कहूँ श्रीमन्त!'

राजा—'बतलाना तो पड़ेगा। न बतलाने से ज्यादा नुकसान होगा।

शास्त्री—'क्या बतलाऊँ महाराज ?'

राजा—'यह कैसे हुआ ?'

शास्त्री—'तप और संयम के अतिरेक से। जब शरीर ने ताड़ना न सह पाई, तब जो-जो कुछ उसके सामने आया, ग्रहण कर लिया।'

राजा—'तुमको तो लोग बहुत दिन से शृङ्गार शास्त्री कहते हैं।'

शास्त्री—'वह तो उपकरण मात्र था।'

राजा—'सुनता हूं कोकशास्त्र का भी अध्ययन किया है।'

शास्त्री—'हां सरकार।'

राजा—'क्यों' ?'

शास्त्री—'उस शास्त्र में अपने संबंध के प्रसङ्ग ढूंढ़ने के लिए, और यह जानने के लिए कि इसमें ऐसा क्या है, जिसने महर्षि वात्स्यायन से कामसूत्र की रचना करवाई।'

राजा—'क्या पाया ?'

शास्त्री—'प्रकृति के साथ जीवन की टक्कर।'

राजा—'आगे क्या पाओगे ?'

शास्त्री—'यह मेरे हाथ में नहीं है सरकार।'

राजा—'तब किसके हाथ में है ?'

शास्त्री—'सरकार के।'

राजा ने थोड़ी देर सोचा। उपस्थित लोगों पर दृष्टि घुमाई। छोटी की विनम्र आंख को देखा। बड़े पलक और बड़ी बरौनियां। फिर अपने ब्राह्मणत्व का ख्याल किया। बोले, 'इस लड़की को तुरन्त झांसी का राज्य छोड़ना पड़ेगा। इसके लिए देश-निकाले का दण्ड काफ़ी है। तुमको......'

छोटी ने तुरंत दृढ़ स्वर में टोका, 'श्रीमन्त सरकार शास्त्री महाराज का कोई कसूर नहीं है। मैं इनके पीछे पड़ गई, इसलिए इनका पतन

शास्त्री के मुँह से यकायक निकला, 'नहीं सरकार।'

गङ्गाधरराव कुछ क्षण विचार निमग्न रहे। फिर गम्भीर स्वर में बोले, 'इस स्त्री के साथ और किसी का भी संसर्ग नहीं है, मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ। इन यज्ञोपवीतों की कहानी तुम्हारी ही गढ़न्त जान पड़ती है। मैं सूत के इन डोरों को छूना नहीं चाहता। यदि परीक्षा करूं तो पुरानों में ब्रह्मगांठ लगी होगी और नए बिना किसी गांठ के होंगे। ये सब तुम्हीं ने इसको दिये होंगे।'

शास्त्री पसीने में तर हो गए।

राजा कहते गए, 'तुम समझते होगे कि तुम्हारे सिवाय सब मूर्ख हैं। तुमको अवश्य कठोर दण्ड देता, परन्तु तुमको दण्ड देने से इस अभागी का दण्ड भार बढ़ जावेगा।'

छोटी रोने लगी। बोली, 'मैं भुगतने को तैयार हूँ।'

राजा ने रूखे स्वर में शास्त्री से कहा, 'तुम प्रायश्चित पंचगव्य के लिए तैयार नहीं हो, इसलिए तुमको भी झांसी तुरन्त छोड़नी पड़ेगी।'

शास्त्री प्रसन्न हुए। बोले, 'बड़ा अनुग्रह हुआ। मैं इसी के साथ झांसी छोड़ देने को तैयार हूं।'

वे दोनों चले गए।

राजा ने तात्या टोपे की ओर देखा! वह बिलकुल संतुष्ट जान पड़ता था।

राजा ने सोचा, 'बहुत सस्ता छूटा यह। वह लड़की छोटी जाति की होने पर भी इस ब्राह्मण से बड़ी है। देश-निकाला दे दिया, काफ़ी है। बिठूर के लोग भी इस निर्धार से संतुष्ट होंगे। अधिक कड़ा दण्ड देने से झांसी के बाहर बदनामी ज्यादा होती। और फिर अंगरेज़...अंगरेज़...'

फिर और आगे उन्होंने नहीं सोच पाया।

छोटी और शास्त्री दूसरे दिन झांसी छोड़कर चले गए।

[१३]

मोरोपन्त, मनूबाई इत्यादि के ठहरने के लिए कोटीकुओं के पास एक अच्छा भवन शीघ्र ही तै हो गया था। तात्या टोपे कुछ दिन झांसी ठहरा रहा। निवासस्थान की सूचना बिठूर शीघ्र भेज दी।

टोपे को बिठूर की अपेक्षा झांसी ज्यादा पसन्द आई। उसकी कल्पना गङ्गाधरराव की नाटकशाला में बार बार उलझ जाती थी। इसके सिवाय झांसी का रहन-सहन, यहां के स्त्री पुरुष और यहा का प्राकृतिक वातावरण उसको ब्रह्मावर्त के गङ्गातट से अधिक मनोहर लगे। जब बिठूर लौटा अवसर पाकर उन बालकों ने झांसी के विषय में सवालों की झड़ी लगा दी।

नाना—'क्या झांसी बिठूर से बड़ा नगर है?'

तात्या—'कुछ बड़ा ही होगा। क़िला बड़ा है। नगर के चारों ओर परकोटा है। बस्ती पहाड़ी की ऊँचाई-निचाई पर बसी है इसलिए बरसात में कीचड़ नहीं मचती होगी। घर घर कुएँ हैं। नगर के भीतर इधर-उधर फल-फूलों के बग़ीचे। भीतर-बाहर तालाब, अच्छे अच्छे मन्दिर। क़िला पहाड़ी पर है। उसमें राजमहल है। महादेव और गणपति के मन्दिर हैं। एक बड़ा महल नीचे है। महल के पीछे नाटकशाला।'

मनू—'नाटकशाला! उसमें क्या होता है?

तात्या—'अच्छे अच्छे नाटक खेले जाते हैं। गायन-वादन होता है।

मनू—'मैं भी देखूंगी।'

तात्या—'श्रीमन्त राजा साहब तो नित्य ही नाटकशाला में जाते हैं। मुझको भी बुलवा लेते थे।'

मनू—'हाथी कितने हैं?'

तात्या—'दस या शायद ज्यादा हों।'

मनू—'घोड़े?'

तात्या—'सरकार को घोड़े की सवारी पसन्द नहीं है। तामझाम में चलते हैं।'

नाना—'सेना कितनी है ?'

तात्या—'कई हज़ार हैं।'

मनू—'ठीक नहीं गिनी ?'

तात्या—'बिलकुल ठीक तो नहीं, परन्तु आठ और दस हज़ार के बीच में होगी।'

मनू—'लोग कैसे हैं ?'

तात्या—'उनके शरीर दृढ़ और स्वस्थ हैं। व्योपार अच्छा है। शहर में चहल-पहल मची रहती है। धन-धान्य खूब है। ग़रीबी बहुत कम देखने में आई। स्त्री-पुरुष सुखी दिखलाई पड़ते थे। संध्या समय लोग फूलों की माला डाले बग़ीचों और बाज़ारों में घूमते हैं। स्त्रियां घी के दिए थालों में सजाकर पूजन के लिए लक्ष्मी जी के मन्दिर में जाती हैं।'

रावसाहब—'कुश्ती मलखम्भ के अखाड़े हैं ?'

मनू—'मैं भी यही पूछना चाहती थी।'

तात्या—'हैं तो, परन्तु लोगों में गाने-बजाने का अधिक शौक़ दिखलाई पड़ता है।'

रावसाहब—'क्या रास्तों में गाते-बजाते फिरते हैं ?'

तात्या—'नहीं तो।'

मनू—'फिर क्या नाटकशाला में गाते-बजाते हैं ?'

तात्या—'नहीं—घरों पर, समाजों में, उत्सवों पर। जान पड़ता है मानो गाने का मिस ढूंढ रहे हों। स्त्रियां तो गाने का कोई न कोई बहाना लिए रहती हैं। पीसने के समय तो सब कहीं स्त्रियां गाती हैं, परन्तु झांसी में पानी भरने जावें तो गाएँ, पानी भरते समय गाएँ। शायद मरती भी गाते गाते होंगी।'

मनू—'झांसी में तोपें कितनी हैं ?'

तात्या—'बड़ी तोपें चार हैं—बहुत बड़ी हैं। छोटी तो बहुत हैं।'

मनू—'क़िले के भीतर तालाब है?'

तात्या—'नहीं। एक पोखरा है। एक बड़ा कुआँ भी है, उसमें बहुत पानी रहता है। न जाने पहाड़ पर किसने खुदवाया होगा।'

नाना—'आदमियों ने खुदवाया होगा, देव-दानव तो खोदने आए न होंगे।'

तात्या को बाजीराव ने बुलवाया बाजीराव ने पूछा, 'बच्चों में क्या बात कर रहे थे?'

तात्या ने उत्तर दिया, 'झांसी का हाल सुना रहा था।'

बाजीराव—'नारायण शास्त्री वाली बात तो नहीं सुनाई?'

तात्या—'नहीं सरकार। और न नाटकशाला की गाने-नाचने वालियों की।'

बाजीराव—'तुम मोरोपन्त के साथ कुछ दिन के लिए झांसी जाओगे?'

तात्या—'हां श्रीमन्त।'

बाजीराव—'मुहूर्त पास का निकला है। जल्दी जाना होगा!'

[१४]

यथा समय मोरोपन्त मनूबाई को लेकर झांसी आ गए। तात्या टोपे भी साथ आया।

विवाह का मुहूर्त शोधा जा चुका था। धूमधाम के साथ तैयारियां होने लगीं।

नगर वाले गणेश मन्दिर में सीमन्ती, वर पूजा इत्यादि रीतियां पूरी की गईं। राजा गङ्गाधरराव घोड़े पर बैठकर गणेश मन्दिर गए। उस दिन मनूबाई ने पहले पहल गङ्गाधरराव को देखा। गङ्गाधरराव का मुख-सौंदर्य अब भी वैसा ही था। आंखों का तेज लालडोरों के कारण आकर्षक कम, भयानक ज्यादा मालूम होता था। पेट कुछ बढ़ा हुआ, परन्तु भद्दा नहीं लगता था। रङ्ग सांवलापन लिए हुए। सारी देह एक बलवान पुरुष की।

मनू का ध्यान शरीर के इन अंगों पर एकाध क्षण ठहर कर उनके सवारी के ढङ्ग पर जा अटका। वह मुस्कराई। अपनी सम्मति प्रकट करने के लिए आस पास लड़कियों में किसी उपयुक्त पात्र को मन ही मन ढूंढ़ने लगी। उस समय मनू ने सोचा, 'यदि इस घड़ी नाना या राव यहां होते तो उनको सब बातें सुनाती समझाती।'

राजा गङ्गाधरराव धीरे धीरे, रुकते रुकते, गणेश मन्दिर को जा रहे थे। नगर निवासी प्रणाम करते जाते थे और वे मुस्करा मुस्करा कर प्रणाम का जवाब देते जाते थे।

यकायक मनू के सामने एक मराठा-कन्या आई। आयु १५ से कुछ ऊपर। शरीर छरेरा। रङ्ग हलका सांवला। चेहरा ज़रा लम्बा। आंखें बड़ी। नाक सीधी। ललाट प्रशस्त और उजला। जैसे ही वह मनू के पास आई उसने आंखें नीची करके आदरपूर्वक प्रणाम किया। मनू को ऐसा लगा मानो पहले से परिचित हो। उससे बात करने की तुरन्त इच्छा उमड़ी।

बोली, 'तुम कौन हो ?'

उसने उत्तर दिया, 'आपकी दासी, सुन्दर मेरा नाम है ।'

मनू—'मेरी दासी ! कैसे ?'

सुन्दर—'आप हमारी महारानी हैं । मैं सेवा में रहूँगी । आपकी दासी होकर अपना भाग्य बढ़ाऊँगी ।'

मनू—'मेरी दासी कोई न हो सकेगी । मेरी सहेली होकर रहोगी ।' मनू ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा । वह झिझकी । मनू ने उसका हाथ ढीला करके पूछा, 'तुम क्या सचमुच सदा मेरे पास रहोगी ?'

'सदा सरकार', सुन्दर ने उत्तर दिया, 'हम १६ दासियां आपकी सेवा में रहा करेंगी ।'

मनू को हँसी आई, परन्तु उसने रोकली । गङ्गाधरराव की सवारी [illegible] सामने थी । मनू ने धीरे से सुन्दर से कहा, 'तुम घोड़े पर चढ़ना [illegible] हो ?'

सुन्दर बोली, 'थोड़ा सा । दौड़ना खूब जानती हूँ । कोस भर दौड़ जाऊँगी और हाँफ न आयगी ।'

'धीरे धीरे जाने वाले घोड़े को भी यह जांघ से कसे जारहे हैं !' गङ्गाधरराव की ओर संकेत करके मनू ने कहा ।

सुन्दर ने चकित होकर पूछा, 'आपने कैसे जाना सरकार ?'

मनू हँसी । दांतों की सफ़ेदी चेहरे के निखरे गोरे रङ्ग से होड़ लगाने लगी ।

मनू ने कहा, 'तुम हथियार चलाना जानती हो सुन्दर ?'

'नहीं सीखा सरकार ।' सुन्दर ने जवाब दिया ।

इतने में गङ्गाधरराव की सवारी आगे बढ़ गई । दो लड़कियां और मनू के निकट आईं । सुन्दर की ही उम्र की एक । दूसरी लगभग १४ वर्ष की । उन्होंने भी सिर झुकाकर प्रणाम किया ।

सुन्दर ने परिचय दिया, 'इसका नाम मुन्दर है और इसका काशी । मेरी तरह ये भी आपकी दासियां हैं ।'

मनू ने बिना किसी प्रयत्न के कहा, 'मेरी सहेलियां बनकर रहोगी। दासी मेरी कोई भी न होगी।'

वे दोनों हर्ष के मारे फूल गईं। काशी ज़रा छोटे क़द की और सुगठित शरीर वाली। सुन्दर छरेरे शरीर की और ज़रा लम्बी। सुन्दर और काशी दोनों गौर वर्ण की। सुन्दर का चेहरा बिलकुल गोल, आंखें सुन्दर से कुछ ही छोटीं, परन्तु चञ्चल और तेज़। काशी की कुछ बड़ीं और स्थिर।

मनू ने तीनों से अलग अलग प्रश्न किए।

'तुम लोग कौन हो?'

तीनों ने उत्तर दिया, 'कुणभी।'

'झांसी में कब आईं?'

'पुरखे आए थे।'

'झांसी के आसपास घूमी हो?'

'बहुत कम।'

'घोड़े पर चढ़ना जानती हो?'

'थोड़ा, थोड़ा।'

'हथियार चलाना?'

सुन्दर तो पहले ही बतला चुकी थी। मुन्दर ने तलवार चलाना सीखा था और काशी ने बन्दूक़। मनू को जानकर अच्छा लगा।

बोली, 'मैं तुम लोगों को घोड़े पर चढ़ना सिखलाऊँगी। हथियार चलाना भी। मलखम्भ जानतीं हो?'

वे तीनों सिर नीचा करके मुस्कराईं। सिर हिला दिए—नहीं जानतीं।

'गाना-बजाना जानती हो?' मनू ने बहुत सूक्ष्म चुटकी लेते हुए कहा।

सुन्दर बोली, 'वह तो हम तीनों जानती हैं। हम लोग जब सरकार की मर्ज़ी होगी, सुनावेंगी।'

मनू ने कहा, 'जब इच्छा होगी सुनूँगी। परन्तु मुझको उसका शौक़ कुछ-कम है। वह अच्छा है, किंतु घुड़सवारी, हथियार चलाना, मलखंभ, कुश्ती, प्राचीन गाथाओं का श्रवण—ये सब—मुझको बहुत अधिक भाते हैं।'

'कुश्ती!' सुन्दर ने अपने बड़े नेत्रों को ज़रा घुमाकर आश्चर्य प्रकट किया।

मनू के ओठों पर सहज मुस्कराहट आई। बोली, 'हां कुश्ती भी। यह बहुत आवश्यक है। फिर किसी समय बतलाऊँगी। अभी अवसर नहीं है।'

इतने में कुछ और स्त्रियां पास आने को हुईं, परन्तु कुछ दूर ठिठक गईं। मनू ने उनको उस समय अपने पास बुला लेने की ज़रूरत नहीं समझी।

मनू कहती गई, 'पुरुषों को पुरुषार्थ सिखलाने के लिए स्त्रियों को मलखंभ, कुश्ती इत्यादि सीखना ही चाहिए। खूब तेज़ दौड़ना भी। नाचने-गाने से भी स्त्रियों का स्वास्थ्य सुधरता है, परन्तु अपने को केवल मोहक बना लेना ही तो स्त्री का समग्र कर्तव्य नहीं है।'

चौदह वर्ष की मनू अपने से अधिक वय वाली लड़कियों से जो कह गई, वह पास ठिठकी हुई उन स्त्रियों ने भी सुन लिया।

सुन्दर, मुन्दर और काशी यह सब सुनकर ज़रा झेंपीं। उनकी मुस्कराहट चली गई। परन्तु मनू अब भी मुस्करा रही थी। वह मुस्कराहट उन लड़कियों को, उन स्त्रियों को जीवन के कोष में से कुछ दे सा रही थी। उन लड़कियों का सहमा हुआ जी शीघ्र ही लहलहा गया। अन्य लड़कियों तथा स्त्रियों को भी मनू ने अपने निकट बुला लिया। ये स्त्रियां उन तीन लड़कियों की अपेक्षा अधिक सहमी हुई थीं।

मनू ने उनको अपना मन खोलने के लिए उत्साहित किया। स्त्रियों की ओर से प्रस्ताव, गायन इत्यादि द्वारा अपने हर्ष को प्रदर्शित करने का हुआ। उसने बिना किसी विशेष उत्साह के स्वीकार किया।

जो और लड़कियां उन स्त्रियों के साथ थीं, उनके विषय में मनू ने प्रश्न किए। वे सब दासियों के रूप में मनू के पास रहने के लिए नियुक्त करदी गई थीं, क्योंकि विवाह का मुहूर्त आ रहा था। उसके बाद भी उनको मनू के पास ही रहना था।

ये लड़कियां अब्राह्मण जातियों में से रूप, रस इत्यादि के पैमानों से तौलकर चुनी जाती थीं और उनको आजन्म अपनी रानी के साथ कुमारी होकर रहना पड़ता था। यदि वे विवाह कर लेतीं तो उनको महल की नौकरी छोड़नी पड़ती थी। दहेज़ में दासियों और दासों का देना महाराष्ट्र में नहीं था, शायद राजपूताने के कुछ रजवाड़ों से वहां पहुंचा हो। शायद इसका आरम्भ, भिक्षुणी और देवदासी प्रथा से निसृत हुआ हो। इन दासियों के जीवन कितने कुतूहलों और कितने कोलाहलों से भरे रहते होंगे और इनके जीवन कितने दुःखांत होते होंगे उसकी कल्पना की जा सकती है। इनको जन्म देने वाले लगभग उसी प्रकार के माता-पिता, केवल धन-लोभ से इनको महलों के सुपुर्द कर देते थे। फिर, या तो वे अपने सौंदर्य के ज़माने में राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से अलग हो जाती थीं।

मनू ने दासियों के इस चित्र की कुछ कल्पना की।

उसने अपनी उसी सहज मुस्कराहट से कहा, 'मैं तुमको दासियां बना कर नहीं रक्खूँगी। तुम मेरी सखी-सहेली बनोगी। केवल एक शर्त है।'

मनू ने अपने विशाल नेत्रों की दृष्टि को उन पर बिखेरा। बोली, 'जानती हो क्या ?'

उन सबों ने 'नाहीं' के सिर हिलाए।

मनू ने कहा, 'मेरे साथ जो रहना चाहे—उसको घोड़े की सवारी अच्छी तरह आनी चाहिए। तलवार, बन्दूक़, बर्छा, छुरी-कटार, तीर-तमंचा इत्यादि का चलाना-अच्छी तरह चलाना सीखना पड़ेगा। दोनों हाथों से हथियार एक से चलाना सीख जावें तो और भी अच्छा।'

पुरुषों जैसे काम सीखने की बात सुनते ही स्त्रियों के चेहरों पर लाज की हल्की लाली दौड़ गई। परन्तु मन के हर्ष और उत्साह ने लाज को दबा दिया।

काशी ने स्थिर दृष्टि और स्थिर स्वर में कहा, हम लोगों को जो कुछ सिखलाया गया है उतना ही हम जानती हैं। अब जो कुछ सरकार की आज्ञा होगी उसको हम लोग जी लगाकर और दृढता के साथ सीखेंगी। परन्तु कुश्ती और मलखंब कौन सिखलावेगा?'

मनू ने तुरन्त बतलाया, 'जितना मैं जानती हूँ, मैं सिखलाऊंगी। बाक़ी बिठूर के प्रसिद्ध आचार्य बाला गुरू। उनको यहां बुला दूंगी।'

बाला गुरू का नाम सुनते ही लड़कियां शरमा गईं और उनसे बड़ी उम्र की स्त्रियां हँस पड़ीं। उस हँसी पर मनू के मन में क्षोभ उठा, परन्तु मनू ने उसको नियन्त्रित कर लिया।

फिर उसी मुस्कराहट के साथ बोली, 'बाला गुरू देवता है, और न भी हों तो तुमको क्या डर? स्त्रियां दृढ़ता का कवच पहिनें तो फिर संसार में ऐसा पुरुष कोई हो ही नहीं सकता जो उनको लूट ले। बाला गुरू के साथ लड़कर कुश्ती सीखने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। वह बतलाया भर करेंगे। अखाड़े में उतर कर सिखाऊंगी मैं।'

गणेश मन्दिर पास ही था। वाद्य बज रहे थे। उनमें होकर कभी कभी मीठी शहनाई की चहक भी सुनाई पड़ जाती थी। स्त्रियां मनू से शृंगाररस की बात करने आई थीं। अपने आदर के झरोखे में होकर। मनू के मन की धारा गङ्गाधरराव की सवारी, बाजों-गाजों और झांसी निवासियों के हर्षोन्माद से संघर्ष पाकर दूसरी ओर चली गई थी।

सब स्त्रियां-लड़कियां भी-अपने अच्छे से अच्छे वस्त्र और आभरण पहने हुए थीं। केश खूब संवारे गए थे और उनमें रंग-बिरंगे और सुगन्धित फूल गुँथे हुए थे। मनू के केशों में भी फूल थे। मनू ने हँसकर

कहा, 'तुम लोग यदि कुश्ती सीखने के लिए इसी समय अखाड़े में उतरो तो क्या हो ?'

मुन्दर मुस्कराकर बोली, 'तो इन फूलों से सारा अखाड़ा भर जायगा ।'

मनू ने हँसकर कहा, 'और तुम्हारे बालों में अखाड़े की मिट्टी भर जायगी ।'

वे सब खिलखिला पड़ीं ।

मनू बोली, 'परन्तु वह मिट्टी तुम्हारे केशों पर इन फूलों से कहीं अधिक सुहावनी लगेगी ।'

मुन्दर बोली, 'सरकार, बालों की शोभा मिट्टी से !'

मनू ने मुन्दर का कन्धा हिलाकर कहा, 'ये फूल कहां से आए ? कहां जायंगे ? ये क्या मिट्टी से बढ़कर हैं ?'

मनू की बात में, अपनी दादियों से सुनी हुई संसार की अस्थिरता की झांई सुनकर वे सब सहम गईं ।

मनू समझ गई । बोली, 'नहीं फूलों से नाता बनाए रक्खो, परन्तु मिट्टी से सम्बन्ध तोड़ कर नहीं ।'

स्त्रियों के मन पर एक दार्शनिक झंकार ठोकर दे गई । उन्होंने ऊँचे स्वर में 'हां, हां' कही, परन्तु आंखों से ऐसा जान पड़ता था, मानो उनका आनन्द कहीं भाग गया, उन्हें अपनी असंगत अवस्था में क्लेश होने लगा मानो मनू ने उनके फूलों की भर्त्सना की हो और उनके आदर का अपमान ।

मनू ने उन सब स्त्रियों से कहा, 'तुम गणेश मन्दिर में जाकर देखो क्या होता है । मैं तब तक इन तीनों से बात करती हूँ । परन्तु एक बात सुनती जाओ । मुझको तुम्हारे फूल बहुत अच्छे लगे इनको फेंक मत देना ।'

इस बात पर प्रसन्न होकर वे सब चली गईं । केवल सुन्दर, मुन्दर और काशी रह गईं ।

मनू बोली, 'मैं सुनती हूँ झांसी के लोग फूलों को बहुत प्यार करते हैं। अच्छा है। मुझको भी पसन्द हैं, परन्तु क्या दुबले पतले घोड़े पर सोने-चांदी का ज़ीन अच्छा लगता है?'

सुन्दर ने उमंग के साथ तुरन्त कहा, 'सरकार मैं आपकी बात अब समझी।'

[१५]

सीमन्ती इत्यादि की प्रथाएं पूरी होने के उपरान्त गणेश मन्दिर में गायंन-वादन और नृत्य हुए और, एक दिन विवाह का भी मुहूर्त आया।

विवाह के उत्सव पर आसपास के राजा भी आए। उनमें दतिया के राजा विजयबहादुर सिंह खासतौर से उत्सव प्रदर्शन कर रहे थे।

कोठी कुआं वाले भवन में भांवर पड़ने को थी। बाहर गायन-वादन और नृत्य हो रहा था। सामने वाले मकान में मोतीबाई, जूहीबाई इत्यादि अभिनेत्रियां झरपां के पीछे वस्त्राभूषणों और पुष्पों से लदी बैठी थीं। बाहर दुर्गाबाई का नृत्य और उस काल के प्रसिद्ध धुरपदिये मुग़लखां का गायन अभ्यन्तर के साथ हो रहा था। मुग़लखां के ध्रुवपद-आलाप इत्यादि पर अनेक लोग वाह वाह कर रहे थे, परन्तु जनता दुर्गाबाई के नृत्य के लिए बार-बार अकुला उठती थी। इसलिए मुग़लखां ने अपना तम्बूरा रख दिया और दुर्गाबाई को खड़े होने का इशारा किया। राजा विजयबहादुर महफ़िल में मसनद पर बैठे थे। उन्हें ऊँचे दरजे के गायन और नृत्य दोनों का बहुत व्यसन था। दुर्गा-बाई नृत्य करने को खड़ी होने ही को थी कि भीतर से इत्र पान का सामान आया। सोने के वर्क़ों से लिपटे पान और बढ़िया इत्र। पान लाने वाले एक सरदार थे। उन्होंने कहा कि भांवर शुरू हो गई। उसी समय भीतर एक घटना हुई।

पुरोहित ने मनूबाई की गांठ गङ्गाधरराव से जोड़ने के लिए वर की चादर और वधू की साड़ी के छोर हाथ में पकड़े। वृद्धावस्था के कारण हाथ काँप रहा था। गांठ लगाने में ज़रा सा विलम्ब हुआ। गांठ अच्छी तरह नहीं *बँध पारही थी। बार-बार हाथ काँप जाता था।

मनु ने सोचा 'मैं ही क्यों न इसको बांध दूँ ?'

परन्तु उसने विचार को नियन्त्रित कर दिया। गांठ तो पुरोहित ने बांधली, लेकिन वह कांपते हुए हाथों से गांठ का फन्दा कसने में कुछ क्षणों का विलम्ब कर रहे थे। मनू से न रहा गया। बिना मुस्कराहट के और दृढ़ स्वर में बोली, 'ऐसी बांधिए कि कभी छूटे नहीं।'

गङ्गाधरराव सिकुड़ गए। मोरोपन्त मन ही मन क्षुब्ध हुए। ओंठ सिकोड़ लिया। परन्तु पुरोहित खिल खिलाकर हँस पड़ा। उसके पास-वाले सब स्त्री पुरुष हँस पड़े। क़हक़हे लग गए। मनू-पुलकित होगई। आंखें नीची करके उसने थोड़ा सा मुस्करा भर दिया। इस क़हक़हे की आवाज़ बाहर पहुँची और मनू की कही हुई बात भी। वहां भी क़हक़हे लगे। चारों ओर उस वाक्य की चर्चा हो उठी।

सामने वाले मकान में भी समाचार पहुँचा। जूही ने, जो अब यौवनावस्था में लहराने को थी, कहा, 'मैं तो नाचना चाहती हूँ। ऐसे अवसर पर चुपचाप बैठे-बैठे थक गई हूँ। इतनी खुशी के समय भी न नाचे तो कब नाचेंगे!'

मोतीबाई में बाहरी गंभीरता आगई थी, परन्तु मन आल्हाद में फ़ुदक रहा था। बोली, 'नाचो कोई हर्ज नहीं। मैं भी नाचना चाहती हूँ? परन्तु घुँघरू बांधकर नहीं। बाहर बड़े बड़े राजे बैठे हैं। शोर-गुल सुनेंगे तो क्या कहेंगे!'

जूही बोली' 'तबला घुंघरू हमको कुछ नहीं चाहिए, शोर-गुल न होगा। इसपर भी महाराज अगर कुछ कहेंगे तो मैं भुगत लूंगी। आख़िर नाटक होगा ही। हमलोग रंगशाला में नाचें और गावेंगे ही। राजे महा-राजे नाटक-शाला में पास से सब कुछ देखेंगे ही। मैं नहीं मानूंगी।'

उन दोनों ने मनमाना नृत्य किया और नर्तकियों ने ताल दिया, परन्तु मीठी थपकी से।

बाहर मुग़लखां खड़ा होगया। बोला, 'वाह जैसा यह राज्य है, वैसी ही महारानी हमको मिली। दिल चाहता है कि मैं नाचूं, परन्तु कभी

सीखा नहीं इसलिए मजबूर हूँ ।' और उसकी आंख में आंसू आगए । बैठ गया ।

दुर्गाबाई खड़ी होगई । बोली' 'उस्ताद, यह काम मेरा है । मैं दिल और पैर दोनों से नाचूंगी । आप अकेले दिल से, खेलिए या नाचिए ।' और उसने सिर नीचा कर लिया ।

विजयबहादुर प्रसन्न हुए । स्वभाव से ही ज़रा सनकी थे । इस समय सनक कुछ तीव्रतर होगई । बोले' 'दुर्गा खूब अच्छी तरह नाचो, इनाम मिलेगा ।'

'बहुत अच्छा सरकार ।' कह कर दुर्गा पूरे उत्साह के साथ गाने और नाचने लगी । मुगलखां को इसका गाना खटक रहा था, परन्तु उसके मन की इस चोट को दुर्गा का नृत्य संभाल ले गया ।

थोड़ी देर में भांवर की रस्म पूरी होगई । अन्य रस्मों के पूरा होने पर गंगाधरराव वर की सजधज में पांवड़ों पर, फूलों और चावलों की बरसा में, बाहर आए । सबने ताज़ीम दी । गाना बजाना थोड़ी देर के लिए बन्द हो गया । गंगाधरराव एक ऊँची मसनद पर जा बैठे और इधर उधर बारीकी के साथ देखने लगे कि मनू के उस वाक्य का असर भद्देपन की किस हद तक हुआ है । उनकी आंख कहीं जम नहीं रही थी । आंखों के लाल डोरों में, रौब की जगह को संकोच ने पकड़ लिया था ।

वहां के उपस्थित लोगों के जी में वही वाक्य बार-बार और ज़ोर के साथ चक्कर काट रहा था । आंखें सब की गङ्गाधरराव के दूल्हा वेश पर जा रही थीं और मन के मना करने पर भी आंखें उसी वाक्य को दुहरा रही थीं ।

उस मकान की झरप के भीतर का नृत्य भी बन्द हो गया था । उन अभिनेत्रियों की आंखों पर भी वही वाक्य सवार था ।

जूही ने धीरे से मोतीबाई से कहा, 'असली राजा तो झांसी को अब मिला बाई जी ।'

मोतीबाई ने आँख तरेर कर जूही का हाथ दबाया, 'राजा सुनेंगे तो गर्दन काटकर फिकवा देंगे। खबरदार।'

'मैंने तो आपसे कहा', जूही बोली, 'आपके हाथ जोड़ती हूँ किसी को मेरी बात मालूम न होने पावे।'

फिर ये सब झरपों के पास खड़ी होकर जो कुछ दूसरी ओर हो रहा था, देखने-सुनने लगीं।

गङ्गाधरराव, विजयबहादुर से बोले, 'आपने मुग़लखां का ध्रुवपद सुना?'

विजयबहादुर ने कहा, 'पहले भी सुना है। इनकी होरी भी सुनी है। परन्तु दुर्गा का नाच मुझको बहुत भाया।'

मुग़लखां की आंख बदल पड़ी, परन्तु उसने सिर नीचा कर लिया।

गङ्गाधरराव ने देख लिया। वे बोले, 'मुगलखां ताव खाने पर बहुत अच्छा गाता है। अब सुनिएगा। इसके ध्रुवपद का मुक़ाबिला कहीं है ही नहीं। नृत्य अपनी जगह अच्छा है, परन्तु मुग़लखां का ध्रुवपद राजा है और दुर्गा का नाच उसका चाकर।'

मुग़लखां हर्ष के मारे फूल गया। आंखों में आंसू छलक आए। उनको जल्दी पोंछकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। बोला, 'श्रीमन्त सरकार का हुकुम हो तो लखनऊ वाली बात सुना दूं।

मनू के उस वाक्य से गङ्गाधरराव को छुटकारा नहीं मिल रहा था। उनको विश्वास था कि उपस्थित लोग भी उसमें उसी प्रकार उलझे होंगे। प्रतिघात से उमङ्ग की एक लहर उठी और उन्होंने मुग़लखां से कहा, 'महाराजा साहब को ज़रूर सुनाओ और फिर गाओ। बैठकर सुनाओ।

मुग़लखां की बात सुनने के लिए वहां सन्नाटा छा गया।

मुग़लखां ने कहा, 'सरकार मैं गाने के लिए लखनऊ गया। वहां के गवैयों ने सलाह कर ली कि मैं नवाब साहब के सामने पहुंच ही न पाऊं। इसलिए उन्होंने कहा, 'पहले हमको सुनाओ। समझेंगे कि उस्ताद हो, तो नवाब साहब के सामने पेश कर देंगे, वरना अपने वमखंठ

को वापिस जाना। मैं अपने देश के कपड़े पहिने था। पहले तो उनका मज़ाक उड़ाया गया; बुन्देलखण्डी है। क्या ऊल जलूल साफा बांधे है! जूते आपके माशा-अल्लाह! दाढ़ी बुन्देलखण्ड के रीछों जैसी! बातचीत जङ्गलियों सी! बर्ताव ठीक भेड़ियों का! इत्यादि सुनते सुनते कलेजा पक गया। फिर मैंने गाया। जो कुछ गाने के बाद हुआ उसको मैं कह नहीं सकता।'

गङ्गाधरराव उत्साह के साथ बोले, 'मैं बतलाता हूँ महाराजा साहब। जब उस्ताद ने आठों अङ्ग सहित ध्रुवपद सुनाया तब सच्चे स्वरों की वर्षा हो उठी, निन्दा करने वाले उसमें बह गए। उस्ताद के उन लोगों ने पैर छुए और इनको नवाब साहब के सामने पेश किया। नवाब साहब स्वयं संगीत के बड़े जानकार हैं। उस्ताद को काफी इनाम दिया। बुन्देलखण्ड को उन्होंने जी खोलकर सराहा।'

फिर मुग़लखां ने तल्लीन होकर गाया लगभग सारी जनता मुग्ध हो गई। राजा विजयबहादुर इस अवसर पर पुरस्कार बांटने के लिए अपने साथ काफ़ी रुपया लाए थे। सनक तो सवार थी ही, अपने बख्शी से बोले, 'मुग़लखां के साफ़े में जितने रुपय आवें दे दो, तबले वाले के तबलों में चाहे फोड़कर चाहे वैसे ही भरदो। सारङ्गीवालों की सारङ्गी में रुपए ठूँस दो। दुर्गा जितना बोझ बाँध सके उतना बाँध लेने दो।'

इस आज्ञा के सुनते ही अनेक वाद्यवाले खड़े हो गए। इनमें से एक शहनाई वाला भी था। उसकी शहनाई में बहुत थोड़े रुपए जा सकते थे। इसलिए गुस्से में आकर उसने शहनाई तोड़ डाली। बोला, सरकार ऐसा बाजा किस काम का जो रुपयों का मेल न खा सके।'

राजा विजयबहादुर ने उसकी शहनाई को सोने से भरने का आदेश किया।

उस युग की प्रथा के अनुसार उस दिन सब को कुछ न कुछ दिया गया। रात को नाटक हुआ। बहुत अच्छा। विजयबहादुर ने नाटकशाला से सम्बन्ध रखनेवाले सब लोगों को काफ़ी इनाम दिया!

विवाह की समाप्ति पर दरबार हुआ। नज़र—न्योछावरें हुई। पुरस्कार बँटे। बड़े बड़े सरदारों की नज़र—न्योछावरों के उपरांत छोटे जागीरदारों की बारी आई। एक मऊ का जागीरदार अपने को आनन्दराय कहते हुए आगे बढ़ा। राजा थकावट के मारे खीज उठे थे। आनन्दराय ने अपने कुटुम्ब और अपनी सेवा का बखान करते हुए रामचन्द्रराव वाली घटना का वर्णन भी शुरू कर दिया।

राजा खिसिया उठे। बोले, 'मैं भी स्मरण किए हूँ। तुम्हारी दास्तान पर यहां कोई काव्य या रायसा नहीं लिखा जाने वाला है। नज़र करने के बाद अपनी जगह जा बैठो। तुमको जो मिलना होगा मिल जावेगा।'

आनन्दराय नज़र—न्योछावर करके एक कोने में सिमट गया। अवस्था अधेड़ होगई थी, परन्तु शरीर अब भी बलिष्ठ था। अपने को अपमानित हुआ समझकर बार बार उसास ले रहा था—और छाती फुला रहा था। वह एक निश्चय पर पहुंचा। जैसे ही राजा के सामने ज़रा भीड़भाड़ देखी वहां से खिसक गया।

राजा के कर्मचारी नज़र—न्योछावरों का ब्योरा भेंट करने वालों के नाम—पते सहित लिखते जा रहे थे। भेंट करने वालों को पलटे में पुरस्कार भी बांटने थे, इसलिए; और, हिसाब रखने के लिए भी।

जब पुरस्कार बांटते बांटते आनन्दराय की बारी आई तब वह ग़ैरहाजिर था। दरबार के निकट ही रनवास के लिए झरपें लगी थीं। रानी भी वहां बैठी थीं।

'कहां चला गया आनन्दराय ?' राजा ने पूछा।

थोड़ी सी तलाश करने के बाद वह नहीं मिला। फिर और लोगों की हाज़िरी होती रही।

इस रस्म की समाप्ति पर वहाँ के सब लोगों ने जयजयकार किया।

'महाराज गङ्गाधरराव की जय'

'महारानी लक्ष्मीबाई की जय'

विवाह के उपरान्त ससुराल में आने पर मनू का नाम उसी दिन महाराष्ट्र और बुन्देलखण्ड की प्रथा के अनुसार लक्ष्मीबाई रक्खा गया था।

दरबार की समाप्ति के कुछ समय उपरान्त रानी लक्ष्मीबाई—अब मनू नहीं कहा जावेगा—क़िले के महल के अपने कक्ष में सुन्दर, मुन्दर और काशी के साथ थीं। उनको अपनी सब सहचरियों में ये तीनों सबसे अधिक प्यारी लग उठी थीं।

रानी ने कहा, 'आज एक बात अच्छी नहीं हुई। आनन्दराय नाम के उस जागीरदार की अवहेलना की गई।'

मुन्दर बोली, 'सरकार को कैसे नाम याद रह गया? और इतने हल्लेगुल्ले और भीड़-भाड़ की ध्वनियों में यह घटना कैसे स्मरण रही?'

रानी ने कहा, 'मैंने देख लिया है कि बुन्देलखण्ड पानीदार देश है। इस पानी को बनाए रखने की हमको ज़रूरत है। उस आदमी का पानी उतारा गया—यह बुरा हुआ।'

काशी बोली, 'छोटे छोटे से आदमियों का महाराज कहां तक लिहाज करें? थक भी तो बहुत गए आज। सुना है नाटकशाला भी नहीं जायेंगे।'

रानी ने कहा, 'जिन्हें तुम छोटा आदमी कहती हो, आधार तो हमारे वे ही हैं।'

[१६]

विवाह होने के पहले गङ्गाधरराव को, शासन का अधिकार न था। उन दिनों झांसी का नायब पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया-जाया करता था। लोग कहते थे कि दोनों में मैत्री है।

गङ्गाधरराव अधिकार प्राप्त करने का प्रयत्न पहले से कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उनको अधिकार मिल गया। परन्तु अधिकार मिलने के पहले कम्पनी सरकार के साथ फिर एक अहदनामा हुआ। पुरानी बातें पुष्ट की गईं।

केवल एक बात नई हुई—झांसी में एक अंग्रेज़ी फ़ौज रक्खी जावेगी अंग्रेजी हुकूमत में, पर खर्चा झांसी का राज्य देगा। गङ्गाधरराव को मानना पड़ा। मनको खटका। उन्होंने नक़द खर्चा न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिए झांसी के राज्य से २ लाख २७ हज़ार चारसौ अट्ठावन रुपए वार्षिक आय का एक इलाक़ा इन राज्य लोलुपों को दे दिया। जब यह सब होगया तब गङ्गाधरराव को शासन का अधिकार मिल पाया। इसके बाद दरबार हुआ। खुशियां मनाई गईं। खेल-कूद, नाटक इत्यादि हुए, परन्तु अनेक झांसी निवासियों को उनमें खोखलापन ही दिखलाई पड़ा। उनको अपने प्रदेश का खण्डित होना कसका।

स्वयं राजा को नाटकशाला में यथेष्ट मनोरंजन नहीं मिल सका। वे शीघ्र वहां से चले आये और रङ्गमहल में रानी के पास पहुचे।

रानी क़िले वाले महल में ही प्रायः रहती थीं। बाहर बहुत कम निकल पाती थीं। जब निकलती तब पर्दे की क़ैद में। इसलिए सवारी, व्यायाम इत्यादि क़िले वाले महल के इर्द गिर्द आड़ ओट से कर पाती थीं। तो भी वे काफ़ी समय इन बातों में लगाती थीं और अपनी समग्र सहेलियों तथा क़िले के भीतर रहने वाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र-प्रयोग

मलखम, कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। बचे हुए समय में धार्मिक ग्रंथों का थोड़ा सा, परन्तु नियम पूर्वक अध्ययन करतीं। भगवद्गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। बाल्यावस्था को पार कर यौवन में पदार्पण करने को थीं, परन्तु नए नए वस्त्र, क़ीमती आभूषणों का शौक़ न करके उनकी धुन ऊपर लिखी बातों की ओर अधिक रहती थी।

झांसी आने के बाद चपल, मुखी मनू में एक परिवर्तन धीरे धीरे घर करता जा रहा था—वे अब उतना नहीं बोलती थीं। रानी लक्ष्मीबाई में गम्भीरता जगह करती जा रही थी और क्रुद्ध हो जाने की वृत्ति तो और भी अधिक शीघ्रता के साथ घुलती चली जा रही थी। व्यङ्ग करने की इच्छा ज़रूर कुछ बढ़ती पर थी, परन्तु वह सहज, सरल; भव्य, दिव्य मुस्कान सदा साथ रही। और चित्त की दृढ़ता तो पूर्वजन्मों से संचित होकर मानो छठी के दिन ही ब्रह्मा ने पूरी समूची उनके हिस्से में रख दी थी।

रङ्गमहल में आने पर रानी ने गङ्गाधरराव का सत्कार जैसा कि हिन्दू नारी—और रानी—कर सकती है, किया।

राजा अपने भावों को छिपा पाने में असमर्थ थे। उनको इसका अभ्यास न था। चेहरे पर रुखाई थी और आंखों में उदासी।

रानी ने कहा, 'आज आप नाटकशाला से जल्दी लौट आए। खेल अच्छा नहीं हुआ क्या ?'

राजा बोले, 'खेल तो सदा अच्छा होता है। मन नहीं लगा। एक नए खेल की तैयारी के लिए कह आया हूँ।'

रानी—'कौन सा ?'

राजा—'मृच्छकटिक।'

रानी—'यह क्या है ?'

राजा—'शूद्रक कवि ने संस्कृत में लिखा है। मैंने हिन्दी में उल्था करवाया है। चारुदत्त ब्राह्मण और वसन्तसेना के प्रेम की अद्भुत कहानी है। आप देखने चलोगी !'

रानी—'न।'

राजा—'घोड़े की सवारी, कुश्ती, मलखम्भ के सिवाय आपको और भी कुछ पसन्द है या नहीं!'

रानी—'अवश्य। सहेलियों को अपना सा बनाना। उनको अवसर-कुअवसर पड़े पुरुषों की सहायता करने में पीछे पैर न देने की सीख देना, घर की सफाई, स्वच्छता इत्यादि बनाए रखना, काफ़ी काम हैं।'

राजा—'इन सबों को मोटा-तगड़ा बनाकर आप क्या करने जा रही हैं?'

रानी—'अभी तो मुझको भी नहीं मालूम। पर देह और मन को सबल बना लेना क्या कोई कम महत्व का काम है!'

राजा—'व्यर्थ है। घर का ही इतना काफी काम स्त्रियों के लिए संसार में है कि उनको घुड़सवारी इत्यादि की ओर खींच ले जाना फूहड़ बनाना है।'

रानी—'और नाचना-गाना?'

राजा—'अकेले में सभी स्त्रियां नाचती गाती हैं। परन्तु यदि वे इन विद्याओं को ढङ्ग से सीखें तो शरीर और मन दोनों के लिए काफ़ी कसरत पा सकती हैं।'

रानी—'हां स्वराज्य स्थापित है। अब सिवाय हंसने-खेलने के नर-नारियों के लिए और काम ही क्या बचा है? देखिए न किस आराम के साथ झांसी-राज्य का पंचमांश से अधिक अंग्रेज़ों के हाथ में दे दिया गया! आपका वह मित्र गार्डन भी नाटकशाला में आता होगा!'

राजा—'अंग्रेज लोग खूब हंसते-खेलते और नाचते-गाते हैं···'

रानी—'और नाचते-गाते ही पूरे हिन्दुस्थान को रोंदते चले जाते हैं। खेल तो बढ़िया है।'

राजा—'हमारे यहां फूट है। गांव गांव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुए हैं। अंग्रेज़ों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिए उन्होंने राज्य क़ायम कर लिया।'

रानी— 'नाटकशाला में जो हथियार बनते हैं, उनसे क्या अंग्रेज़ नहीं हराए जा सकते हैं ?'

राजा को यह व्यङ्ग अखर गया। पर जिस मुस्कान के साथ वह निसृत हुआ था वह आकर्षक थी। साथ ही मोतीबाई, जूही इत्यादि कल्पना में बिजली की तरह कोंध गई और आगे आने वाले मृच्छकटिक नाटक के अभिनय ने एक उमंग पैदा की; रानी की मुस्कान का आकर्षण उसी क्षण तिरोहित हो गया और उसके साथ ही उठता हुआ क्षोभ। बोले, 'आप कभी कभी बहुत कड़ी चोट कर बैठती हैं।'

रानी ने अदम्य भाव से कहा, 'आपके यहां के भाट क्या केवल प्रशंसा और यशगान ही करते हैं या कभी कभी कड़खा भी सुनाते हैं ?'

राजा का क्षोभ उभड़ा, परन्तु उन्होंने उसको वहां का वहीं दबाने का प्रयत्न किया और विषयान्तर करते हुए बोले, 'हमारे यहां कवि, चित्रकार इत्यादि अनेक कलाकार हैं।'

रानी ने भी बात न बढ़ाते हुए पूछा, कवि कौन हैं और क्या करते हैं ?'

राजा ने उत्तर दिया, 'एक हृदयेश है। अच्छा कवि है। एक पजनेश है। रंगीन है। कहता अच्छे ढंग से है।

'ये लोग क्या लिखते हैं ?'

'राधा–गोविन्द का प्रेमवर्णन' नखशिख नायिका भेद।'

'नखशिख, नायिका भेद क्या ?'

'राधा या गोपियों की चोटी से लेकर एड़ी तक का कोमल वर्णन। यह नखशिख हुआ। नाना प्रकार की सुन्दर स्त्रियों की वृत्तियों का विविध वर्णन, यह नायिकाभेद है।'

'अर्थात स्त्रियों के पूरे शरीर की सूक्ष्म जांच–पड़ताल और, इस काम के लिए इन लोगों को इनाम–पुरस्कार भी दिए जाते होंगे ?'

राजा ज़रा झेंपे, परन्तु सहमे नहीं। बोले, 'इस प्रकार की कविता करने में बहुत विद्वत्ता और मिहनत खर्च करनी पड़ती है। इसलिए उनको पुरस्कार दिया जाता है। वे लोग राजदरबारों की शोभा हैं।'

रानी ने फिर उसी मुस्कराहट के साथ पूछा, 'भूषण को छत्रपति शिवाजी क्या इसी तरह की कविता के लिए बढ़ावा दिया करते थे? भूषण तो दरबार की शोभा रहे न होंगे?'

राजा इस व्यङ्ग से कुढ़ गए और क्षोभ को दबा न सके।

बोले, 'आप हमेशा छत्रपति, और पन्तप्रधान बाजीराव और न जाने किन किन का नाम दिन रात रटा करती हैं। मैंने कई बार कहा कि इन बातों की छेड़ छाड़ में अब कोई सार नहीं।'

रानी ने कहा, 'मैं भी तो विनती किया करती हूँ कि उन बातों को बतलाइए जिनमें सार हो।'

राजा—आप राज्य का प्रबन्ध करना सीखिए। मैं भी इस ओर ध्यान देता हूँ। अच्छी व्यवस्था बनी रहेगी तो राज्य बचा रहेगा अन्यथा अंग्रेज़ फिर इसको अपनी देखरेख में ले लेंगे—या शायद राज्य को खत्म करके अपना अधिकार बर्तने लग जावें।'

रानी—'उस समय क्या नाटकशाला वाले किसी काम न आवेंगे?'

राजा के हृदय में आग सी लग गई। कुछ कहना चाहते थे कुछ कह गए, आपके मन में हठ, नगर-कोट बाहर घोड़े पर घूमने का है और सखी सहेलियां भी जङ्गल-डौरियों पर साथ में घोड़े कुदाएं तो इससे बढ़कर न राज्य है, न राज्य प्रबन्ध और न बिचारी नाटकशाला। ठीक है न?'

रानी के ऊपर उनके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बोलीं, 'मेरे आपके—दोनों के लिए यह विशाल महल क्या कम है?'

राजा पर इस व्यङ्ग की चोट पड़ गई, पर वे गुस्से को पीने लगे।

कुछ सोचकर पूछा, 'क्या सचमुच आपको नाटकशाला का मेरा मनोरंजन नापसन्द है ?'

रानी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'इन दिनों अब इससे अधिक और हो ही क्या सकता है ? राज्य का काम चलाने के लिए दीवान हैं। डाकुओं का दमन करने और प्रजा को ठीक पथ पर चालू रखने के लिए अंग्रेज़ी सेना ही है। इस पर भी यदि कोई ग़लती हो गई तो कम्पनी के एजेंट की खुशामद कर ली। बस सब काम ज्यों का त्यों मनमाना चलता रहा।'

रानी मुस्कराने लगी।

इस बात में रानी की विलक्षण बुद्धि का आभास पाकर राजा को ज़रा विस्मय हुआ और उनके ओठों पर बरबस हँसी आई।

[१७]

राजा गङ्गाधरराव और रानी लक्ष्मीबाई का कुछ समय लगभग इसी प्रकार कटता गया। सन् १८५० में (माघ सुदी सप्तमी सं० १९०७) वे सजधज के साथ (कम्पनी सरकार की इजाज़त लेकर!) प्रयाग, काशी, गया इत्यादि की यात्रा के लिए गए। लक्ष्मीबाई साथ थीं। उनको क़िले में बन्द रहना पड़ता था; इस यात्रा में भी तामझाम इत्यादि बन्द सवारियों में चलना पड़ा, परन्तु नए-नए स्थान देखने के अवसर मिले। इस कारण बन्धनों का क्लेश न अखरा। काशी-यात्रा में उनको देव दर्शन और जन्म गृह दर्शन प्राप्त हुए।

गङ्गाधरराव का क्रोध समय-कुसमय कुछ न देखता था। एक दिन काशीनगर में सैर के लिए निकले। एक बिचारा राजेन्द्र बाबू मार्ग में पड़ गया। उसने प्रणाम तो किया, परन्तु खड़े होकर ताज़ीम नहीं दी। शामत आगई। गङ्गाधरराव ने उसको बेहद पिटवाया। उसने कम्पनी सरकार में फ़रियाद की।

जवाब मिला, 'गङ्गाधरराव एक बड़े राजा हैं। यदि तुमको खड़े होकर ताज़ीम देना पसन्द न था तो अपने घर में बैठे रहते?'

रानी को यह सब देख सुनकर काफ़ी क्लेश हुआ था।

तीर्थयात्रा के लिए झांसी छोड़ने के पहले जब गङ्गाधरराव को कम्पनी सरकार ने शासन के अधिकार वापिस किए तब पहले का जमा किया हुआ तीस-लाख रुपया कम्पनी ने उनको लौटाया था। उसका उन्होंने अपव्यय किया। अपने अनेक हाथियों में उनको सिद्धबक्स नामक हाथी बहुत प्यारा था। उसका सारा सामान सोने का बनवाया। और भी अनेक हाथी घोड़ों का सामान-अम्बारी, हौदा, ज़ीन, झूलें, इत्यादि सोने की बनवाईं। काशी से एक तामझाम, जिस पर बढ़िया नक्काशी का काम था, बहुत क़ीमत देकर मंगवाया। और भी काफ़ी राजसी ठाट इकट्ठा किया। राजा प्रदर्शन के बहुत प्रेमी थे। रानी को

प्रदर्शन बहुत कम पसन्द था। परन्तु उनको राजा की एक बात अच्छी लगी---उन्होंने पांच हज़ार के लगभग सेना कर ली, लगगभ दो सहस्त्र गोल.पुलिस, पांचसौ घोड़ों का रिसाला, सौ खास पायगा के सिपाही और चार तोपखानें।

झांसी राज्य में और बुन्देलखण्ड में लगभग हर जगह आतातांई और डाकू–बटमार बड़ा उपद्रव कर रहे थे। गङ्गाधरराव ने अपने कठोर शासन से इनका दमन किया। इस कार्य में उनको अपने प्रधान–मन्त्री राघव रामचन्द्र पन्त, दरबार वकील नरसिहराव, और न्यायाधीश वृद्ध नाना भोपटकर से बहुत सहायता मिली। राजा के शासन से अंग्रेज़ सन्तुष्ट थे, क्यों कि उपद्रवों का शान्त करना ही राजा का सबसे बड़ा कर्तव्य समझा जाजा था।

राजा गङ्गाधरराव ने कई मौक़ों पर अंग्रेज़ों की बहुत सहायता की। एक बार अपने विश्वस्त साथी और फ़ौज़ी अफ़सर दीवान रघुनाथ सिंह को कुछ सिपाहियों के साथ मुहिम पर भेज दिया। दीवान रघुनाथसिंह आज्ञाकारी योद्धा था। उसने बड़ी वीरता के साथ अपना कर्तव्य पालन किया। राजा गङ्गाधरराव को अंग्रेज़ों की मैत्री और भी बढ़ी हुई मात्रा में मिली और दीवान रघुनाथसिंह को इंगलैंड और कम्पनी सरकार की रानी विक्टोरिया की ओर से एक प्रशंसापत्र तथा खड्ग मिला।

परन्तु रानी लक्ष्मीबाई को अपने पति के इस यश पर हर्ष नहीं हुआ और सन्तोष। अभी उनकी आयु लगभग १५ वर्ष के होगी, परन्तु उनका आचार विचार आश्चर्य उत्पन्न करने वाली परिपक्वता कासा प्रतीत होता था। उस युग की लड़कियां जिस आयु में खेलना–खाना, पहिनना–ओढ़ना ही सब कुछ समझती होंगी, उस आयु में लक्ष्मीबाई गंभीर और गंभीरतर होती चली गई।

छुटपन की छबीली मनू, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई।

[१८]

राजा गङ्गाधरराव पुरातन-पन्थी थे ! वे स्त्रियों की उस स्वाधीनता के हामी न थे जो उनको महाराष्ट्र में प्राप्त रही है। दिल्ली, लखनऊ की पर्दा के बन्धेजों को वे जानते थे। उतना बन्धेज वे अपने रनवास में उत्पन्न नहीं कर सकते थे। यह भी उनको मालूम था। जनता की स्त्रियां मुँह उघाड़े फिरें चाहे घूंघट डाले फिरें, इस विषय में उनको उपेक्षा थी। परन्तु अपने महल में काफ़ी पर्दा बर्तने के वे दृढ़ पक्षपाती थे।

इसलिए लक्ष्मीबाई क़िले के बाहर घोड़े पर नहीं जा सकती थीं। क़िले में भी उनकी स्वतन्त्रता पर काफ़ी बन्धन था। तीर्थयात्रा से लौटने पर क़िले-भीतर वाले महल के मैदान के चारों ओर ऊँची ऊँची कनाते लगवा दी गईं, जिससे उनको घोड़े की सवारी इत्यादि में बहुत अड़चन होने लगी। मलखंभ और कुश्ती का प्रबन्ध उनको अपने कक्ष के भीतर ही मोटे और नरम क़ालीनों की पर्तों पर करना पड़ा। उन्होंने अभ्यास छोड़ा नहीं। गङ्गाधरराव ने उनकी सहेलियों के बदलने का प्रयत्न किया, परन्तु सुन्दर, मुन्दर, और काशीबाई को वे नहीं हटा सके।

अन्तर्द्वन्द्व के कारण गङ्गाधरराव के मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई। और अपराधियों को दण्ड देने के लिए बिलकुल नए नए साधन काम में लाने लगे।

मृच्छकटिक नाटक के खेल का दिन आया। मोतीबाई ने वसन्तसेना का अभिनय किया और जूही ने उसकी सखी का। राजा ने उस दिन नाटकशाला को खूब सजवाया। कप्तान-गार्डन भी निमन्त्रित हुआ। खेल अच्छा हुआ। नृत्य, गायन, अभिनय सभी की गार्डन ने प्रशंसा की।

खेल की समाप्ति पर गार्डन के मुंह से निकल पड़ा, महाराजा साहब एक बात समझ में नहीं आती। आपकी संस्कृति में वेश्याओं को इतने आदर का स्थान क्यों दिया गया है?

राजाने हँसकर उत्तर दिया, 'क्योंकि हमारे पुरखे बहुत समझदार थे।'

गार्डन को अपने देश के क्रामवैल के समय का कटमुल्लावाद (Puritanism) और उसके तुरन्त ही बाद का, चार्ल्स द्वितीय के समय का मनमौजवाद याद आ गया। बोला, 'नहीं महाराज कुछ और बात है। असल में हिन्दोस्तान कई बातों में बहुत गिरा हुआ है।

गङ्गाधरराव ने कहा, 'फिर कभी बात करूंगा।''

गार्डन चलने को हुआ कि राजा ने एक कोने में खुदाबख्श को देख लिया। तुरन्त अपने अंगरक्षक से पूछा, 'यह कौन है?'

उसने उत्तर दिया, 'खुदाबख्श।'

'यहां कैसे आया?' राजा ने प्रश्न किया।

अङ्गरक्षक उत्तर नहीं दे पाया। खुदाबख्श ने समझ लिया। और वह तुरन्त भीड़ में विलीन होकर निकल गया।

गार्डन ने पूछा, 'क्या बात है महाराजा-साहब?'

राजाने कहा, 'कुछ नहीं-यों ही। एक आदमी को आज बहुत दिनों बाद नाटकशाला में देखा है।'

गार्डन चला गया। राजा ने नाटकशाला के प्रहरी को कैद में डलवा दिया और सबेरे पेश किए जाने की आज्ञा दी।

खुदाबख्श को बहुतेरा ढुंढ़वाया, परन्तु पता नहीं लगा।

दूसरे दिन मोतीबाई नाटकशाला से बरखास्त कर दी गई। नाटकशाला के पात्रों को कोई कारण समझ में नहीं आरहा था। वे लोग आशा कर रहे थे कि इतना अच्छा अभिनय इत्यादि करने के उपलक्ष में बधाई और पुरस्कार मिलेंगे, परन्तु हुआ उल्टा। उनकी सबसे अच्छी अभिनेत्री निकाल दी गई; झांसी में जिन लोगों ने मोतीबाई के नृत्य को देखा था अथवा उसका गायन सुना था, सब क्षुब्ध थे।

सबेरे नाटकशाला के प्रहरी की पेशी हुई। राजा ने स्वयं मुक़द्दमा सुना।

राजाने खिसियाकर पूछा, 'क्यों रे नमक हराम यह खुदाबख्श नाटकशाला में कैसे आगया ?'

उसने घिघियाकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त सरकार मैं भूल गया। मुझको याद नहीं रहा।'

'तू यह भूल गया कि मै उसको देश–निकाला देचुका हूँ ?' राजाने कड़क कर कहा।

प्रहरी अत्यन्त विनीत भावसे बोला, 'इस बात को श्रीमन्त सरकार बहुत दिन होगए इसलिए मुझको सुध नहीं रही। और सरकार ने उस दिन तीर्थ यात्रा से लौटने की खुशी में बहुत लोगों को माफ़ी बख्शी सो मैने सोचा कि खुदाबख्श को भी माफ़ी मिल गई होगी।'

इस उत्तर से राजा का क्रोध घटा नहीं, ज़रा और बढ़ गया। रोते हुए प्रहरी को सज़ा दी गई बिच्छू से डसवाने की !

गङ्गाधरराव ने एक विशेष वर्ग के अपराधों के लिये बिच्छू से कटवाने का विधान कर रक्खा था ! कट्ठे में पैरो का डालना भांजना एक साधारण बात थी। गहन अपराधों में हाथ पांव कटवा डालने की जनसम्मत प्रथा जारी थी परन्तु दबे दबे और थोड़ी थोड़ी। दहकते अंगारों से डाकुओ के अंग जलवाना इस विधान में शामिल था, परन्तु बिच्छुओं से कटवाना जन–वृत्ति की सहन शक्ति से बाहर हो गया था।

बिच्छू से कई जगह काटे जाने के कारण प्रहरी बेहद सन्तप्त हुआ अन्त में बेहोश हो गया। राजा समझे मरगया तब उनका क्रोध ठंडा पड़ा। प्रहरी वहां से हटवा दिया गया।

[१९]

कप्तान गार्डन झांसी–स्थित अंग्रेजी सेना का एक अफ़सर था। हिन्दी खूब सीख ली थी। राजा गङ्गाधरराव के पास कभी-कभी आया करता था। राजा उसको अपना मित्र समझते थे। वह पूरा अंग्रेज था। साहित्यिक, व्यापार–कुशल, स्वदेश-प्रेमी और भारतवर्ष को घृणा या अवहेलना की वृत्ति से देखने वाला! परन्तु भारतवर्ष के राजाओं के सहलाने–फुसलाने की क्रिया का अभ्यासी—अपने कर्तव्य–पालन में दृढ़।

राजा से मिलने, गार्डन कभी घोड़े पर और कभी तामझाम में बैठकर आता था। नवाबों को दबाते–दबते थोड़ी नवाबी भी अंग्रेजों में आगई थी। हुक्का, सुरा, रंडियों का नाच, होली--फाग, दशहरा, दिवाली, ईद उत्सव इत्यादि नवाबों, राजाओं और जनता में हेलमेल बनाए रखने के लिए बर्ते जाते थे। परन्तु वे उनमें दूध--पानी नहीं हुए थे—उनकी सतर्क दृष्टि इङ्गलेंड की ओर बराबर मुड़ी रहती थी।

राजा ने और कोई मनोरंजन समक्ष न देखकर, एक दिन गार्डन को बुलवाया। वह तामझाम में नगर वाले महल पर आया। वहां से राजा उसको किले वाले महल पर ले चले। राजा अपने तामझाम में बैठे। उत्तरी फाटक से जाना चाहते थे। बड़ी हथसार के नीचे से मार्ग था। * एक हाथी पागल हो गया। इन तामझामों की ओर दौड़ा। वाहकों ने तामझाम कन्धों पर से उतार दिए। परन्तु भागे नहीं। उनकी कमर में तलवारें थीं। म्यानों से बाहर निकाल लीं। गार्डन के पास कोई हथियार न था। वह हक्का बक्का सा इन मज़दूरों के पास आगया। राजा के पास तलवार थी। उन्होंने नहीं छुई। तामझाम से बाहर निकल कर, दौड़ते हुए प्रमत्त हाथी को, अपनी ओर आती हुई गति को देखने लगे।

गार्डन ने कहा, 'बचो।'

मज़दूरों ने कहा, 'बचो।'

---

* इसी हथसार की जगह अब सदर अस्पताल है।

राजा के मुँह से भी निकला 'बचो।'

परन्तु तलवारें उस मस्त हाथी की गति का निरोध नहीं कर सकती थीं।

इतने में एक ओर से बर्छा लिए एक सिपाही हाथी पर दौड़ पड़ा और उसने बर्छे के प्रहार से हाथी की प्रगति को लौटा दिया।

राजा को उस सिपाही ने प्रणाम किया।

राजा ने नाम पूछा।

उसने बतलाया, 'इमामअली! क़ाज़ी हूँ सरकार, और सांटमारी भी करता हूँ।'

राजा ने कहा, 'शाबाश क़ाज़ी इनाम। मिलेगा।'

इमामअली बोला, 'सरकार के चरणों में बना रहूँ और बाल बच्चों का पालन–पोषण होता जावे यही सेवक के लिए ग़नीमत है।'

राजा ने पारितोषक में कुछ ज़मीन लगाने की घोषणा की और वह गार्डन के साथ क़िले के महल में चले गए।

जब दोनों दीवानखाने में बैठ गए तब भी गार्डन के मन में वह हाथीवाली घटना भूल रही थी।

वह बोला, 'सरकार, इनाम रुपए की शक़ल में दिया जाना चाहिए। इस तरह भूमि लगाते चले जाने से राज्य में चप्पा भर भी न बचेगी!'

राजा ने कहा, तब झांसी राज्य में बहादुर ही बहादुर नज़र आवेंगे।'

गार्डन को इस असङ्गत उत्तर से सन्तोष नहीं हुआ। बोला, 'इस देश में जो कुछ देखता हूँ सब अति के दर्जे पर। थोड़े से बहुत धनवान और बहुत से निर्धन। बिरला ही अत्यन्त धर्मनिष्ठ, और बहुत से कीड़ा-मकोड़ों से ज्यादा सड़ी जिन्दगी बिताने वाले! किसी को ज़मीनें और जागीरें, छोटे बड़े सब तरह के कामों के लिए और बहुतेरों को हलके से हलके अपराधों के लिए अङ्गहीन करने की सज़ा! बिच्छुओं से कटवाने का दण्ड!'

राजा का चेहरा तमतमा गया। उन्होंने अपने को संयत करके कहा, 'जब जैसा अपराध और अपराधी सामने आवे, वैसा उसको दण्ड देना चाहिये।'

गार्डन ने भांप लिया कि राजा ने अपने उठे हुए क्रोध को भीतर का भीतर ही घसा दिया है।

बोला, 'सरकार को शायद मालूम होगा हमारे यहां के एक बहुत बड़े विद्वान ने हिन्दुस्थान भर के लिए एक ही दण्डविधान* प्रस्तुत कर दिया है। वह बहुत विशद और न्यायपूर्ण है। जितने दण्ड रक्खे गए हैं कोई भी अमानुषिक नहीं।'

'क्या रियासतों में भी उस विधान को जारी किया जावेगा?'

गार्डन ने तत्काल उत्तर दिया, 'नहीं सरकार। रियासतों को अपना निज का प्रबन्ध अपनी व्यवस्था के अनुसार करने का अधिकार है।'

राजा एक क्षण सोचकर बोले, 'हमारी सन्धियों में यह अधिकार सुरक्षित है।'

सन्धि के शब्द पर गार्डन के मन में तुरन्त खटपट उठी, परन्तु उसने खुशामद के ढंग को अधिक अच्छा समझकर कहा, 'परन्तु सरकार हमारे सम्राट और भारत के गवर्नर-जनरल को उस दिन बहुत अच्छा लगेगा, जब सब रियासतों में एक ही प्रकार का न्याय, एक ही क़ानून और एक ही तरह की अदालतों की स्थापना होजाय। इसमें सरकार कोई हर्ज भी नहीं है। नरेशों का बोझ भी बहुत हलका हो जावेगा और जनता ज्यादा चैन की सांस लेने लग जावेगी।'

राजा ने प्रश्न किया, 'आपके राजाधिराज को तो बहुत अधिकार होंगे?'

गार्डन असमन्जस में पड़ गया। परन्तु उससे अपने को उबार कर बोला, 'हमारे राजाधिराज ने अपना अधिकार पन्चायत को दे दिया है। वह पन्चायत क़ानून बनाती है शासन करती है।'

---

*लार्ड मैकाले का इण्डियन पीनल कोड (भारतीय दण्ड विधान)।

राजा—'पन्चायतें तो हमारे यहां गांव–गांव में हैं। इन पन्चायतों के फ़ैसलों को रद करने की कोई भी राजा बात नहीं सोचता। ये पन्चायतें अपने–अपने गांव का सभी तरह का प्रबन्ध भी करती हैं। हमारे कर्मचारी उसमें कोई दखल नहीं देते। केवल बड़े–बड़े मामले मुक़द्दमे मेरे सामने आते हैं। उनको नाना–भोपटकर शास्त्री की सलाह से निबटाता हूँ।'

गार्डन—'इसमें, सरकार, सहूलियत होने पर भी तरतीब, नियम–संयम, ज़ाब्ते–क़ायदे की कमी है और अन्याय होने की ज्यादा गुंजायश है'।

राजा—'आपके देश में क्या पन्चायतें नहीं हैं।'

गार्डन—'युग बीत गए, जब थीं। उनका रूप बदल गया है। न्यायाधीश को सम्मति देने और मामले का निर्भार न्याय कराने में पन्चायत सहयोग देती हैं। इस पन्चायत के सहयोग के बिना मुक़द्दमा नहीं होता।'

राजा—'हमारे देश की पन्चायतें तो इससे भी बढ़कर समर्थ हैं। राज्य लौट–पौट जाते हैं, परन्तु पन्चायतें अमर रहती हैं।'

गार्डन को हिन्दुस्तानी पन्चायतों का यह वर्णन बहुत खटका।

अपने क्षोमको थोड़ा–बहुत दबाकर उसने कहा, 'अपढ़–कुपढ़ लोगों की पञ्चायतों के ढंग मैले कुचैले ही हो सकते हैं, सरकार। अदालतों की सफ़ाई और निखार को पञ्चायतें कैसे पा सकती हैं?'

'बंगाल मदरास में आपकी अदालतें पन्चायतों के सहयोग से न्याय निर्णय करती हैं या यों ही?' राजा ने प्रश्न किया।

गार्डन का मन ज़रा सिटपिटाया। परन्तु उसने बेधड़की के हठ के साथ उत्तर दिया, 'पन्चायतों की मदद तो नहीं ली जाती, परन्तु हिन्दू-मुसलमानों के दीवानी झगड़ों को सुलझाने के लिए पण्डितों और मौलवियों की सलाह ली जाती है। अपराधों के मामले अदालत के अफ़सर स्वयं ही निर्णय करते हैं।'

'स्वयं !' राजा ने आश्चर्य के साथ कहा, स्वयं ! 'सो कैसे ?'

गार्डन ने जवाब दिया, 'गवाहों और वकीलों की मदद से ।'

राजा ने पूछा, 'हर अदालत में एक एक वकील रहना होगा ।'

गार्डन को राजा की सिधाई पर मनमें हँसी आई । उत्तर दिया, 'नहीं तो सरकार । वादी प्रतिवादी अपने अपने गवाह वकीलों द्वारा पेश करते हैं । वकील लोग क़ानून जानते हैं । वे अपने कानूनी ज्ञान द्वारा अदालत की सहायता ठीक निर्णय पर पहुँचनेमें, करते हैं । यह हमारे देशकी संस्था है ।'

राजा को हँसी आ रही थी । ओठों तक आई, परन्तु उन्होंने उसको प्रकट नहीं होने दिया । बोले, 'वकील क्या गवाहों को पेश करने का काम मुफ्त में करते हैं ?'

गार्डन ने अभिमान के साथ कहा, 'हमारे देश में पहले वकील लोग मुफ्त में यह काम करते थे, परन्तु अब परिश्रमिक लेने लगे हैं। और इस देश में तो वे लोग करारी रकमें लेते हैं ।'

'तब कहीं लोग न्याय प्राप्त करने की आशा कर पाते हैं,' राजा खूब हँसकर बोले, 'भाड़े के लोगों को बढ़ाने की यह संस्था आप लोग इस देश में किस प्रयोजन से ले आए !'

हिन्दुस्थान के प्रति गार्डन के भीतरी मन में दबी हुई घृणा उभर पड़ी । बोला, 'आपके देश की न्याय-प्रणाली की विषमता मुझको भी मालूम है । उसी अपराध के लिए ब्राह्मण पर एक रुपया दण्ड, ठाकुर पर पचास, बनिए पर पांच सौ और ग़रीब शूद्र का हाथ पैर कट ! सरकार, कानून सबके लिए एकसा होना चाहिए ।'

राजा को इस तर्क ने ज़रा ज़ेर किया । परन्तु उनको एक व्यङ्ग सूझा । बोले, 'इस क़ानून ज़ाब्ते के द्वारा आपके इलाक़ों में जनता को न्याय कितने समय में मिल जाता है !'

गार्डन ने शीघ्र उत्तर दिया, 'अपराध वाले मामलों में दो एक महीने लग जाते हैं और दीवानी मामलों में एकाध साल ।'

राजा फिर हँसे। कहा, 'हमारे यहाँ तो तुरन्त न्याय होता है मैं तो दो–एक दिन से ज्यादा नहीं लगाता। दीवानी और अपराधी मामलों का कोई भेद नहीं करता। पन्चायतों के निर्णय को सर्वमान्य मानता हूं। आपके इलाकों में यदि पुलिस की गफ़लत या लापरवाही से चोरी इत्यादि हो जावे तो आप पुलिस को कोई दण्ड देते हैं ?'

'हाँ सरकार', गार्डन ने उत्तर दिया, 'बरखास्त कर देते हैं, तनज्जुल कर देते हैं।'

राजा ने उत्तेजित होकर कहा, 'इससे जनता को क्या लाभ होता होगा ? मैं तो ऐसे मामलों में ग़फ़लत करने वाली पुलिस से चोरी का नुक़सान भरवाता हूँ।'

गार्डन बोला, 'तब जनता पर पुलिस की धाक नहीं रह सकती। लोग उसकी बिलकुल परवाह नहीं करते होंगे। ऐसा शासन बहुत दिनों नहीं टिक सकता सरकार।'

राजा और भी उत्तेजित हुए। उन्होंने कहा, 'साहब, जनता पर मेरी धाक होनी चाहिए, न कि मेरे अफ़सरों की। वह राज्य भी बहुत समयतक नहीं टिक सकता जो कर्मचारियों और पुलिस की धाक पर आश्रित हो। मैं तो अपने अपराधी कर्मचारियों को लोहेकी मछली के कोड़े से ठोकता हूँ।'

गार्डन खिसिया गया। बोला, 'सरकार अनियंत्रित सत्ता बहुत बुरी चीज़ है। इस परिपाटी के माननेवाले चाहे जो कुछ मनमाना कर बैठते हैं। आपने बनारस में एक बिचारे राजेन्द्र बाबू को अकारण पिटवा दिया। हमारे पोलिटिकल विभाग को जवाब देते–देते मुसीबत आई।'

राजा को बनारस वाली घटना की स्मृति के साथ –साथ यह भी याद आ गया कि इसी पोलिटिकल विभाग की इजाज़त मिलने पर झांसी राज्य के बाहरक़दम रख पाया था।

'अशिष्टता को दण्डित करने में मैं कभी नहीं चूकता', राजा ने कहा, 'फिर चाहे मैं कहीं होऊँ— अपने राज्य में होऊँ चाहे राज्य के बाहर।'

उसी समय उनको खुदाबख्श और उसके सम्बन्ध वाला प्रसंग याद आगया।

गार्डन को भी वही प्रसङ्ग याद आया। बोला, 'यह नहीं हो सकता। चाहे कोई भी राजा या नवाब हों गवर्नर जनरल साहब किसी को इस तरह का उद्दण्ड व्यवहार नहीं करने देंगे। आपका गौरव रखने के लिए ही बनारस वाले उस पीड़ित को वैसा जवाब दिया गया था, आगे ऐसा न हो सकेगा।'

गङ्गाधरराव के हृदय में शिवराव भाऊ का खून खलबला उठा। कुछ क्षण चुप रहे। बिजली की कौंध के समान दो-एक उत्तर मन में उठे, परन्तु उनको वे क्रोध के कारण प्रकट न कर सके।

अन्त में वे केवल यह कह पाए, 'साहब, मैं तो एक छोटा सा संस्थानक हूँ। तो भी चाहूँ तो बहुत कुछ कर सकता हूँ। लेकिन सभी राजाओं ने चूड़ियां पहिन रक्खी हैं। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं कि अपने ही देश में हम सब कैद हैं! सवासौ वर्ष पहले की बात याद कीजिए। आप लोगों की क्या शान थी, जब दिल्ली के बादशाह और पूना के पन्तप्रधान के दरबार में साष्टांग प्रणाम कर करके अर्ज़ियां पेश करते थे।'

राजा थर्राहट के मारे कांप उठे। गार्डन की व्यापार-कुशल बुद्धि तुरन्त सजग हुई।'

उसने मिन्नत सी करते हुए कहा, 'सरकार बुरा न मानें। मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा। मैने जो कुछ निवेदन किया वह गवर्नर जनरल और कम्पनी सरकार की नीति का आभास मात्र है। पंचायतों के बनाए रखने के ही विषय को लीजिए। अनेक अंग्रेज़ अफ़सर उनको सुरक्षित रखना चाहते हैं, परन्तु अधिकांश मत क़ानून और ज़ाब्ते के बेलन द्वारा हिन्दुस्थान की सारी समतल और ऊबड़खाबड़ संस्थाओं को चौरस कर डालने के पक्ष में है। मेरे ऊपर सरकार की वही कृपा बनी रहे जो सदा से चली आई है।

[२०]

बसन्त आगया। प्रकृति ने पुष्पांजलियां चढ़ाईं। महकें बरसाईं। लोगों की अपनी स्वांस तक में परिमल का आभास हुआ। क़िले के महल में रानी ने चैत्र की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की स्थापना की। पूजन होने लगा। गौर की प्रतिमा आभूषणों और फूलों के शृङ्गार से लदगई और धूप-दीप तथा नैवेद्य ने कोलाहल सा मचा दिया। हल्दी कूं कूं (हल्दी कुंकुम) के उत्सव में सारे नगर की नारियां व्यग्र, व्यस्त होगईं।

परन्तु उनमें से बहुत थोड़ी गले में सुमन-मालाएं डाले थीं। उनके पास हृदयेश की कविता और उसका फल दूसरे रूप में पहुँचा था-उनको भ्रम था कि राजा-रानी हमलोगों के इस शृङ्गार को पसन्द नहीं करते। इसलिए जब वे स्त्रियां, जो पूजन के लिये रनवास में आईं—चढ़ाने के लिये तो अवश्य फूल ले आईं, परन्तु गले में माला डाले कुछेक ही आईं।

क़िले में जाने की सब जातियों को आज़ादी थी - क़िले के उस भाग में जहां महादेव और गणेश का मन्दिर है और जिसको शंकर क़िला कहते थे। सब कोई जासकते थे। अछूत कहलाने वाले चमार, बसोर और भंगी भी। जहां अपने कक्षमें रानी ने गौर को स्थापित किया था, वहां इन जातियों की स्त्रियां नहीं जा सकती थी, परन्तु कोरियों और कुम्हारों की स्त्रियां जासकती थीं। कोरी और कुम्हार कभी अछूत नहीं समझे गए थे।

सुन्दर ललनाओं को आभूषणों से सजा हुआ देखकर रानी को हर्ष हुआ, परन्तु अधिकांश के गलों में पुष्पमालाओं की त्रुटि उनको खटकी।

उन्होंने स्त्रियां से कहा, 'तुम लोग हार पहिन कर क्यों नहीं आईं? गौर माता को क्या अधूरे शृङ्गार से प्रसन्न करोगी?'

स्त्रियों के मन में एक लहर उद्वेलित हुई।

लाला भाऊ बख्शी की पत्नी उन स्त्रियों की अगुआ बन कर आगे आईं। वह यौवन की पूर्णता को पहुँच चुकी थी। सौन्दर्य मुखमण्डल पर

छिटका हुआ था। बखिशन जू कहलाती थी। हाथ जोड़कर बोली, 'जब सरकार के गले में माला नहीं है तब हम लोग कैसे पहिनें ?'

रानी को असली कारण मालूम था। बखिशनजू के बहाने पर उनको हँसी आई। पास आकर उसके कन्धे पर हाथ रक्खा और सबको सुनाकर कहने लगीं, 'बाहर मालिनें नाना प्रकार के हार गूंथे बैठी हुई हैं। एक मेरे लिए लाओ। मैं भी पहिनूंगी। तुम सब पहिनो और खूब गागाकर गौर माता को रिझाओ। जो लोग नाचना जानती हों नाचें। इसके उपरान्त दूसरी रीति का कार्य होगा।'

स्त्रियां होड़ाहोंसी में मालिनों के पास दौड़ीं, परन्तु सुन्दर पहिले माला ले आई। बखिशन ज़रा पीछे आई। सुन्दर माला पहिनाने वाली ही थी कि रानी ने उसको मुस्कराकर बरज दिया। सुन्दर सिकुड़ सी गई।

रानी ने कहा, 'सुन्दर एक तो तू अभी कुमारी है, दूसरे तेरे हाथ के फूल तो नित्य ही मिल जाते हैं। बखिशनजू के फूलों का आशीर्वाद लेना चाहती हूं।'

बखिशन हर्षोत्फुल्ल हो गई सुन्दर को अपने दासीवर्ग की प्रथा का स्मरण हो आया—विवाह होते ही महल और क़िला छोड़ना पड़ेगा, उदास हो गई। रानी समझ गईं। बखिशन ने पुष्प माला उनके गले में डालकर पैर छुए। रानी ने उठाकर अंक में भर लिया। फिर सुन्दर का सिर पकड़कर अपने कन्धे से चिपटा कर उसके कान में कहा, 'पगली, क्यों मन गिरा दिया ? मेरे पास से कभी अलग न होगी।'

सुन्दर उसी स्थिति में हाथ जोड़कर धीरे से बोली, 'सरकार, मैं सदा ऐसी ही रहूँगी और चरणों में अपनी देह को इसी दशा में छोड़ूंगी।'

फिर अन्य स्त्रियों ने भी रानी को हार पहिनाए, इतने कि वे ढक गईं और उनको सांस लेना दूभर होगया। सहेलियां उनके हार उतार-उतार कर रख देती थीं और वह पुनः पुनः ढांक दी जाती थीं।

अन्त में कोने में खड़ी हुई एक नववधू माला लिए बढ़ी। उसके कपड़े बहुत रंग बिरंगे थे। चांदी के ज़ेवर पहिने थी। सोने का एकाध

ही था । सब ठाट सोलह आना बुन्देलखण्डी । पैर के पैजनों से लेकर सिर की दाउनी (दामिनी) तक सब आभूषण स्थानिक । रङ्ग ज़रा सांवला । बाकी चेहरा रानी की आकृति, आंख–नाक से बहुत मिलता–जुलता ! रानी को आश्चर्य हुआ । और स्त्रियों के मन में काफ़ी कुतूहल । वह डरते डरते रानी के पास आई ।

रानी ने मुस्करा कर पूछा, 'कौन हो ?'

उत्तर मिला, 'सरकार हौं तो कोरिन ।'

'नाम ?'

'सरकार, झलकारी दुलैया ।'

'निस्सन्देह जैसा नाम है वैसे ही लक्षण हैं । पहिना दे अपनी माला । झलकारी ने माला पहिना दी और रानी के पैर पकड़ लिए ।

रानी के हठ करने पर झलकारी ने पैर छोड़े ।

रानी ने उससे पूछा, 'क्या बात है झलकारी ? कुछ कहना चाहती है क्या ?'

झलकारी ने सिर नीचा किए कहा, 'मोय जा बिनती करनें—मोय माफ़ी मिल जाय तो कओं ।'

रानी ने मुस्कराकर अभयदान दिया ।

झलकारी बोली, 'महराज, मोरे घर में पुरिया पूरबे कौ और कपड़ा बुनबे को काम होत आओ है । पै उनने अब कम कर दओ है । मलखम्भ कुश्ती और जाने का का करन लगे । अब सरकार घर कैसें चलै ?

रानी ने पूछा, 'तुम्हारी जाति में और कितने लोग मलखम्भ और कुश्ती में ध्यान देने लगे हैं ?'

'काए मैं का घर–घर देखत फिरत ?' झलकारी ने बड़ी बड़ी कजरारी आंखें घुमाकर, मुस्कराकर तीक्ष्ण उत्तर दिया ।

रानी हँस पड़ीं, 'यह तो तुम्हारे पति बहुत अच्छा काम करते हैं । तुम भी मलखम्भ, कुश्ती सीखो । इनाम दूँगी । घोड़े की सवारी भी सीखो ।'

झलकारी लम्बा घूंघट खींचकर नब गई। घूंघट में ही बेतरह हँसी। रानी भी हँसीं और अन्य स्त्रियां में भी हँसी का स्रोत फूट पड़ा।

लग भग सभी उपस्थित स्त्रियों ने ज़रा चिन्ता के साथ सोचा, 'हम लोगों से भी मलखंब, कुश्ती के लिए कहा जायेगा। बड़ी मुश्किल आई!'

उन लोगों ने उन फूलों के ढेरों और आभूषणों में होकर अखाड़ों और कुश्तियों को झांका तथा परम्परा की लज्जा और संकोच में वे ठिठुर सी गईं। उनकी हँसी को एक जकड़ सी लग गई।

झलकारी बोली, 'महराज, मैं चकिया पीसत हों, दो–दो तीन–तीन मटकन में पानी भर भर लै आउत, रँटा* कातत……'

रानी ने कहा, 'तुम्हारे पति का क्या नाम है?'

झलकारी सिकुड़ गई।

बख्शिन ने तपाक से कहा, 'आज हमलोग आपसमें कुंकुम रोरी लगाते समय एक दूसरे से पति का नाम पूछेंगे ही। झलकारी को भी बतलाना पड़ेगा उस समय। परन्तु…' वह नखरे के साथ दूसरी स्त्रियों की ओर देखने लगी।

रानी ने हँसकर पूछा, 'परन्तु क्या बख्शिन जू?'

बख्शिन ने उत्तर दिया, 'सरकार बड़े काम पहले राजा से आरम्भ होते हैं। आज के उत्सव की परिपाटी में रिवाज़ के अनुसार सबको अपने अपने पति का नाम लेना पड़ेगा, परन्तु प्रारम्भ कौन करेगा क्या यह भी हम लोगों को बतलाना पड़ेगा?'

कुछ स्त्रियां हँस पड़ीं। कुछ ताली पीट कर थिरक गईं। रानी की सहेलियां मुस्करा–मुस्करा कर उनका मुँह देखने लगीं। रानी के गौर मुख पर ऊषा की अरुण स्वर्ण रेखाएं सी खिचगईं। वह मुस्कराईं जैसे एक क्षण के लिये ज्योत्स्ना छिटक गई हो। ज़रा सिर हिलाया— मानों मुक्तपवन ने फूलों से लदी फुलवारियों को लहरा दिया हो।

---

* चरखा। चरखा चलाने की प्रथा बुन्देलखण्ड में, ऊँचे घरानों तक में, घर-घर थी।

रानी ने बखिशन से कहा, 'तुम मुझसे बड़ी हो, तुमको पहले बतलाना होगा।'

'सरकार हमारी महारानी हैं। पहले सरकार बतलावेंगी। पीछे हम लोग आज्ञा का पालन करेंगी।' बखिशन ने घूंघट का एक भाग ओठों के पास दबाकर कहा।

हरदी कूं कूं के उत्सव पर सधवा स्त्रियां एक दूसरे को रोरी का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है।

रानी ने कहा, 'बखिशनजू अपनी बात पर दृढ़ रहना। आज्ञा पालन में आगा पीछा नहीं देखा-जाता।'

'परन्तु धर्म की आज्ञा सबके ऊपर होती है सरकार।' बखिशन हठ पूर्वक बोली।

रानी के गोरे मुख-मंडल पर फिर एक क्षण के लिये रक्तिम आभा छाई सी देगई। बोलीं, 'बखिशनजू याद रखना मैं भी बहुत हैरान करूंगी। मेरी बारी आयगी तब मैं तुम्हें देखूंगी।'

बखिशन ने प्रश्न किया, 'अभी तो मेरी बारी है सरकार, बतलाइए महादेवजी के कितने नाम हैं?'

रानी ने अपने विशाल नेत्र ज़रा झुकाए। गला साफ़ किया। बोलीं, 'शिव, शंकर, भोलानाथ, शंम्भु, गिरिजापति···'

सरकार को तो पूरा कोष याद है। अब यह बतलाइए कि महादेव जी के जटा जूट में से क्या निकला है?

'सर्प, रुद्राक्ष···

'जी नहीं सरकार— किसकी तपस्या करने पर, किसको महादेव बाबा ने अपनी जटाओं में छिपाया, और कौन वहां से निकलकर, हिमाचल से बहकर इस देश को पवित्र करने के लिये आया? ब्राह्मावर्त के नीचे किसका महान् सुहावनापन है?

'गंगा का', यकायक लक्ष्मीबाई के मुँह से निकल पड़ा।

उपस्थित स्त्रियां हर्ष के मारे उन्मत्त हो उठीं। नाचने लगी, गाने लगीं। झलकारी ने तो अपने बुन्देलखण्डी नृत्य में अपने को बिसरा सा दिया। रानी उस प्रमोद में गौर की प्रतिमा की ओर विनीत कृतज्ञता की दृष्टि से देखने लगीं। आमोद की उस थिरकन का वातावरण जब कुछ स्थिर हुआ, रानी ने आनन्द विभोर बख्शिन का हाथ पकड़ा।

कहा, 'बख्शिनजू सावधान हो जाओ। अब तुम्हारी बारी आई।

बख्शिन के मुँह पर गुलाल सा बिखर गया।

नत मस्तक होकर बोली, 'सरकार अभी यहां बड़े बड़े मन्त्रियों और दीवानों की स्त्रियां और बहुएँ हैं। हम लोग तो सरकार की सेना के केवल बख्शी ही हैं।'

रानी ने मुस्कराते मुस्कराते दांत पीस कर विशाल नेत्रों को तरेर कर जिनमें होकर मुस्कराहट विवश झरी पड़ रही थी,—कहा, 'बख्शी सेना का आधार, तोपों का मालिक, प्रधान सेनापति के सिवाय और किसी से नीचे नहीं। राजा के दाहिने हाथ की पहिली उँगली, और तुम यहां उपस्थित स्त्रियों में सबसे अधिक शरारतिन ! मेरे सवालों का जवाब दो !'

बख्शिन ने अपनी मुख मुद्रा पर गम्भीरता, क्षोभ और अनमने पन की छाप बिठलानी चाही। परन्तु लाज से बिखेरी हुई, चेहरे की गुलाली में से हँसी बरबस फूटी पड़ रही थी।

बख्शिन बोली; 'सरकार की कलाई इतनी प्रबल है कि मेरा हाथ टूटा जा रहा है।'

रानी ने कहा, 'तुम्हारी कलाई भी इतनी ही मज़बूत बनवाऊँगी, बात न बनाओ। मेरे सवाल का जवाब दो। बोलो मेरे पुरखों के नाम याद हैं ?'

बख्शिन संभल गई। उसने सोचा मारके का प्रश्न अभी दूर है।'

बोली, 'हां सरकार। जिनकी सेवा में युग बीत गए उनके नाम हम लोग कैसे भूल सकते हैं ?'

बतलाओ मेरे ससुर का नाम।' रानी ने मुस्कराते हुए दृढ़तापूर्वक कहा।

चतुर बखिशन गड़बड़ा गई। उसके मुँह से निकल गया—'भाऊ साहब!'*

बखिशन के पति का नाम लाला भाऊ था।

रानी ने हँस कर बख्शिन का हाथ छोड़ दिया।

उपस्थिति स्त्रियां खिल खिला कर हँस पड़ीं। बखिशन को अपने पति का नाम बतलाना तो ज़रूर था, परन्तु वह रानी को थोड़ा परेशान करके ही बतलाना चाहती थी, लेकिन रानी ने अनायास ही बखिशन को परास्त कर दिया।

इसके उपरान्त रानी ने चुलबुली झलकारी को बुलाया उसके पति का वहां किसी को नाम नहीं मालूम था। इसलिए बहानों की गुंजाइश न थी।

रानी ने सीधे ही पूछा, 'तुम्हारे पति का नाम?'

झलकारी के पति का नाम पूरन था। पति का नाम बतलाने के लिए व्यग्र थी, परन्तु उत्सव की रङ्गत बढ़ाने के लिए उसने ज़रा सोच-विचार कर एक ढङ्ग निकाला।

बोली, 'सरकार, चन्दा पूरन मासी को ही पूरौ पूरौ दिखात है न?'

रानी ने हँस कर कहा, ओ हो? पहले ही अरसट्टे में फिसल गई! पूरन नाम है?'

झलकारी झेंप गई। चतुराई विफल हुई। हँस पड़ी।

इसी प्रकार हँसते खेलते और नाचते गाते स्त्रियों का वह उत्सव अपने समय पर समाप्त हुआ।

अन्त में रानी ने स्त्रियों से एक भीख सी मांगी, 'तुममें से कोई बहिनों के बराबर हो, कोई काकी हो, कोई माईं, कोई फूफी। फूल सदा

---

*शिवराव भाऊ गङ्गाधरराव के पिता थे।

नहीं खिलते। उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति ही मन में बसती है। नृत्य गान की भी स्मृति ही सुखदायक होती है। परन्तु इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और इसके भीतर आत्मा है। उनको पुष्ट करो और प्रबल बनाओ। क्या मुझे ऐसा करने का वचन दोगी ?'

उन स्त्रियों ने इस बात को समझा हो या न समझा हो, परन्तु उन्होंने हां–हां की। उन लोगों को डर लगा कि वहीं और तत्काल, कहीं मल–खंब और कुश्ती न शुरू करदेनी पड़े! इत्र पान के उपरान्त चली गईं।

एक बात लेकिन स्पष्ट थी–जब वे चली गईं तब वे किसी एक अदृष्ट, अवर्ण्य तेज से ओतप्रोत थीं।

उसके उपरान्त फिर झांसी नगर की स्त्रियां संध्या समय थालों में दीपक सजा–सजा कर और गले में बेला, मोतिया, जाही, जुही इत्यादि की फूल–मालाएं डाल डाल कर मन्दिरों में जाने लगीं। स्त्रियों को ऐसा भान होने लगा जैसे उनका कोई सतत संरक्षण कर रहा हो, जैसे कोई संरक्षण सदा साथ ही रहता हो, जैसे वे अत्याचार का मुक़ाबिला करने की शक्ति का अपने रक्त में संचार पा रही हों।

[२१]

नाट्कशाला की ओर से गङ्गाधरराव की रुचि कम हो गई। वे महलों में अधिक रहने लगे। परन्तु कचहरी दरबार करना बन्द नहीं किया। न्याय वे तत्काल करते थे—उल्टा सीधा जैसा समझ में आया, मनमाना। दण्ड उनके कठोर और अत्याचार पूर्ण होते थे, लेकिन स्त्रियों को कभी नहीं सताते थे। और न किसी की धन सम्पत्ति लूटते थे।

झांसी की जनता उनसे भयभीत थी, परन्तु अपनी रानी पर मुग्ध थी। रानी शासन में कोई प्रत्यक्ष भाग नहीं लेती थीं, किन्तु राजा के कठोर शासन में जहां कहीं दया दिखलाई पड़ती थी, उसमें जनता रानी के प्रभाव के आभास की कल्पना करती थी।

कम्पनी का झांसी प्रवासी असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट राजा के कठोर शासन, अत्याचार इत्यादि के समाचार गवर्नर जनरल के पास बराबर भेजता रहता था। उनके किसी भी सत्कार्य का समावेश उन समाचारों में न किया जाता था। और राज्यों के साथ साथ, कलकत्ते में झांसी राज्य की भी मिसिल तैयार होती चली जारही थी।

अंग्रेज़ों का चौरस करने वाला बेतहाशा, लगातार और ज़ोर के साथ चल रहा था। अंग्रेज़ लोग अपनी दूकान में हिन्दुस्थान को अधूरी या अधकचरी सौदा का रूप लिए नहीं देख सकते थे। एक क़ानून, एक ज़ाब्ता, एक मालिक, एक नज़र; इसमें अनैक्य को तिल भर भी स्थान देने ती गुञ्जायश न थी। मौक़ा मिलते ही छोटे-मोटे रजवाड़े साफ़, हज़म ! भारतीय जनता के सुख के लिए !

ऊँचे पदों पर भारतीय पहुँच नहीं पावें। भारतीय संस्कृति हेय और नाचीज़ है इसलिए पनपने न पावे। भारत में बहुत फालतू सोना-चाँदी है इसलिए अंग्रेज़ी दूकान की रोकड़ बढ़ती चली जावे। जनता स्वाधीनता का नाम ले तो उसको बड़ी रियासतों के अन्धेरों का संकेत करके चुप कर दिया जावे। बड़ी रियासत वाले ज़रा सा भी सिर उठावें तो छोटी

रियासतों को किसी न किसी बहाने घोंट—घांटकर बड़ी रियासतों को चुप रहने का सबक़ सिखाया जावे।

सबसे बड़ा काम जो अंग्रेज़ों ने हिन्दुस्थानी जनता की भलाई (!) के लिए किया, वह था पंचायतों का सर्वनाश। अंग्रेज़ों को इस बात परखने में बिलकुल विलम्ब नहीं हुआ कि उनके क़ानून के सामने हिन्दुस्थान की आत्मा का सिर तभी झुकेगा जब यहां की पंचायतें विलीन हो जायँगी, और हिन्दुस्थानी, अर्ज़ियां लिए उनकी बनाई हुई साहबी अदालतों के सामने मुँह बाए भटकते फिरेंगे।

यह सब उन्नीसवीं शताब्दि के वैज्ञानिक ढङ्ग से हुआ। जो परिस्थिति कठोर से कठोर पठान या मुग़ल नरेश अपने प्रकट अत्याचारों से उत्पन्न नहीं कर पाए थे, वह अंग्रेज़ों ने अपनी वैज्ञानिक हिकमत से उत्पन्न कर दी। बड़े—बड़े राजा—महाराजा और नवाब अपनी जनता का दामन छोड़कर अंग्रेज़ों का मुँह ताकने लगे। पुरुषार्थ की ज़रूरत न थी, इसलिए सिर डुबोकर विलासिता के पोखरों में घुस पड़े। अंग्रेज़ी बन्दूक़ और सङ्गीन उनकी पीठ पर थी, जनता की परवाह ही क्या की जाती?

अंग्रेज़ों को केवल एक बात का खुटका था—उनके इलाक़ों के हिन्दू और मुसलमान धर्म के इतने ढकोसले क्यों मानते हैं? किसी दिन इन ढकोसलों की श्रद्धा में होकर हमें नफ़रत की निगाह से न देखने लगें? इस धर्म से लिपटी हुई आत्मा का कैसे उद्धार करके अपना भक्त बनाया जावे? बस इनकी रूहानी भक्ति मिली कि हिन्दुस्थान में अपना राज्य अमर और अक्षय हो गया।

इसलिए सरकारी पाठशालाओं में बाइबिल की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई। एमेरिका हाथ से निकल गया तो क्या हुआ? सोने की चिड़िया, सोने के अंडे देने वाली मुर्गी—भारतभूमि—तो हाथ में आई! यह न जाने पावे किसी तरह से हाथ से! मन्दिरों की मूर्तियां मत तोड़ो, मसजिदों को अपवित्र मत करो—परन्तु धर्म पर से श्रद्धा को हटा दो,

फल उससे भी कहीं बढ़कर होगा। और कोने-कोने में डौंडी पीट दो कि हम धर्मों के विषय में बिलकुल तटस्थ हैं—हमारा एकमात्र आदर्श हिन्दुस्थान के लुटेरों और डाकुओं को दमन करके शान्ति स्थापित करने का है, जिससे खेती-किसानी आबाद हो सके और व्यापार बेरोकटोक चल सके। किसका व्यापार? किसके लिए खेती-किसानी? उसी अंग्रेज़ दूकानदार के लिए!

गङ्गाधरराव यह सब अच्छी तरह नहीं समझते थे, परन्तु उनके पहले पूना में एक दुबला-पतला व्यक्ति नाना फड़नीस हुआ था। वह खूब समझता था एक एक नस, एक एक रग, राई रत्ती! उसने हिन्दुस्थान के तत्कालीन नेताओं को बहुत समझाया, बहुत सावधान किया, परन्तु वे मूर्ख कुछ न समझे! अपनी महत्वकांक्षाओं की प्रेरणा में परस्पर कट मरे।

अंग्रेज़ों ने पंजाब को परास्त करके हाल ही में अपने हाथ में किया था। बिहार और बङ्गाल में राज्य था ही। मध्य देश बपौती का रूप धारण करता चला जाता था। इन सब के बीच में दो बड़े-बड़े रोड़े थे—एक अवध की मुसलमानी नवाबी और दूसरी झांसी की बड़ी हिन्दू रियासत। ये दोनों किसी प्रकार खतम हो जायँ तो पांचों घी में और फिर हो चौरस करने वाले अंग्रेज़ी बेलन की जय!

गङ्गाधरराव के पास गार्डन और उसके अन्य अंग्रेज़ आया करते थे, परन्तु गार्डन और वे, केवल दोस्त निभाने नहीं आया करते थे। राज्य की भीतरी बातों का पता लगाकर गवर्नर जनरल को सूचाना देना उनका प्रधान कर्तव्य था।

गङ्गाधरराव के कोई सन्तान उस समय तक नहीं हुई थी। दूसरा विवाह सन्तान की आकांक्षा से किया था। रानी गर्भवती भी थीं, परन्तु वह अनिवार्य नहीं था कि उनके पुत्र ही उत्पन्न हो। यदि वह निस्सन्तान मर गए तो झांसी को तुरन्त अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया जावेगा।

अंग्रेजों के अन्तर्मन में यह निहित था। इसीलिए गार्डन इत्यादि गङ्गाधरराव की खरी-खोटी भी सुन लेते थे। एक दिन शायद आवे जब झांसी-निवासी हमारी खरी-खोटी चक्रवृद्धि व्याज के साथ सुनेंगे। भीतर-भीतर यह लालसा घर किए बैठी थी।

ठण्ड पड़ने लगी थी। तारे अधिक चमक-दमक के साथ चन्द्रिका को अपनी विस्तृत झीनी चादर उढ़ाकर आकाश में उपस्थित हुए। गार्डन और राजा गङ्गाधरराव महल के दीवानखाने में बातचीत कर रहे थे।

गङ्गाधरराव—'बाजीराव पन्तप्रधान के देहान्त का समाचार मुझको मिल गया था, परन्तु यह हाल में मालूम हुआ कि उनकी पैंशन ज़ब्त कर ली गई है। यह अच्छा नहीं किया गया।'

गार्डन—'सोचिए सरकार, आठ लाख रुपया साल कितना होता है और फिर बिठूर जागीर मुफ्त में! उस पर खर्च कुछ नहीं।'

गङ्गाधरराव—'मुझको याद है—मुझको विश्वसनीय लोगों ने बतलाया है कि कम्पनी ने सन् १८०२ में* उक्त पन्तप्रधान के साथ जो सन्धि की थी, उसमें गवर्नर जनरल ने अपने हाथ से लिखा था 'यावच्चंद्रदिवाकरौ' कायम रहेगी। परन्तु चन्द्रमा और सूर्य सब जहां के तहां हैं। सन्धिपत्र पर दस्तखत किए अभी ५० वर्ष भी नहीं हुए और सारा मैदान सफाचट कर दिया!'

गार्डन—'सरकार, सन्धिपत्र मेरे सामने नहीं है, इसलिए ठीक ठीक नहीं कह सकता कि उसमें क्या लिखा है, परन्तु सुनता हूँ उनको जब १५, १६ वर्ष पीछे पैंशन दी गई तब यह लिखा था कि पैंशन को वह और उनका कुटुम्ब ही भोग सकेगा।'

गङ्गाधरराव—'नाना धोंडूपन्त जो अब जवान है, पन्तप्रधान का दत्तक पुत्र है। क्या वह उनका कुटुम्बी न माना जावेगा?'

---

* सन् १८०२ ई० की सन्धि। परिशिष्ट में देखिए।

गार्डन—'हमारे देश के क़ानून में गोद नहीं मानी जाती।'

गङ्गाधरराव—'पर हिन्दुस्थान तो आपका देश नहीं है।'

गार्डन—'अंग्रेज़ कम्पनी का राज्य तो है। राजा अपना क़ानून बर्तता है न कि प्रजा का। सरकार अपने राज्य में अपना ही क़ानून तो बर्तते हैं न?'

गङ्गाधरराव—'हमारा और हमारी प्रजा का कानून तो एक ही है।

गार्डन—'यह बिलकुल ठीक है सरकार। और, दीवानी मामलों में हमारे इलाक़ों में भी प्रजा का ही क़ानून माना और चलाया जाता है, परन्तु रियासतों के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं की जाती।'

गङ्गाधरराव—'क्यों रियासतें और उनके रईस क्या साधारण प्रजा से भी गए बीते हैं?'

गार्डन—'सो सरकार मैं नहीं जानता। कम्पनी सरकार इङ्गलैंड में क़ानून बना देती है। कुछ कानून गवर्नर जनरल भी बनाते हैं। हमको उन्हीं के अनुसार चलना पड़ता है।'

गङ्गाधरराव—'हमारे धर्म में विधान है कि यदि औरस पुत्र पिंडदान देने के लिए न हो तो दत्तक पुत्र ठीक औरस पुत्र की तरह पिंडदान दे सकता है। आप लोग क्या राजाओं को इससे वंचित करना चाहते हैं?'

गार्डन—'नहीं सरकार। बड़ी रियासतों को यह अधिकार दे दिया गया है। परन्तु जो रियासतें कम्पनी सरकार की आश्रित हैं, उनमें गोदी गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बिना नहीं ली जा सकती। यदि ली जावें, तो गोद लिया लड़का राज्य की गद्दी का अधिकारी नहीं माना जा सकता। वह राजा की निजी सम्पत्ति अवश्य पा सकता है और पिंडदान मजे में दे सकता है। सरकार ने हमारे धर्म की पुस्तक पढ़ी? उसका हिन्दी में अनुवाद हो गया है। छप गई है।

गङ्गाधरराव—'छप गई है अर्थात्?'

गार्डन—'छापाखाना में छपती है। उसमें यन्त्र होते हैं। वर्णमाला के अक्षर ढले हुए होते हैं। उनको मिला-मिलाकर स्याही से कागज़ पर छाप लेते हैं। हज़ारों की संख्या में पुस्तकें छप जाती हैं।'

गङ्गाधरराव—'ऐं। यह तो विलक्षण यन्त्र है। मैं ग्रंथों की नकल करवा-करवा कर हैरानी में पड़ा रहता हूँ और न जाने कितना रुपया व्यय किया करता हूँ। एक यन्त्र हमारे लिए भी मँगवा दीजिए।'

गार्डन को डर लगा। ऐसा भयंकर विषधर झांसी में दाखिल किया जावे! पुस्तकें छपेंगी, समाचारपत्र निकलेंगे। जनता सजग हो जावेगी। अंग्रेज़ों का रोब धूल में मिल जावेगा। जिस आतङ्क के बल-भरोसे कम्पनी सरकार राज्य चला रही है, वह हवा में मिल जावेगा। गार्डन ने सोचा था कि राजा को एक कड़वे प्रसङ्ग से हटाकर किसी मनोरंजक प्रसङ्ग में ले जाऊँ, परन्तु यह प्रसङ्ग तो और भी अधिक कटु निकला।

लेकिन गार्डन ने चतुराई से अपने को बचा लेने का प्रयत्न किया। बोला, 'सरकार, गवर्नर-जनरल की आज्ञा, अनुमति। आप लोग थोड़े दिन में शायद यह भी कहने लगे कि हमारी आज्ञा बिना पानी भी मत पियो।

गार्डन हँसने लगा। राजा भी हँसे।

बात टालने की नियत से उसने कहा, 'सरकार बड़ी देर से हुक्का नहीं मिला। आज क्या पान भी न मिलेगा?'

राजा ने हुक्का दिया।

उसी समय एक हरकारे ने आकर खुशी खुशी कहा, 'महाराज की जय हो! झांसी राज्य की जय हो। राजा को मालूम था कि रानी प्रसव गृह में हैं। जय का शब्द सुनते ही समझ गये! भीतर का हर्ष भीतर ही दबाकर गंभीरता के साथ पूछा, 'क्या बात है?'

हरकारा हर्ष के मारे उछला पड़ता था। उसने हर्षोन्मत्त होकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त सरकार, झांसी को राजकुमार मिले हैं।'

और उसने नीचा सिर करके अपनी कलाइयों पर उँगलियों से कड़ों के वृत्त बनाए।

राजा ने हँसकर कहा, 'सोने के कड़े मिलेंगे और सिरोपाव भी। जा, तोपों की सलामी छुटवा। पर देख, बड़ी तोपें न छूटें। हल्ला बहुत करती हैं। और बस्ती के पन्चों और भले आदमियों को सूचना दे।

गार्डन भी बहस से छुटकारा पाकर अपने घर चला गया।

गवर्नर जनरल को सूचना दे दी गई। झांसी राज्य को अंग्रेजी इलाके में मिला लेने की घड़ी टल गई।

[२२]

जिस दिन गङ्गाधरराव के पुत्र हुआ उस दिन सम्वत् १९०८ (सन् १८५१) की अगहन सुदी एकादशी थी। यों ही एकादशी के रोज़ मन्दिरों में काफ़ी चहल पहल रहती थी, उस एकादशी को तो आमोद प्रमोद ने उन्माद का रूप धारण कर लिया। अपनी प्यारी रानी के गर्भ से पुत्र की उत्पत्ति का समाचार सुनकर झांसी थोड़े समय के लिये इन्द्रपुरी बन गई।

राजा ने बहुत खर्च किया; इतना कि खज़ाना क़रीब क़रीब खाली कर दिया। दरिद्रों को जितना सम्मान उस अवसर पर झांसी में मिला, उतना शायद ही कभी मिला हो।

दरबार हुआ। गवैये आए। मुग़लखां का ध्रुवपद सिरे का रहा। उसको हाथी बख्शा गया। नर्तकियों में दुर्गाबाई खूब पुरस्कृत हुई। नाटक हुआ। परन्तु उसमें मोतीबाई न थी। राजा के मन में आया कि उसको फिर से रंगशाला में बुलवा लिया जावे, परन्तु न किसी ने सिफारिश की और न राजा अपने हठ को छोड़ कर स्वयं प्रवृत्त हुए।

दरबार में सभी जागीरदारों को कुछ न कुछ मिला।

उस दरबार में केवल एक व्यक्ति अपनी इच्छा की पूर्ति न करा सका। वे थे नवाब अलीबहादुर—राजा रघुनाथराव के पुत्र। जब अंग्रेज़ों ने रघुनाथराव के कुशासन काल में झांसी का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया था, तभी उनकी जागीर जब्त करली गई थी, और उनको पांचसौ रुपया मासिक पैन्शन दी जाने लगी थी। जब गङ्गाधरराव को राज्याधिकार मिला तब उन्होंने यह पैन्शन जारी रक्खी। अलीबहादुर चाहते थे कि यथा संभव उनको वही जागीर फिर मिल जावे। जागीर न मिल सके तो पैन्शन में काफ़ी वृद्धि कर दी जावे। जागीर मिलती न देखकर अलीबहादुर ने पैन्शन बढ़ाने के लिए विनय की। राजा ने पोलिटिकल एजेन्ट से सलाह करने की बात कहकर नवाब को उस समय टाला। नवाब का मन मसोस खागया। परन्तु उन्होंने आशा नहीं छोड़ी।

अनेक अंग्रेज़ अफ़सरों से उनका मेलजोल था। परस्पर आना जाना था। इसलिए उस आश्रय को दृढ़तापूर्वक पकड़ने की उन्होंने अपने जी में ठानी।

दरबार में पगड़ी बंधवाने की प्रथा बहुत समय से चली आ रही थी। श्याम चौधरी नाम के एक सेठ के घराने वाले ही ऐसे मौकों पर पगड़ी बांधते थे। श्याम चौधरी लखपती था। कहते हैं कि उस समय झांसी में ५२ लखपती थे। ये ५२ घर बावन बसने कहलाते थे। श्याम चौधरी पाग बांधने के पहले अपना नेग दस्तूर लेने के लिए बहुत मचला। राजा ने जब मोती जड़े सोने के कड़े देने का वचन दिया तब उसने राजा को पगड़ी बांधी। नवाब अलीबहादुर का जी इससे और भी अधिक जल गया।

वह किसी भी तरह इस भावना को नहीं दबा पा रहे थे—मैं राजा का लड़का हूँ; मैं ही झांसी का राजा होता; मेरे पास जागीर तक नहीं! छोटे छोटे से लोगों का इतना आदर सत्कार और मेरी पैन्शन बढ़ाने तक के लिए पोलिटिकल एजेन्ट की सलाह की ज़रूरत!

नवाब साहब ऊपर से प्रसन्न और भीतर से बहुत उदास अपनी हवेली को लौट आए। वे रघुनाथराव के नईबस्ती वाले महल में रहते थे। महल में तीन चौक थे। एक रङ्गमहल, दूसरा सैनिकों, हाथियों इत्यादि के लिए, तीसरा घोड़ों और गायों के लिए। महल का सदर दरवाज़ा चांद दरवाज़ा कहलाता था। इस पर चढ़ कर वे और उनके मुसलमान अफ़सर ईद के चांद को देखते थे, इसलिए दरवाज़े का नाम चांद दरवाज़ा पड़ गया था। बिलकुल अगले सहन के आगे एक और विस्तृत सहन था। जिसके एक ओर इनका प्रिय हाथी मोती गज बंधता था, और दूसरी ओर राजा रघुनाथराव के जीवनकाल में इनकी माता लच्छोबाई के रहने के लिए हवेली थी। इस समय नवाब अलीबहादुर के अधिकार में यह हवेली और सारा महल था।

बाहर वाली हवेली में उनके मेहमान या आश्रित ठहराए जाते थे। दरबार से लौटकर अलीबहादुर पहले इसी हवेली में गए।

हवेली बड़ी थी। उसमें कई कक्ष थे। परन्तु उजाला केवल दो कक्षों में था। बाक़ी सूनी और अंधेरी थी। बाहर पहरेदार थे।

उजाला दीपकों का था। शमादानों में जल रहे थे। दो कमरों में अलग अलग। दोनों कमरे एक दूसरे से काफ़ी दूर।

जिस पहले कमरे में नवाब अलीबहादुर गए उसमें सिवाय खुदाबख्श के और कोई न था। अभिवादन के बाद उनमें बातचीत होने लगी।

खुदाबख्श ने आशामयी आंखों से कहा, 'हुजूर ने मेरी विनती तो पेश की ही होगी?'

अलीबहादुर ने उत्तर दिया, 'नहीं भाई मौक़ा नहीं आया। जानते हो महाराज अव्वल दर्जे के ज़िद्दी हैं। एकाध दिन मौक़ा हाथ आने दो, तब कहूँगा।'

खुदाबख्श—'उस कमरे में बिचारी मोतीबाई उम्मेदें बांधे बैठी हैं। उसका तो कोई क़सूर ही नहीं है। उसके लिए आप कुछ कह सके?'

अलीबहादुर—'क्या कहता? वहां तो बनियों और छोटे छोटे लोगों की बन पड़ी। मेरे लिए ही कुछ नहीं हुआ।'

खुदाबख्श—एँ!'

अलीबहादुर—जी हां। जागीर चूल्हे में गई—पैन्शन बढ़ाने के लिए अर्ज़ी की तो कह दिया कि बड़े साहब से सलाह करेंगे। मैं सोचता हूँ कि हमीं लोग बड़े साहब से क्यो न मिलें? आपके साथ काफ़ी जुल्म हुआ है। आप मुद्दत से छिपे-छिपे फिर रहे हैं। जिस मोतीबाई के लिए राजा पलक-पांवड़े बिछाते थे, वह विचारी दर-दर फिर रही है। एक दिन मुझको यह और राजा के अनेक अत्याचार बड़े साहब के सामने साफ़ बयान करते हैं। आप भी चलना।'

खुदाबख्श—मैं आज तक किसी गोरे से नहीं मिला । आपकी उनसे दोस्ती है । आप जैसा ठीक समझें करें ।'

अलीबहादुर—'मोतीबाई से न अर्ज़ी दिलाई जावे ? आपसे कुछ बातचीत हुई ?'

खुदाबख्श - 'क्या कहूँ, वे तो मुझसे पर्दा करतीं हैं । आप ही पूछिएगा ।

अलीबहादुर—'नाटकशाला वाली भी पर्दा करती हैं ! रङ्गमंच पर तो पर्दे का नाम–निशान नहीं रहता, बल्कि उससे बिलकुल उल्टा व्योहार नज़र आता है ।

अलीबहादुर की अवस्था ४२, ४३ वर्ष की थी । स्वस्थ थे । रङ्गीन तबियत के । उन्होंने बातचीत का सिलसिला जारी रक्खा—'रङ्गमंच' पर उनका नाचना, गाना, हावभाव सभी परले सिरे के देखे । यहां पर्दा कैसा ? वे पीरअली के सामने तो निकलती हैं ।

पीरअली अलीबहादुर का खास नौकर और सिपाही था । बर्ताव एकान्त में मित्रों सदृश ।

उसको बुलवाया गया ।

पीरअली की मारफ़त मोतीबाई से बातचीत होने लगी ।

'बड़े साहब' को अर्ज़ी देने के प्रस्ताव पर मोतीबाई ने कहलवाया, 'मैं अर्ज़ी नहीं देना चाहती हूँ किसी अंग्रेज़ के सामने नहीं जाऊंगी । आप लोग बड़े आदमी हैं । आप लोगों के रहते मैं अंग्रेज़ों के बंगलों पर नहीं भटकना चाहती ।'

अलीबहादुर ने कहा, 'आपको कहीं जाना नहीं पड़ेगा । आपकी अर्ज़ी मैं पेश कर आऊंगा ।'

मोतीबाई ने उत्तर दिलवाया, 'साहब से सब कुछ ज़बानी कह दीजिए । लिखी अर्ज़ी नहीं दूंगी ।'

खुदाबख्श ने समर्थन किया ।

बोला, 'लिखा हुआ कुछ नहीं देना चाहिए। यदि कहीं अर्जी को साहब ने महाराज के पास फैसले के लिए भेज दिया तो हम सब विपद में पड़ जावेंगे।

अलीबहादुर दूसरे के हाथ से अङ्गारे डलवाना चाहते थे इसलिए उन्होंने खुदाबख्श को समझाया, 'आपका इससे बढ़ कर तो अब और कुछ नुक़सान हो नहीं सकता। बिना किसी अपराध के देश निकाला दे दिया गया। घर द्वार छूटा। जागीर गई। परदेश की ख़ाक छानते फिर रहे हो। मेरी राय में आपको लिखी अर्ज़ी ज़रूर देनी चाहिए। मै साहब से सिफ़ारिश करूंगा। वे राजा के पास न भेजकर सीधी लाट साहब गवर्नर-जनरल बहादुर के पास भेज देंगे। कम्पनी सरकार रियासतों के नुक्स तलाश करने में दिनरात व्यस्त रहती है।'

खुदाबख्श ने कहा, 'ज़रा सोच लूं। फिर किसी दिन अर्ज़ करूंगा। आपतो मेरे शुभचिन्तक हैं। आप अकेले का तो मुझको आभार ही है। अहसानों के बोझ से दबा हूँ।'

अलीबहादुर ने सोचा जल्दी न करनी चाहिए। पीरअली ने छिपे संकेत में हामी भरी। खुदाबख्श के खाने पीने की व्यवस्था करके अलीबहादुर चले गए।

अकेले रह जाने पर मोतीबाई भी अपने घर गई। जाते समय उसने एकबार खुदाबख्श की ओर देखा। खुदाबख्श को ऐसा जान पड़ा जैसे कमलों का परिमल छुटकाती गई हो।

[२३]

लक्ष्मीबाई का बच्चा लगभग दो महीने का हो गया। परन्तु वे सिवाय किले के उद्यान में टहलने के और कोई व्यायाम नहीं कर पाती थीं। शरीर अभी पूरी तौर पर स्वस्थ नहीं हुआ था। मन उनका सुखी था। लगभग सारा समय बच्चे के प्यार में जाता था। राजा भी उस बच्चे पर प्यार बरसाने में काफ़ी समय उनके पास बिताते थे। राजा की प्रकृति में अद्भुत अन्तर आगया था। शासन की कटोरता में उन्होंने कमी करदी। जनता उनको प्रजावत्सल कहने लगी।

उन्हीं दिनों तात्या टोपे झांसी आया। राजा का एक फ़ौजी अफ़सर कर्नल मुहम्मद ज़माखां था। उसी की हवेली के एक हिस्से में तात्या को डेरा मिला। पास ही जूही रहती थी।

तात्या को रानी से एकान्त में बात चीत करने का अवसर मिला।

उसने रानी से कहा, 'आपको दादा के देहान्त का हाल तो मालूम हो गया था, परन्तु पैन्शन छीने जाने की बात किसी ने नहीं बतलाई! आश्चर्य है!'

लक्ष्मीबाई दुखी स्वर में बोलीं, 'मैं अस्वस्थ थी, इसलिए यह समाचार मुझ तक नहीं आने दिया गया। अंग्रेज़ों ने बड़ी बेईमानी की।'

तात्या—'यह उन लोगों की न तो पहली बेईमानी है और न आखिरी। उन लोगों की नीति सारे देश को डसती चली जा रही है। गायकवाड़, होलकर, सिंधिया, अवधके नवाब ये सब अफ़ीम ही खाए बैठे हैं।'

रानी—'पैन्शन छीनने के विरुद्ध क्या उपाय किया?'

तात्या—'अर्ज़ी फ़रियाद की। बड़े लाट ने कोई सुनवाई नहीं की। विलायत को भी लिखा पढ़ा, एक होशियार आदमी भेजा, परन्तु सबने कानों में तेल डाल लिया है।'

रानी—'फिर क्या सोचा है?'

तात्या—'कुछ नहीं। नाना साहब और रावसाहब ने आपके पास मुझको भेजा है। उनको आपके विवेक और तेज का भरोसा है।'

रानी—'नवाब साहब के पास लखनऊ गए ?'

तात्या—'गया था। परन्तु नवाब साहब के चारों तरफ गायिकाओं, नर्तकियों और भांडों का पहरा लगा रहता है। उन लोगों ने कहा कि अगले साल मुलाकात्त का मुहूर्त निकलेगा।'

रानी हँस पड़ीं। जैसे संध्या के पीले बादलों में दामिनी दमक गई हो। रानी ने अभी अपनी स्वभाविक अरुणत पुनः प्राप्त कर पाई थी।

तात्या ने कहा, मैं नवाब के प्रधान मन्त्री से मिला वह हिन्दू है। परन्तु बिचारा क्या करता। उसने अपनी असमर्थता प्रकट की। फिर कई बड़े ज़िमीदारों से मिला। उन्होंने कहा कि कुछ पुरुषार्थ करो हम साथ देंगे।'

रानी कुछ सोचने लगी। सोचती रहीं।

तात्या बोला, 'आप बिठूर में छत्रपति और बाजीराव और छत्रसाल, न जाने कितने नाम लिया करती थीं।'

रानी ने कहा, 'ये नाम मैं कभी नहीं भूलूगों। छत्रसाल का नाम इधर के लोगों में अब भी मन्त्र का सा काम करता है।'

तात्या—'यह और वे सब मन्त्र कब काम आवेंगे।'

रानी ज़रा मुस्कराईं। तात्या उस मुस्कराहट को पहिचानता था। उसके परिवेष्ठन में छुटपन की मनू के छोटे छोटे निश्चय बड़ी दृढ़ता के साथ निकला करते थे। तात्या ने आशा से कान लगाए।

रानी ने कहा, 'टोपे अभी समय नहीं आया है। घड़ा अपूर्ण है— अभी भरा नहीं है। हम लोगों के आपसी उपद्रवों ने जनता को त्रस्त कर दिया है। उसको थोड़ा सांस लेने योग्य बन जाने दो। समर्थ रामदास का दिया हुआ स्वराज्य संदेश, छत्रपति शिवाजी का पाला हुआ वह आदर्श, छत्रसाल का वह अनुशीलन अमर और अक्षय है।'

तात्या ज़रा अधीर होकर बोला, 'महारानी साहब, ये बातें कान और हृदय को अच्छी मालूम होती हैं, पर हिन्दू और मुसलमान जनता तो अचेत सी जान पड़ती है......'

रानी ने टोककर दृढ़ स्वर में कहा, 'तात्या भाई, जनता कभी अचेत नहीं होती, उसके नायक अचेत या भ्रम मय हो जाते है।'

तात्या—'तब नाना साहब से क्या जाकर कहूं?'

रानी - 'यही कि कान और आंख खोलकर समय की प्रतीक्षा करें। मुझे अभी तो पूर्ण स्वस्थ होने में ही कुछ समय लगेगा, स्वस्थ होते ही अपने आदर्श के पालन में सचेष्ट होऊंगी। अपने आदर्श को कभी न भूलना–प्रयत्न की पहली और पक्की सीढ़ी है।

तात्या चलने को हुआ।

रानी ने एक प्रश्न किया, 'दिल्ली का क्या हाल है?'

तात्या ने उत्तर दिया, बादशाह का? उन बिचारों को नब्बे हज़ार रुपया साल पेन्शन मिलती है। कविता करते हैं और कवि सम्मेलनों में उलझे रहते हैं। कम्पनी ने उनकी नज़र भेंट बन्द करदी है और उनसे कह रही है कि अपने को बादशाह कहना छोड़ो नहीं तो पेन्शन बन्द कर देंगे।'

रानी ने कहा, 'मुसलमान नवाब और जन क्या इस चिनौतीको यों ही पी जायेंगे।

कह नहीं सकता, तात्या ने कहा। कुछ समय बाद तात्या चला गया।

तात्या झांसी में और ठहरना चाहता था, परन्तु बिठूर जल्दी जाना था और गङ्गाधरराव की नाटकशाला बन्द थी यद्यपि अभिनय करने वालों का वेतन बन्द नहीं किया गया था।

[२४]

गङ्गाधरराव का वह बच्चा तीन महिने की आयु पाकर मर गया। इसका सभी के लिये दुखःद परिणाम हुआ। राजा के मन और तन पर इस दुर्घटना का स्थाई कुप्रभाव पड़ा। वे बराबर अस्वस्थ रहने लगे।

लगभग दो वर्ष राजा और रानी के काफ़ी कष्ट में बीते।

राजा की खीझ बढ़ गई। उन्होंने सनकों में काम करना शुरू कर दिया।

एक दिन उनको मालूम हुआ कि खुदाबख्श नवाब अलीबहादुर के यहां कभी क ी आता है। इस ज़रा से अपराध पर उन्होंने नवाब साहब का महल ज़ब्त कर लिया। केवल बाहर वाली हवेली उनके रहने के लिए छोड़ी।

सन् १८५३ के शारदीय नवरात्र का महोत्सव हुआ। उस दिन उनका स्वास्थ्य अच्छा जान पड़ता था, केवल कुछ कमज़ोरी थी। राजवैद्य प्रतापशाह मिश्र का उपचार था। राजा वैद्य पर बहुत खुश थे। वैद्य उद्दण्ड प्रकृति का था। परन्तु राजा उसको बहुत निभाते थे।

दशहरे के भरे दरबार में वैद्य ने अपने एक पड़ोसी का उलाहना दिया, 'सरकार मैं हवेली बनाना चाहता हूँ। मेरे मकान में जगह थोड़ी है। पड़ौसी को मुँहमागा दाम देने को तैयार हूँ। वह पाजी है। बिलकुल नट गया है। मकान नहीं छोड़ता। मेरी हवेली नहीं बन पा रही है। वह मकान मुझको दिलवा दिया जाय।'

राजा ने इस प्रार्थना को स्वीकृत करने से इनकार कर दिया।

वैद्य ने हठपूर्वक कहा, 'तब मै कोट बाहर एक अलग छोटी सी झांसी बसाऊँगा। सरकार की अनुमति भर चाहिए। या तो नगर में हवेली बनाकर रहूँगा या कोट बाहर एक बस्ती बसाऊंगा। और एक दृढ़ कोट उसके चारों ओर खिचवा दूँगा।

तीन साल पहले के गङ्गाधरराव होते तो वह इस प्रस्ताव पर वैद्यराज की खाल खिचवा डालते। परन्तु उनका स्वभाव सनकों से भर गया था। बल के साथ तेज भी उनका ठंडा पड़ गया था।

राजा ने वैद्य को अनुमति दे दी। वैद्य का ध्यान उपचार से हटकर नया नगर बसाने और कोट खिचवाने की विशाल मूर्खता पर दृढ़ता के साथ जा अटका। नईबस्ती तो वैद्य ने नहीं बसा पाई, परन्तु उसने कोट खिचवा लिया, जो अपने अखण्ड रूप में अब भी प्रतापसाह मिश्र के हठ का स्मारक बड़ेगांव फाटक बाहर खड़ा है।

विजयादशमी के उपरान्त गङ्गाधरराव को संग्रहणी रोग ने ग्रस लिया। बहुत दवा-दारू की गई कुछ न हुआ। मर्ज़ बढ़ता ही चला गया।

उस समय झांसी का असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट मेजर मालकम था। उसको सूचना दी गई। उसने डाक्टरी उपचार का अनुरोध किया, परन्तु वैद्यों और हकीमों ने प्रयत्न को अभी आशा रहित नहीं समझा था, इसलिए उस अनुरोध पर विचार करने की भी नौबत नहीं आई।

महालक्ष्मी के मन्दिर में जो लक्ष्मी फाटक बाहर है और जहां सदा ही धूमधाम रहती थी, पाठ बिठलाया गया। झांसी का कोई भी मन्दिर न था जहां राजा के रोग निवारण के लिए पूजा-अर्चा न कराई गई हो और जनता ने अपनी प्रार्थनाएँ भेंट न की हों।

नवम्बर के तीसरे सप्ताह में राजा का स्वास्थ्य और भी बिगड़ गया। प्रतापसाह मिश्र ने बड़े दम्भ के साथ 'प्रतापलंकेश्वर रस' बनाया, परन्तु किसी भी रस का कोई प्रभाव न पड़ा।

राजा ने क्षीण मुस्कराहट के साथ इतना ज़रूर कहा, 'कोट खिचवाने से कैसे अवकाश मिल गया?'

उसके बाद राजा यकायक बेहोश हो गए। रानी के पिता मोरोपन्त और दीवान नरसिंहराव घबराए हुए आए।

राजा को पुनः चेत हो आया था।

नरसिंहराव ने कहा' 'सरकार स्वस्थ हो जावेंगे। कोई चिन्ता की बात नहीं है। हम लोगों को आज्ञा दी जावे।'

राजा समझ गए। कुछ पहले से मनमें जो बात उठी थी, उसको उन्होंने कहा, 'मैं अभी जिऊंगा। प्रताप मिश्र का नया नगर देखने जाऊंगा, परन्तु मैंने निश्चय किया है कि दत्तक लेलूं।'

मोरोपन्त और नरसिंहराव राजा के मुंह की ओर देखने लगे।

राजा कहते गए, 'हमारे कुटुम्बी वासुदेवराव नेवालकर का एक पुत्र आनन्दराव है। पांच वर्ष का है। सुन्दर और होनहार है। उसको मैं गोद लेना चाहता हूँ। यदि रानी साहब स्वीकार करें तो मैं आज ही शास्त्रानुसार गोद लेलूँ।'

मोरोपन्त पूछ आए। रानी ने स्वीकार किया।

तुरन्त दत्तक विधान की तैयारी की गई। नगर की जनता के मुखिया निमंत्रित किए गए। मेजर मालकम की जगह मेजर एलिस असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट होकर आ गया था और मालकम पोलिटिकल एजेंट होकर चला गया। उसको तथा अंग्रेज़ी सेना के अफसर कप्तान मार्टिन को भी बुलाया गया। इन सबके सामने राजा ने आनन्दराव को विधिवत् गोद लिया।

आनन्दराव का नाम बदलकर दामोदरराव रक्खा गया।

[२५]

झांसी की जनता के पन्चों, सरदारों, और जो सेठ साहूकारों को, जो इस उत्सव पर निमन्त्रित किए गए थे, इत्र पान भेंट इत्यादि से सम्मानित करके विदा किया गया। केवल मेज़र एलिस, कप्तान मार्टिन, मोरोपन्त और-प्रधान मंत्री नरसिंहराव वहां रह गए। निकट ही पर्दे के पीछे रानी लक्ष्मीबाई बैठी हुई थीं। राजा ने एक ख़रीता कम्पनी सरकार के नाम लिखवाया। उसका सार यह है:—

'बुन्देलखण्ड में कम्पनी सरकार का राज्य स्थापित होने के पहले से हमारे पूर्वज उनकी हर सहायता करते आए हैं और मैंने स्वयं जीवन भर उनकी सहायता की है। मेरे घराने के साथ कम्पनी सरकार की जो संधियां समय समय पर हुई हैं, उनसे हमारा हक़ बराबर पुष्ट होता चला आया है। मैं इस समय रोग ग्रस्त हूँ। अच्छे होने की आशा है और यह भी आशा है कि स्वस्थ होने पर मेरे सन्तान हो, परन्तु यह सोच कर कि कदाचित् मेरा देहान्त हो जाय और बिना उत्तराधिकारी के यह राज्य नष्ट हो जाय, अपने कुटुम्ब के एक पन्चवर्षीय बालक आनन्दराव को हिन्दू धर्म शास्त्र के अनुसार गोद लिया है। वह नाते में मेरा पौत्र लगता है। यदि मैं स्वस्थ न हो सका और मेरा देहान्त हो गया तो यही बालक, जिसका नाम गोद के उपरान्त दामोदरराव रक्खा गया है, झांसी राज्य का उत्तराधिकारी होगा। जब तक मेरी पत्नी जीवित रहे, तब तक इस राज्य की स्वामिनी और इस बालक की माता समझी जावे और राज्य की व्यवस्था उसीके आधीन रहे। मैं चाहता हूँ कि उसको किसी प्रकार का कष्ट न हो।'

राजा ने ख़रीता अपने हाथ से एलिस के हाथ में दिया। राजा का गला रुद्ध हो गया और आंखों में आंसू भर आए। पर्दे के पीछे रानी की सिसक सुनाई पड़ी मानों उस ख़रीते पर इस सिसक की मुहर लगी हो।

गले को किसी तरह काबू में करके राजा ने एलिस से कहा, 'आपको मैं अपना मित्र मानता हूँ। बड़े साहब मालकम भी मेरे मित्र हैं। गार्डन तो जैसे मेरा छोटा भाई हो.........'

राजा के हृदय में पीड़ा हुई। वे रुक गए। एलिस ध्यान पूर्वक उनकी बात सुनने लगा।

राजा बोले, 'इस समय गार्डन मेरे पास होता तो मुझको बड़ी खुशी होती' और मुस्कराए।

पीड़ा कम्पित ओठों पर वह अर्द्धस्मित किसी असह कष्ट को ज़ोर के साथ दबा गया।

'गार्डन का हुक्का दीवान खास में रक्खा हुआ है। पियो तो मंगवाऊँ।'

'नहीं सरकार।'

'देखो मेजर साहब दामोदरराव कितना सुन्दर। यह बड़ा होनहार है। मेरी रानी सी माता को पाकर झांसी को चमका देगा। मेरी झांसी को ये दोनों बड़ा भारी नाम देंगे...'

पर्दे के पीछे फिर सिसकी सुनाई दी। एलिस ने आंख के एक कोने से उस ओर देखकर मुँह फेर लिया।

राजा ने पर्दे की ओर मुँह फेर कर रुद्ध स्वर में, मुश्किल से, कहा, 'यह क्या है? रोती हो? मैं अच्छा हो रहा हूँ। पर मुझे अपनी बात तो कह लेने दो।'

रानी ने धीरे से खांसकर अपना कंठ संयत किया।

राजा स्थिर होकर बोले, 'मेजर साहब हमारी रानी स्त्री ज़रूर है, परन्तु इसमें ऐसे गुण हैं कि संसार के बड़े बड़े मर्द इसके पैरों की धूल अपने माथे पर चढ़ावेंगे।'

बहुत प्रयत्न करने पर भी राजा अपने आंसुओं को न रोक सके।

एलिस ने कहा, 'महाराज थोड़ी बात करें नहीं तो तबियत देर में अच्छी हो पावेगी।'

रानी ने ज़रा ज़ोर से खांसा मानो राजा को निवारण कर रही हों।

दुर्बल हाथों से राजा ने आंसू पोंछे। गले को नियन्त्रित किया।

बोले, 'रानी बहुत अच्छी व्यवस्था करेगी। आप लोग दामोदरराव की नाबालिगी के कारण परेशान मत होना।'

राजा के हृदय में पीड़ा बढ़ी।

किसी प्रकार उसको क़ाबू में करके उन्होंने कहा, 'मुझे झांसी के लोग बहुत प्यारे हैं। मैं चाहता हूँ मेरी जनता सुखी रहे। मैंने जिसको जो कुछ दिया है, वह सब उसके पास बना रहना चाहिए। मुग़लखां बहुत बड़ा गवैया है मेजर साहब।'

एलिस ने सोचा गङ्गाधरराव का दिमाग़ फिरने को है। ज़रा चिन्तित हुआ।

राजा बोले, 'उसको मैंने इनाम में हाथी दिया है। वह उसी के पास रहेगा। और हाथी के व्यय के लिये मैंने जो कुछ लगा दिया है वह भी उसके पास रहना चाहिए।'

इसके उपरान्त राजा को खांसी आई। और साथ ही रक्त। प्रतापसाह वैद्य बाहर मौजूद था। बुला लिया गया। दवा दी गई। राजा को कुछ चैन मिला। पर वे जान गए कि यह क्षणिक है।

बोले, 'एलिस साहब ये हमारे वैद्यजी बड़े हठी हैं। अपना एक अलग नगर बसा रहे हैं। मैंने अनुमति देदी है। इनके हठको कोई तोड़े नहीं।'

वैद्य की आंख में भी एक आंसू आगया। उसको वैद्य ने किसी बहाने से जल्दी पोंछ डाला। वैद्य बाहर चला गया।

राजा के ओठों पर एक क्षीण मुस्कराहट फिर आई।

'मैं चाहता हूँ कि मेरी नाटकशाला में चाहे खेल हों या न हों, परन्तु पात्रों के लिए जो वेतन ख़जाने से दिया जाता है वह उनको मिलता रहे।'

राजा फिर खांसे। अबकी बार ज़्यादा खून आया। वैद्य फिर भीतर आया। उसने आज्ञा के स्वर में प्रतिवाद किया, 'महाराज अब बिलकुल न बोलें...'

राजा ने तुरन्त कहा, 'थोड़ा सा और फिर बस। तुम्हारी और तुम्हारी दवा की कोई ज़रूरत न रहेगी।'

राजा की आकृति बिगड़ी। सब लोग चिन्तित और भयभीत हुए।

बहुत कष्ट के साथ बोले, 'मेजर साहब एक अन्तिम प्रार्थना–बस एक–झांसी अनाथ न होने पावे···'

कराहने लगे। आंखें फिरने लगीं।

कप्तान मार्टिन एक ओर चुप बैठा हुआ था। उसने एलिस को चल देने का संकेत किया। एलिस उठना ही चाहता था कि राजा बोले, 'चित्रकार सुखलाल, हृदयेश कवि···'

एलिस उठा। उसने प्रणाम करके राजा से कहा, 'सरकार, हम लोग जाते हैं। समाचार मिलते ही तुरन्त हाज़िर होंगे।'

राजा ने आंखें स्थिर कीं।

कहा, 'मेजर साहब भूलना मत। हमको आपका भरोसा है। हमारी प्रार्थना को ध्यान में रखना। लाट साहब को मेरी बिनती······'

इसके बाद वे नहीं बोल सके और बेसुध हो गए।

एलिस और मार्टिन चले गए।

लक्ष्मीबाई तुरन्त पर्दे से बाहर निकल आईं। पति की उस दशा को देखकर चीत्कार कर उठीं। मोरोपन्त ने दामोदरराव को बुलवा लिया। नाना भोपटकर ले कर आए। रानी को कुछ सांत्वना मिली।

[२६]

जिस इमारत में आजकल डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का दफ्तर है, वह उस समय डाक बङ्गले के काम आता था। पास ही झांसी प्रवासी अंग्रेजों का क्लब घर था। एलिस और मार्टिन राजा के पास से आकर सीधे क्लब गए। वहां और कई अंग्रेज आमोद-प्रमोद में मग्न थे। यहां इन दोनों का जी हलका हुआ।

उन अंग्रेजों ने महल का हाल पूछा।

'राजा बीमार है। बच नहीं सकता।'

'इलाज वही दकियानूसी होगा?'

'एक मूर्ख वैद्य कुछ पीस-पासकर मधु के साथ खिला रहा है।'

'कैप्टिन एलन का इलाज करवाओ।'

'खुशी से, परन्तु ये लोग ऐसे कट्टर-धर्मी हैं कि शायद राजा एलन के हाथ की छुई हुई दवा न खायगा।'

'शायद अच्छा हो जाय। न हुआ तो क्या होगा?'

'राजा ने एक लड़के को गोद लिया है।'

'कब?'

'आज हम लोगों के सामने।'

'गोद! यानी झांसी में वही मनमानी और क़ानून हीन व्यवस्था जारी रहने दी जावेगी?'

एलिस ने इस प्रसङ्ग को आगे नहीं बढ़ने दिया। तब वार्तालाप की धारा दूसरी ओर मुड़ गई और बातचीत में सभी शरीक हो गए।

'सुनते हैं रानी बहुत सुन्दर है। अच्छी घुड़सवार है। यदि नाचना सीखे तो उसका नृत्य अजीब होगा।' एक अंग्रेज़ ने कहा।

'चुप मूर्ख' एलिस बोला, 'अभी उसी के राज्य में बैठे हो। हिन्दुस्तानी लोग अपने राजा-रानी के बारे में ऐसी बात सुनना बिलकुल पसन्द नहीं करते।'

'हिश ! (डैमइट) वह तो गधों का झुन्ड है। फिर भी मैं तुम्हारी बात मानता हूँ। इसलिए नहीं कि रानी-वानी से डरता हूँ, किन्तु इसलिए कि प्याले के ऊपर मीठा मीठा पवन बहना चाहिए न कि बहस-मुबाहिसे की गरम आंधी। वरना मैं अपनी पूरे महीने की तनख्वाह की होड़ लगाता। तो भी मेजर, मैं सुनता हूँ राजा नाचता अच्छा था। किसी ज़माने में, और उसकी नाटकशाला में बड़ी सुन्दर शकलें थीं। बहुत बढ़िया नाच।

'हम सब जानते हैं, पर देखा नहीं है। वैसे और हिन्दुस्थानी नर्तकियों का नाच बहुत देखा। मगर मज़ा नहीं आता। इस देश के नाच तक में कोई ढङ्ग नहीं, कोई मोहकता नहीं।'

'पर नर्तकियां हैं हसीन। मैं शर्त लगाता हूँ, नाच-गान चाहे उनका उतना खूबसूरत न हो।'

'ये लोग हमारे नाचने-गाने को भद्दा समझते हैं। मैंने हिन्दुस्थानियों का अपने नृत्यग्रह में आना बन्द कर दिया है। केवल नवाब अलीबहादुर आता है। वह समझदार है।'

'सिर तो ज़रूर बहुत हिलाता है।'

'ओह ! बहुत काम का आदमी है। तुम जानते हो ?'

'वह अपने दो-एक दोस्तों को साथ लाना चाहता है।'

'बेकार है। मैं पसन्द नहीं करता।'

'यहां से ले क्या जावेगा ?'

'हम लोगों की स्त्रियों के बारे में बुरा ख्याल फैलावेगा।'

'कोई परवाह नहीं। बुरा ख्याल फौज और पुलिस में नहीं फैलना चाहिए।'

'एक से एक बढ़कर बे दिमाग़ हैं ! उन कातूसों को मुँह से खोलने से इन्कार किया तो हमने रगड़ दिया। रह गए। जितना वेतन हम इन लोगों को देते हैं, उतना इनको दुनियां में कहीं भी नहीं मिल सकता।'

'और तुम्हारे रिसाले में जो कुछ ब्राह्मण माथा रंग रंग कर परेड में आते थे उनका तो अनुशासन कर दिया ?'

'हां। पहले उन्होंने कहा हमारा टीका है। धर्म की बात। फिर हमने पुछवा दिया। डैमइट ऑल। भई कितनी जहालत भरा मुल्क है!'

'ज़रूर। परेड से छुट्टी पाकर बारक में न सिर्फ माथे पर बल्कि माथे से लेकर पैर की उँगली तक टीकों से देह को रंगलो हमको फ़िकर नहीं। इस धर्म से हमको महान कष्ट होता है।'

'अभी यह क़ौम बिलकुल नादान और जाहिल है। अंग्रेज़ी पढ़ने से अकल कुछ सुधरेगी। बाइबिल का पढ़ाना मदरसों में इसीलिए ज़रूरी रक्खा गया है। जब अंग्रेज़ी का प्रचार हो जायेगा और बाइबिल की संस्कृति इनके खून में बैठ जायगी तब धरातल कुछ ऊँचा होगा।'

'हां, और कदाचित् तब इस देश के लोग हमारे शेक्सपेयर, वाल्टर स्काट, बायरन की पूजा कर उठें। यहां के लोग पूजा, नमाज़ बहुत जल्दी कर उठते हैं।'

'गङ्गाधरराव की नाटकशाला में जो नाटक खेले जाते थे वे कौन सी बला होते हैं?'

महज़ कूड़ा कर्कट तो नहीं है। शकुन्तला नाटक तो मैंने भी पढ़ा है। मोनियर विलियम्स का अनुवाद। खूबसूरत चीज़ है। यद्यपि टैम्पैस्ट की मिराण्डा को शकुन्तला नहीं पहुंचती, फिर भी एक चीज़ है...'

'ऐस कितनी पुस्तकें हिन्दू मुसलमानों के पास होंगी?'

'हिन्दुओं की गांठ में शकुन्तला, कुछ वेद और कुछ ऐसा ही साहित्य है। मुसलमानों के पास कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्ताँ और उमरख़ैयाम की रुबाइयां। बस खतम। बाकी सब कूड़ा, महज़ रद्दी।'

'तुम तो लार्ड मैकाले की भाषा मैं बोल रहे हो पट्ठे।'

'मैकाले क्या ग़लत कहता है? उसने तो हिन्दू मुसलमानों को बहुत बड़ा गौरव दिया जो यह कह दिया कि इनकी सारी अच्छी पुस्तकें एक छोटी सी अलमारी में बन्द की जा सकती हैं।'

'मैं क़सम खाता हूँ मैकाले ने 'छोटी सी' अलमारी नहीं कहा है। मैं कहता हूं, कि इनकी अच्छी पुस्तकें अलमारी के एक ही कोने में आ सकती हैं।'

'जाने दो; इनकी नर्तकियां अवश्य कभी कभी परियों सी जान पड़ती हैं।'

'जब वे ढेरों जेवर लादकर सामने आती हैं तब जान पड़ता है मानो फूलों में जुगनू जड़ दी हो।'

'कभी कभी नाच के कुछ क़दम भले लगते हैं।'

'लेकिन गाना बिलकुल चीख़ चिल्लाहट। हां सारङ्गी का बाजा मीठा लगता है और जब तबला धीमी लय में बजता है तब नाच उठने को जी चाहने लगता है।'

'हिन्दुस्थान का जलवायु, प्रकृति, अनाज, दूध सब अच्छा, लेकिन देश कुसंस्कारों से भरा हुआ है! किसान बहुत मिहनती नहीं हैं।'

'और चोर डाकुओं के मारे चैन नहीं ले पाते हैं।'

'हम लोग हिन्दुस्थान में उन्हीं का नाश करने के लिए तो मौजूद हैं।'

'रियासतों में बड़ा अन्धेर, बड़ा अत्याचार होता है।'

'सुनता हूँ किसी रियासत में एक इत्रफ़रोश गया। एक सरदार ने छत्तीस हज़ार रुपये का इत्र ख़रीद डाला। जब इत्रफ़रोश ने कहा कि अभी मेरे पास बेचे हुए इत्र से भी बढ़िया और मौजूद है, तब उस सरदार ने वह सब ख़रीदा हुआ इत्र अपनी घुड़साल के घोड़ों की पूँछों पर उड़ेल दिया और कहा, यह इत्र तो हमारे लायक़ नहीं घोड़ों की पूँछ की बू ज़रूर इससे दूर हो जावेगी, और तुम्हारा जो इससे बढ़िया इत्र है, वह यदि बेचो तो गधेरों की गधों की पूँछ पर छिड़कवा दूँगा। जब राजा के पास यह समाचार पहुँचा तब उसने सरदार को शाबाशी दी और ख़ज़ाने से छत्तीस के दुगुने बहत्तर हज़ार रुपये सरदारके पास भेज दिए।'

'यह झांसी के राजा का ही क़िस्सा है।'

'मैने सुना है कि इस कहानी का सम्बन्ध दिल्ली के बुड्ढ बादशाह बहादुरशाह से है ।'

'वह तो कविता करने में मस्त रहता है ।'

'उसको बादशाह कौन कहता है ?'

'शिष्टाचार । केवल शिष्टाचार ।'

'ऐसा कैसा शिष्टाचार ! बादशाह सिर्फ़ एक है । एक के सिवाय दूसरा किसी प्रकार नहीं हो सकता है । वह है इंगलैंड का बादशाह । थ्री चियर्स । हुर्रे !'

हुर्रे ! इन सब कठपुतलियोंको खाक करो । कहां के राजा और कहां के बादशाह ! कम्बख्त किलों और महलो में बैठे बैठे गुलछर्रे उड़ाते हैं । ग़रीबों की औरतों को सताते हैं और डाके डलवाते हैं । डैम दैम आल ।'

'चुप, चुप अभी नहीं । ज़रा ठहर कर सब होगा । सब मुकुट और ताज हमारे पैरों पर गिरेंगे । पर होगा सब धीरे धीरे । कुछ दिनों में सारा हिन्दुस्थान ईसाई हो जावेगा । और इंगलेंड का राज्य अमर ।'

'धीरे धीरे बेवक़ूफ़, अभी कसर है । इस समय चोर–डाकुओं और फ़सादियों को ठण्डा करके व्यौपार और खेती को बढ़ाना है । जनता हमको श्रद्धा की दृष्टि से देखेगी । जो हिन्दुस्थानी अंग्रेज़ी पढ़ लिख जाय उनको छोटी मोटी नौकरियां देकर अंग्रेजों का अदब करना सिखलाया जायगा । वे उस अदब को जनता में फैला देंगे । जनता हमेशा कृतज्ञ रहेगी और हमारे हाथ जोड़ते नहीं अघावेगी । हमारे छोकरे सदा सर्वदा हमारा आतंक बनाए रक्खेंगे । वही आतंक हमारा सब कुछ होगा ।'

'ओह डियर मी ! तुम तो बिलकुल अरस्तू और सुकरात हो गए ।'

'हिश ! हमारे मन को केवल एक बात दिक़ करती है—ये राजा और नवाब !'

'फिर वही हिमाक़त । कह दिया कि धीरज धरो । इंगलैंड के राजनीतिज्ञ काफ़ी होशियार और कुशल हैं और हिन्दुस्थान में गवर्नर

जनरल को अब अपनी काउन्सिल की सम्मति को रद्द करने का पूरा अधिकार है। यहां की जनता को मुट्ठी में रखने के लिए कुछ राजा-नवाबों का बनाए रखना बहुत ज़रूरी है। और यह भी बहुत जरूरी है कि ऐसे बड़े बड़े राजों और नवाबों की रियासतों में अत्याचार होते रहें, जिसमें अंग्रेजी इलाके की प्रजा अपनी बेहतर हालत को, रियासती प्रजा की अबतर हालत से सदा मुक़ाबिला करती रहे, तौलती रहे। और पुकार पुकार कर कहती रहे कि हिन्दुस्थानी हुकूमत से अंग्रेज़ी हुकूमत बहुत अच्छी। समझे!'

'जनता में ऊँची नीची श्रेणियां क़ायम रखने की ज़रूरत है।'

'तुम्हारा सिर। उनमें जात-पांत, ऊँच--नीच बहुत संख्या में जमानों से हैं। केवल जिमीदारी, ताल्लुकेदारी प्रथा को मजबूती के साथ दाखिल करना रह गया है। बङ्गाल में हो गया है। सब जगह कर दिया जावेगा। सिर उठाने वाली जनता को ये जिमींदार, ताल्लुकेदार, ही कुचल दिया करेंगे। हमको हाथ जमाने की परवाह ही न करनी पड़ेगी। सब बन्दोबस्त आराम से चला जावेगा।'

'मुझको यह शब्द 'बन्दोबस्त' बहुत प्यारा लगता है। हर जगह, कोने कोने में, बन्दोबस्त ही बन्दोबस्त होना चाहिए।'

'तुमने अभी अभी कहा 'तुम्हारा सिर' वापिस लो इसको। तुम क्या मुझसे होड़ लगा सकते हो कि हिन्दुओं की जात-पांत और मुसलमानो का ऊँच नीच हमारे सहायक नहीं हैं?'

'बेशक होड़ लगा सकता हूँ। यह सब होते हुए भी इन लोगों में बड़े बड़े राजा और बादशाह हुए हैं। फिर भी हो सकते हैं। इसलिए इस देश को अनन्त काल तक अपने हाथ में बनाए रखने के लिए—हिन्दुस्थानियों के लाभ और अपने रोजगार के हेतु—वही दूसरी तरकीब बेहतर है। हम-तुमसे कहीं ज्यादा चतुर राजनीतिज्ञों ने इस सम्पूर्ण समस्या पर यों ही माथापच्ची नहीं की है।'

प्यालों का दौर और अखण्ड साम्राज्य की कल्पना, अनेक अवसरों की तरह, क्लब में लगभग उफान पर आ रही थी क्लब के बाहर तेज़ी से दौड़कर आनेवाले घुड़सवारों की आहट सुनाई पड़ी।

पहरे वाले ने सलाम किया और कहा, 'हुज़ूर, राजा के यहां से खबर आई है कि वे बेहोश पड़े हैं।

सबने अपने अपने प्याले रख दिये। सतर्क हो गए। एक दूसरे की ओर देखने लगे।

एलिस ने कहा, 'सूचना दो कि मैं थोड़ी देर में आता हूँ।'
पहरे वाला चला गया।

मार्टिन ने एलिस से पूछा, 'राजा मरने वाला है या शायद मर भी गया हो। हिन्दुस्थानी लोग असल बात को देर तक छिपाए रखने के अभ्यासी होते हैं। यदि राजा मर गया है तो क्या यह गोद स्वीकार करली जावेगी? मेरे ख्याल में लार्ड डलहौजी झाँसी को अंग्रेजी इलाके में मिला लेंगे!

'हिश! एलिस ने उँगली से वर्जित करके कहा, 'कुछ ज्यादा पी गए हो मालूम होता है।'

उसी क्षण और घुड़सवार आए। पहरे वाला भीतर आया। बोला, 'हुजूर' अब महल से दूसरा समाचार यह आया है कि महाराज अच्छे हैं और हुजूर को तुरन्त बुलाया है।'

'डैम इट।' धीरे से मार्टिन के मुँह से निकल पड़ा। पहरेदार ने सुन लिया। सिर नवाकर बाहर चला गया। उसके कलेजे में कुछ कसक गया।

एलिस ने आंखें तरेरीं। मार्टिन ने अंगूठा दिखाकर अपेक्षा की। कहा, 'हमारा नौकर है। राजा का नौकर नहीं।'
एलिस डाक्टर एलन को साथ लेकर राजमहल चला गया।

राजा गङ्गाधरराव को पल पल पर बेहोशी आ रही थी।

ज्यों त्यों करके वह दिन कटा।

दूसरे दिन उनकी अवस्था असाध्य हो गई। अन्त में मुँह से केवल यह निकला, 'गङ्गाजल।'

उनको तुरन्त गङ्गाजल दिया गया।'

एक क्षण के लिए उनको ऐसा जान पड़ा मानों रोगमुक्त हो गए हों।

तत्क्षण सचेत होकर बोले, 'मैंने बहुत अपराध किए हैं···बहुतों को सताया है···सब क्षमा करें···ओमहरि···'

कुछ क्षण उपरान्त राजा का देहान्त हो गया।

महल में हाहाकार मच गया। जिस रानी को कभी किसी ने विह्वल नहीं देखा था, वह करुणा के बांध तोड़े जा रही थी। मोरोपन्त और नाना भोपटकर ने क्रन्दन करते हुए दामोदरराव को रानी की ओली में रख दिया।

लक्ष्मी दरवाजे बाहर, लक्ष्मी ताल के किनारे गङ्गाधरराव के शव का दाह धूमधाम के साथ किया गया। स्मशान भूमि पर एलिस और मार्टिन भी उपस्थित थे। दूर रेग्यूलर केवलरी के सिपाही भी। सब काले बिल्ले बांधे हुए। एलिस और मार्टिन कुतूहल के साथ अन्तिम क्रिया-कर्म देख रहे थे और हिन्दुस्थानी सिपाही, रुदन करती हुई झांसी की जनता के साथ रुद्ध-कण्ठ थे।

एलिस ने २० नवम्बर सन् १८५३ को राजा गङ्गाधरराव का एक दिन पहले का दिया हुआ खरीता पोलिटिकिल एजेंट कैथा* के पास भेज दिया था। २१ नवम्बर को राजा गङ्गाधरराव का देहान्त हुआ। यह समाचार भी उसने अविलम्ब पहुँचा दिया।

---

* उस समय बुन्देलखण्ड और रीवां का पोलटिकिल एजेंट कैथा जिला हमीरपुर में रहता था।

[२७]

एलिस का भेजा हुआ राजा गङ्गाधरराव का १९ नवम्बर का खरीता और उनके देहान्त का समाचार मालकम के पास जैसे ही कैथा पहुंचा उसने गर्वनर जनरल को अपनी चिट्ठी अविलम्ब (२५ नवम्बर के दिन) भेज दी। चिट्ठी के साथ एलिस को भेजा हुआ खरीता और गङ्गाधरराव का वह खरीता भी, जो उन्होंने सीधा मालकम के पास पहुंचवाया था, भेज दिया। मालकम की चिट्ठी का सार यह था—

'झाँसी के राजा को बिना कम्पनी सरकार की अनुमति लिये, गोद लेने का अधिकार नहीं है। रानी योग्य और लोकप्रिय हैं, परन्तु कम्पनी का शासन जन-हित की दृष्टि से ज्यादा अच्छा होगा। ऐसी परिस्थिति में रानी को पांच सहस्त्र मासिक वृत्ति, निजी सम्पत्ति और नगर का महल दे दिया जावे।'

इस प्रकार की चिट्ठी भेजने के उपरान्त ही मालकम ने झांसी के बन्दोबस्त का प्रयास शुरू कर दिया। और अपना फ़ौज़ फांटा बढ़ा दिया।

इधर झांसी दरबार के लोगों का विश्वास था कि दत्तक पुत्र के नाम पर राज्य चलेगा। और वे दामोदरराव के नाम पर शासन प्रबन्ध करने भी लगे।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ काल में जब कम्पनी का राज्य जल्दी जल्दी बढ़ा तब वह अपनी नीति और हथियार की विजय के बोझ से लदी सी जा रही थी और समय समय पर कम्पनी के साझीदारों ने विचार प्रकट किया था कि विजय और इलाके की सीमा बढ़ाने की योजनाएँ घृणास्पद हैं और ब्रिटिश जाति की इच्छा, प्रतिष्ठा और नीति के प्रतिकूल हैं। असल बात यह थी कि कहीं ऐसा न हो कि मुफ्त में आया हुआ इतना माल किसी अदृष्ट गढ्ढे में चला जावे।

इन योजनाओं का सही रूप डलहौज़ी था। उसकी नीति में कुछ भी लगा लिपटा हुआ न था। उसका वक्तव्य स्पष्ट था।

'हम किसी भी मौके को चूकने नहीं देना चाहते। हमारे इलाकों के बीच बीच में ये जो छोटी छोटी रियासतें हैं, काफी खिझलाहट का कारण हैं। इनको अपने हाथ में कर लेने से खज़ाने में रुपया बढ़ेगा और हमारी शासन प्रणाली से, इन रजवाड़ों की जनता को लाभ ही लाभ प्राप्त होगा!'

जिस समय खरीतों सहित मालकम की चिट्ठी कलकत्ता पहुंची डलहौजी अवध की ओर दौरे पर गया हुआ था। चार पांच महीनों तक कोई उत्तर नहीं आया।

[२८]

जिस दिन गङ्गाधरराव का देहान्त हुआ, लक्ष्मीबाइ १८ वर्ष की थीं। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर जो आघात हुआ वह ऐसा था, जैसे कमल को तुषार मार गया हो। परन्तु रानी के मन में एक भावना थी, एक लगन थी, जो उनको जीवित रक्खे थी। छुटपन के खिलवाड़ में प्रकट हो हो जाती थी। इस अवस्था में वह उनके मन के किस कोने में पड़ी हुई थी, इसको बहुत ही कम लोग जानते थे, जो जानते थे, उनमें से एक तात्या टोपे था। दूसरा नाना धोंडूपन्त।

राजा गङ्गाधरराव के फेरे के लिए बिठूर से नाना धोंडूपन्त, अपने दोनों भाईयों सहित आया। तात्या भी साथ था। वे सब जवान हो गए थे। पैन्शन के जब्त हो जाने के कारण संतप्त थे और रोष भरे। गङ्गाधरराव के देहान्त के कारण उनको बड़ी ठेस लगी। जालौन का राज्य समाप्त हो चुका था। एक महाराष्ट्र गद्दी झांसी की बची थी। उनको भय था कि यह भी विलीन होने जा रही है। अतः बाजीराव द्वितीय बिठूर में बैठे बैठें, शुरू ज़माने में, जिस स्वराज्य स्वप्न की कल्पनाएँ उपस्थित किया करते थे और जिनसे इनका तथा लक्ष्मीबाई का बाल्यकाल पाला गया था, वह केवल दुस्स्वप्न सा अवगत होने लगा था।

रानी क़िले वाले महल में ही रहती थीं। वहीं उनकी सहेलियां और सिपाही, प्यादे भी। नीचे का महल, हाथी ख़ाना, सेना, घोड़े हथियार इत्यादि सब हाथ में थे।

नगर का शासन सूत्र भी अधिकार में था। राज्य की माल दीवानी भी उनके मन्त्रियों के हाथ में थी, परन्तु कम्पनी सरकार झांसी की छावनी में अपनी सेना और तोपें बढ़ाने में व्यस्त थी। इससे मन में कुछ खुटका उत्पन्न होता था।

शोक समवेदना के उपरान्त नाना के दोनों भाई बिठूर चले गए। नाना और तात्या रह गए।

विकट ठंड थी। ठिठुरा देने वाली। दीन दरिद्रों के दांत से दांत बजाने वाली। उस पर संध्या से ही बादल घिर आए। आंधी चल उठी और पानी बरस पड़ा। नाना और तात्या रानी से बातचीत करने संध्या के पहले ही क़िले के महल में गए। भोजन के उपरान्त बात चीत होनी थी और फिर डेरे को लौटना था। परन्तु ऋतु की कठोरता के कारण उनके विश्राम का वहीं प्रबन्ध करवा दिया गया।

दीवानखास में बैठक हुई। सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई भी रानी के साथ थीं।

रानी का मुख दुर्बल हो जाने के कारण ज़रा लाम्बा जान पड़ता था। तो भी उस सतेज सौन्दर्य के आतंक में वही आदर उत्पन्न करने वाला ओज था। विशाल आंखों की ज्योति और भी ज्वलन्त थी। रानी कोई आभूषण नहीं पहिने थीं—केवल गले में मोतियों की एक माला और हाथ में हीरे की एक अँगूठी। श्वेत साड़ी पर एक मोटा श्वेत दुशाला ओढ़े थीं। सहेलियां भी ज़ेवरों का त्याग करना चाहती थीं, परन्तु रानी के आग्रह से उन्होंने ऐसा नहीं कर पाया था।

रानी—'बुन्देलखण्ड के रजवाड़े बुझे हुए दीपक हैं! उनमें तेल है, परन्तु लौ नहीं।'

नाना—'क्या उनमें लौ पैदा नहीं की जा सकती!'

रानी—'कह नहीं सकती। तुमने ढूंढ की? मैं तो बाहर आने जाने से विवश रही हूं, और हूँ।,

तात्या—मैं यों ही घूमा फिरा हूँ। विशेष तौर पर यहां के किसी राजा से प्रसंग नहीं छेड़ा। परन्तु वातावरण बिलकुल ठस जान पड़ा। राजाओं को अपने सरदारों और प्रजा से प्रणाम लेने में सुख की इति अनुभव होती है। हास विलास और सुरापान में मस्त रहते हैं।'

रानी—'वीरसिंहदेव, छत्रसाल और दलपति के बुन्देलखण्ड का हाल कुछ और होना चाहिए था।'

नाना—'लखनऊ और दिल्ली का हाल कुछ अच्छा है।

तात्या—'बहुत दिन हुए, जब मैं रानी साहब को लखनऊ, दिल्ली की परिस्थिति सुना गया था।'

रानी—'तुम लोग मुझसे रानी साहब मत कहा करो। अच्छा नहीं लगता।'

तात्या—'बाई साहब कहूँगा।'

नाना—'दिल्ली का हाल मैं सुनाता हूं। बादशाह वृद्ध है। अपनी स्थिति से बहुत दुःखी है। मन के महाकष्ट को कविता में होकर घटाता रहता है। उसके राजकुमार कुछ होनहार जान पड़ते हैं, परन्तु दिल्ली के राजकुमारों में जिस आयु में प्रायः घुन लग जाता है कदाचित् इनको भी लग जावेगा।

रानी—'ग्वालियर?'

नाना—'राजा का अभी लड़कपन है। अंग्रेज़ प्रबन्ध कर रहे हैं।'

रानी—इन्दौर?'

तात्या—'इन्दौर में गया था। वहां का तो कचूमर ही निकल गया है।

रानी—हैदराबाद?'

तात्या—'वहां नहीं गया। परन्तु इतना निर्विवाद समझिए कि हैदराबाद अंग्रेज़ों का परम भक्त है। जनता अपने साथ है।'

रानी—'पंजाब की सिक्ख रियासतें?,

नाना—'वहां मैं कहीं कहीं गया। सिक्खों में अंग्रेज़ों को पछाड़ने की शक्ति होते हुए भी, फूट इतनी विकट है और राजा इतने स्वार्थान्ध हैं कि अंग्रेज़ उस ओर से बिलकुल निश्चिन्त रह सकते हैं।'

रानी—'और झांसी में तो अब कुछ है ही नहीं। जो कुछ है भी संभव है कि, हाथ में न रहे।'

नाना—'झांसी में ही तो हम लोगों का सब कुछ है। मनू—बाई साहब, झांसी ही तो हम लोगों की एक आशा है।'

लक्ष्मीबाई के फीके ओठों पर वही बिलक्षण मुस्कराहट क्षीण रूप में आई।

बोलीं, 'क्या आशा है ?

तात्या ने कहा, दामोदरराव की गोद स्वीकार की जावेगी, ऐसा विश्वास है। एलिस ने गोलमोल अवश्य लिखा है, पर कलकत्ते में अपने कुछ मित्र हैं। वे लोग कुछ सहायता करेंगे।

रानी ने कहा, 'एलिस, मालकम सब एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। ये लोग अपने लाट की नेत्रकोर के संकेत पर चलते हैं। मैंने यहां से पूरनचन्द बंगाली बाबू को कलकत्ते भेजा है। वह बहुत अंग्रेज़ी पढ़ा है। लाट से स्वयं मिलेगा और हमारी बात को समझाएगा। क्या कम्पनी सरकार का लाट हमारे इतने बड़े सन्धिपत्र को समूचा निगल जायगा ?

तात्या ने सहेलियों की ओर देखा।

रानी समझ गई। बोलीं, 'ये तीनों मेरी अत्यन्त विश्वासपात्र हैं। बिना किसी हिचक के बात किए जाओ।

नाना ने कहा, 'मुझको मालूम है। ये मराठा हैं।'

'झांसी की लगभग सभी स्त्रियों का विश्वास किया जा सकता है' रानी बोली, 'ये तीनों तो स्त्रियों की मानो पराग हैं।

नाना ने कहा, 'बाईसाहब, यह लाट और इसके भाई बन्द 'यावचन्द्र दिवाकरौ' वाली सन्धि को समूचा ही पचा गए हैं। झांसी वाली सन्धि में न तो दिवाकर की सौगन्ध है और न चन्द्रमा की। ये लोग किसी चीज़ को पवित्र नहीं समझते। इनकी लिखतम का; इनकी बात का कोई भरोसा नहीं। हमारी पैन्शन के छीनने के समय कहा था तीस बत्तीस साल में आठ लाख रुपया साल के हिसाब से तीन करोड़ रुपया बैठता है। वह सब कहां डाला ? इनका विश्वास नहीं करना चाहिए।'

रानी ने वैसे ही मुस्करा कर पूछा, 'क्या ये लोग सीधे सादे गणित को भी धोखा देते हैं ?

नाना ज़रा हँसा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'बाईसाहब ये लोग अपने स्वार्थ पर अचल-रूप से डटे रहते हैं। जब तक स्वार्थ को ठोकर लगने का अन्देशा नहीं रहता तब तक हरिश्चन्द्र और युधिष्टिर का सा बर्ताव करते हैं, परन्तु जहां देखते हैं कि स्वार्थ को धक्का लग जावेगा, तुरन्त पैंतरा बदल देते हैं। और इतने धूर्त हैं कि इनमें से कुछ न्याय करने करवाने का ढोंग बनाते हैं और दूसरे उसी ढोंग की ओट में स्वार्थ की सिद्धि करते हैं। जैसे, हेस्टिङ्गस ने अवध की बेगमां को लूटा। कुछ अंग्रेज़ों ने उस पर मुकद्दमा चलाया। बाकी ने इनाम देकर उसको छोड़ दिया। इधर बिचारा नन्दकुमार बंगाली फांसी पर चढ़ा दिया गया।

रानी ने प्रश्न किया, 'लखनऊ का अब क्या हाल है ?'

नाना ने उत्तर दिया, 'पहले का हाल तात्या बतला गया था। अब तो वहां शून्य है। जनता निसन्देह जीवट वाली है।

रानी ने जरा सोच कर कहा, 'मैं इन सब बातों को सुन कर इस निष्कर्ष पर पहुँची हूं, कि जनता के चित्त का पता अभी पूरा नहीं लगाया गया है। जनता असली शक्ति है। मुझको विश्वास है कि वह अक्षय है। छत्रपति ने जनता के भरोसे ही इतने बड़े दिल्ली सम्राट को ललकारा था। राजाओं के भरोसे नहीं। मावले, कुणभी किसान थे और अब भी हैं। उनके हलों की मूठ में स्वराज्य और स्वतन्त्रता की लालसा बंधी रहती है। यहां की जनता को भी मैं ऐसा ही समझती हूँ। उसको छत्रपति ने नेतृत्व दिया था। यहां की जनता को तुम दो।'

वे दोनों सिर नीचा करके कुछ सोचने लगे।

रानी ने अपनी सहेलियों की ओर देख कर कहा, 'तुम लोग क्या कहती हो ?'

मुन्दर ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मैं सरकार कुणभी हूं और क्या कहूँ ? आपकी आज्ञा का पालन करते हुए मरने के समय आगा पीछा नहीं सोचूंगी।'

नाना ने कहा, 'तुम ठीक कहती हो बाईसाहब, अभी हम लोग जनता के पास नहीं पहुंचे हैं। आशा है जनता शीघ्र जागृति हो जावेगी, परन्तु वह बिना नेता के कुछ नही कर सकती।'

'नेता को नेता नहीं ढूंढ़ना पड़ता, रानी बोलीं 'समर्थ रामदास का आशीर्वाद नेता को तो बिना बिलम्ब उत्पन्न कर देता है।

नाना—'मैं समझ गया। निराशा का कोई कारण नहीं।'

रानी—'हां, जो साधन, जहां मिले उसका उपयोग करना चाहिए। जनता मुख्य साधन है। राजा और नवाब की पीढ़ी, दो पीढ़ी ही योग्य होती हैं। परन्तु जनता की पीढ़ियों की योग्यता कभी नहीं छीजती।'

नाना—'अब एक प्रश्न और है—यदि तुम्हारा अधिकार लाट के यहां से मान्य रहा तो हमको स्वराज्य प्राप्ति के उपायों के जुटाने में सुविधा रहेगी, परन्तु यदि लाट ने न माना, जैसी कि मुझको आशंका है, तब किस प्रकार कार्य साधन होगा!'

रानी—मैं ऐसा क्षण भर भी नहीं सोचती कि लाट नहीं मानेगा। नहीं मानेगा तो मैं मनवाऊँगी। झांसी राज्य की जनता सोलहआना मेरे साथ है। और यहां की जन संख्या महाराष्ट्र के मावलों से अधिक ही है कम नहीं है। बुन्देलखण्ड में ब्राह्मण से लेकर भङ्गी तक हथियार चलाना जानते हैं और हथियार चलाने की हौंस रखते हैं।

जिस समय रानी ने यह बात कही उनका चेहरा तेज से दीप्त हो गया—उन दोनों पुरुषों के मन में हर्ष की लहर दौड़ गई।

तात्या ने कहा, 'अंग्रेजी सेना के हिन्दू मुसलमान सिपाहियों को भी टटोलूंगा।'

रानी बोलीं, 'अभी नहीं। पहले उनके घरों को टटोलो, जहां उन्होंने जननी से जन्म पाया और उसकी गोद में खेले हैं।

नाना ने पूछा, 'यदि लाट का उत्तर तुम्हारे विरुद्ध आया तो क्या तुम तुरन्त युद्ध छेड़ दोगी?'

रानी ने जवाब दिया, 'मैंने बिठूर से झांसी आकर इतने दिनों में बहुत कुछ सीखा है। समय उत्तर देगा।'

वे दोनों समझ गए कि रानी का कार्यक्रम इस समय ढूंढ खोज करने का और अवसर की प्रतीक्षा का है।

[२९]

सवेरे की उस कप कपाती ठण्ड में जब सूर्य भी बदली में मुँह छिपाए था, नवाब अलीबहादुर अपने नौकर पीरअली को साथ लिए हाथी पर सवार एलिस की कोठी पर पहुंचे। जिस भवन में आज कल डिस्ट्रिक्ट जज की कचहरी है, उसी में एलिस रहता था।

एलिस अलीबहादुर की हवेली पर जाया करता था। अलीबहादुर एलिस को अपना मित्र मानते हुए भी, उसकी खुशामद करने से नहीं हिचकते थे।

जैसे ही वे हाथी से उतरे, एलिस का नौकर पास दौड़ता हुआ आया। उन्नीसवीं शताब्दि के अन्त में साहब के नौकरों और खानसामों का जो पद गौरव चरम सीमा को पहुंच गया था उस समय उसका आरम्भ था।

नौकर ने झुककर सलाम किया। अलीबहादुर ने मिठास के साथ पूछा, साहब क्या कर रहे हैं? बहुत उलझन में तो नहीं हैं? मिलना चाहता हूँ।'

नौकर ने जवाब दिया, 'नहीं हुजूर। दफ्तर में अभी अभी आकर बैठे हैं। हुक्का पी रहे हैं। फ़ौरन इत्तला करता हूँ।'

कुछ क्षण पश्चात् ही नौकर अलीबहादुर को भीतर पहुंचा आया।

अभिवादन और कुशल-क्षेम प्रश्नोत्तरी के उपरान्त उन दोनों में बातचीत होने लगी।

अलीबहादुर ने कहा, 'रानी साहब की अर्ज़ी का कुछ जवाब नहीं आया। शायद खारिज हो जावेगी।'

एलिस विचार की मुद्रा बनाकर बोला, 'कह नहीं सकता। आपका ऐसा ख्याल क्यों है?'

अलीबहादुर ने कहा, 'रियासतों के बुरे इन्तज़ाम को देखकर और जनता की भलाई की नज़र से, सरकार ने कई रजवाड़ों में अपना अदल अमन और इन्साफ़ चालू किया है। इसलिए शायद झांसी में भी सरकारी बन्दोबस्त किया जावे।'

भोलेपन के साथ एलिस बोला, 'मुझको मालूम नहीं नवाब साहब, पर अगर ऐसा हो तो यहां की जनता सरकारी हुकूमत और क़ानून पसन्द करेगी।'

अलीबहादुर ने बड़े मीठे स्वर में जवाब दिया, 'दोनों हाथों से जनाब। स्वर्गीय राजा साहब के ज़माने में जो जुल्म हुए हैं उनको आसानी से नहीं भुलाया जा सकता।'

एलिस सचाई का ढोंग करते हुए बोला, 'कुछ मैंने भी सुने हैं जैसे साधारण से अपराधों पर लोगों को बिच्छुओं से कटवाना। लेकिन, मरने के क़रीब के ज़माने की कोई शिकायत मेरे कान तक नहीं आई।'

एलिस नवाब साहब जैसे हिन्दुस्थानियों की आंतों तले से बात को निकालने का कैंडा जानता था। उनकी ओर देखने लगा।'

नवाब ने कहा, 'छोटी छोटी सी बातों का आपके सामने बयान करना आपकी शान के खिलाफ होगा। पहले के किए हुए कुछ अन्धेर इतने ग़जब के हैं कि सताए हुए लोग अब तक तड़प रहे हैं।'

'मुझको ऐसे लोगों के नाम और उन पर बीती हुई याद नहीं नवाब साहब।' उत्सुकता प्रकट न करते हुए एलिस बोला।

'कम से कम एक ही की बीती हुई सुनें जनाब' नवाब ने कहा, 'नाम विचारे का खुदाबख्श है। पहले उसको राजा साहब बहुत अङ्ग लगाए रहते थे। नाटकशाला में बराबरी से बिठलाते थे। छोटी सी जागीर भी दिए हुए थे। एक दिन सनक जो सवार हुई तो ग़रीब को देश निकाले की सज़ा देदी। जागीर ज़ब्त कर ली। उसने अर्ज़ मारूज़ पेश करने की बरसों कोशिश की, मगर उसको मौक़ा तक नहीं दिया गया।'

'उसने कम्पनी सरकार में कोई अर्ज़ी दी?, एलिस ने पूछा।

नवाब ने माथा टटोल कर उत्तर दिया, 'याद नहीं पड़ता। शायद नहीं दी।'

अंग्रेज़ ऐसे मौकों पर अपनी धाक जमाते हैं।

एलिस बोला, 'खुदाबख्श अर्ज़ी देता तो एजेंट साहब बहादुर सुनवाई करते।'

खुशामदी हिन्दुस्थानी ऐसे ही मौक़े पर स्वार्थ—साधन का ज़रिया निकाला करते थे।

नवाब ने कहा, 'जनाब की सेवा में खुदाबख्श अर्जी पेश करदे ?'

एलिस ज़रा संकट में पड़ा। परन्तु उसकी व्यापार कुशल बुद्धि ने सहायता की।

बोला, 'अर्जी ज़रूर दे। परन्तु बड़े साहब के पास भेजे। जब मेरे पास आवेगी, मैं उचित काररवाई करूँगा।'

इतने से शायद नवाब साहब का दिल भर गया। उन्होंने चिन्ह कम से कम ऐसे ही प्रकट किए।

फिर बहुत मुस्कराकर, बड़े मिठास के साथ अलीबहादुर ने कहा, 'एक मेरी जाती विनती है।'

एलिस ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, 'जरूर कहिए नवाब साहब।'

अलीबहादुर वास्तव में जिस प्रयोजन से एलिस से भेंट करने आए थे उन्होंने प्रकट किया।

'जनाब को मालूम है, मिसिलों में लिखा पड़ा है, मेरे स्वर्गीय पिता राजा रघुनाथराव साहब ने मुझको ८५ गांव जागीर में लगाए थे। सरकारी बन्दोबस्त होने पर वह जागीर मेरे पास से निकाल ली गई और पांच सौ रुपया माहवारी वसीक़ा लगा दिया गया। बड़ा कुटुम्ब है। सफ़ेदपोशी साथ लगी है। गुज़र नहीं होती। राजा साहब गङ्गाधरराव से प्रार्थना की थी। उन्होंने कहा था कि एजेंट साहब से सलाह करके जवाब देंगे। फिर उनका लड़का मर गया और वे बीमार पड़ गए। बात अधूरी रह गई। अब शासन बदला है। शायद सरकारी बन्दोबस्त हो जाय। इसलिए मेरी इस उचित विनती पर ध्यान दिया जाना चाहिए।'

एलिस सोचने लगा।

नवाब ने समझा कि पानी बिलमा।

एलिस ने समझ लिया कि खुदाबख्श वाली शिकायत केवल भूमिका और पेशबन्दी थी। असल में नवाब साहब खुदाबख्श की ओट में अपनी विनती लेकर आए हैं। परन्तु वह कुढ़ा नहीं। उसको एक छोटा सा अध्ययन मिला और अपना काम निकालने का अवसर तथा साधन।

बोला, 'नवाब साहब, आप मेरे मित्र हैं। मुझसे जो कुछ सहायता बनेगी करूंगा। आप अर्ज़ी दीजिए। उसमें सब हाल व्योरेवार लिखिए। अर्ज़ी चाहे एजेण्ट साहब बहादुर के पास बाला बाला भेज दीजिए, चाहे मेरी मार्फत।' 'बहादुर' शब्द पर उसने ज़रा ज्यादा ज़ोर दिया।

इस समय खुदाबख्श की कोई चिन्ता अलीबहादुर को न थी!

खुश होकर बोले, 'मैं बहुत धन्यवाद देता हूँ। परमात्मा आपको लाट साहब करे।' फिर मिठास में घुल कर कहा, 'जनाब को मालूम है कि महाराजा रघुनाथराव वाला महल मेरे कब्जे में रहा है। मुझको महाराजा साहब दे गए थे। उसको राजा गङ्गाधरराव ने यों ही छीन लिया। किसी काम में नहीं आ रहा है। ताले पड़े हैं।

एलिस ने कहा, 'मुझको मालूम है वह जगह आपकी है। आपको मिलेगी। ज़रा सा इन्तज़ार करिए।'

नवाब साहब ने सलाम करके धन्यवाद दिया। चलने की आज्ञा मांगने लगे।

एलिस ने हँसकर कहा, 'थोड़ा सा और बैठिए नवाब साहब।'

नवाब साहब को घर पर काम ही क्या था? सट से जम गए।

एलिस ने फुसलाहट के ढङ्ग पर पूछा, 'आपके पास तो बस्ती के बहुत लोग आते-जाते हैं। क्या हाल है?'

'बहुत अच्छा हाल तो नहीं है। लोग परेशान हैं। सच पूछिए तो वे लोग चाहते हैं, कि कम्पनी सरकार का बन्दोबस्त हो जाय।'

'लोगों से ज़रा और ज्यादा मिलते रहिए और जनता के सुख-दुख की बातें मुझको बतलाते रहिए।'

'ऐसा ही करूंगा। लगभग दूसरे-तीसरे दिन हाज़िरी दिया करूंगा।'

'रानी साहब का क्या हाल है ? उनका स्वभाव किस तरह का है ?'

'रानी साहब रञ्ज में रहती हैं। चाल-चलन अव्वल दर्जे का खरा है। अपने धर्म की पावन्द हैं। घुड़सवारी, हथियार चलाना, लिखने-पढ़ने की योग्यता……'

'यह सब मुझको मालूम है नवाब साहब। मैं उनकी बहुत इज्जत करता हूं। मैं केवल यह जानना चाहूँगा कि कोई इधर-उधर के लोग उनको बरग़लाते तो नहीं हैं।'

'अभी तो उनके नाते-गोते के लोग फेरे के लिए आ जा रहे हैं। हाल में बिठूर के कुछ लोग आए थे। वे चले गए।'

'कृपा होगी यदि आप इन आने जाने वालों का भी पता देते रहें।'

'बहुत अच्छा जनाब। पीरअली मेरा बहुत भरोसे का नौकर है। उसको इस काम पर तैनात कर दूंगा। मेरे साथ ही हाथी पर आया है। आप फरमाएँ तो सामने पेश करदूँ।'

'नहीं नवाब साहब, ज़रूरत नहीं। आपको यक़ीन है तो मुझको भी है।'

इसके बाद अलीबहादुर चले गए। घर जाते समय मार्ग में ही पीरअली को उन्होंने उसका कर्तव्य सुझा दिया।

खुदाबख्श हवेली पर मिला। उससे अर्ज़ी देने को कहा। बोले, 'साहब जरा मुश्किल में माने। वह तुम्हारी अर्जी पर विचार करेंगे।'

खुदाबख्श ने कहा, 'मैंने रानी साहब से अर्ज करवाई थी। उन्होंने झांसी में रहने की आज्ञा दे दी है। जागीर के बारे में उन्होंने हुक्म दिया है कि लाट साहब के यहां से अधिकार मिलने पर, खुलासी कर दी जावेगी। इसलिए सोचता हूँ अभी बड़े साहब या छोटे साहब, किसी को भी अर्जी न दूँ।'

'अच्छी बात है', नवाब ने कहा। मन में कुढ़ गए।

एक क्षण उपरान्त पूछा, 'किस की मार्फ़त अर्ज़ की थी ?'

'मोतीबाई अपनी तनख्वाह की फ़रियाद करने गई थीं। अपनी बात के सिलसिले में उन्होंने मेरी विनती भी कर दी।'

'कब ?'

'कल। और आज सवेरे रानी साहब का जवाब आ गया। बहुत नेक हैं!'

'मोतीबाई आई हैं ?'

'नहीं, उन्होंने खबर भेजी है।'

'मुझको खुशी हुई। मेरे लायक़ तुम्हारा जो काम होगा, करूँगा।'

'आपकी कृपा है।'

अलीबहादुर ने सोचा, 'एलिस साहब के कान में इस बात के डालने की ज़रूरत नहीं है।'

खुदाबख्श शहर में रहने लगा।

[३०]

हाट का दिन था। झांसी के निकटवर्ती गांवों से बहुत लोग आए थे। बाज़ार में झांसी के भविष्य की क्या चर्चा है, इसके जानने के लिए, वे उत्सुक थे। हलवाईपुरा झांसी का सबसे बड़ा बाज़ार था। ग्रामीण इसको 'मिठयाई' कहते थे। हलवाइयों की दूकानें एक सिरे पर थीं। दूसरे सिरे पर एक दिशा में 'मुरली मनोहर' का मन्दिर और सामने मन्दिर का नक्कारखाना। मन्दिर में मूर्ति राधाकृष्ण की थी—और है। मन्दिर कहलाता लक्ष्मीबाई का है; इसमें दर्शन करने के लिए लक्ष्मीबाई नियम से जाया करती थीं।

हलवाइयों की दूकानों और मुरली मनोहर के मन्दिर के बीच के सिलसिले में, अनेक प्रकार की दूकानें थीं। बीच में मार्ग काफ़ी चौड़ा। पश्चिम की ओर मार्ग दो फन्नों में फूटा है, एक, हवेली और क़िले की ओर, और दूसरा दतिया फाटक को।

हाट के दिन इस सम्पूर्ण मार्ग पर बहुत चहल पहल रहती थी। स्त्रियां और पुरुष आज़ादी के साथ अपना सौदा खरीद रहे थे और, और बात चीत कर रहे थे। खुदाबख्श और पीरअली बाज़ार में साथ थे।

कपड़े की दूकान से कुछ कपड़ा मोल लेकर एक देहाती ने दूकानदार से पूछा, 'काए जू अब झांसी में का होने?'

'जो होत आओ है सो हुइए' उत्तर मिला।

'हम गांव वारे इतनीई में समझ जात होते तो का न हती। तनक उल्था करकें बताओ।'

तीन चार देहाती वहां और आ गए। बिक्री की आशा से दूकानदार का मन बढ़ा। बातचीत का सिलसिला चला।

'महाराज ने स्वर्गवास के पैलें कुँअर गोदी लएते सो सबरो संसार जानत। वा गोद के मनवाबे के लानें उनने अपने सामने अर्ज़ी लाट साब लों पौंचा दईती। अबै ऊतर नईं आओ।'

'गोद के मनवाबे के लानें अर्ज़ी ! जौ कैसो अन्धेर राम ! हम अपने गांवन में रोजई गोद लेत देत, पै ईके लानें अर्जी पुर्जी तो कोऊ नई देत।'

'अंगरेज़न ने नए नए क़ानून निकारे हैं।'

'तो का ऐसे क़ानून चल जैहै ?'

'बेतौ बात बात पै क़ानून बरसाउत। अर्जी दो 'टिकट लगाओ, पन्चायतन खों चूल्हे में डारौ। गोरन के बंगलन पै मारे मारे फिरौ, हाज़रीं देओ......

'इतनौ खाओ और इतनों सोओ—अबका ईके लानें सांऊ अंगरेज़ क़ानून बनायें ?

'अक्कल चेंथरी* में चढ़ गइ सो अब उनें कछू सूझत नइयां।'

'तौका ऐसीं आंखें फूट गईं कै धरम-करम कछू नहीं लेखत ?'

'बे धरम-करम का चीन्हें ! बौ तो हिन्दू मुसलमान केई बांटे परौ है।'

इस आत्मश्लाघा के बाद दूकानदार ने ग्राहकों को चलाया। भीड़ बढ़ गई थी। सौदा मज़े में चल रहा था। दूकानदार बात करना चाहता था और देहाती सुनना और गुनना चाहते थे।

एहो सो अंगरेजन की जा अँदाधुन्धो चल जैहै ? हम तुम का मानसई नईयाँ ?'

'अंगरेजन की छांउनियन में गउएँ कट रईं हैं। कानून कौ ऐसौ डण्डा घलरओ कै सब जनें सांस लैबे में उकतान लगे।'

'किते जू ?'

'सब जाँगाँ। ग्वालियर रियासत तौ है, पै उतै अंगरेजन कौ चालो चल रओ। उतै कौ बड़ौ साब जब बजार में होकें निकरत तब सब बजार बारन खों उठ उठ कैं झुक झुक कैं राम सलाम करने परत।'

'जौ बड़ो साब को आय ? ऐसैं राम राम तौ राजन खों करी जात।'

'बड़ो साब लाट साब कौ नौकर है।'

'और लाट साब कीकौ नौकर है ? कै वौ राजा है ?'

---

*चेंथरी = मस्तक का सबसे ऊपरी भाग।

'राजा नइयां। विलौंत के राजा कौ नौकर।'

'ओ राम! नौकरन के नौकरन खों झुक झुक कें परनाम! ई देस के ऐसे दिन आ गए! और जो कोऊ राम राम न करै तौ?'

'ऊखों बंगला पै पकर बुलाउत और कष्ट देत।'

देहातियों ने दांत पीसे।

एक बोला, 'हम तौ कौनऊँ अंगरेज खों राम राम न करें और न सलाम। वौ न हिन्दू न मुसलमान। और पकर कें बुलाए तौ खुपरिया खोल देओं।'

इतने में कुछ दूरी से 'हटो, बचो' की आवाज़ आई।

एलिस बाज़ार घूमने घोड़े पर आया था, साथ में एक सवार था। वही 'हटो, बचो' कर रहा था।

कुछ—बहुत थोड़े दूकानदार—प्रणाम करने को उठे। बाक़ी अपना काम करते रहे।

किसी देहाती ने प्रणाम नहीं किया।

वह कपड़े वाला प्रणाम करने को उठना चाहता था कि देहातियों ने मना कर दिया।

एक ने कहा, 'बैठे जो रओ, कौन वौ बतासा बांट रओ।'

दूकानदार ने प्रणाम बैठे बैठे ही किया। देहाती एलिस की वेशभूषा देखते रहे। एलिस आगे निकल गया। मार्ग में चांदी के ज़ेवरों से लदी माथे पर सिन्दूर की बिन्दी लगाए, ज़रा लमछेरे शरीर की एक सुन्दर स्त्री उसने देखी। कुतूहलवश उसने उस स्त्री पर आंख जमाई। स्त्री ज़रा भी नहीं सहमी। बल्कि उसने एलिस पर आंख तरेरी।

उस स्त्री के साथ एक स्त्री और थी। उस सुन्दरी ने अपनी सङ्गिन से तुरन्त कहा, 'जौ नठिया मोरी ओर का देखत तौ! ईकें का मताई बैनें न हुइएँ।'

'झलकारी, इन अंगरेजन में चलन दूसरी तरां को सुनत।'

'हुइए आगलगन कें। मोरे मन में तो आउत कै पनैयां उतार कें मूछन बरे के मों पै चटाचट देश्रों।'

'कायरी ऊने तोरो का लै लश्रौ?'

'हमाश्रो कछू लैवे खों आय तब पसुरियां टोर के धर देश्रों, पै बेना का इन गोरन खां जानती नइँया? झांसी खौं गटकन चाउत।'

'हमारी रानी न गटकन दे हैं।'

'ए, रानी का है छाच्छार* दुर्गा है। ऐसी प्यारी लगत। मोए तो ऊदिना हरदी कूँ कूँ में गरे सें लगा लश्रो तो। मैं तो ऊपै अपने प्रान दै सकत।'

'और तोरो मुन्स का कर है।'

'काए, अब गारियन पै आगई? मैं ठूंसा देश्रों सो सबरौ बुकलयाश्रो बिसर जै। जब रानी पै कौनऊँ आफत आजै, तब का लुगाईं और का आदमी, सब अपने खौं हौम दैयें।'

पीरश्रली और खुदाबख्श ने पान वाले की दूकान पर सुना।

'यह छोटा साहब कैसी अकड़ के साथ बाजार में होकर निकलता है!'

'इस समय इन लोगों का सितारा चमका है। कभी डूबेगा भी।'

'इनकी तकदीर तो देखो। जो सामने आया समेट लिया गया। हैं हिम्मत वाले।'

'जी हां! हिम्मत के सब हरफ खुदा ने इन्हीं के खोपड़े पर लिख दिए हैं। हमारी फूट ने हमें खालिया। नहीं तो क्या - मुग़ल, पठान, राजपूत, मराठा वग़ैरह के होते ये एक घड़ी भी हिन्दुस्तान में ठहर सकते थे!'

'बनिए बनकर आए और ठाकुर बनकर जम रहे हैं।'

'इन राजों नवाबों ने चौपट किया।'

'प्रजा को कष्ट दिए। सिपाही लड़ाई में हारे, और राज्य गया।'

'अजी सब ज़नानें हो गए हैं।'

---

* छाच्छार = साक्षात।

'यहीं के राजा को न देखो। नाटक चेटक और नाचने गाने में सब समाप्त कर दिया।'

खुदाबख्श के कान खड़े हुए। क्षोभ आया।

उस आदमी से पूछा, 'यहां के राजा ने रैयत को तो कोई दुःख दिया नहीं?'

'दुःख न देना और बात है, सुख पहुंचाना दूसरी बात।'

'अंग्रेज़ों का राज्य हो गया, तो याद आवेगी।'

'अंग्रेज़ कौन कच्चा खाए जाते हैं।'

'जनाब वह ऐसी क़ौम है कि बिना खाए ही पचा जावेगी।'

'ऐसा नहीं हो सकता। यहां का राज अंग्रेज़ों के हाथ नहीं जावेगा।'

'कुछ नहीं कहा जा सकता। यदि चला गया तो?'

तम्बोली ने पान बनाते बनाते कहा, 'ठट्ठा है जो चला जावेगा। रानी हमारी बनी रहे, हम तो अपने सिर कटवा देंगे।'

पीरअली ने हँसकर कहा, 'तुमतो पान काटते कतरते जाओ भाई। सिर काटना, कटवाना हम सिपाहियों का काम है।'

तम्बोली ने ध्यान पूर्वक पीरअली को देखा।

बोला, 'आप झांसी के रहने वाले नहीं जान पड़ते। परदेशी हैं?'

'क्यों? क्या फ़र्क़ पड़ गया?'

'धरती आकाश का।'

'कैसे?'

'अभी कुछ नहीं कह सकता। समय आने पर देखना।'

'समय आने पर तेली तम्बोली भी तलवार बन्दूक़ चलावेंगे, यह देखना बाक़ी है।'

'अभी न देख लो। ले आओ अपनी ढाल-तलवार। मैं अपनी लाता हूँ। फिर देखलो झांसी का पानी।'

पीरअली हँसा। खुदाबख्श उसको वहां से ले गया।

दूकान के पास झम्मीसिंह और भग्गी दाउजू सुनार खड़े थे।

झम्मीसिंह ने कही, 'खूब कई सात्र तुमने, स्याबास। अंगरेजन कौ जासूस सौ का हतौ कक्का।'

तम्बोली बोला, 'हुइए। का करनैं।'

भग्गी दाउजू ने कहा, 'जो झांसी की लटी तके तिहि खाएं कालका माई।'*

'वा दाउजू वा,' तम्बोली बोला, 'कविराजई तो ठैरे।'

झांसी में उस समय अनेक लावनी बाज़ थे। उनकी कविताएं पिङ्गल के नियमों से परे होती थीं, लेकिन थीं वे बहुत लोक प्रिय। भग्गी दाउजू उन्हीं में से एक था।

पीरअली ने बाज़ार का सारा समाचार अलीबहादुर को दिया।

अलीबहादुर ने दूसरे दिन एलिस को सुनाया।

एलिस ने नवाब साहब को धन्यवाद दिया और मन में कहा, 'आल बाज़ार गौसिप' (सब बाज़ार की गपसप)।

---

*भग्गी दाउजू का रायसा—परिशिष्ट में देखिए।

[३१]

जब महीने भर से ऊपर हो गया और कलकत्ते से कोई जवाब न आया तो एलिस, मालकम इत्यादि को चिन्ता हुई। शायद गवर्नर जनरल रानी के पक्ष में फ़ैसला करदें और झांसी सरकारी 'बन्दोबस्त' की हुकूमत से वंचित रह जाय।

एलिस के सामने सदाशिवराव नेवालकर नाम का एक व्यक्ति दावेदार बन कर आया। खूब रहा—प्यादे से प्यादा कट जावेगा। सदा-शिवराव को एलिस ने प्रोत्साहित किया। सदाशिवराव ने एक लम्बे खर्रे की अर्ज़ी पेश की। गङ्गाधरराव के वंश का कुर्सी नामा अर्ज़ी में दर्ज किया—ठीक पांचवीं पीढ़ी पर। और रानी बिचारी तो किसी भी पीढ़ी में न थी! गत राजा की धर्म पत्नी! तो भी क्या हुआ? स्त्री तो थी। स्त्री राज्य करने लायक़! लेकिन इङ्गलैंड की रानी विक्टोरिया तो पुरुष नहीं। मगर हिन्दुस्थान इंगलैंड नहीं है।

सदाशिवराव की अर्ज़ी को रानी की अर्ज़ी से लड़वा ही तो दिया। डलहौज़ी रानी के लिए अब क्या खाक करेगा? और न इस मूर्ख के लिए ही कुछ।

मालकम ने ३१ दिसम्बर सन् १८५३ को सदाशिवराव की सिफ़ारिश करते हुए लिखा, 'यदि मृत राजा के पुरखों के किसी मर्द वारिस का ही हक़ कबूल किया जाता है, तो यह व्यक्ति वास्तव में गद्दी का सबसे अधिक निकट हक़दार है।'

सदाशिवराव के पास कहीं से कुछ धन भी आ गया और वह मज़े में राजसी ठाठ से रहने लगा। राज्य मिलने में कितनी कसर रह गई थी? पोलिटिकल अफ़सरों ने सिफ़ारिश कर ही दी थी। कोड़ा हाथ में आ गया। बस। कसर रही थोड़ी—ज़ीन लगाम घोड़ी!

रानी गंभीरता पूर्वक सारी स्थिति का अवलोकन कर रही थीं। वे झांसी राज्य को अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति का साधन मात्र समझती

थीं। झांसी का राज्य उनके लिए सुरपुर न था—किन्तु, जिस सुरपुर के पाने की उनके मन में लालसा थी, झांसी उसकी एक सीढ़ी मात्र थी।

पति के देहान्त के बाद से रानी की दिनचर्या इस प्रकार हो गई:—

वह नित्य प्रातःकाल चार बजे स्नान करके आठ बजे तक महादेव का पूजन करतीं और उसी समय गवैए भजन-गायन सुनाते। फिर ग्यारह बजे तक महल के समीपवर्ती खुले आँगन में घोड़े की सवारी, तीरन्दाज़ी, नेज़ा चलाना, दौड़ते हुए घोड़े पर चढ़े चढ़े, दांतों से लगाम पकड़ कर दोनों हाथों से तलवार भांजना, बन्दूक से निशाना लगाना, मलखम्भ कुश्ती इत्यादि करती थीं और अपनी सहेलियों तथा नगर से आने वाली कुछ स्त्रियों को ये सब काम सिखलाती थीं। इन में भाऊबख्शी की पत्नी प्रमुख थी और बहुधा आने वालों में, झलकारी कोरिन।

ग्यारह बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिलाकर तथा कुछ दान-धर्म करके तब भोजन करतीं। भोजन के उपरांत थोड़ा सा विश्राम। फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिख कर आटे की गोलियां मछलियों को खिलातीं। उस समय वे किसी से बात चीत नहीं करती थीं और न कोई उस समय उनके पास बैठ सकता या आसकता था। वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं। तीन बजे के उपरांत संध्या तक फिर वे ही व्यायाम और कसरतें शरीर फ़ौलाद बनाने की क्रियाएं।

संध्या के उपरांत आठ बजे तक कथावार्ता, पुराण, भगवद्गीता का अठारवां अध्याय और भजन सुनतीं। इसके बाद एक घण्टा आगन्तुक को भेंट के लिए दिया जाता था। तीसरी बार स्नान करतीं! इसके बाद थोड़े समय तक इष्टदेव का एकान्त ध्यान। फिर व्यालू भोजन। पश्चात् सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई के साथ थोड़ा सा वार्तालाप और फिर ठीक दस बजे शयन। वे समय की बहुत पाबंद थीं। शिथिलता तो छूकर नहीं निकली थीं।

राज्य मिलेगा या न मिलेगा—इन दोनों के व्यवधान में वे महीने चले जा रहे थे। मोरोपन्त ताम्बे और अन्य कर्मचारी यथावत् कार्य कर रहे थे। एलिस वर्ग अपना पाया मज़बूत बनाने की तय्यारी करता चला जा रहा था, बहुत सतर्कता, बड़ी सावधानी के साथ।

जब कई महीने हो गए और डलहौज़ी का उत्तर न आया तब मोरोपन्त, नाना भोपटकर इत्यादि की सम्मति से एलिस और मालकम के द्वारा एक खरीता और भेजा। उनमें पुरानी संधियों को दुहराया गया और जिनके सामने गोद ली गई थी उनके नाम प्रकट किए गए।

एलिस ने सिफ़ारिश की। लिखा, 'ओर्छा राज्य को दत्तक की स्वीकृति दी गई है। जैसा ओर्छा राज्य वैसा झांसी राज्य। एक को अनुमति देना और दूसरे को न देना अनुचित मालूम होता है।'

यह बात नहीं कि एलिस रानी की अर्ज़ी का स्वीकृत किया जाना पसन्द करता हो। वह ओर्छा राज्य को दत्तक की स्वीकृति के मिलने पर कुढ़ गया था। एक अच्छा खासा ग्रास कम्पनी सरकार के मुंह से छुड़का दिया गया!

कई महीने उपरान्त डलहौज़ी अवध के दौरे से कलकत्ता लौटा। झांसी की मिसिल पेश हुई। जगह जगह ऐसे उद्गार जो नाक तक नफ़रत पैदा करें!

बुन्देलखण्ड में कम्पनी के राज्य की स्थापना हमारे पुरखों की सहायता से हुई है! हमारी राजभक्ति की क़दर की जानी चाहिए। ज़रूर! अब किस साधना के लिए राज भक्ति की अटक है? सन्धियां पवित्र होती हैं। बेशक! तुम पेशवा के नौकर थे। पेशवा हमसे हारा और उसने अपना स्वामित्व हमारे हवाले किया। अब तुम हमारे नौकर हुए। मर्ज़ी हमारी; माने हम तुम्हरी गोद-वोद को या न मानें।

डलहौज़ी सोचता-साचता, जिस निष्कर्म पर पहुंचा, उसकी काउन्सिल भी उससे सहमत हो गई।

डलहौज़ी ने झांसी की मिसिल पर २७ फरवरी सन् १८५४ को हुकुम चढ़ाया:—

'झांसी राज्य पेशवा का आश्रित राज्य था। १८०४ की सन्धि में शिवराव भाऊ ने इस बात को क़बूल किया था। हमको ऐसे आश्रित राज्यों में गोद मानने न मानने का अधिकार है। रामचन्द्रराव ने १८३५ में, जिसको हमने ही सन् १८३२ में राजा की उपाधि दी थी, मरने से एक दिन पहले किसी को गोद लिया था। वह गोद ब्रिटिश सरकार ने नहीं मानी थी। हम दामोदरराव की गोद को मानने के लिए बाध्य नहीं हैं। इसलिए झांसी राज्य खालसा किया जाता है, और अंग्रेज़ी राज्य में मिलाया जाता है। पोलिटिकल एजेंट की सिफ़ारिश के अनुसार रानी को मासिक वृत्ति दी जायगी।'

इस हुक्म को क़ानूनी लिबास ७ मार्च सन् १८५४ को मिल गया।

मालकम के पास डलहौजी की आज्ञा आ गई और उसने बिना विलम्ब नीचे लिखा हुआ इश्तिहार एलिस के पास भेज दिया:—

'दत्तक को गवर्नर जनरल ने नामंज़ूर किया है। इसलिए भारत सरकार की ७ मार्च सन् १८५४ की आज्ञा के अनुसार झांसी का राज्य ब्रिटिश इलाके में मिलाया जाता है। इस इश्तिहार के ज़रिये सब लोगों को सूचना दी जाती है कि सम्प्रति झांसी प्रदेश का शासन मेजर एलिस के अधीन किया जाता है। इस प्रदेश की सब प्रजा अपने को ब्रिटिश सरकार के अधीन समझे और मेजर एलिस को कर दिया करे और सुख तथा सन्तोष के साथ जीवन निर्वाह करे। १३–३–१८५४ ह० मालकम।'

प्रजा का सुख–सन्तोष! उसका कल्याण!! राजनीति के पाखण्ड को कैसे बढ़िया मुहाविरे मिले!!!

[३२]

मालकम ने इस घोषणा को बहुत छिपा—लुका कर एलिस के पास भेजा और उसको हिदायत दी कि बहुत सावधानी के साथ काम किया जावे, क्योंकि उसको मालूम था कि रानी जन—प्रिय हैं; कहीं झांसी की जनता दङ्गा—फसाद न कर बैठे। इसलिए एलिस ने सेना द्वारा झांसी का कठोर प्रबन्ध किया।

एलिस ने होशियारी के साथ उस घोषणा को एक जेब में रक्खा और दूसरी में पिस्तौल। शसस्त्र अङ्गरक्षकों को साथ लेकर रानी के पास क़िले वाले महल में पहुंचा। रानी को सूचना दे दी गई थी कि छोटे साहब के पास बड़े लाट की आज्ञा आ गई है उसी को सुनाने आ रहे हैं। मोरोपन्त इत्यादि बहुत दिन से आशा लगाए बैठे थे। दीवान ख़ास में नियुक्त समय पर आ गए। रानी पर्दे के पीछे बैठीं। दीवान ख़ास में एक ऊँची कुर्सी पर दामोदरराव।

एलिस दृढ़ पद और अदृढ़ हृदय के साथ दीवान खास में प्रविष्ट हुआ। मोरोपन्त इत्यादि ने बहुत विनीत भाव के साथ अभिवादन किया। दीवान खास में इत्र—पान इत्यादि सजे सजाए रक्खे थे। बुर्जों पर तोपों में सलामी दाग़ने के लिए बारूद डाल दी गई थी। एलिस ओंठ से ओंठ सटाए आया और अपने माथे की शिकनों को समेट कर अभिवादन का उत्तर देता हुआ बैठ गया।

मोरोपन्त ने विनीत भाव के साथ कहा, 'साहब, आपको यहां तक आने में बहुत कष्ट हुआ होगा।'

मुश्किल से एलिस का कण्ठ मुखरित हुआ, 'मेरा कर्तव्य है। दुःखदायक कर्त्तव्य है।'

सब लोग सन्नाटे में आ गए।

एलिस ने कहा, 'महारानी साहब आ गई हैं ?'

दीवान ने उत्तर दिया, 'जी साहब। पर्दे के पीछे विराजमान हैं।'

एलिस ने जेब से मालकम वाली घोषणा निकाली। दरबारियों के कलेजे धक धक करने लगे।

कलेजा थाम कर उन लोगों ने घोषणा को सुन लिया। गुलाम गौस खां तोपची अनुकूल घोषणा की आशा से दीवान खास के एक दर के पीछे की तरफ़ कान लगाए खड़ा था। प्रतिकूल घोषणा को सुनकर मुँह लटकाए चुपचाप चला गया।

जब घोषणा पढ़ी जा चुकी—मोरोपन्त के मुँह से निकला 'ओफ़ !'

दीवान के मुंह से, 'हाय !'

और दरबारियों के मुँह से—'अनहोनी हुई।'

दामोदरराव समझने की कोशिश कर रहा था, उसको आभास मिल गया कि कुछ बुरा हुआ है।

यकायक ऊँचे, परन्तु मधुर स्वर में रानी ने पर्दे के पीछे से कहा,

'मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी।'*

इन शब्दों से दीवान खास गूंज गया। वायुमण्डल ने उनको अपने भीतर निहित कर लिया।

भारत के इतिहास में वे शब्द पिरो दिए गए। झांसी की कलगी में वे शब्द मणि-मुक्ता बन कर चिपक गए।

अब एलिस का धड़कता हुआ हृदय कुछ स्थिर हुआ।

बोला, 'मुझको गवर्नर जनरल साहब की जो आज्ञा मालकम साहब के द्वारा मिली उसको मैंने पेश कर दिया। जो कुछ मेरे सामर्थ्य में था मैंने किया। हम सब गवर्नर जनरल साहब की आज्ञा में बँधे हुए हैं। परन्तु मैं समझता हूँ कि असन्तोष का कोई कारण नहीं है। पांच हज़ार रुपया मासिक वृत्ति महारानी साहब और उनके कुटुम्ब के लिए काफ़ी है। यह मानना पड़ेगा कि गवर्नर जनरल साहब ने बहुत उदारता का बर्ताव किया है।'

---

* परिशिष्ट देखिए।

एलिस का वाक्य समाप्त नहीं हुआ था कि पर्दे के पीछे से रानी ने उसी ऊँचे मधुर स्वर में कहा, 'मुझको यह वृत्ति नहीं चाहिए। मैं न लूंगी।'

एलिस ने अधिक ठहरना उचित नहीं समझा। दीवान से कहता गया, 'आप तुरन्त मेरे पास आइए।'

दीवान ने पान खाने का आग्रह किया। वह पान खाकर चला गया।

मुन्दर रानी के पास पर्दे में बैठी थी। जब घोषणा सुनाई गई वह मूर्छित हो गई थी। एलिस के चले जाने पर होश में आई।

रानी ने कहा, 'क्यों री, मूर्छित होना किससे सीखा? क्या इस छोटे से राज्य के लिए ही हम लोग जीवित हैं?'

मुन्दर रोने लगी। रानी ने पुचकारा। मोरोपन्त इत्यादि ने समझाया।

दीवान ने रानी से पूछा, 'मैं एलिस साहब के पास जाऊँ? वह बुला गए हैं।'

रानी अनुमति देकर रनवास में चली गईं।

कुछ क्षणों में ही समाचार सारे नगर में फैल गया। उस समय झांसी निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना चाहती थी। परन्तु रानी ने निवारण किया। कहलवाया, 'अभी समय नहीं आया है।'

झलकारी ने जब सुना अपने पति पूरन से कहा, 'छाती बरजाय इन अंगरेजन की, गटक लई झांसी।'

[३३]

एलिस ने झांसी का 'अंग्रेज़ी बन्दोबस्त' आरम्भ कर दिया।

दीवान से दफ्तरों की चाभियां ली। थाने पर अधिकार किया और शहर में अंग्रेज़ी राज्य और अपने अधिकार की डौंडी पिटवा दी। तहसीलों में तुरन्त समाचार भेजा और वहां भी कड़े प्रबन्ध की व्यवस्था कर दी।

दीवान रानी को सब बातों की सूचना देकर अपने घर उदास चला गया। रानी के नित्य नियम में कोई अन्तर नहीं आया। अपने कार्यक्रम के अनुसार जब वे विश्राम के लिए बैठीं तब मुन्दर, सुन्दर और काशीबाई उनके पास आ गईं। वे अपने आभूषण उतार आई थीं।

रानी ने कहा, 'आभूषण क्यों उतार आई हो? क्या इसी समय रणभूमि में चलना है?'

मुन्दर सिसकने लगी। सुन्दर और काशी के नेत्र तरल हो गए।

रानी बोली, 'ये चिन्ह तो असमर्थता और अशक्ति के हैं। अपने सब आभूषण पहनो और इस प्रकार रहो मानो कुछ हुआ ही नहीं है।'

मुन्दर ने रानी के पैर पकड़ लिए उसकी हिलकी नहीं समाती थी।

रानी का कण्ठ भी थोड़ा रुद्ध हुआ। उन्होंने भौहें सिकोड़ीं। एक ओर देखने लगीं।

काशीबाई रुदन करती हुई बोली, 'बाईसाहब, बाईसाहब!'

मुन्दर ने करुण स्वर में कहा, 'सरकार अब क्या होगा?'

रानी ने अपने को सहज ही संयत कर लिया। मुन्दर के सिर पर हाथ फेरा। उसकी आंखें आसुओं से भरी हुई थीं। सुन्दर और काशी की भी। चञ्चल आसुओं में होकर उन तीनों ने रानी के तेजस्वी रूप को देखा—कई लक्ष्मीबाइयां, कई सतेज नेत्र दिखलाई पड़े। उन्होंने अपनी आंखें पोछीं।

रानी ने कहा, 'ये आंसू बल का क्षय करेंगे। अभी तो अपने कार्य का प्रारम्भ भी नहीं हुआ है। सोचो, जब छत्रपति के उपरान्त शम्भू जी

मारे गए, साहू समाप्त, राजाराम गत, तब ताराबाई की गांठ में क्या रह गया था ? इतने बड़े मुग़ल सम्राट को ताराबाई कैसे परास्त कर सकी ? उसने स्वराज्य की बागडोर को कैसे बढ़ाया ! रो--रो कर ? कपड़े और गहने फेंक–फेंक कर ! भूखों मर मर कर ! और सोचो, जीजाबाई को पति का सुख नहीं मिला । उन्होंने छत्रपति को पाला ! काहे के लिए ? किस आशा से ? गद्दी पर बिठलाने के लिए ! उन्होंने इतना तप, इतना त्याग अपने पुत्र को केवल हाथी की सवारी और नरम नरम गद्दी पर विराजमान कराने के लिए किया था ?'

वे सहेलियां सचेत हुईं ।

रानी कहती गईं, 'हमको जो कुछ करना है उसकी दिशा निश्चित है । मार्ग में विघ्न बाधाएँ आती ही हैं । खराते का स्वीकृत न होना केवल एक बाधा ही है । स्वीकृत हो जाता तो क्या हम लोग केवल सो जाने के लिए ही जीवित रहतीं ? भगवान कृष्ण की आज्ञा को याद रक्खो कि हमको केवल कर्म करने का अधिकार है । कर्म के फल का नहीं । देखो, छत्रपति के उपरान्त जिन लोगों ने स्वराज्य के आदर्श को आगे बढ़ाया और उसकी जड़ें प्रबल बनाईं, वे बाधाओं का डटकर प्रतिरोध करते रहते थे । जिन लोगों की लालसा अपने लिए फलों की ओर गई, वे गिर गए और स्वराज्य की धारा धीमी पड़ गई । परन्तु वह सूखी कभी नहीं । दादा बाजीराव पेशवा हतप्रभ होकर बिठूर चले आए । परन्तु हम लोगों को वे स्वराज्य की शिक्षा देने से कभी नहीं चूके । यदि हिन्दुस्थान भर में कोई भी उस पवित्र काम को अपने हाथ में न ले, तो भी मैंने अपने कृष्ण के सामने, अपनी आत्मा के भीतर उसका बीड़ा उठाया है । करूंगी और फिर करूंगी । चाहे मेरे पास खड़े होने के लिए हाथ भर भूमि ही क्यों न रह जाय । मानलो कि मैं सफल न हो पाई, तो भी जिस स्वराज्य धारा को आगे बढ़ा जाऊंगी, वह अक्षय रहेगी । उसी महावाक्य को सदा याद रक्खो---हमको केवल कर्म करने का अधिकार

हैं, फलका कभी नहीं। हमको एक बड़ा सन्तोष है। जनता हमारे साथ है। जनता सब कुछ है! जनता अमर है। इसको स्वराज्य के सूत्र में बांधना चाहिए। राजाओं को अंग्रेज़ भले ही मिटा दें, परन्तु जनता को नहीं मिटा सकते। एक दिन आवेगा जब इसी जनता के आगे होकर मैं स्वराज्य की पताका फहराऊँगी।'

सहेलियों की आंखों में भी चमत्कार उत्पन्न हो गया।

रानी बोलीं, 'मुझसे आज एक भूल होगई है। मुझको एलिस के सामने कुछ नहीं कहना चाहिये था। मेरे उस वाक्य से वह अपने संगी अंग्रेजों सहित चौकन्ना हो जायगा। वृत्ति भी अस्वीकृत नहीं करना चाहिये थी।

काशी ने स्थिर स्वर में प्रश्न किया, 'अब क्या करना है?'

रानी ने कहा, 'अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति ही से हो सकता है। मैं वृत्ति को स्वीकृत करूंगी और आगे सावधानी के साथ काम करूँगी। मैं दामोदरराव की ओर से विनय प्रार्थना की लिखा पढ़ी जारी रक्खूंगी। विलायत में अपील भिजवाऊँगी। जिससे एलिस इत्यादि मेरी झांसी न देने वाली बात की यथार्थता को अपनी समझ से दूर करदें। और, जनता अपनी स्मृति में इस बात को पकड़े रहे, कि मैं और झांसी अभी बनी हैं।'

इतने में वहां दामोदरराव आया।

रानी ने अपनी गोद में बिटला लिया।

दामोदरराव ने पूछा, 'माता' क्या यह राज्य चला जावेगा?

रानी—'यह राज्य चला जावेगा तो चला जाने दो। स्वराज्य आवेगा।

दामोदरराव—'स्वराज्य क्या?'

रानी मुस्कराईं।

बोलीं, 'अभी भोजन करने चलो। फिर कभी बतलाऊँगी।

रानी ने पैन्शन लेने की स्वीकृति लिखवा भेजी।

[३४]

झांसी की जनता का क्षोभ का समाचार, एलिस को मिल गया। उसने अपने मन में एक सामन्जस्य स्थिर किया और उसके अनुसार मालकम को लिखा। मालकम ने गवर्नर जनरल को सिफ़ारिस की:—

'रानी लक्ष्मीबाई को आजीवन पाँच हज़ार रुपये दिए जावें। और नगर वाला राज महल उनकी सम्पति समझी जाकर उन्हीं को दे दी जाय। रानी या उनके नौकरों पर ब्रिटिश अदालतों की सत्ता न रहे। अपने नौकरों के अपराधों का वे स्वयं न्याय करें। राजा का निजका धन रियासत के लेन देन का हिसाब करके जो बाक़ी बचे वह, और राज्य के सब जवाहिरात, रानी को दे दिये जावें। राजा और रानी के नातेदारों की एक सूची बनाई जाय और उन लोगों के निर्वाह की व्यवस्था करदी जाय।

डलहौज़ी ने ये सिफ़ारिशें स्वीकार कीं, केवल एक बात नहीं मानी। वह यह कि राजा की निज की सम्पति और रियासत के जवाहिरात रानी के हों। उसने तै किया कि दामोदरराव के होंगे, क्योंकि यद्यपि वह राज्य का अधिकारी नहीं है, मगर हिन्दू शास्त्र के अनुसार गङ्गाधरराव की निजी सम्पति का अधिकारी अवश्य है!

डलहौज़ी ने यह आज्ञा २५ मार्च सन् १८५४ को दी और तदनुसार पोलिटिकल एजेन्ट ने झांसी के खज़ाने से छः लाख रुपये निकाल कर दादमोरराव के नाम से अंग्रेज़ी ख़ज़ाने में जमा कर दिए और निश्चय किया कि दामोदरराव को बालिग होने पर ब्याज समेत लौटा दिए जावेंगे। रियासत के सब जवाहिरात और सोने-चांदी के आभूषण इत्यादि 'दामोदरराव हेतु' रानी के अधीन कर दिए।

ईमान और राजनीति दोनों की परस्पर निभा दी।

अब अंग्रेज़ी बेलन अपरिहाय और अनवरत गति से चला।

सबसे पहले जो हुआ, वह रानी से क़िले का खाली कराना था। क़िले से एक बड़ी सुरङ्ग हाथी खाने को और वहां से शहर वाले महल को

गई थी। रानी ने इसके द्वार को मुंदवा दिया और वह किले से शहर वाले महल में सहेलियों सहित चली आई।

अंग्रेज़ी पल्टन ने किले पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसके अंग्रेज़ अफ़सरों ने रात को कवाब-शराब से जशन मनाया। पल्टन के बहुत से हिन्दुस्थानी सिपाही आंसू बहाते हुए सोए।

दूसरे दिन बहुत सा रियासती फ़ौजी सामान नष्ट किया गया और बड़ी बड़ी तोपों को निरुपयोगी कर डाला गया। झांसी राज्य की सम्पूर्ण सेना एक क़लम बरख़ास्त कर दी गई—उनको छः छः महीने का वेतन देने की उदारता ज़रूर की गई। सिपाही वेतन लेकर महल के सामने से निकले। वे रानी का एक अन्तिम दर्शन लेना चाहते थे। रानी झरोखे पर पर्दे के पीछे आ गई। सिपाही आंसू बहाते जाते थे और रानी माता रानी माता कहते हुए उनको प्रणाम करते चले जाते थे और वे पर्दे के बाहर केवल अपने जुड़े हुए हाथों नमस्कार करती जाती थीं। रानी ने सिपाहियोंके आंसू देखकर भी अपने आंसू किसी आश्चर्यपूर्ण क्रिया से रोके।

छः छः मास वाले वेतन की उदारता केवल सिपाहियों तक सीमित रही। बाक़ी सब रियासती नौकर खाली जेब घर चले गए। जिसको पटवारगिरी और क़ानूनगोई से पेट भरना था उनकी अर्ज़ियां जल्दी जल्दी मंजूर कर ली गईं। एक बख़्शिसअली झांसी नगर के सब फाटकों का फाटकदार था और रियासती कर्मचारियों में उसका बहुत ऊँचा स्थान था। उसको झांसी के जेल की दरोग़ाई मिल गई।

लगभग सब जागीरदार ख़तम कर दिए गए। केवल गुरसराय, कटेरा और गुसाइयों की जागीरें बच गईं। वे इसलिए कि बेलन के नीचे कुछ कड़े कंकड़ बच ही जाते हैं। छोटे जागीरदारों में आनन्दराय भी था। उसके पास ताम्र-पत्र थे। छीन लिए गए और बदले में काग़ज़ पर नक़लें दे दी गईं।

औरों की तरह आनन्दराय से भी पूछा गया, 'नौकरी करोगे?'

'कौनसी ?'

'पटवारगीरी'

'नहीं कर सकूँगा। खेती से पेट पालूँगा।'

'नायब थानेदारी करोगे ?'

'कर लूंगा।'

जहां सैकड़ों और सहस्रों की तादाद में जनता के पढ़े-लिखे लोग रियासत में थोड़ा वेतन भी पाकर अपनी गुज़र करते थे, वहां रियासत के केवल थोड़े से ऊँचे कर्मचारी और छोटे छोटे जागीरदार अंग्रेज़ी राज्य में छोटे छोटे से पदों पर कुछ अधिक वेतन देकर नियुक्त कर दिए गए। बाक़ी बड़े बड़े पदों पर मोटा वेतन पाने वाले थोड़े से अंग्रेज़ मुक़र्रर हो गए। ठीक तो है—राजा की जगह अंग्रेज़ कमिश्नर, एक दर्जन दीवानों की जगह एक डिप्टी-कमिश्नर और दो-तीन अंग्रेज़ परगना-हाकिम। सहस्रो सिपाहियों की जगह दो सौ-तीन सौ अंग्रेज़ सैनिक। दरबार समाप्त—कवि, चित्रकार, धुरपदिये, सितारिये, नर्तकियां-नर्तक, सांटमार, कारीगर सब की विदा !

उनकी जगह क्लब, डाक बङ्गला और ऊँचे-नीचे, छोटे-बड़े सब हिन्दुस्थानियों का अनिवार्य माथा-टेकू सलाम। वह भी, अर्दली को हक़-दस्तूर दो, जूते उतार कर साहब की विलायती प्रतिमा के सामने नतमस्तक जाओ, तब नसीब। कोरी, करघे, कपड़े सब ग़ायब—केवल एक अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया जारी—गङ्गाजी के किनारों से चांदी-सोने का शोषण करना और टेम्स जी के किनारों पर निचोड़ देना।

हिन्दुस्थान उस ओर चलाया जाने लगा जिसको आजकल की भाषा में कह सकते हैं—

महफ़िल उनकी साक़ी उनका
आंखें अपनी बाक़ी उनका।'

---

* अकबर इलाहाबादी।

झांसी प्रदेश के अनेक लोग रानी के पास प्रणाम करने जाते थे और पूछते थे—

'सरकार की आज्ञा हो तो अंग्रेज़ों की नौकरी कर लें ?'

रानी उत्तर दिलवाया करती थीं, 'कर लो, परन्तु इस बात को मत भूलना कि कभी झांसी राज्य में तुम्हारा कोई स्थान था।'

सेठ-साहूकारों के उलहनों के मारे रानी हैरान थीं। कोई कुछ कह जाता, कोई कुछ।

'आप कुछ उपाय क्यों नहीं करतीं ?'

'विलायत खरीता भेजिए। झांसी को यों ही तो अंग्रेज़ों के हाथ में नहीं चला जाने देना चाहिए।'

'हम लोगों से जितना रुपया चाहिए हो लीजिए और मुक़द्दमा लड़िए।'

'हम लोग साहबों के बङ्गलों पर सलाम करने नहीं जाना चाहते, इसलिए कम से कम शहर तो अपने अधिकार में कर लीजिए।,

'हमारा सारा व्यापार ठप हो गया है। राजदरबार, सरदार कोई नहीं रहे—अब हमको कोई नहीं पूछता।'

किसानों के ऊपर जो लगान रियायत में क़ायम था, वह पूरा कभी वसूल नहीं हो पाता था—कभी आधा कभी पर्धा। और वह भी प्रायः अन्न के रूप में। अब काग़ज़ों में लगान कम हुआ, परन्तु जितना लिखा गया उसमें से वसूली कौड़ी कम की नहीं की गई—और सब सिक्कों में। भूमि का स्वामी राजा पुस्तकों में अवश्य था, परन्तु नित्य के जीवन में किसान को अपनी भूमि किसी को भी देने का अधिकार था। अंग्रेज़ी राज्य में वसूली करने के लिए पहले पहल हर गांव में ठेकेदार नियुक्त किए गए। फिर इन्हीं को ज़िमींदारियां 'अता' कर दी गईं। इस श्रेणी के खड़े कर देने से किसान नीचे धसक गए। भूमि के ऊपर उनका जो अधिकार था, वह थोड़े से ज़िमींदारों के हाथ में पहुंच गया। इन दोनों श्रेणियों के बीच के

व्यवधान को संतुलित रखने के लिए—अथवा ज़िमींदार–किसान संघर्ष में किसान कभी सिर न उठा पावें इसके लिए—साहब, साहब की कचहरी और साहब का बङ्गला उद्भूत हुए।

रह गईं ग्राम पञ्चायतें सो उनके हाथ में केवल जात–पांत के झगड़े निबटाने का हथकण्डा रह गया। बाक़ी सारी शक्ति सौतिया–डाह रखने वाली अंग्रेज़ी अदालत के 'इजलास' में चली गई।

इङ्गलेंड के कुछ आत्मनिष्ठ पुरुषों ने प्रतिवाद किए, परन्तु इन प्रतिवादों का कोई प्रभाव नहीं हुआ।

इङ्गलेंड सामन्त युग को लांघकर, मध्यम वर्ग के नेतृत्व में आ चुका था। फ्रांस की क्रांति से घृणा करते हुए भी, इङ्गलेंड के मध्यम वर्ग ने फ्रांस–क्रांति के तीन मोहक शब्द 'न्याय, समता और भाईचारा' अपने साहित्य में सोख लिए। इङ्गलैंड की तत्कालीन राजनीति भी प्रभावित हुई। मध्यम वर्ग के एडमण्ड बर्क, शेरीडन इत्यादि ने सिंहनाद किया। राजनीति के अमर सिद्धांत प्रकट हुए। मध्यमवर्ग दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ा और इङ्गलेंड का अधिकार क्षेत्र उसने अपने हाथ में कर लिया। अधिकार हाथ में आते ही दायित्व ने उदारता को पीस डाला, क्योंकि निम्न वर्ग की असंख्य जनता उस अधिकार संसर्ग से दूर थी। जो मध्यम वर्ग उदार स्वरों में ऊँची राजनीति के राग अलापा करता था वह हर कदम पर हां–नां के सिर हिलाने लगा। मध्यम वर्ग के उदारवृत्ति वाले जो लोग अधिकार क्षेत्र से बाहर थे, और प्रयत्न करने पर भी जो उस क्षेत्र में नहीं घुस पाते थे, उनकी कौन सुनता था!

रानी ने विलायत को अपील भेजी। उसका कभी जवाब ही नहीं मिला।

पार्लियामेंट में भी थोड़ी सी बहस हुई। एक मेम्बर ने कम्पनी के डिरेक्टरों का एक पुराना मत उद्धृत किया।

[३५]

अंग्रेज़ी क्लब घर के सामने वाले मैदान की दूबा साफ़ कराई जा रही थी। धूप में मज़दूर हाँफ हाँफ कर काम कर रहे थे। मज़दूरों का मुखिया खड़े खड़े काम का ढङ्ग बतला रहा था।

एलिस चाहता था काम ज्यादा जल्दी हो। संध्या के पहले ही कमिश्नर स्कीन, डिप्टी-कमिश्नर गार्डन और फ़ौजी अफ़सर कप्तान डनलप इत्यादि की बैठक होनी थी। कुछ फल-फलारी की भी योजना थी।

झांसी को कमिश्नरी शासन का गौरव प्राप्त हुआ। इसमें कई ज़िले शामिल कर दिये गए। झांसी का एक अलग ज़िला बना। इस झांसी ज़िले का पहला डिप्टी-कमिश्नर कप्तान गार्डन हुआ, जो गङ्गाधरराव की चिरौरी किया करता था।

मैदान की सफाई करने वाले मज़दूर जरा ढीले पड़ पड़ जा रहे थे। एलिस को क्षोभ हुआ। उसने मज़दूरों के मुखिया को डाटा।

मुखिया ने कहा, 'ये मुफ्तखोर हैं हुज़ूर। डर के मारे मैंने अभी तक इनकी मारपीट नहीं की। अब हड्डी-पसली तोड़ता हूँ।'

एलिस बोला, 'मैं इस समय हड्डी-पसली तोड़ना पसन्द नहीं करता, मगर इनसे काम लो। काफ़ी पैसा दिया जाता है। जब रियासत थी तब तो इनको मुफ्त में काम करना पड़ता था।'

एलिस बंगले में चला गया। मुखिया ने सोचा, 'रियासत में काम मुफ्त में करते थे तो रियायतें भी बहुत पाए हुए थे। लड़की-लड़के के ब्याह के समय, देखें, अब कौन इन लोगों की मदद करता है।'

चिल्लाकर मज़दूरों को काम करने के लिए सम्बोधन करने लगा।

पास जाकर उनसे कहा, 'अब रियासत नहीं है अंग्रेज़ी करकरा उठी है। ठिकाने से काम करो, नहीं तो खाल टूटती फिरेगी।'

मज़दूरों ने कुड़कुड़ाते हुये कहा—

'न हमें रियासत जागीर लगाए थी, और न अंग्रेज़ लगा देंगे।'

'जितना खोदेंगे उतना पी पाएँगे।'

'पर यह ज़रूर है कि अपना अपना ही है।'

'अपने की मार खाते थे तो उनसे लड़ भी जाते थे। इन लोगों से तो कुछ कह भी नहीं सकते।'

मुखिया ने मना किया, 'झंझट की बात मत करो। साहब अपनी भाषा खूब समझता है। सुन लेगा तो तुम्हारी और हमारी जान लेलेगा।'

मज़दूर संध्या के पहले ही काम समाप्त करके अपनी मज़दूरी लेकर चले गए। ठीक समय पर अंग्रेज़ अफ़सरों की बैठक हुई।

खानपान के साथ ही काम काज की बात जारी रही।

एलिस—'मुझको अन्देशा था कि कहीं झांसी की जनता हटाए हुए रियासती सिपाहियों को भड़का कर, दंगा न करवा दें।'

डनलप—'हमारी पल्टनें तैयार थीं।'

स्कीन—'बन्दोबस्त अच्छा था।'

गार्डन—'मैंने सुना है कि वे सब रानी के पास गए थे।'

एलिस—स्वभाविक है।'

गार्डन—'परन्तु रानी ने उनको कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। समझदार स्त्री है।'

स्कीन—'मुझको उस स्त्री पर अचरज होता है। सुनता हूँ ऐसी घुड़ सवार हैं, कि पुरुष दांतों तले उँगली दबाते हैं।'

गार्डन—'हिन्दोस्थानी कसरतें खूबी के साथ करती है।

एलिस—मुझे शंका थी कि कहीं सती होने की कोशिश न करे। मैं गङ्गाधरराव के दाह के समय कमान मार्टिन को ससैन्य ले गया था।'

गार्डन—'मैं उन दिनों यहां न था।'

स्कीन—'इस प्रदेश के लोग शान्ति-प्रिय और क़ानून-भक्त हैं। यहां पहले दो बार सरकारी अमल रह चुका है, इसलिए हमारा शासन बसन्द करते हैं। न मालूम इस रियासत के सड़े और गन्दे वातावरण में यहां की जनता कैसे सांस लेती रही?'

एलिस—'ओ यह पूर्व है। जनता में मानो जान ही नहीं। मध्यम वर्ग यहां नाम मात्र को भी नहीं है। राजा जनता के भेड़िया धसान को डण्डे के सिरे से हांकते रहते हैं।'

डनलप—'हमारा शासन उनको क़ानून और न्याय देगा। व्यवस्थित शाशन में ये लोग समृद्ध और सुखी होंगे।'

स्कीन—'यहां के बड़े लोगों को अपने पास बुलाते रहना चाहिए। ये लोग जन समाज के मुखिया हैं। इनको हाथ में रखने से शासन में विघ्न बाधा उपस्थित न होगी और जिन लोगों के मन में रियासत की भावनाओं का पक्षपात होगा, वे भी बिलकुल टल जावेंगे।'

गार्डन—'ठीक है। हम लोग उनको जागीरें नहीं दे सकते। लेकिन उपाधियां दे सकते हैं। वे उपाधियों को काफ़ी बड़ा पुरस्कार समझेंगे।

स्कीन—'अलीबहादुर यहां का बड़ा आदमी है। विश्वासनीय है। मुझसे मिला है। बहुत शिष्ट है। उसको बराबर मुलाक़ात देना चाहिए।

एलिस—'मैंने चार्ज हवाला करते समय गार्डन को समझा दिया है। नवाब अलीबहादुर अपनी पैन्शन बढ़वाना चाहता है। यह नहीं हो सकता। उससे साफ़ कहना होगा; मगर उसको 'नवाब' की उपाधि आजीवन दी जा सकती है।'

गार्डन—'मैंने उसकी हवेली वापिस कर दी है। वह बहुत कृतज्ञ है।'

स्कीन—'ठीक किया! अगर उसके कोई लड़का हो तो तहसीलदार बना दिया जाये।'

एलिस—'लड़का तो है, किंतु वह उससे नौकरी नहीं कराना चाहता।'

स्कीन—'क्यों? हमारे तहसीलदारों को बहुत अख्तियार हैं। हम तहसीलदारोंको कुर्सी देते हैं। उनको जूता पहिने दफ्तरमें आने देते हैं।'

गार्डन 'हां इस बात में काले आदमी बड़ा गौरव देखते हैं।'

स्कीन—'बनियां महाजनों को भी बुलाना चाहिए। इन लोगों के व्याज का जनता पर बहुत असर पड़ता है। व्यौपार और रोज़गार का

अब बहुत अच्छा सुभीता हो गया है। यहां से लेकर बम्बई तक बेखटके माल आ–जा सकता है। उनको विलायत का माल शहर और देहातों में बेचने से बहुत मुनाफ़ा मिल सकता है। थोड़े दिनमें मालामाल होजावेंगे।'

एलिस—'आज मैंने उनमें से खास खास को बुलवाया है। नवाब अलीबहादुर को इशारा कर दिया था।'

स्कीन—'मुझको मालूम है। गार्डन ने बतलाया था। उनसे कहना चाहिए कि झांसी में रेल भी किसी दिन आ जावेगी और महीनों की यात्रा दिनों में हो जाया करेगी। रेल के ज़रिये वे लोग सहज ही अपने तीर्थों को दर्शन के लिए जा सकते हैं।'

एलिस—'कुछ स्कूल भी खोलने पड़ेंगे।'

स्कीन—'वह पीछे देखा जायगा। फिलहाल अस्पतालों और अच्छी सड़कों की चिन्ता करनी होगी।'

गार्डन—'लेकिन मनचाहे सरकारी नौकर, हिन्दुस्थानियों में तभी इस ज़िले में मिल सकेंगे, जब उन्हें हमारी कुछ शिक्षा मिल जाय।'

स्कीन—'हां कुछ दिनों बाद बाबुओं की ज़रूरत पड़ेगी।'

गार्डन—'परन्तु केवल बाबू वर्ग उत्पन्न करने के लायक़ शिक्षा देने की नीति को पूरा पूरा स्वीकृत नहीं किया गया है।'

स्कीन—'हां वह बात कलकत्ता, मदरास, आगरा इत्यादि के लिए है। झांसी सरीखी पिछड़ी हुई जगह और बुन्देलखण्ड–से वनखण्ड के लिए नहीं है। यहां तो जो स्कूल खोले, उसे मिडिल से आगे मत ले जाओ। मैं नहीं चाहता कि हिन्दुस्थानी छोकरे, एडमण्ड बर्क की मदिरा पीकर मतवाले हो जायं।'

एलिस—'तजुर्बा गार्डन को सब सिखला देगा।'

सोने की मोटी सांकल से टंगी हुई घड़ी को स्कीन ने जेब से निकाला। समय देखकर बोला, 'एलिस तुम्हारे मुलाक़ाती अभी नहीं आए हैं। समय हो गया है।'

एलिस ने कहा, 'इन लोगों के धर्म में सब कुछ अनन्त है, इस लिए समय की पावन्दी को महत्व नहीं देते।' उठकर एक तरफ़ गया। लौटकर आकर बोला।

'आगए हैं। मैंने झांक कर देखा। पूरा पूर्वीय ठाठ है। पगड़ी पग्गड़, फेंटे, दुपट्टे। हाथों गलों और पैरों तक में ज़ेवर!'

गार्डन ने राजसी मुस्कराहट के साथ कहा, 'मैंने दरबारों में यह सब ठाठ देखा है।'

स्कीन—'यह भी दरबार है गार्डन। डिप्टी कमिश्नर साहब बहादुर का दरबार!' स्कीन हँसा। सब अंग्रेज़ हँसे।

स्कीन बोला, 'हम लोग जाते हैं। एलिस और डनलप के सिवाय और किसी की ज़रूरत नहीं।'

स्कीन इत्यादि गए। एलिस वाली कोठी में एक कमरा लम्बा चौड़ा था। उसी में 'दरबार' की योजना की गई थी। एक ऊँचे चबूतरे पर भी एक और छोटा सा चबूतरा था। उस पर दो कुर्सियां थीं। उन पर एलिस और गार्डन जा बैठे। नीचे वाले चबूतरे पर आमने सामने दो कुर्सियां पड़ी हुई थीं। एक पर डनलप बैठ गया। दूसरी खाली थी। चबूतरे के नीचे एलिस का पेशकार खड़ा था।

थोड़ी देर में बस्ती के बड़े आदमी, सेठ, साहूकार इत्यादि आए और प्रणाम कर कर के खड़े हो गए। उनमें नवाब अलीबहादुर भी थे।

एलिस ने पेशकार को इशारा किया। वह नवाब अलीबहादुर को चबूतरे के पास लिवा लाया। उन्होंने फिर झुक कर प्रणाम किया। एलिस ने उनको नीचे वाले चबूतरे की खाली कुर्सी पर बिठला लिया।

नवाब साहब की बांछें खिल गईं।

पेशकार ने बस्ती के सब लोगों को फ़र्श पर लगी हुई कुर्सियां पर बिठलाया।

एलिस खड़े होकर बोला, 'हमने अपना काम कप्तान गार्डन साहब बहादुर को सौंप दिया है। कमिश्नर साहब बहादुर अभी हम लोगों को हुक्म दे गए हैं कि आप लोगों की और प्रजा की भलाई पर खूब ध्यान दिया जाय। आप लोगों की कुशल-क्षेम हम लोगों की चिन्ता का दिन रात कारण रहेगा। खूब बेखटके रोज़गार करिए। यहां से बम्बई तक अमन चैन क़ायम है। चोर उचक्कों को कुचलने के लिए हमारे हाथ में बहुत बड़ी ताक़त है। आप अपने अपने धर्म का पालन, दूसरों को नुक़सान पहुंचाए बग़ैर, चाहे जैसा करिए। हमको उससे कोई सरोकार नहीं। हालांकि हम समझते हैं कि हमारा ईसाई धर्म सर्वश्रेष्ठ है। बहुत जल्दी मदरसे खोले जायंगे। आपकी भाषा के साथ साथ अंग्रेज़ी भी पढ़ाई जावेगी, जिससे आप लोगों की सन्तान विलायत की अच्छी बातों को भी जान सके। अच्छे पढ़े लिखे हिन्दुस्थानियों को बड़ी बड़ी नौकरियां भी दी जावेंगीं, जिससे आप लोग शासन में हाथ बटा सकें। अदालत क़ायम कर दी गई हैं। सब लोग बिना संकोच के इन अदालतों में अपनी फ़रियाद पेश कर सकते हैं। न्याय किया जावेगा। किसी के साथ रियायत न की जावेगी। अपराधियों को दंड किए जावेंगे वे कठोर होते हुए भी अमानुषिक नहीं होंगे—किसी का भी हाथ पैर नहीं कटवाया जा सकेगा किसी को भी बिच्छुओं से नहीं कटवाया जा सकेगा। आप लोग सुखी हों, हम अंग्रेज़ केवल यही चाहते हैं। आप लोगों में से किसी को कुछ कहना हो तो कह सकते हैं।'

एलिस बैठ गया। झांसी के उपस्थित लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

एक साहूकार मगन गन्दी बोला, 'हुजूर से हमको केवल एक विनती करनी है। हमारे देशमें पहले कभी गाय नहीं काटी गई। मुसलमान बाद-शाहों ने भी कभी इस बातको नहीं होने दिया। आपकी अमलदारी होते ही इसका आरम्भ हो गया। इसको बंदकर देना चाहिए, आप शक्तिशाली हैं।

एलिस ने बैठे बैठे ही कहा, 'आपकी बस्ती में तो यह जानवर नहीं काटा जाता—सिर्फ छावनी में खाने वालों के लिए विवश होकर ऐसा किया जाता है।'

मगन गन्धी बैठ गया! उसने अपनी आँख का एक आँसू पोंछा।'

एलिस ने धीरे से गार्डन से कहा, 'ए सैन्टीमैन्टल फूल (एक भावुक मूर्ख।)

अलीबहादुर ने एलिस और गार्डन की ओर ताका, जैसे कुछ कहना चाहते हों। उन्होंने अनुमति दी।

अलीबहादुर बोले, हम लोग परमात्मा को धन्यवाद देते हैं, कि महान कम्पनी सरकार का राज्य हो गया है। हमारे हाकिम बहुत नेक हैं। वे शहर और इलाके का बहुत अच्छा, बेमिसाल बन्दोबस्त कर रहे हैं। सब लोग चैन से अपने घर सोते हैं। चोर, उठाईगीरे लापता हो गए हैं। किसी को कोई कष्ट नहीं। अब मदरसे और पाठशालाएँ खुलेंगी। सारा देश झकाझक हो जावेगा। आप लोगों का व्योपार बढ़ेगा और आप मालामाल हो जावेंगे।'

अलीबहादुर बैठ गए।

पीछे की कुर्सी पर बैठा हुआ एक सेठ हँसना चाहता था, परन्तु उसकी हँसी मुस्कराहट में परिवर्तित हो गई। एलिस और गार्डन ने देख लिया। गार्डन ने दरबार को समाप्त करने के लिए धीरे से अनुरोध किया। एलिस ने दरबार को समाप्त कर दिया।

वह 'पूर्वीय दरबार' इत्रपान की अनुपस्थिति से विशिष्ट था। सेठ सहूकार कोरे कोरे, फीके घर लौट आए।

सब लोगों के चले जाने पर एलिस ने गार्डन से कहा, 'स्कीन की मार्फत आज की काररवाई की सूचना लैफ्टिनेंट गवर्नर के पास आगरा भेज देना।

अलीबहादुर चतुर और प्रभावशाली आदमी है। इसको हाथ में रखना। ठाकुर मुश्किल में दबेंगे, परन्तु उनको दबाना है अवश्य। यदि

इनकी जाति के कुछ लोगों को पुलिस का थानेदार बना सको, तो अच्छा होगा। रानी अगर बुलावे तो चले जाना, परन्तु उसको कोई वचन न देना, क्योंकि उसके मामले में अब और कुछ नहीं हो सकता। मदरसों के खोलने की जल्दी मत करना। नौकरियां देने में हिन्दू-मुसलमानों का लाभकारी समीकरण रखना और यथाशक्ति दोनों को उनके अलग अलग हक़ समझाते रहना।

गार्डन बोला, 'मैं मूर्ख नहीं हूं। मैंने शिक्षा-नीति के सम्बन्ध में जो बात कही थी वह केवल यह देखने को कि स्कीन कितने गहरे पानी में है।'

एलिस—'स्कीन खुर्राट है रे।'

[३६]

कप्तान गार्डन डिप्टी-कमिश्नर 'बहादुर' का 'बन्दोबस्त' 'बहादुरी' के साथ चला। जागीरें ज़ब्त हुईं, ज़िमीदारियां क़ायम हुईं। मन्दिरों को सेवा-पूजा के लिए जो जायदादें लगी थीं वे खत्म हुईं। पुजारियों को, पूजकों को यह बहुत अखरा। अर्ज़ी पुर्ज़ियां कीं। बङ्गलों पर माथे रगड़े—एक न चली। गार्डन की दृढ़ता ने चोर-डाकुओं से लेकर पुजारियों तक के होश ठिकाने लगा दिए। हर बात में अर्जी और अर्जीनवीस का दौरदौरा बढ़ गया। क़ानून की प्रतिष्ठा के लिए वकीलों को आदर मिला। पहले कोई परीक्षा इस पेशे के लिए जारी नहीं की गई थी। वकालत की सनद डिप्टी-कमिश्नर 'अता' किया करता था—ठीक उसी तरह जैसे ज़िमीदारी या नौकरी 'अता' होती थी। होशियार लोगों ने झटपट अंग्रेज़ी क़ानून, अदब, ढङ्ग सीखा और आगे चलकर बिना उनके अदालत का पत्ता भी न हिला। इस वर्ग ने उस युग में सब प्रकार की निष्ठाओं के ऊपर क़ानून की निष्ठा को बिठलाने में जानें-अनजानें सहायता की। केवल यह एक ऐसा अंग्रेज़ी संस्कार है जिसके प्रति हिन्दुस्थानियों की आत्मगत भावनाओं में श्रद्धा होनी चाहिए थी, परन्तु जिस प्रेरणा और जिस वातावरण में होकर और जिन उपकरणों के साथ न्याय का यह साधन आया था, वे सब हिन्दुस्थानियों को क़तई अच्छे नहीं लगे। और इसीलिए क़ानून भी अखरा।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अंग्रेज़ों ने क़ानून की प्राण-प्रतिष्ठा हिन्दुस्थान के न्याय-मन्दिर में की हो सो बात नहीं थी।

देश में पूर्ण शान्ति हो, अंग्रेज़ों का अधिकार सदा-सर्वदा इस देश में बना रहे और अंग्रेज़ी व्यापार, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें, बस इसी वृत्ति से प्रेरित होकर क़ानून बनाए गए और चलाए गए। गवर्नर-जनरल से लेकर पटवारी और चौकीदार तक क़ायदा-क़ानून में बँधकर अपना अपना काम करते चले जायँ, अनुशासन में शिथिलता न आने

पाते। तभी तो अंग्रेज़ी राज्य निर्विघ्न चल सकता था। उन लोगों ने हिन्दू नरेशों और मुसलमान बादशाहों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े-गुने थे, इसलिए वे अपने शासन को उन सब गढ्ढों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौक़ा पाते ही उसको ढकेल दिया करते थे।

समय समय पर गार्डन शहर के बड़े आदमियों को मुलाक़ात के आकर्षण देता रहा। चिरौरी करना तो वे जानते ही थे, इसकी भी करते थे; परन्तु जब वे इसके सामने झुकते थे उनकी रीढ़ में दर्द हो उठता था और माथे पर बल पड़ जाते थे। घर आकर लाभ-हानि को आंकने के साथ वे साहब की हेकड़ी पर जलते थे और अपनी चिरौरी पर हँसते थे।

रानी को भी समाचार दे आते थे। वे चुपचाप सुन लेती थीं और उनके बाल-बच्चों के समाचार विस्तृत ब्योरे के साथ पूछ लेती थीं। अन्य कोई बात न कहने का उन्होंने अपने मन पर बन्धेज कर रक्खा था।

शहर वाले महल के ठीक सामने राजकीय पुस्तकालय था। वह उन्हीं के हाथ में था। पुस्तकालय के पीछे एक ढाल था और ढाल के नीचे उनका सुन्दर बड़ा बाग़।* इस बाग़ में वह घुड़सवारी इत्यादि व्यायाम किया करती थीं। नगर की जो स्त्रियां उनके पास आती थीं, उनको वह बड़ी निष्ठा के साथ इसी बाग़ में कसरतें सिखलाती थीं। अब तो सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई इतना सीख गई थीं, कि दूसरों को सिखाने में रानी को इनसे बड़ी सहायता मिलने लगी। फिर भी रानी सोचती थीं कि अश्वारोहण और शस्त्र-चालन में मैं सर्वश्रेष्ठ नहीं हुई हूँ।

पुरानी लड़ाइयों के नकशे उनके महल में थे। वे उनका बारीकी के साथ अध्ययन करती थीं। बनावटी लड़ाइयों के नकशे काग़ज़ पर बनातीं और बिगाड़तीं। अपनी सहेलियों के साथ भिन्न भिन्न प्रकार की अनेक युद्ध-परिस्थितियों पर वाद-विवाद करतीं। उनको पहाड़ियों पर अश्वारोहण

---

* यह बाग़ अब हार्डीगंज हो गया है।

का शौक़ हुआ। झांसी के आस पास पहाड़ियां हैं ही, उस समय जङ्गल और विषम स्थल भी थे। रानी तेज़ी के साथ सहेलियों सहित इन पर अश्वारोहण करतीं। झांसी के आसपास की भूमि का उनको राई-रत्ती परिचय प्राप्त हो गया। इस भौगोलिक परिचय के क्षेत्र को वे निरन्तर, अनवरत बढ़ाती रहती थीं। जो स्त्री-पुरुष उनके पास भेंट के लिए आते उन सबसे कहतीं—

'शरीर को इतना कमाओ कि फ़ौलाद हो जावे, तभी मन दृढ़ता पूर्वक भगवान की ओर जायगा।'

उनका कसरतों का शौक़ शीघ्र विख्यात हो गया। अमीरखां, वज़ीरखां दो नामी उस्ताद उनको मिले। बाला गुरू भी बिठूर से आए और मल्लविद्या के सूक्ष्मतम दाव पेंच बतला कर चले गए। नरसिंहराव टौरिया के नीचे दक्षिणियों के मुहल्ले में, वे एक अखाड़ा जारी कर गए। रानी कुश्ती का अभ्यास अपनी सहेलियों के साथ करती थीं। तीर, बन्दूक़, छुरी, बिछुआ, रेकला इत्यादि चलाने में पहले दरजे की श्रेष्ठता उन्होंने अमीरखां, वज़ीरखां के निर्देशन से प्राप्त की—ऐसी और इतनी कि उनकी कुशाग्रबुद्धि, शक्ति और हस्त-कुशलता पर वे दोनों नामी उस्ताद विस्मय में डूब जाते थे। वे जानते थे कि रानी उद्दण्ड प्रकृति की हैं, इसलिए कभी कभी लगता था कि हथियार चलाने या परीक्षा के लिए, ललकार न बैठें। यह उनका भ्रम था। रानी का बाह्य रूप प्रचण्ड तेज से पूर्ण था, परन्तु अन्तर बहुत कोमल और उदार।

इस प्रकार महीनों पर महीने बीत गए।

एक दिन तात्या टोपे आया। रानी की सेना बहुत दिन पहले समाप्त कर दी गई थी, परन्तु सैनिक और उनके नायक, अपने कौशल को न भूले थे। और न उनका स्वाभिमान ग़ारत हुआ था।

मुहम्मद ज़मांखां अपने को कर्नल अब भी कहता था, अठवारे-पखवारे रानी को वह प्रणाम कर आया करता था। उसी की हवेली के

एक भाग में तात्या पूर्ववत ठहरा। रात के आठ बजे के बाद तात्या रानी के पास पहुँचा। वे तीनों सहेलियां उनके साथ थीं। अबकी बार तात्या ने जो रानी को देखा, तो बहुत सतेज पाया।

कुशल वार्ता के बाद बातचीत हुई।

'अबकी बार राजस्थान, पन्जाब इत्यादि भी घूमें ?' रानी ने पूछा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'अबकी बार बहुत घूमा हूँ और एकाध जगह तो पकड़े जाने की नौबत आगई।' वे सब सतर्क होकर सुनने लगीं।

तात्या कहता गया, 'मैं अपना हाल राजपूताने से आरम्भ करता हूँ। बड़े बड़े राज्य जैसे जयपूर, जोधपूर, बीकानेर इत्यादि किसी विशेष पक्ष में नहीं। तटस्थ से हैं परन्तु सब कहते हैं कि झांसी के साथ अंग्रेज़ों ने बेईमानी की। हम लोगों के प्रति उनका भाव उदासीन है। इसके लिए हमारा उनका. दोनों में से किसी का, दोष नहीं है। हम लोग एकछत्र स्वराज्य स्थापित करना चाहते थे और वे लोग अपनी अपनी अलग स्वतन्त्रता की धुन में थे। राजपूताने में एकाध ठिकाना ऐसा भी है जो महाराष्ट्र नाम से ही अप्रसन्न है, परन्तु हिन्दुस्थान की स्वाधीनता के लिए उपयुक्त अवसर आने पर अपना सर्वस्व होमने के लिए तैयार है। लेकिन वहा के अधिकांश राजा अपने को, अंग्रेज़ों की सहायता के कारण ही, निरापद समझते हैं, इसलिए न अपने जागीरदारों की परवाह करते हैं और न प्रजा की। जैसा ढर्रा चला आया है, मज़े में उसको चालू रखने के पक्षपाती हैं। अच्छे नेतृत्व की हीनता में जनता जीवन के साधारण उद्देश्यों में ही लिप्त है। ऐसी अवस्था में वहां से कोई आशा नहीं करना चाहिए। परन्तु यह विश्वास है कि वहां की सेना अपनी सेना का साथ देगी। पन्जाब का हाल कम आशाजनक है। रणजीत सिंह का पन्जाब, अंग्रेज़ी इलाक़े और पांच रियासतों में विभक्त होगया है। इन रियासतों के राजा, हाथ आई रोटी को किसी प्रकार भी फेकने

को तय्यार नहीं। जनता नेता-विहीन है, इसलिए विवश सी है। दिल्ली का बादशाह बहादुरशाह वृद्ध है परन्तु उसकी बेगम तेजस्वी है। मुसलमान लोग बादशाह के नाम पर बलिदान होने को तैयार हो सकते हैं। मैं कई प्रभाव शाली मुसलमानों से मिला। वे कहते हैं कि हिन्दुस्थान में फिर बादशाहत क़ायम करो। मैंने कहा, 'स्वराज्य और बादशाहत का सामन्जस्य हो सकता है। जब उन्होंने पूछा कैसे होगा तब मैंने उनको बतलाया कि अपने अपने प्रांतों और प्रदेशों में सब लोग स्वराज्य नियुक्त करेंगे-बादशाह को उनमें दख़ल देने का अधिकार तो न रहेगा परन्तु अन्तर्प्रान्तीय बड़े कार्यों से सम्बन्ध रखने वाले हुकुमों पर मुहर बादशाह के नाम की रहेगी। सिर्फ़ दिल्ली के आसपास का प्रदेश बादशाह का खालसा रहेगा। बाहर के शत्रुओं से सब प्रान्त और प्रदेश सम्मिलित होकर स्वराज्य और बादशाह के नाम पर लड़ेंगे और इस तरह मिलकर हिन्दुस्थान का शासन चलावेंगे। पर हर हालत में पहले सब मिलकर इस बला को इस देश से टालें। बहुत लोग इस योजना से सहमत हुए, क्योंकि इस समय यही व्यवहारिक जान पड़ती है; परन्तु यहीं पर मैं पकड़े जाने से बालबाल बच गया। एक नायक डिप्टी कमिश्नर ने, जो हिन्दुस्थानी था, क़ैद कर लिया, परन्तु सिपाहियों की आंखमिचौनी में से भाग निकला। इसके बाद मैं दक्षिण गया।'

रानी ने कहा, 'तात्या तुम बहुत चतुर हो। अपनी वार्ता सुनाते जाओ। मैं ध्यान दिए हूँ।'

तात्या मुस्कराकर बोला, 'मराठा रियासतों के राजाओं का जो हाल पहले देखा था वह अब भी है। केवल एक अन्तर है। जनता सजग है और सिपाही स्वाभिमानी हैं। महाराष्ट्र की जनता अब भी स्वराज्य-मत्त है। दरिद्र और धनाढ्य, किसान, मज़दूर और जागीरदार लगभग सब एक संकेत पर खड़े हो सकते हैं।'

'और एकबार फिर', रानी ने सहसा कहा, 'वे पर्वतमालाएँ और मैदान, वे घाटियां और उपत्यकाएँ 'हर हर महादेव' से गूँज उठेंगी, काँप उठेंगी।'

रानी का सतेज मुख और भी तेजमय होगया। परन्तु वे तुरन्त मुस्करा उठीं।

बोलीं, 'तात्या, मुझको तुम्हारे सामने तक नियंत्रण के साथ बोलना चाहिए। कभी कभी मैं वाक्संयम की कमी के कारण अपने ऊपर खीझ उठती हूँ।'

तात्या ने दृढ़ स्वर में कहा, 'बाईसाहब, मेरे हृदय में, इनके हृदय में, और सब जनता के हृदय में, जो बात गड़ी हुई है, वही आपके मुँह से निकल पड़ी।'

रानी बोलीं, 'अभी उसका समय नहीं आया। समय पर ही निकलनी चाहिए। तुम आगे की वार्ता कहो।'

तात्या ने कहा, 'मैं हैदराबाद गया। नवाब, अन्य रईसों की तरह अंग्रेज़ों के आतंक से दबा हुआ है। सेना जिस पक्ष का पांसा पड़े उस ओर जायगी। जनता हमारे साथ होगी। मै मैसूर और तञ्जोर भी गया था! यही हाल वहां का भी है।'

रानी के ओठों पर वही मुस्कान आई, जिसके मृदुल मधुर आवरण में फौलादी आदर्श निहित थे।

बोलीं, 'तात्या अभी कुछ विलम्ब और है। तब तक महत्वपूर्ण स्थानों के भूगोल का बारीकी के साथ अध्ययन कर लो। कहां किस प्रकार सेनाओं को ले जाना पड़ेगा, कहां आसानी के साथ युद्ध किया जा सकता है और अपने अभीष्ट स्थान पर किस प्रकार शत्रु को एकत्र करके लड़ाई के लिए विवश किया जा सकता है। इन विषयों पर काफ़ी समय और परिश्रम खर्च करने की आवश्यकता है। इसके सिवाय बारबरदारी के जानवरों और अच्छे घोड़ों के इकट्ठा करने की योजना पर विचार करते रहने को भी मनमें बहुत स्थान मिलना चाहिए। तोपें, बन्दूकें, बारूद, गोला, गोली इत्यादि युद्ध सामग्री के बनाने वाले कारीगरों को भी, हाथ में ले लो। अंग्रेज़ी कारखानों में अपने आदमी नौकर रखवाओ। वे

लगन के साथ सब क्रियाएँ सीखें। अपनी पुरानी बारगी युद्ध परिपाटी* को गांठ ही में बांध लो। हमारा देश उस परिपाटी को छोड़कर अंग्रेज़ों से लड़ा, इसलिए भी हारा।'

तात्या—'मैंने नाना साहब और रावसाहब के प्रोत्साहन और आज्ञा से इन बातों का ध्यान रक्खा है और आपकी भी आज्ञा मिली। पूरा ध्यान दूँगा। मैं इतने महीनों पैदल अधिक फिरा हूं इसलिए मुझको देश का भूगोल बहुत अच्छी तरह याद होगया है। किसी न किसी तरह बहुत से आदमी, सामान और जानवर लेकर कहीं का कहीं पहुँच सकता हूं।'

रानी—'लड़ाइयों के नक्शों का अध्ययन किया?'

तात्या—'अच्छी तरह। पंजाब में जो लड़ाइयां अंग्रेज़ों से सिक्ख लड़े हैं उनका भी मैंने अध्ययन किया। व्यर्थ ही सिक्खों ने इतनी वीरता खर्च की। इतनी युद्ध सामग्री, ऐसी अच्छी सीखी-सिखाई फ़ौज़ यदि अच्छे नायकों के हाथ में होती, तो अंग्रेज़ सिक्खों को कभी न हरा पाते। परन्तु कदाचित् उनकी हार देश-द्रोहियो के कारण हुई है।'

रानी—'वे लोग कहते होंगे कि भाग्य ने हरा दिया?'

तात्या—'निस्सन्देह यही कहते हैं।'

रानी—'पंजाब में स्त्रियों को कुछ स्वाधीनता है?'

तात्या—'हिन्दू और सिक्ख स्त्रियों को है।'

रानी—'तब पंजाब किसी दिन फिर खड़ा होगा।'

तात्या—'परन्तु मुसलमान स्त्रियों में कम है।'

रानी—'यह खेद की बात है, किन्तु वे भी किसी दिन अपनी बहिनों के प्रभाव में आवेंगी।'

तात्या—'मैं पंजाब को भी अपनी योजना में ले रहा हूँ। जिस समय इस ओर की बाढ़ पंजाब से जोट करावेगी, उस समय पंजाब भी नीचे पड़ा न रह सकेगा।'

---

* [illegible]

रानी—'मैं सिक्खों की लड़ाइयों के नक्शों का अध्ययन करना चाहती हूँ।

तात्या ने काग़ज़ों पर मानचित्र बना बनाकर समझाया। रानी ने और उनकी सहेलियों ने भी समझा।

तात्या ने अनुरोध किया, 'हमको एक अपने विश्वसनीय जासूसी विभाग की बड़ी आवश्यकता है।'

रानी ने मुस्करा कर कहा, 'मैंने स्थापना कर दी है।'

तात्या ने उत्सुक होकर पूछा, 'कैसे? कहां?'

रानी ने उत्तर दिया, 'यहीं। मेरी यह तीनों सहेलियां काम सीख रही हैं और कर रही हैं। मैं और स्त्रियों को भी तैयार कर रही हूँ, परन्तु काम सावधानी का है, इसलिए धीरे धीरे कर रही हूँ।'

तात्या प्रसन्न हुआ।

बोला, 'झांसी में एक विलक्षण बात देखी। जो यहां निवास करता है वह तो आपका भक्त है ही, किन्तु यहां का निवासी जो बाहर चला गया है, वह भी झांसी के लिए अपना तन मन बलिदान करने के लिए प्रस्तुत है।'

रानी बोलीं, 'मुझको इसीलिए झांसी का बहुत अभिमान है।'

तात्या ने कहा, 'बाईसाहब, जब मैं ग्वालियर राज का हाल लेता हुआ हाल में दक्षिण की ओर गया, तब वहां बाजार में एक फटियल ब्राह्मण मिला। उसने मुझको पहिचान लिया। मैंने भी उसको चीन्ह लिया! वह झांसी का रहने वाला नारायण शास्त्री निकला। उसको स्वर्गीय सरकार ने, एक अपराध में देश निकाले की सज़ा दी थी......'

रानी बोलीं, 'मैंने उस अपराध के विषय में सुना है।'

तात्या ने कहा, 'नारायण शास्त्री आश्वासन देता था कि जो कुछ भी कार्य भार उसको दिया जायगा, वह प्राणपण से करेगा।'

रानी ने पूछा, 'वह जिस स्त्री को लेकर यहां से गया था, क्या उसको त्याग दिया?'

तात्या ने उत्तर दिया, 'नहीं बाईसाहब। उसने मुझसे स्पष्ट कहा।

रानी—'समाज ने उसको कैसे ग्रहण किया होगा ?'

तात्या—'वह समाज से बाहर है। मूँछ मुड़ाए, वैरागी वेश में रहता है। साथ में वह स्त्री रहती है।'

रानी—'उसको क्या काम दिया ?'

तात्या—'सेना के साथ सम्पर्क रखने का काम। नारायण शास्त्री ज्योतिष जानता है और कविताएँ गाता है। उनके प्रयोग से वह सेना के सम्पर्क में रहेगा।

रानी—'सेना के साथ घनिष्ठ सम्पर्क उत्पन्न करने को बहुत महत्व देना होगा।'

तात्या—'दे रहा हूँ।'

रानी—'तुमको, जान पड़ता है, अकेले ही बहुत काम करना पड़ता है।'

तात्या—'नहीं बाईसाहब, नाना साहब, राव साहब इत्यादि बहुत लोग काम में जुटे हुए हैं। दिल्ली और मेरठ इत्यादि प्रदेशों के अनेक मुसलमान भी प्राणों की होड़ लगाकर निरत हैं।'

रानी—'मुझको ऐसा लगता है कि शीघ्र ही कुछ हो बैठे परन्तु मैं सोचती हूं कि अधकचरी तैयारी में कुछ भी न किया जाना चाहिए। बहुत दिन हुए, मदरास की ओर कुछ सिपाहियों ने अचानक उपद्रव कर डाला था, वह व्यर्थ गया। फल यह हुआ कि मदरासी अब सेना में कम भर्ती किए जाते हैं। और अंग्रेज़ों ने अपनी सावधानी को कस कर बढ़ा लिया है।

तात्या 'कैसी भी सावधानी, कुटिलता और बुद्धि से अंग्रेज लोग काम लें, हमारी विशाल, असंख्य जनता, उनका राज्य नहीं चाहती। इसलिए राजों और नवाबों का साथ न पाते हुए भी, हमको अपने उत्साह में कमी प्रतीत नहीं होती।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, मैं जानती हूँ ।'

तात्या बोला, 'बाईसाहब, अब आपके शयन का समय आने को है—भोजन तो अभी हुआ ही नहीं है । जाता हूँ । यहां एकाध दिन रह कर चला जाऊंगा । शीघ्र ही फिर सेवा में उपस्थित होऊंगा अर्थात् जैसे ही कोई महत्व की बात सामने आई, मैं आऊँगा ।'

रानी—'भोजन अब मैं नहीं करूँगी । केवल दूध पिऊंगी नहीं तो कल के कार्यक्रम का व्यतिक्रम हो जावेगा । तुम दीवान रघुनाथसिंह और दीवान जवाहरसिंह से मिले हो ?'

तात्या—'पिछली बार आया, तब मिला था । अबकी बार नहीं मिल पाया हूँ ।'

रानी—'उनसे मिलना । रघुनाथसिंह नई बस्ती में गनपत खिड़की बाहर रहते हैं और जवाहरसिंह कटीली गांव में होंगे ।'

तात्या—'मैं इनसे मिलूंगा ।'

तात्या चला गया ।

[३७]

रानी के पास आठ बजे के लगभग तात्या, रघुनाथसिंह और जवाहर-सिंह आए। रघुनाथसिंह पुष्ट देह का बड़ा बलशाली पुरुष था। जवाहर-सिंह ज़रा छरेरे शरीर का, परन्तु काफ़ी बलवान।

प्रणाम करके तीनों बैठ गए।

रानी ने पूछा, 'दीवान जवाहरसिंह को क्या कटीली से ले आए तात्या?'

हाथ जोड़कर जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'दीवान रघुनाथसिंह का एक सांड़िनी सवार लिवा लाया। उसने प्रातःकाल के बहुत पहले ही सोते से जगाया था।'

तात्या ने कहा, 'मैं स्वयं नहीं गया। दीवान साहब से प्रार्थना की और इन्होंने तुरन्त रात को ही, सांड़िनी-सवार भेज दिया। घुड़ सवार जाता तो दीवान साहब को भी घोड़े पर ही आना पड़ता। शायद कोई सन्देह करता, इसलिए ऊँट भेजा।'

जवाहरसिंह बोला, 'श्रीमन्त सरकार, मुझे किसी का भी डर नहीं है। उस दिन के लिए तरस रहा हूँ, जब झांसी और अपने स्वामी के लिए अपना शरीर त्याग दूँ।'

रघुनाथसिंह झूमने लगा।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'आप ही लोगों का बल-भरोसा है। एक दिन आवेगा जब आप लोगों के जौहर का उपयोग होगा। तात्या ने कुछ बतलाया होगा?'

रघुनाथसिंह—'बतलाया है सरकार। थोड़े में समझ लिया। हम लोगों को ज्यादा सुनने समझने की दरकार ही नहीं है। अपनी माता के दर्शन करने थे, इसलिए चले आए।'

जवाहरसिंह—'हम लोगों को सरकार के हाथों अपनी तलवार पर गङ्गाजल छिटकवाना है।'

रघुनाथसिंह—'और अपनी माता का आशीर्वाद प्राप्त करना है।'

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'आप लोगों को मैं अच्छी तरह जानती हूँ। आप लोग सहज ही प्राणों की होड़ लगा सकते हैं। परन्तु मैं चाहती हूँ कि प्राणों को सहज ही न खोया जाय। अवसर पाने पर ही तलवार म्यान से बाहर निकले। छोटी छोटी सी बात पर न खिच जावे।'

तात्या—'इन लोगों को लाट की आज्ञा पर बहुत क्षोभ हुआ। और ये तुरन्त कुछ जवाब देना चाहते थे।'

रानी—'अंग्रेज़ों के अन्याय बढ़ते जावें तो अच्छा ही है। फिर भगवान हमारी जल्दी सुनेंगे। असल में अभी इन छोटी बातों पर खीझ कसर का निकालना, अच्छा नहीं है।'

उन दोनों ठाकुरों ने स्वीकार किया।

फिर उन दोनों ने अपनी चमचमाती हुई तलवारें, रानी के पैरों के पास रख दीं और हाथ जोड़कर खड़े हो गए।

रानी ने मुन्दर से कहा, 'गङ्गाजल ला।'

मुन्दर गङ्गाजल ले आई। रानी ने पहले जवाहरसिंह की तलवार पर छींटे दिए और फिर रघुनाथसिंह की तलवार पर।

उन दोनों ने रानी के चरण स्पर्श करके तलवारें म्यान में डाल लीं।

रानी पुलकित हुईं।

एक क्षण में अपने को संयत करके बोलीं, 'गङ्गाजल की पवित्रता को निभाना। आपस की कलह में इसका प्रयोग मत करना और न किसी कलुषित काम में।'

उन दोनों ने मस्तक नवाए।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'सरकार अब आशीर्वाद मिलना चाहिए।'

रानी का गला भर आने को हुआ। उन्होने नियन्त्रण कर लिया।

बोलीं, 'तुम्हारे हाथों स्वराज्य के आदर्श का पालन हो। सुखी रहो। और अपने पीछे ऐसा नाम छोड़ जाओ कि आने वाली अनन्त पीढ़ियां, तुम्हारे स्मरण से अपने को शुद्ध करती रहें।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'माता यह आशीर्वाद और वह पवित्र गङ्गाजल सदा हमारे साथ रहेगा।'

रघुनाथसिंह बोला, 'मां आज न जानें क्यों ऐसा भास हो रहा है मानो हम लोग अनेक युद्धों पर विजय प्राप्त कर चुके हों।'

रानी ने कहा, 'मुझको सन्देह नहीं है, युद्धों पर विजय प्राप्त करोगे।'

रघुनाथसिंह ज़रा मचलते हुए बोला, 'माता हमको आशीर्वाद तो मिल गया, अब प्रसाद और मिलना चाहिए।'

रानी ने तुरन्त मुन्दर से कहा, 'लड्डू ला मुन्दर। मैंने अपने हाथों आज ही बनाए हैं।'

मुन्दर थाल भर लड्डू ले आई।

'नहीं सरकार, इतने नहीं', जवाहरसिंह हँसकर बोला' 'हम लोग भोजन कर आए हैं।'

रानी उठीं। दोनों हाथों में एक एक लड्डू लिया।

'अपने हाथ के बनाए लड्डू अपने ही हाथों खिलाऊँगी। तात्या तुम भी खाओ', रानी ने कहा।

उन लोगों ने मुँह खोले। रानी ने आग्रह के साथ खिलाया। बचे हुए लड्डू उन तीनों सहेलियों को खिला दिए।

हाथ–मुँह धोकर वे सब बैठ गए।

रानी ने कहा, 'आप लोग अभी केवल इतना करें — नातेदारियों में अपना मेल बढ़ाएँ और उनको अपनावें। सबके काम में पड़ें और छोटी से छोटी जाति के पुरुष या स्त्री का, ग़रीब से ग़रीब, मज़दूर या किसान को, कदापि छोटा न समझें। सब जातियों और सब वर्गों को, बिना अपना उद्देश्य बतलाए, हथियार चलाना सिखलायें। इस काम के लिए काफ़ी अवसर मिल सकते हैं, जैसे शिकार, उत्सव, ब्याह, बारात इत्यादि।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'बहुत अच्छा।'

रघुनाथसिंह ने कहा 'ऐसा ही होगा।'

तात्या बोला, 'मैंने इनसे कहा है कि ऐसी कोशिश करो कि कोई नातेदार डाका न डाले। ये कहते हैं कि बड़ी मुश्किल पड़ेगी। मैंने कहा कि डाके डालने ही हैं तो खज़ानों पर डालो और थाने लूटो।'

रानी ने निवारण करते हुए कहा, 'नहीं तात्या, यह उचित नहीं है। अनाचार और अत्याचार को प्रोत्साहन एक बार मिला, कि वह बार बार सिर उठाता है। जब स्वराज्य का युद्ध शुरू होगा, तब खज़ाने और थाने सब अपने अधिकार में किए जावेंगे। अभी नहीं।'

जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह ने हामी भरी।

तात्या बोला, 'अभी तो गार्डन अपना प्रबन्ध पक्का किए जा रहा है। समझता होगा कि जनता को अपनाते चले जा रहे हैं।'

रानी ने कहा, 'जनता मूर्ख नहीं है।'

तात्या, दीवान जवाहरसिंह और दीवान रघुनाथसिंह प्रणाम करके चले गए।

रानी ने अपनी सहेलियों से पूछा, 'बतलाओ, इन दोनों में से, झांसी की स्वराज्य–सेना का प्रधान सेनानायक बनाने योग्य कौन है?'

मुन्दर—'दीवान रघुनाथसिंह।'

सुन्दर—'मैं भी ऐसा ही सोचती हूँ।'

काशीबाई—'जवाहरसिंह।'

फिर वे तीनों रानी का मुँह ताकने लगीं।

मुन्दर बोली, 'हम दोनों की बात सही निकलेगी।'

सुन्दर ने कहा' 'बाई साहब देखें क्या कहती हैं।'

काशीबाई हँसकर बोली, 'वे अभी बतला देवेंगी!'

रानी ने कहा, 'समय बतलावेगा।'

[३८]

ब्रिटिश सरकार के शासन की गति–विधि में अफ़सरों का ज़िले भर में दौरा करने, प्रत्येक दफ्तर के काम को बारीकी के साथ देखने भालने, थानों, तहसीलों और जेलखानों का निरीक्षण करने का महत्व पूर्ण स्थान था। ग्राम्यपञ्चायतों का स्थान अंग्रेज़ी अदालतें दौरे के साधन द्वारा आसानी के साथ ले सकतीं थीं। इसके सिवाय दौरे का जीवन शिकार देता था, नवीन नवीन प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन कराता था और सम्पूर्ण देहात को सम्पर्क में इन लोगों के लाता था। शासन की जड़ें मज़बूत बनती थीं।

गार्डन दौरा करता हुआ मऊ गया। निरीक्षण के लिए थाने पर पहुंचा। नायब थानेदार आनन्दराय रियासती पगड़ी बांधे, लम्बी डाढ़ी, बीच में से कंघी कर, कानों पर चढ़ाए इन्सपैक्टर और थानेदार सहित स्वागत के लिए आगे बढ़ा। आनन्दराय की वह दाढ़ी गार्डन को खटक गई। उसी समय अपनी आलोचना और आज्ञा प्रकट करना चाहता था, परन्तु ठहर गया।

निरीक्षण करने के बाद उसने आनन्दराय को बुलाया।

बोला, 'तुम डाकुओं की सी दाढ़ी क्यों रक्खे हो?'

आनन्दराय कोई उत्तर नहीं दे सका।

गार्डन ने कहा, 'इस थाने का तेरा कोई अफ़सर इस तरह की दाढ़ी नहीं रखाता। क्या अपने को इनसे बड़ा समझता है?'

आनन्दराय का कलेजा जल उठा, परन्तु मुँह से निकला, 'नहीं तो।'

'बातचीत करने की भी तमीज़ नहीं', गार्डन ने कहा।

आनन्दराय ने सिर नीचा कर लिया।

गार्डन ने हुकुम दिया, 'दाढ़ी रखनी ही है तो सीधी रख। कानों पर कभी मत चढ़ा। जा सीधी करके आ।'

आनन्दराय गया और दाढ़ी को कानों पर से उतार कर सीधी करके आ गया। चेहरा उसका बिलकुल पीला पड़ गया।

गार्डन के चेहरे पर सन्तोष की मुस्कराहट आगई। बोला, 'अब ठीक है। जाओ।'

उसी समय झांसी से एक हरकारा कमिश्नर स्कीन की चिट्ठी लेकर आया। स्कीन ने उसको समाचार दिया था कि सागरसिंह नामक डाकू पकड़ा गया है, जेल में बन्द है। जेल का निरीक्षण करना चाहता हूँ। एक दिन के लिए जल्दी आजाओ।'

गार्डन ने घोड़ा गाड़ी से झांसी की ओर कूच कर दिया। मार्ग में घोड़े बदलता हुआ दूसरे दिन झांसी पहुंच गया।

उसके दूसरे दिन जेल का मुआइना हुआ। स्कीन और गार्डन साथ थे। बख्शिशअली जेल का दरोग़ा था। बड़े विनम्र भाव से सलामें झुकाता हुआ, उन दोनों के सामने आया। दोनों प्रसन्न हुए। उनको इस प्रकार का शाही अदब क़ायदा पसन्द था।

जेल के भीतर जाकर सागरसिंह को देखा। तगड़ा फुर्तीला आदमी था। आंख तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों पर चढ़ी हुई; हथकड़ी बेड़ी से जकड़ा हुआ।

स्कीन ने पूछा, 'क्या नाम है?'

'क्या आपको मालूम नहीं?'

'तुम्हारे मुँह से सुनना चाहता हूँ।'

'कुँवर सागरसिंह।'

'कहां के रहने वाले हो?'

'रावली के—बरुआसागर से कुछ दूर।'

'तुमने यह पेशा क्यों अपनाया?'

'क्यों कि इससे बढ़िया कुछ और मिला नहीं।'

'हमारी फ़ौज में नौकरी क्यों नहीं की? अच्छा वेतन मिलता।'

'हमारे घराने में अफ़सरी होती आई है। हम कोरी सिपाहीगीरी कैसे करते?'

'तुम धीरे धीरे नायक, हवलदार और फिर सूबेदार तक हो सकते थे।'

'हमारे पुरखों की मातहती में पांच पांच हज़ार सिपाहियों ने काम किया है। सेनापतियों के घराने के होकर हवलदारी, सूबेदारी करेंगे ?'

'ओ: जनरल बनना चाहता था ?'

'क्यों, जन्डैल बनना कोई बड़ी बात है ?'

'डाकू से जनरल ! हिन्दुस्थान में सब अजीब ही अजीब होता है। जनरल से डाकू हो जाता है तब डाकू से जनरली की तरक्क़ी मामूली बात है। तुमको मालूम है सागरसिंह······'

'कुँवर कहिए—मुझको अकेले नाम से कोई नहीं पुकारता।'

'अच्छा कुँवर सागरसिंह, तुमको मालूम है कि इसी जेलखाने में फांसीघर है और मुझको फांसी देने का अधिकार है। और तुम्हारे जो क़ारनामे सुने गए हैं, वे साबित भी होंगे और साबित होने पर तुमको फांसी की सज़ा दी जावेगी। मैं कल-परसों में तुम्हारा मुक़द्दमा करके उसी दिन फांसी दे दूँगा।'

'मुझ अकेले कुँवर सागरसिंह को !'

'तुम्हारे साथ और कौन कौन हैं ?'

'बहुत से हैं।'

'नाम बतलाओगे ?'

'क्यों बतलाऊँ ? क्या पड़ी है ? मुझको कोई फ़ायदा हो नाम बतला दूंगा।'

'फ़ायदा होगा। यदि सच सच कहोगे, तो सरकारी गवाह बना लिए जाओगे और छोड़ दिए जाओगे।'

'बतलाऊँगा, परन्तु इन हथकड़ियों और बेड़ियों के बोझ के मारे और भूखों-प्यासों अक़ल बिगड़ गई है। आज ज़रा आराम मिल जाय तो कल अवश्य बतला दूंगा, पर अपने वचन पर पक्के रहना।'

'हां।'

स्कीन ने जेल–दरोग़ा को सागरसिंह का बोझ हलका करने की आज्ञा दी और अच्छे भोजन की व्यवस्था के लिए भी कह दिया।

बख्शिशअली ने उस आज्ञा का यह अर्थ समझा कि क़ैदी के साथ पूरी रियायत की जावे।

स्कीन और गार्डन उधर गए और इधर बख्शिशअली ने कुँवर सागरसिंह की हथकड़ी–बेड़ी खोल दी। केवल साधारण पहरा रहने दिया।

सागरसिंह ने कहा, 'दरोग़ा साहब, बहुत भूख लगी है! किसी ब्राह्मण के हाथ अच्छा खाना पकवा दीजिए।'

बख्शिशअली बोला, 'कुँवर साहब, मैं तो पूड़ी मिठाई से आपका थाल भर देता, परन्तु इन अफ़सरों के मारे मजबूर हूँ। अब लीजिए, कोई दिक़्क़त नहीं रही, हुकुम हो गया है।'

अच्छा खाना बनवाया गया। आदर के साथ परोसा गया। पहरेदारों के मन पर भी कुँवर साहब का आतंक छा गया।

शाम हुई। रात हुई। पहरे वाले जागते जागते, सो गए। बख्शिशअली को दिन भर के परिश्रम के मारे थकावट आई। वह भी चैन से सो गया।

कुंवर सागरसिंह को सुअवसर प्राप्त हुआ। चन्दबरदाई का दोहार्द्ध याद आया—'फेर न जननी जन्म है, फेर न खेंच कमान' और चुपचाप दीवार लांघ कर नौ–दो–ग्यारह हुआ और सबेरा होते होते ऐसे जङ्गल में पहुंच गया, जहां उसके विश्वास के अनुसार, स्कीन और गार्डन के फरिश्ते भी नहीं पहुंच सकते थे।

प्रातःकाल जेल भर में गड़बड़ी फैल गई। बख्शिशअली का होश कपूर हो गया। कभी जेल में हड़बड़ा कर पहुंचता और कभी घर में बीबी–बच्चों के पास आकर, सिर पीटता।

स्कीन और गार्डन के पास भी खबर पहुची। वे दोनों तुरन्त आए। क्रोध में डूबते–उतराते।

बख्शिशअली ने अत्यन्त विनम्र प्रणाम किया। और अत्यन्त कातर स्वर में कहा, 'हुजूर हुकुम दे गए थे कि हथकड़ी-बेड़ी खोल दो और अच्छा खाना दो। मैंने वैसा ही किया। उस पर पहरा रक्खा। फिर भी रात को वह मौक़ा निकाल कर भाग गया।'

'बेवक़ूफ़, गधे, नालायक़', स्कीन पागल सा होकर बोला, 'हमने यह हुकुम दिया था?' और तड़ाक से बख्शिशअली को चढ़े जूते की ठोल दी! वह गिर पड़ा। वैसी हालत में भी स्कीन ने उसको कई ठोकरें और लगाईं।

तब कहीं उसका क्रोध शान्त हुआ।

गार्डन ने कहा, 'बख्शिशअली, ग़नीमत समझो कि तुमको साहब बहादुर ने इतने से ही छोड़ दिया। तुमको हम बरखास्त करना चाहते हैं।' बख्शिशअली रोने लगा। स्कीन ने इशारा किया। बख्शिशअली ने नहीं देखा।

गार्डन बोला, 'अच्छा तुमको बरखास्त नहीं करता हूँ, मगर उस पहरे वाले को बरखास्त किया जावेगा, जिसके पहरे में से क़ैदी छूट कर भागा है।'

वह सिपाही बरखास्त कर दिया गया।

बख्शिशअली का अपमान पहरेदारों और क़ैदियों के सामने हुआ था। मारपीट से ज्यादा वह घोर अपमान उसको खला। सीधा घर गया और बहुत रोया। बीबी बच्चे भी रोए।

बख्शिशअली ने कहा, 'जी चाहता है कि तलवार से तुम सबको कतर कर डाल दूँ और गोली मारकर मैं भी मर जाऊं। राजा गङ्गाधर-राव ने या रानी लक्ष्मीबाई ने कभी तू-तड़ाक तक नहीं किया। आज इन गोरों ने मेरे बुजुर्गों की इज्ज़त खाक में मिला दी।'

बीबी ने रो-रोकर समझाया। मुश्किल से अपने अपमान और क्षोभ को पीकर, बख्शिशअली ने वह दिन भूखों काटा।

'कैसे मुंह दिखलाऊंगा !' यह बार बार कहता था, 'कहां तो मैं आठों फाटकों का कोटपाल था और कहां आज यह हालत हुई !' बारबार मन में आत्मघात की, बीबी–बच्चों को मार डालने की प्रतिक्रिया मन में उठती थी, परन्तु उनको रोती हुई, बेबस सूरतों को देख देखकर सहम जाता था।

अन्त में आत्मघात का निश्चय मन के किसी कोने में जाकर लीन हो गया। बख्शिशअली फिर यथावत् काम करने लगा।

जब कभी स्कीन या गार्डन जेल–निरीक्षण के लिए आता, बख्शिशअली को ऐसा लगता मानो कोई जल्लाद आया हो।

[३१]

रानी को झांसी को लगभग सब घटनाएँ, समय समय पर, विदित होती रहती थीं। स्मरण-शक्ति उनकी, इतनी विशाल थी कि लोगों को आश्चर्य होता था। बख्शिशअली वाली घटना का वर्णन उन्होंने सुना और आनन्दराय वाली का भी। यद्यपि दाढ़ी वाली घटना जेल-दरोगा की मारपीट वाली घटना के मुक़ाबले में कुछ नहीं थी, तो भी रानी को उन घटनाओं का मूल तत्व समझने में, देर नहीं लगी। जिस स्रोत से गार्डन और स्कीन को प्रेरणा मिली थी वह मूल में एक ही था—हेकड़ी, अवहेलना, उपेक्षा। रानी का प्रशस्त गौर ललाट लाल हो गया। एक आह खींचकर रह गईं।

'पेट के लिए इन लोगों को यह सब सहन करना पड़ रहा है', रानी ने सोचा।

इस तरह की अनेक घटनाएँ जब तब होती रहती थीं।

अंग्रेज़ लोग शासन को धाक (Bluff) की पुख्ता नीव पर खड़ा करते चले जाते थे। धाक रोब का रूप पकड़ती चली जा रही थी। यही रोब हिन्दुस्थानियों के मनमें अंग्रेज़ों के 'इक़बाल' की सूरत में उत्पन्न होने को था।

परन्तु यह धाक या इक़बाल हिन्दू-मुसलमानों के हृदय पर वह अधिकार नहीं कर पारहे थे जो साधू और फ़क़ीर ने ज़माने से कर रक्खा था।

रानी इस प्रकार की सब घटनाओं को ध्यान और विवध भावों से सुनती रहती थीं।

गार्डन भी शहर और अपने ज़िले का हाल लगन के साथ टटोला करता था, परन्तु अहंमन्यता और स्वार्थ के कारण वह सही स्थिति नहीं समझ सकता था। और न अधिकांश अंग्रेज़।

एक दिन गार्डन घोड़े पर सवार शहर की कोतवाली* के निरीक्षण

* यह अब पुरानी कोतवाली कहलाती है।

के लिए आ रहा था। एक साधारण हिन्दू गृहस्थ की बारात सामने पड़ गई। दूल्हा घोड़े पर चढ़ा था। यह अंग्रेज़ों के नए हिन्दुस्थानी तरीके खिलाफ़ था। उसने दूल्हा को घोड़े पर से उतरने की आज्ञा दी। बारात वालों ने प्रतिवाद किया। उसने एक नहीं सुनी। आंखें लाल-पीली थीं।

दूल्हा के पिता ने विनय की, 'हमारे यहां राजा तक दूल्हा का मान रखता है।'

'चुप' गार्डन ने धमकाया।

दूल्हा को घोड़े पर से उतरना पड़ा।

नवाब अलीबहादुर गार्डन और स्कीन के पास आया-जाया करते थे। परन्तु गार्डन के पास बहुधा। पैन्शन बढ़ने की आशा अभी जीर्ण नहीं हुई थी। उनको इधर-उधर की खबरें पीरअली दिया करता था। वे इन खबरों को गार्डन के पास पहुँचा देते थे।

पीरअली ने दीवान जवाहरसिंह के आने का समाचार नवाब साहब को दिया। परन्तु वह और तात्या जब चले गए तब।

नवाब ने कहा, 'कुछ दाल में काला है। जवाहरसिंह कटीली वाले राजा की फ़ौज के एक बड़े अफ़सर रहे हैं। बिठूर से उस आदमी का इन्हीं दिनों आना इल्लत से खाली नहीं है। क्या कर्नल ज़माखां भी इन लोगों से मिले?'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'कह नहीं सकता। अनुमान करता हूँ कि जरूर मिले होंगे। कर्नल साहब की हवेली में ही तो वह बिठूर-वाला ठहरा था। उसको टोपे कहते हैं।'

'इन लोगों में क्या बात चीत हुई या किस प्रसंग की चर्चा हुई यह जानने की ज़रूरत है।'

मैंने जानने की कोशिश की। लेकिन वे लोग दीवान रघुनाथसिंह के यहां ऐसी जगह बैठे थे कि वहां से सुनाई नहीं पड़ सकता था।'

'ये लोग रानी साहब के पास भी गए?'

'जी हां गए। और हँसते, खुश होते हुए लौटे।'

'कर्नल साहब के यहां वह टोपी या टोपे क्या किया करता था?'

'कर्नल साहब की हवेली के नज़दीक नाटकशाला वाली जूही रहती है। मुझको मालूम होता है कि उस टोपे के लिए वह चुम्बक है।'

हो सकता है। और इसीलिए शायद वह कर्नल साहब के यहां ठहरता है। मगर जवाहरसिंह का और इस टोपे का रघुनाथसिंह की भीतरी बैठक में देर तक बातचीत करना, किस मतलब से हुआ होगा! खुदाबख्श कहां हैं?'

'वह तो मोतीबाई के पीछे दीवाने हो रहे हैं।'

'मोतीबाई रानी साहब के पास कभी जाती हैं?'

'जी हां, कभी कभी।'

'उससे काम नहीं निकाला जा सकता?'

'कोशिश करूंगा।'

नवाब साहब सोचने लगे। बोले मोतीबाई को मेरे पास लिवा लाओ! गाने के बहाने से।'

पीरअली—'लेकिन वह कहीं भी नहीं गाती। बहुत कम बाहर निकलती है।

नवाब—'मेरे यहां गायगी। लेकिन खुदाबख्श को खबर न हो। खुदाबख्श से बाद में बातचीत की जावेगी।'

पीरअली अपने घर गया। देखा तो मोतीबाई मौजूद। पीरअली ने सोचा बहुत अच्छा शकुन हुआ।

आवभगत के बाद उसने मोतीबाई से बातचीत की।

मैं तो आपके यहां आने वाला था,' प्रसन्न होकर पीरअली ने कहा।

मोतीबाई ने मधुर मुस्कान के फूल बरसाए। साड़ी का घूंघट खीचा। गर्दन मोड़ी। बोली, मैं खुद आगई। आप किस लिए कष्ट कर रहे थे?'

'नवाब साहब को गाने का शौक़ हुआ है। कहा अकेले में सुन लूंगा। महफिल न होगी।

'और मैं भी यही सोचकर आई हूं। अब पर्दे में गुज़र नहीं हो सकती। खुले आम तो नाचना गाना मुझसे न होगा, चाहे भूखे भले ही मर जाऊँ! मगर नवाब साहब सरीखे बड़े आदमियों को सुना आने में मुझको कोई उज्र न होगा।'

'नवाब साहब भी यही फरमाते थे। वह महफ़िल नहीं जोड़ेंगे।'

'आप भी सुना करिए।'

'मैं तो फ़र्ज़ और शौक़ दोनों के लिए मौजूद रहूँगा। उस्ताद मुगलखां के धुरपद से जब जी भर जाए, तब आपका ख्याल और नाटक के गीत ही मौज पैदा कर सकते हैं। सच पूछिए तो न दिन भर का समय हो और न मुग़लखां साहब को सुना जा सके।'

'तो मैं कितने बजे आऊँ?'

'मेरे ख्याल में शाम का वक्त अच्छा रहेगा।'

'जी हां। लेकिन मै आठ बजे चली आऊँगी।'

'हां ठीक है। दो घण्टे क्या कम हैं।'

मोतीबाई समय नियुक्त करके चली गई।

पीरअली ने सोचा, 'उमर कुछ बढ़ गई है मगर अब भी झूमती फ़ुलवारियों सा मदमाता यौवन है।'

पीरअली ने नवाब साहब को सूचना दी।

सन्ध्या के छः बजे मोतीबाई आगई।

पर्दे की आड़ टूट गई। प्रारम्भ में ज़रा शरमाते शरमाते। अलीबहादुर ने सोचा स्वाभाविक है। उनको आश्चर्य यही था कि रङ्गमञ्च पर बिना किसी शील संकोच के नृत्य गान करने और हाव भाव दिखलाने वाली अभिनेत्री इतने दिनों और ऐसा पर्दे का ढोंग क्यों किए रही।

नवाब ने रसीलेपन से कहा, 'मैंने रङ्गशाला में आपकी कला का कमाल देखा है। समझ में नहीं आता था कि इतना लाज संकोच और पर्दा मेरे घर आकर भी आप क्यों करती रही हैं।'

'हुजूर' मोतीबाई बोली, आदत पड़ गई थी। अब भी बिलकुल नहीं छूटी है। गुज़र के लिए पर्दे को कम कर दिया है लेकिन बिलकुल तो न छोड़ सकूँगी। बहुत लोगों ने अंग्रेज सरकार की नौकरी कर ली है। मुझे तो कोई नौकरी मिल नहीं सकती, इसलिए गाने बजाने से पेट भरना तै कर लिया है। आप सरीखे कुछ रईसों को खुश करना ही मेरी गुज़र के लिए काफ़ी होगा।'

नवाब ने सोचा मोतीबाई शोख हो गई है उसकी वह शोखी उनको भली मालूम हुई।

मोतीबाई ने लगभग एक घण्टा गाया नाचा परन्तु इसके बाद न तो नवाब साहब का मन लगा और न मोतीबाई का।

नवाब साहब ने कहा, 'ज़रा सुस्ता लीजिए। फिर देखा जायगा। तब तक बात करें। पीरअली पान लाना।'

पीरअली ने पान दिए।

नवाब ने पूछा, 'कभी आप महलों में जाती हैं? काम ही क्या पड़ता होगा।'

'जाती हूँ,' मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'रानी साहब भजन सुनती हैं। उनको मीरा के भजन बहुत पसन्द हैं। रोज़ तो नहीं जाती हूँ। कभी कभी सुना आती हूँ। वहां से थोड़ा बहुत मिल जाता है।'

'रानी साहब की पैन्शन में से बहुत लोगों को सहारा मिलता है इसलिए बिचारी को मुश्किल का सामना करना पड़ता होगा।'

'ज़रूर, मगर वे बहुत उदार हैं। उनका निजी खर्च तो बहुत कम है। दान पुन्य में बहुत दे डालती हैं।'

'बहुत नेक हैं। और फिर इधर-उधर के आने जानेवाले नातेरिश्ते के लोग पुराने मुजाज़िम लगे हैं उनको भी कुछ न कुछ देनाही पड़ता होगा।'

मोतीबाई की एक आंख के कोने पर सजगता आई। दरवाज़े से सटा हुआ पीरअली कान खड़े करके सुनने लगा।

मोतीबाई ने मुस्कराकर कहा, 'आते तो बहुत लोग हैं, पर उनको बैठे लेते मैंने नहीं देखा।'

'यही क्या कम है कि रानी साहब उनको बातचीत ही के लिए काफी समय देती होगीं।'

अलीबहादुर ने सुझाव दिया' 'पूजा पत्री और सवारी कसरत में भी कई घण्टे निकल जाते हैं।'

मोतीबाई ने तुरन्त कहा, 'न मालूम कहां से दुनियां भर के कामों के लिए वे समय निकाल लेती हैं। सवारी, कसरत कुश्ती करती हैं, औरतों को सिखलाती हैं—पूजा करती हैं, गीताजी को सुनती हैं और न जानें कितने स्त्री-पुरुषों से बातचीत करती हैं। इसी बीच में, कभी कभी मेरा गाना भी सुन लेती हैं।'

'तुम्हारा गाना तो, बाई जी, देवताओं को भी लुभा लेगा,' अली-बहादुर ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा।

मोतीबाई मुस्कराई। झेंप का अभिनय किया। फिर भोलेपन के साथ बोली।'

'उन्होंने एक काम ज़रूर बहुत कम कर दिया है। शायद छोड़ ही दिया हो। रामनामी गोलियों का बनाना और अकेले में बैठकर मछलियों को खिलाना। यह काम अब उनकी सहेलियां करती हैं।'

'दासियां, बाई जी?'

'वह उनको दासियां नहीं कहतीं। सहेलियां कहती हैं।'

'वह बड़ी नेक हैं, बाई जी। अब तो उन्होंने पर्दा छोड़ दिया है। मैंने भी दर्शन किए हैं। न मालूम पहाड़ों और नदियों के घूमने में उनको क्या मज़ा आता है।'

'मुझसे भी घोड़े की सवारी के लिए कहा था।'

'सचमुच! आपने सीखा?'

'पहले तो बहुत डर लगा, पर अब थोड़ा थोड़ा सीख गई हूँ। उनकी सहेली सुन्दर बड़ी अच्छी सवार है। वही सब औरतों को सिखलाती है।

'क्या औरतों को हथियार चलाना भी सिखलाया जाता है ?'

'वह तो लाज़मी है।'

'आपने भी सीखा ?'

'सीख रही हूँ।'

'किस मतलब से ?'

'मैं तो, अपने हाथ-पैर, अभी बरसों अच्छी हालत में रखना चाहती हूँ। इसीलिए सीखती हूँ। केवल इसी मतलब से रानी साहब सवारी, कसरत इत्यादि करती हैं। और मतलब मुझको मालूम नहीं।'

'आपको घोड़े पर सवार देख कर मुझको बड़ा अच्छा लगेगा। शायद फुरेरू आ जाय। आपकी तन्दुरुस्ती, रूप, रङ्ग सब पहले से बहुत अच्छे हैं। कारण यही कसरत, सवारी वग़ैरह है।'

अलीबहादुर ने सोचा, स्त्री को पराजित करना हो तो उसकी प्रशंसा करो।

मोतीबाई पराजित सी जान भी पड़ी। मुस्कराकर, झेंपकर, सिमटकर उसने आंखों से मादकता उड़ेली।

बोली, 'हुजूर ने तो यों ही बहुत तारीफ़ कर डाली।

नवाब ने कहा, मैंने झूठ नहीं कहा।'

फिर हँसने लगे। पान खाया और खिलाया। सतर्कता के साथ पूछा, 'कौन कौन लोग रानी साहब के पास आते हैं, या आए हैं।

मोतीबाई ने अविलम्ब उत्तर दिया, 'हाल में बहुत लोग आए हैं। बिठूर से तात्या टोपे, कटीली से दीवान जवाहरसिंह, एक कोई दूल्हाजू, कोई—क्या विनय करूँ बहुतों के नाम याद नहीं आ रहे हैं। आगे याद रक्खा करूंगी।'

'ज़रूर और मुझको बतला दिया करो। रुपये पैसे की सकुच मत करना आप। जो कुछ थोड़ा सा मेरे पास है अपना समझो।'

'आपकी बहुत कृपा है। मैं अहसानों को कभी न भूलूँगी।'

'और आने-जाने वाले लोग जो कुछ बात किया करें वह भी मुझको सुना जाया करिए। अभी हाल में कोई खास बात हुई हो तो......।'

'हां कुछ बातें तो मुझको मालूम हैं। निवेदन करूं?'

'अवश्य। मैं ध्यान से सुनूंगा।'

'रानी साहब गोद लिए राजकुमार का जनेऊ करना चाहती हैं। उसी का मश्विरा हो रहा है।'

'दीवान जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से?

'जी हां। वे सब पुराने नौकरों को और सब नातेदारों को तथा शहर और देहात के रईसों को उस मौके पर बुलावेंगी। चूंकि रानी साहब को अपने पुराने आदमियों के सही पते नहीं मालूम इसलिए जो लोग आते है उनके साथ इसी प्रसङ्ग की चर्चा करती हैं। वे राजकुमार के जनेऊ पर बहुत रुपया खर्च करेंगी। हां—एक बात भूल गई। उन्होंने अपनी अपील को विलायत भिजवाया है, उसके लिए लगभग सबसे कहती हैं और ज़िद करती हैं कि सब छोटे-बड़े साहबों से मेरी सिफ़ारिश करो।'

'आगे कोई और बात मालूम पड़े तो मुझको आप ज़रूर बतलाना।'

'अपना कर्तव्य और सौभाग्य समझूंगी', कहकर मोतीबाई चलने को हुई। उसने मुस्कराकर कटाक्ष किया।

नवाब साहब ने पान दिया।

मोतीबाई ने कहा, 'मै सीधी रानी साहब के पास महल जाऊँगी। उनको एकाध भजन सुनाकर फिर घर पहुंचूंगी। यदि कोई खास बात मालूम पड़ी तो सेवा में आकर अर्ज़ करूँगी।'

पीरअली ने अनुरोध किया, 'मैं आपको महल तक पहुंचा आऊँ?'

मोतीबाई ने इनकार नहीं किया।

मार्ग की चहल-पहल कम हो गई थी, परन्तु बन्द नहीं हुई थी।

मोतीबाई ने अवसर पाकर पीरअली से कहा, 'नवाब साहब के सामने का पर्दा तोड़ दिया। अब और लोगों के सामने भी निकलने लगूंगी।'

पीरअली समझ गया। बोला, 'खुदाबख्श साहब मेरे दोस्त हैं। उनसे कहूंगा तो वह मेरा मुंह मीठा कर देंगे।'

'जी नहीं। अभी नहीं। वे बहुत दिक़ करते हैं। आपका जैसा मिज़ाज़ और क़ायदा उन्होंने नहीं पाया है।

पीरअली प्रसन्न भी हुआ और सहमा भी। 'क़ायदा' शब्द उसको खटका।

वह मोतीबाई को महल के फाटक तक पहुंचा कर लौट आया।

रानी कथावार्ता का सुनना समाप्त कर चुकी थीं। मोतीबाई ने आकर प्रणाम किया। जब सब लोग चले गए रानी ने उससे पूछा,

'क्या हाल है मोती?'

मोती ने अनुनय के साथ कहा, 'सरकार को मीरा का एक पद सुना दूँ तब कुछ निवेदन करूँगी।'

मोती ने तम्बूरे पर मीरा का एक पद सुनाया। फिर तम्बूरा जहां का तहां रखकर बोली,

'सरकार के विरुद्ध एक जासूस और पैदा हो गया है।'

रानी ने शान्त भाव से कहा, 'कौन है मोती?'

'नवाब अलीबहादुर।'

'मुझको सन्देह तो नवाब साहब पर पहले से था। क्या बात हुई?'

मोतीबाई ने ओर से छोर तक सब सुनाया।

जनेऊ के सम्बन्ध की बात को सुनकर रानी बोलीं, 'मुझको तेरी बुद्धि पर अचरज होता है मोती। मेरे मन में दामोदर का जनेऊ करने की और अपने लोगों को निमन्त्रित करके समारोह करने की बात कुछ दिन से उठ रही है। पर मैंने उसको प्रकट किसी पर नहीं किया। तूने कैसे जान लिया?'

[४०]

घर आते ही खुदाबख्श मिला। मोतीबाई ने आड़ करने का प्रयत्न किया।

खुदाबख्श ने कहा, 'मेरे सौभाग्य का सन्देशा अभी अभी पीरअली ने दिया, इसीलिए चला आया। बहुत दिनों से कान में मिठास नहीं पड़ा। एक बात सुनने को......।'

'पधारिए, कहकर मोतीबाई बैठक में चली गई।

खुदाबख्श बैठक के कौने में बैठ गया। मोतीबाई ने समादान में बत्ती जलाई और इठलाती सी बैठ गई।

उसी ने बात शुरू की।

मोतीबाई—मैं थकी मांदी हूँ। इसलिए बात जल्द समाप्त हो जाय, तो मिहरबानी होगी।'

खुदाबख्श—'जितने के लिए आया था वह तो पा लिया। अब यह विनती है कि आप घर ही में रहें और मुझे सेवा करने की इज़ाजत दें।'

मोतीबाई मुस्कराई। आंख के कोने में एक मधुर कलोल हुई और बोली, 'अर्थात् मैं आपकी क़ैद में रहूँ?'

'खुदाबख्श हर्षोन्मत्त हो गया।'

'मैं आपका क़ैदी बनकर रहूँगा।'

'इस-प्रकार की बात आपने कितनी स्त्रियों से की है?'

'खुदा जानता है। मुझको कहने की ज़रूरत नहीं।'

'मैं भी जानती हूँ। मगर एक वायदा करना होगा। ईमान को बीच में करके। मैं अस्मत इज्ज़त वाली औरत हूँ। मेरा भी खुदा जानता है।'

'मुझको मालूम है। इसीलिए इतनी बरसों सहा और आंसुओं की नदियां बहाईं।'

'आंसुओं की नदी या नदियां बहाने वालों से मैं दूर रहना चाहती हूँ।'

'मैं अपना खून बहाने को तैयार हूं।'

'उसी का ईमान लेना है।'

'ईमान देता हूं। खुदा को बीच में करता हूँ।'

'बदलिएगा नहीं।'

'बदलने की बात मन में आते ही अपनी गर्दन छुरी से रेत डालूंगा।'

मोतीबाई मुस्कराई। अपनी आंखों में उसने जादू पैदा किया।

बोली, 'नवाब अलीबहादुर की नौकरी कर सकेंगे?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, 'कर सकूँगा। आपके हुकुम से सब कुछ कर सकूँगा। वैसे किसी की भी नौकरी न करने की, टान रक्खी थी। अब प्रण तोड़ूंगा। काम क्या करना पड़ेगा? नवाब साहब या पीरअली ने आज तक नहीं कहा?'

'मैं कहती हूं,' मोतीबाई ने आदेश के ढंगपर कहा, 'आपको जासूसी का काम करना होगा।'

'जासूसी का काम! कैसी जासूसी?'

'रानी साहब के पास कौन कौन आते हैं, किस मतलब से आते हैं, क्या बात करते हैं, कौन ढंग रचते हैं, अंग्रेज़ सरकार के खिलाफ कहां क्या हो रहा है इन बातों का पता लगाना होगा। नवाब साहब इस सेवा के बदले में काफ़ी देंगे और अंग्रेज़ सरकार से दिलवायंगे। बड़े बड़े साहब से हाथ मिलाने का और अपनी तरक्क़ी करने का, आपको मौक़ा मिलेगा।'

खुदाबख्श तमतमा उठा। हिल गया। माथे की नसें फूल गईं। कंठ रुद्ध हो गया। मोतीबाई ने सन्तुष्ट होकर यह सब देखा।

खुदाबख्श मुश्किल से बोला, 'मुझको आपने बहुत कमीना समझा है। मैंने सिपाहीगीरी की है। अपने राजा की कृपाओं का मेरे ऊपर उतनाही बोझ है जितना उनकी ज्यादती का। मगर मैंने आपको ईमान हारा है। अबतक किसी उम्मेद पर जीवन को टिकाए था। अब कोई ज़रूरत नहीं। जाता हूँ। सवेरे खुदाबख्श का नाम भर बाक़ी रह जावेगा! अगर भूले बिसरे कभी बन पड़े, तो मिट्टी की कब्र पर एकाध फूल डाल देना।'

खुदाबख्श खड़ा हो गया। मुँह फेर कर जाने को हुआ। मोतीबाई ने लपक कर हाथ पकड़ लिया।

बोली, 'किवाड़ बन्द कर आइए। फिर सुनिए।'

उसने पूछा, 'कुछ बाक़ी रह गया है?'

मोती ने जल्दी से उत्तर दिया, 'बहुत।'

खुदाबख्श काँपते हुए पैरों गया। किवाड़ बन्द करने के लिए सिर बाहर निकाला। कोई खड़ा था। भाग गया। खुदाबख्श ने नहीं पहिचाना। उसने पहिचानने की परवाह नहीं की। बैठक में आकर खड़ा हो गया।

बोला, 'कहिए अब क्या बाकी है?'

'बैठकर सुनिए।'

'न! इसके लिए ईमान नहीं दिया।'

मोतीबाई हँसी। मोतियों की लड़ियां सी छुटक गईं। खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मोतीबाई ने परख लिया। वह और हँसी।

बोली, 'यदि मैं अनुरोध करूँ कि आप रानी लक्ष्मीबाई की नौकरी करें, तो आपके ईमान को कैसा लगेगा?'

'आप क्या मज़ाक़ कर रही हैं?'

'बिलकुल नहीं। मैं अपने ईमान की सौगन्ध खाती हूँ।'

'फिर वह बात कैसी कही?'

'बतलाऊँगी। पहले मेरी इस बात का जवाब दीजिए।

'रानी साहब की सेवा में तो अपना सिर चढ़ा दूंगा। मगर अब मौक़ा ही क्या आना हैं?'

'आयगा। मुझसे पक्की बात करिए।'

'पक्की ही कहता हूं। कोई अंग्रेज़ पूछे तो उससे भी कह दूंगा'

'कदापि नहीं। किसी से मत कहिएगा। नवाब साहब से बिलकुल नहीं। पीरअली से भी नहीं।'

'हूं।'

'हूँ क्या ? पक्का वायदा रानी साहब की सेवा के लिए करिए।'

'मेरी ज़बान ही क्या वायदा करेगी, मेरा रोम रोम वायदा करता है।'

'अब मुझको भरोसा हो गया। मैंने अलीबहादुर साहब की नौकरी और जासूसी के सम्बन्ध में इसलिए पूछा था कि देखूं आप कितने पानी में हैं। परीक्षा ले ली। आप सफल हुए।'

'कुछ करके दिखलाऊँगा तब कहिएगा।'

'तभी और कुछ भी कहूंगी', मोतीबाई मुस्कराई।

खुदाबख्श की हसरत जागी।

बोला, 'कभी तो कह सकूंगा कि अब मैं आपका क़ैदी हो गया।

मोतीबाई ने मुस्कराते हुए कहा, 'मगर अभी क़ैद की घड़ी नहीं आई है। जिस दिन रानी साहब स्वराज्य क़ायम करके उत्सव मनायेंगी मैं अखीरी बार नाचूंगी, और उस दिन आपकी क़ैद में हो जाऊंगी। तब तक आपकी और मेरी अस्मत—दोनों की—उस देवी के हाथों रहेगी, जो झांसी की रानी कहलाती हैं और कहलावेंगी।'

उस नर्तकी का मुखमण्डल उस समय दिव्यता से भर गया।

खुदाबख्श सिपाही था। उसका खून जोश खा गया।

मुट्ठी बांधकर बोला, 'ऐसा ही होगा बाई जी। मुझको कभी चूकते पाओ, तो मेरे मुँह पर थूक देना। महारानी साहब से कह देना कि खुदाबख्श उनका पुराना नौकर—सिपाही है, जब उसकी ज़रूरत पड़े, वे कहला भर दें। अपने सीने पर गोली लेने के लिए तुरन्त आ खड़ा होगा वेतन या भत्ते का नाम न लेना। दो वक्त खाने के लिए उन्हीं का दिया हुआ मेरे पास अभी काफ़ी है।'

'मुझको आज बहुत खुशी है', मोतीबाई ने संयत स्वर में कहा, 'मैं रानी साहब को कल ही सुनाऊंगी। मगर अर्ज़ है कि नवाब साहब और पीरअली से मत कहना।'

खुदाबख्श बोला, 'मुझको किसी से कुछ नहीं कहना है। यक़ीन रखिए। परन्तु पीरअली के बाबत अन्त में आप देखेंगी कि आपका भ्रम था।'

खुदाबख्श चला गया।

दूसरे दिन रानी को मोतीबाई ने सब समाचार दे दिया।

[४१]

रानी जब से घुड़सवारी के लिए बाहर निकलने लगीं, तब से वह मर्दानी पोशाक करने लगी थीं—सिर पर लोहे का कुला, ऊपर साफा, उसका एक खूंट पीछे फहराता हुआ। कंचुकी के ऊपर सटा हुआ अंगरखा। पैजामा। अंगरखे और पैजामों पर कसी हुई पेटी। दोनों बग़लों में पिस्तौलें और दोनों परतलों में तलवारें। कभी कभी इतने सब हथियारों के अलावा नेज़ा भी हाथ में साथ लेती थीं। इस पर भी घोड़े को बहुत तेज़ चलानेमें कसर नहीं लगाती थीं। उनको काठियावाड़ी घोड़े अधिक पसन्द थे और सफ़ेद रङ्गके खास तौर पर। घोड़ों की उनको विलक्षण पहिचान थी।

उन्हें कुला लगाकर साफ़ा बांधने में एक असुविधा अवगत होती थी—लम्बे केशों की। विधवा थीं इसलिए महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार बाल मुड़वाने में कोई बाधा न थी। अपने केशों का कोई मोह था ही नहीं। सोचा काशी जाकर मुण्डन करा लें। पर्यटन हो जावेगा। और काशी में बैठकर उस ओर की राजनैतिक परिस्थिति का आभास मिल जावेगा। एक भावना और थी—जिस घर में माता ने जन्म दिया था उसके दर्शन भी मिल जायंगे।

खोज करने पर मालूम हुआ कि बिना डिप्टी कमिश्नर की अनुमति के काशी यात्रा के लिए नहीं जा सकतीं।

अनुमति के लिए गार्डन को अर्ज़ी दी गई। उसके पास दीवान जवाहरसिंह इत्यादि के रानी के पास आने जाने की खबरें पहुंच चुकी थीं। वह चिढ़ा हुआ था। दूसरे अपने अधिकार को करारे रूप में लाने का अभ्यासी था। काशी यात्रा के लिए जो अर्ज़ी दी गई थी वह उसने अस्वीकृत कर दी।

जिसने सुना उसी के जी को चोट लगी।

रानी ने प्रण किया, 'मैं केश मुण्डन तभी कराऊंगी, जब हिन्दुस्थान को स्वराज्य मिल जावेगा, नहीं तो स्मशान में अग्निदेव मुण्डन करेंगे।'

उनकी यह भीषण प्रतिज्ञा उनकी सहेलियों को मालूम थी। वे सब इस प्रतिज्ञा पर प्रसन्न थीं—उनको पसन्द न था कि ऐसे सुन्दर बालों का कुसमय क्षय हो।

दामोदरराव रानी के प्रगाढ़ स्नेह में पल रहा था, बढ़ रहा था। कोई निज माता अपने गर्भ-प्रसून को इतना प्यार न करती होगी जितना वह दामोदरराव को चाहती थीं।

समय अपनी प्राकृतिक गति से चला जा रहा था। इसी में रानी की योजना भी संवृद्ध और पुष्ट होती जा रही थी। कहां क्या हो रहा है, इसके समाचार उनको निरन्तर मिलते रहते थे। वह युद्ध सामग्री तैयार करने वाले कारीगरों को एकत्र करने की योजना पर, बहुत ज़ोर देती थीं—और यह हो रहा था।

इस ओर रानी के जासूस और विश्वसनीय सहायक काम कर रहे थे। उस ओर नाना और राव के तथा बहादुरशाह और अवध के साथ सहानुभूति रखने वालों के लोग, अपने अपने काम में जुटे हुए थे। बिहार, बंगाल में भी स्वाधीनता की आग सुलग रही थी। महाराष्ट्र, मध्यदेश, बुन्देलखण्ड, उत्तर हिन्द तो मानो उसके पलने ही थे। यहां तो स्त्रियां भी काम कर रही थीं।

रानी ने देखा कि लोगों को इकट्ठा करने का समय आ गया है। वह जानती थीं कि ऐन मौक़े पर तुरन्त इकट्ठा करना दुष्कर होगा, इसलिए वे सबको एक एक बार एकत्र करके, तब योजना को आगे बढ़ाना चाहती थीं। हर काम की एक योजना वे पहले बना लेती थीं, तब व्यवस्था के साथ उसको व्यवहार का रूप देती थीं।

इसलिए उन्होंने दामोदरराव का जनेऊ करना निश्चित किया और उसके समारोह में जगह जगह से प्रमुख लोगों का, जमाव करके, आगे के क़दम की बाबत परामर्श करना तै किया।

इस काम के लिए एक लाख रुपये की ज़रूरत थी। नक़द रुपया उनकी गांठ में न था।

दामोदरराव छः वर्ष का हो चुका था। सातवीं लग गई। इस वर्ष में जनेऊ होना ही चाहिए। योजना भी इस स्थिति में आ गई थी कि इस वर्ष में एक महान सम्मेलन का किया जाना ज़रूरी था।

मोतीबाई इत्यादि ने समाचार दिया कि अंग्रेज़ों की हिन्दुस्थानी सेना में; काफ़ी असन्तोष फैल गया है।

रानी ने पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त शुधवाया। मुहूर्त निकलने पर गार्डन को अर्ज़ी दी कि दामोदरराव के नाम से जो छः लाख रुपया ख़ज़ाने में जमा है, उसमें से उसके जनेऊ के लिए एक लाख रुपया दे दिया जावे।

पहले तो गार्डन की इच्छा अर्ज़ी को तुरन्त खारिज कर देने की हुई। फिर सोचा हिन्दुओं की यह कोई ज़रूरी रस्म है, इसलिए अन्तिम निर्णय को स्थगित कर दिया।

उसने लोगों से पूछ ताछ शुरू कर दी। अलीबहादुर से खोजा। उन्होंने कहा, 'ब्राह्मणों में यह रस्म लाज़मी है।'

सेठ साहूकारों से पूछा। उन्होंने कहा, 'अनिवार्य है।'

अन्त में फैसले को अपने पेशकार की सम्मति पर छोड़ा।

पूछने पर पेशकार ने कहा, 'हुज़ूर ऊँची जाति के हिन्दुओं में, विशेष कर ब्राह्मणों में यह रस्म किसी प्रकार भी नहीं टाली जा सकती।'

गार्डन ने कमिश्नर से, कमिश्नर ने लैफ्टिनेंट गवर्नर से पूछा। अन्त में गार्डन की मर्ज़ी पर इस शर्त के साथ छोड़ा गया कि अगर झांसी शहर के चार भले आदमी जमानत दें तो रुपया दे दिया जाय।

गार्डन ने रानी को सूचना दी, 'ख़ज़ाने में जो रुपया जमा है वह दामोदरराव नाबालिग़ का है। यदि बालिग़ होने पर दामोदरराव ने सरकार पर दावा कर दिया तो सरकार को रुपया अपनी थैली में से देना पड़ेगा, इसलिए झांसी शहर के ऐसे चार आदमियों की ज़मानत दीजिए, जिनमें मेरा मन भरे।'

रानी को इस अपमान पर जितना क्षोभ हुआ उसकी मात्रा का माप उस मानसिक बल से लग सकता है, जिसकी सहायता से रानी ने उस क्षोभ को दबाया। अपने ही रुपए के लिए 'ऐसे चार भले आदमियों की जमानत जिनमें मेरा मन भरे!'

अंग्रेजों के, केन्द्रीकरण के, गार्डन के, अहंकार की हद हो गई। झांसी की प्रमुख जनता कुछ इसी तरह सोच रही थी।

झांसी में चार क्या बावन बड़े बड़े आदमी थे। रानी की ज़मानत देने के लिए ये सब तैयार हो गए।

कुछ ने तो खुदाबख्श और दीवान रघुनाथसिंह से यहां तक कहा, 'अर्ज़ी देने की क्या अटक पड़ी थी? इतना रुपया तो हमीं लोग नज़र कर सकते हैं।'

परन्तु रानी को अपने रुपए के लिए हठ था। उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।

जो 'भले आदमी' ज़मानत देने के लिए गार्डन के सामने हाज़िर हुए, वे थे—लाला बीमा वाले, मगन गन्धी, मोती खत्री और श्याम चौधरी।

गार्डन उनको हतोत्साहित करना चाहता था।

बोला, 'सोच-समझकर काम करना। बालिग़ होने से तीन बरस के भीतर तक दामोदरराव दावा कर सकेगा।'

उन लोगों ने विश्वास दिलाया कि यदि ज़रूरत हो तो हम लोग नक़द ज़मानत दाखि़ल कर दें।

गार्डन को झेंप मालूम हुई, इसलिए उन लोगों की साधारण जमानत पर उसने रानी को एक लाख रुपया दे दिया।

नियुक्त समय पर समारोह हुआ। दूर दूर के लोग इकट्ठे हुए। झांसी की जनता की ही बहुत बड़ी संख्या थी। नवाब अलीबहादुर भी शरीक़ हुए।

शुभ मुहूर्त में दामोदरराव का जनेऊ हो गया। लोगों ने खुशी खुशी नज़र-भेंट की। काफ़ी रुपया जमा हुआ।

दावत-पङ्गत हुई। गायन-वादन और दुर्गा का नृत्य। इसके बाद चुने हुए लोगों की बैठक। रानी लक्ष्मीबाई सफेद साड़ी पहिने एक ज़रा ऊँचे आसन पर बैठीं। आसपास उनकी खास सहेलियां। ज़रा फ़ासले पर नाना साहब और उनके भाई, तात्या टोपे, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, खुदाबख्श इत्यादि।

रानी ने कहा, 'जिस सफलता के साथ आप लोगों के सहयोग से यह छोटा सा यज्ञ हुआ, उसी सफलता के साथ उस बड़े यज्ञ की पूर्ति होनी चाहिए।'

नाना बोला, 'अच्छे करीगरों और बढ़िया सामान का प्रबन्ध हो गया है। यज्ञ की सामग्री ढोने वाले पशुओं और अश्वमेघ के घोड़ों का भी इन्तज़ाम कर लिया गया है।'

तात्या—'मैं ज़रा सीधी भाषा में बात करना चाहता हूँ।'

रानी—'कर सकते हो, सब अपने ही अपने हैं। बाहर स्त्रियों का कठोर पहरा है काम की बात करके अधिवेशन को समाप्त कर दिया जावेगा।'

तात्या—'उत्तरी और पूर्वी हिन्दुस्थान में अथक काम हो रहा है। अंग्रेज़ों ने जिन कातूसों को आरम्भ में जारी किया था, प्रतिवाद को देखकर लगभग बन्द कर दिया है। परन्तु उनके कारण जो घृणा उत्पन्न हुई थी, वह बिलकुल कम नहीं हुई है। अब अंग्रेज़ हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगाए हुए परेड में नहीं आने देते, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में घोर खिन्नता फैल गई है।'

खुदाबख्श—'यहां की फ़ौज के मुसलमान सिपाहियों में भी बहुत जोश है। उनके दीन को बरबाद करने का जो काम चर्बी वाले कातूसों ने जारी किया था, वह ऐसा नहीं है, कि क़तई तौर पर बन्द हो गया हो।'

तात्या—'एक दिन था जब अंग्रेज़ों के प्रतिनिध अपने मस्तक को बादशाह के पैर रखने की जगह बतलाते थे।* अब हमारे सबके सिर उनके पायदान बनते जा रहे हैं। कलाकारों की कला, कारीगरों का शिल्प और अनेक लोगों की रोटी गई। अब धर्म ईमान की बारी आई है। देश और जनता की रक्षा का समय आगया है।'

रानी—'मेरी समझ में अभी थोड़ा काम और करने की आवश्यकता है।'

रघुनाथसिंह—'आपकी जो आज्ञा हो। वैसे हम लोग बुन्देलखण्ड से ही आरम्भ करने को तैयार हैं।'

रानी—'अभी नहीं। ओर्छा, अजयगढ़ और छत्रपूर के राजा बालक हैं। इन राज्यों के प्रबंध पर अंग्रेज़ों की छाप है। इसके सिवाय क्रांति का लग्गा लगवाते ही डाकू और बटमार बढ़ जावेंगे। हमारी जनता ही इन उपद्रवों से पीड़ित होगी। जब तक हमारे पास मज़बूत सेना नहीं हो गई है, तब तक हम लोगों को प्रारम्भ नहीं करना चाहिए। अंग्रेज़ों को परास्त करने के साथ साथ इन जन-पीड़कों का भी तो दमन करना पड़ेगा, अन्यथा जनता का क्षोभ अंग्रेज़ों के सिर से टलकर हम लोगों के सिर आवेगा। हिन्दुस्थानी सैनिकों को अपनाने का क्रम जारी रखना चाहिए। जब मन भर जावे, तब हां कही जावेगी।'

रानी की इस सम्मति से लोग सहमत हुए।

---

*सन् १९१२ में जान रसल का भेजा हुआ पत्र। परिशिष्ट देखिए।

[४३]

मऊ छावनी से लेकर मेरठ छावनी तक और मेरठ छावनी से लेकर दमदम बारकपूर की छावनियों तक, विविध प्रकार के लक्षण दिखलाई पड़ने लगे। मऊ, मेरठ, बारकपूर इत्यादि छावनियों में साधू और फ़क़ीर, विविध प्रकार के वेश और रूपक धारण करके, क्रांति का कार्य करने लगे।

ग्वालियर की छावनी में नारायण शास्त्री उस मिहतरानी को गाना गवाते ले गया। सिपाही उसके नाचने-गाने पर रीझे। समाप्ति पर पैसे देने लगे।

नर्तकी ने पूछा, 'आपलोग सेंधिया सरकार के नौकर हैं या अंग्रेज़ के?'

'अंग्रेज़ के।'

'अंग्रेज़ का निमक खाने वालों का पैसा नहीं छूती।' और वह इठला कर चली गई।

उन लोगों ने नारायण से कहा, 'यह कौन है? बड़ी घमंडिन मालूम होती है।'

नारायण—'है तो बैरागिन, परन्तु झांसी की बाईसाहब के राज्य की लड़की है।'

'उनका राज्य तो चला गया।'

'अंग्रेज़ों ने बेईमानी से ले लिया। फिर लौटेगा।'

छावनियों के सिपाही समय पर चुपचाप परेड पर जाते। चुपचाप ड्यूटी करते, परन्तु भन्नाए हुए।

अंग्रेज़ों को ऊपर की तह चिकनी और समतल दिख रही थी। नीचे के कोलाहल का उनको पता न था। हिन्दुस्थान एक सपने में उनकी चुटकी में आया, सपने में ही चुटकी में बना रहेगा और यह सपना कभी न टूटेगा। वे लोग इस बात को नहीं जानते थे, उन्होंने कभी इस बात को नहीं जाना, कि हिन्दुस्थान जीता भले ही आसानी के साथ जावे, लेकिन बहुत समय तक इसको मुठ्ठी में रक्खे रहना असम्भव है। बाहर सेआए हुए शासकों को इस देश को पराजित करने से बहुत समय नहीं

लगा। शान के साथ अपना अभिषेक करवा लिया। राजगद्दियां भी तोड़ी-मरोड़ीं, परन्तु शासक की हैसियत से उनका इस देश में रहना छावनी का प्रवास मात्र रहा।

असल में, जनता को रुष्ट, असंतुष्ट और क्षुब्ध करके यहां तो क्या संसार के किसी कोने में कोई भी राज्य नहीं कर सकता। फिर इस देश की जनता व्यक्तित्व-मग्न और महांसंस्कृतिमयी है। बहुत दिनों तक कदापि विदेशी शासन को सहन नहीं कर सकती।

इसीलिए उसकी अन्तरात्मा आसानी के साथ, उस समय के स्त्री-पुरुष नेताओं की बात सुन रही थी और मनमें गांठों पर गांठें बांधती चली जाती थी, कि कब अवसर मिले और सिर के बोझ को उतार कर फेंक दे।*

गार्डन और स्कीन इत्यादि अंग्रेज़ सोचते थे कि यहां के लोग दब्बू हैं—जनता एक भेड़ियाधसान है; थोड़ा वेतन पाने वाले बहुसंख्यक हिन्दुस्थानी, मोटी रक़में समेटने वाले अल्पसंख्यक अंग्रेज़ों को सदा अपना सहयोग देते रहेंगे।

अंग्रेज़ों का सब स्वार्थ-कार्य शास्त्रीय और वैज्ञानिक ढँग पर चल रहा था। केवल चल नहीं रहा था किसी ढँग पर भी वह था मानव प्रकृति का, भारतीय जन-प्रकृति का अध्ययन और विश्लेषण।

रेल तार जारी हो गए। नहरें खुदीं, तालाब सुधारे गए। डाकुओं और बटमारों का दमन हुआ। किसान सुभीते से अपनी खेती काटने लगे। ब्योपारी अपना रोज़गार करने लगे। मन्दिरों, मसजिदों में लोग अपने विश्वास के अनुसार श्रद्धा भेंट कर उठे। कुछ पाठशालाएं और मदरसे भी खुल गए। सड़कें बनीं। उन पर पेड़ लगे। पन्चायतें टूटीं। अदालतें खुलीं। क़ानून का बर्ताव हुआ, परन्तु अंग्रेज़ों ने यह न समझा, कि हिन्दू मुसलमान मन ही मन मना रहे हैं, कि हमारा खोया हुआ अधिकार फिर कब और कैसे हमारे हाथ में आवेगा।

---

*परिशिष्ट में सर जान मालकम का वक्तव्य देखिए।

मध्यान्ह

[४४]

सं० १९१३ की दिवाली की गई। रीति निभाने के लिए लक्ष्मी जी का पूजन हुआ। दिए जलाए गए। नगर का बाहरी रूप जगमगा उठा। क़िले पर भी कुछ दिए हिन्दू मुसलमान सिपाहियों ने जलाए। लक्ष्मीबाई के शहरी महल पर, रोशनी हुई, परन्तु हृदय सुनसान था—वहां कोई जगमगाहट न थी।

अब की बार अंग्रेज़ों के बङ्गलों पर दिए नहीं जलाए गए, क्योंकि अंग्रेजों ने सोचा इस सम्पर्क से ईसाइयत को धब्बा लग जाने का अन्देशा है। इससे जनता की धारणा और और पक्की होगई—अंग्रेज़ हमारे नहीं हैं, हमारे कभी हो ही नहीं सकते।

मकान के बाहर दिए धरने की रस्म के बाद जूही मोतीबाई के घर आई। जूही यौवन के बसन्त में थी। बड़ी आंखों में चमक। नीचे देखने के समय लम्बी बरौनियां लाज के पांवड़े से डालने वालीं। परन्तु कुछ उदास थी। मोतीबाई ने नौकरानी को पौर में बिठला दिया और जूही के साथ एकान्त में बातचीत करने लगी।

पूछा, 'आज उदास क्यों हो? क्या बात है?'

जूही ने उत्तर दिया, 'वे आए हुए हैं—बिठूर वाले सरदार।'

मोतीबाई—'तब तो तुम्हें प्रसन्न होना चाहिए था। देखती हूं बिलकुल उल्टा। मुँह लटका हुआ।'

जूही—'आज पहली बार ही बात हुई और रूखे बोले।'

मोतीबाई—'किस प्रसङ्ग पर।'

जूही—'उन्होंने अपने निवास स्थान पर बतलाया। पहले कभी ऐसा नहीं हुआ था। मुझे संकोच हुआ। परन्तु हिम्मत करके चली गई। सामने पहुंचने पर मैं शरम में डूबने लगी। मुश्किल से मुस्कराकर हाथ जोड़े और चुपचाप खड़ी हो गई।'

मोतीबाई—'अभिनय तो बुरा नहीं था?'

जूही—'अभिनय ही तो नहीं था—अभिनय करना चाहा, नहीं कर सकी। मैं अपने को भूल गई। उन्होंने भौंह सिकोड़ कर कहा क्या सेना में जाकर ऐसी ही खड़ी हो जाती हो! मैंने तब कुछ निवेदन किया।

मोतीबाई—'वे जल्दी में होंगे। उतावली कर गए……'

जूही—मुझे तो अचरज हुआ। पहले कईबार देखा-देखी हुई थी।'

मोतीबाई—'आजकल में?'

जूही—'नहीं, कई महीने पहले जब वे कर्नल साहब के यहां आकर ठहरे थे।'

मोतीबाई—'तब क्या हुआ था, मैं समझी नहीं।'

जूही—'उनको देखकर न जाने मन में कैसी उथल-पुथल हो जाया करती थी। उन्होंने देखा एक क्षण भर। उसी क्षण के भीतर कुछ इस प्रकार हेरे कि मुझको ऐसा लगा मानो घण्टों देखते रहे हों। मैंने तो शीघ्र आंख हटा ली थी। फिर मकान के पास से निकले। मैं आहट पाकर उनकी आंख के रास्ते में आ गई। उन्होंने बहुत कम देखा, परन्तु मैं बहुत देर, बार बार, देखती रही। वे चले गए। मुझे बहुत खला।'

मोतीबाई—'होता है। फिर क्या हुआ ?'

जूही—'वे यहां दो–तीन दिन रहे। मैंने निरन्तर उनको अच्छी तरह देख भर लेने की कोशिश की। उन्होंने देखा। मैं अघा गई। मैंने फिर उनकी दृष्टि को पकड़ने का प्रयास किया, परन्तु वह किसी ख्याल में ऐसे मस्त थे, कि उनको जूही के मकान का भी स्मरण न रहा होगा। जिस दिन जाने लगे मैंने खिड़की में से निर्लज्ज होकर उनको नमस्ते किया। उन्होंने बिना किसी लिहाज़ के मुस्करा कर मेरी नमस्ते का जवाब दिया।'

मोतीबाई—'तब और क्या होता ?'

जूही—'उनको जाते जाते कुछ समय मिल गया। घर पर आने की कृपा की।'

मोतीबाई—'यह तुमने बतलाया था।'

जूही—'मैं सहम गई। सिर नीचा किए खड़ी रह गई। बोले, यदि मुझको खुश करना चाहती हो, तो मोतीबाई जी जो कुछ काम बतलावें, उसको बहुत होशियारी के साथ किया करो। मैंने हामी का सिर हिला दिया, परन्तु मुँह से बोल नहीं निकला। उन्होंने कहा, हृदय की बात जीभ को न मालूम होने पावे। मुझको तुम्हारा हाल मालूम होता रहेगा। ईश्वर तुम्हारी मदद करें और वे चले गए। मैंने बहुतेरा उनकी आंख के चमत्कार को देखने का प्रयत्न किया, पर वे नहीं मुड़े। मैंने उनकी पीठ को इस तरह निगाह गड़ाकर देखा जैसे वे देख ही रहे हों। चले गए। उसके बाद जो कुछ करती रही हूँ, आपको मालूम है।'

मोतीबाई—'मैं महारानी साहब को सुनाती रही हूँ। वे सरदार साहब को सूचना देती रहती हैं।'

जूही—'अभी बीच में एक दिन के लिए और आए थे।'

मोतीबाई—'हूं।'

जूही—'तब भी घर पर आए थे—बहुत थोड़ी देर के लिए। मैंने निश्चय कर लिया था—उनको जी भर कर देखूंगी। न देख पाया।

उन्होंने कुछ बातें पूछीं। कुछ बतलाईं। मेरा सिर और आंखें इतनी भारी हो गई थीं, कि उठा न पाई। उनकी सुनती गई और मंजूर करती चली गई। नीचे नीचे ज़रा सा देख लेती थी, वे बात करते मुस्कराते थे और मुझको मन में गुदगुदी सी झकझोरती थी, मैं खूब हंस कर कुछ कहना चाहती थी। हँस क़तई नहीं पाई, बात भी कम कर पाई। जो कुछ बात हुई आपको सुना दी थी, परन्तु और सब कहने का उस दिन मौक़ा न आया था।'

मोतीबाई—'अरी पगली, इसमें उदास होने की कौन सी बात हुई।'

जूही—'नहीं बाई जी। मैं जो कुछ कर रही हूँ आपके हुक्म से और अपने राजा-रानी के निमक से अदा होने के लिए। चाहे मैं मार भले ही डाली जाऊँ, परन्तु क्या वे मेरे सिर पर एक बार हाथ भी नहीं फेर सकते थे।'

मोतीबाई—'यह उनकी ग़लती है। काम करने वालों का मन रखने के लिए, बढ़ावा देने के लिए, बहुत मिठास बरसाना चाहिए।'

जूही—'वह तो आप से मुझको बहुत मिल जाता है।'

मोतीबाई—'किसी दिन रानी साहब के सामने तुमको पेश करूँगी। वह बहुत देर बात करेंगी!'

जूही—'मेरा ज़िकर तो आता होगा?'

मोतीबाई—'बहुत बार, परन्तु वे अभी बहुत लोगों से मिलना उचित नहीं समझतीं! एक दिन आवेगा, जब तुम उनकी सहेली-सेना में भर्ती हो जाओगी।'

जूही—'मैं चाहती हूँ उनके क़दमों में मेरा सिर कटकर गिरे।'

मोतीबाई 'सरदार साहब के पूछने पर तुमने क्या निवेदन किया?'

जूही—'उनकी रुखाई से मन टूट सा गया था। इसलिए पहले तो मैं ज़मीन को अंगूठे से खोदने लगी, फिर हिम्मत करके बतलाया कि फौज के हिन्दू मुसलमानों को ईसाई बनाने की कोशिश की जा रही है।

उन्होंने ब्यौरा मांगा। मैंने कहा कि सिपाहियों को लोभ दिया जा रहा है, कि यदि वे ईसाई हो जायं तो उनका वेतन भत्ता बढ़ा दिया जावेगा और जो सिपाही पहले ईसाई होगा उसको तुरन्त हवलदार का पद दे दिया जावेगा। बाक़ी कुछ नहीं कह सकी, क्यों कि रो डालने को जी चाहता था। यह कह कर चली आई कि फिर सुनाऊंगी, अभी पूजा करनी है। मुश्किल से लक्ष्मी पूजन करके दिए धरकर आपके पास चली आई हूँ।'

मोतीबाई ने जूही को लिपटा लिया। उसने जूही को रोने नहीं दिया। बोली, 'यों ही फुसफुसा नहीं जाना चाहिए। देखो वे कितना कठिन और कितना नाजुक काम कर रहे हैं। नाटकशाला में जो लोग तमाशा देखने आते थे, क्या वे घर से हँसते हँसते आते थे? संसार के दर्द को बिसारने के लिए लोग नाटकशाला में बैठ जाते हैं। उनकी रुखाई या अवहेलना को देखकर यदि हम लोग रङ्गमंच पर उदास या उदासीन हो जायं, तो खेल बनेगा या बिगड़ेगा?'

जूही ने मोतीबाई के कंधे पर अपनी आंखें छिपाकर कहा, 'रंगमंच पर हम अपने असली रूप में जाते ही कब हैं?'

मोतीबाई ने जूही की ठेस को समझ लिया। बोली, 'मैं उनका जवाब तलब करूँ?'

जूही ने तुरन्त आंख गड़ाकर कहा, 'आपसे कैसे बनेगा?'

मोतीबाई—'अपने को भूल जाऊँगी और अभिनेत्री बन जाऊँगी। तुम सिपाहियों के सामने क्या किसी प्रकार का भी लाज संकोच करती हो?

जूही—'बिलकुल नहीं। मुझको मालूम ही नहीं पड़ता कि मैं ऐरेगैरों से बात कर रही हूँ और क्या खुराफ़ात बके जा रही हूँ। आंखें मेरी कुछ नहीं देखती—कान अलबत्ता खूब खुले रहते हैं।'

मोतीबाई—'और उनके सामने?'

जूही ने भोलेपन के साथ कहा, 'उनके सामने तो रोमान्च हो हो आता है—पसीना सा आ जाता है। सिट्टी सी भूल जाती है। क्या आप उनसे कुछ कहोगी?'

मोतीबाई बोली, 'आज ही मिलूंगी और कहूँगी।'

जूही ने अनुनय के साथ कहा, 'नहीं मेरी ओर से कुछ न कहिएगा,—कम से कम, मैंने जो कुछ कहा है वह न बतलाइएगा। शायद मेरा भ्रम ही हो। वे बुरा मान जायंगे। शायद रानी साहब बुरा मान जावें। मैं रानी साहब को अपना देवी-देवता समझती हूँ।'

'मैं मूर्ख नहीं हूँ। इस तरह न कहूंगी कि वे समझें तुमने कोई शिकायत की है। तुम्हारा काम ब्योरेवार बतलाऊंगी। खुश होंगे। और तुमसे मिलेंगे।'

'कर्नल साहब की हवेली पर?'

मोतीबाई —'फिर कहां? तुम्हारे मकान पर?'

जूही—'आपके मकान पर आ जाऊंगी।'

मोतीबाई—'देखूंगी, वे जहां उचित समझें।'

[४५]

उसी समय मोतीबाई चादर ओढ़कर महल गई। रानी पूजन में थीं। उनको लक्ष्मी जी का इष्ट था, इसलिए और लोगों की अपेक्षा इस पूजन को वे अधिक समय देती थीं।

ड्योढ़ी के एक भाग में तात्या और नाना साहब बैठे हुए थे। तात्या ने मोतीबाई को पहिचान लिया और वह तुरन्त उसको एकान्त में ले जाकर बातचीत करने लगा।

तात्या ने प्रश्न किया, 'यहां का हाल अभी ठीक ठीक मालूम नहीं हुआ। जूही थोड़ी देर पहले मिली थी, परन्तु वह तो कुछ ऐसी गड़ गई कि कुछ कह ही नहीं सकी। केवल यह आश्वासन दे गई कि फिर बतलाऊंगी।'

मोतीबाई ने निस्संकोच भाव के साथ उत्तर दिया, 'आप स्त्रियों की प्रकृति को नहीं जानते।'

तात्या ने कहा, 'सुना है कि उनकी प्रकृति टेढ़ी होती है। अभी तक इस विषय के अध्ययन करने का समय नहीं मिला। जब अवसर आवेगा तब समझने का प्रयत्न करूंगा।'

मोतीबाई मुस्कराकर बोली, 'आप शायद ही कभी समझ सकें। परन्तु ज़रूरत न पड़े तो अच्छा ही है। अब काम की बात सुनिए।'

तात्या—'मैं ध्यान लगाए हूँ।'

मोतीबाई—'फ़ौज के सिपाहियों को ज़बरदस्ती ईसाई बनाए जाने की कोशिस की जा रही है। रामचन्द्रजी और मुहम्मद साहब, दोनों को खुलेआम गालियां दी जाती हैं! ईसाई बनने के लिए तरह तरह के प्रलोभन दिए जाते हैं। एक अंग्रेज अफ़सर तो यहां तक कहता था, कि कुछ दिनों में सारा हिन्दुस्थान ईसाई हो जावेगा। न एक मन्दिर बचेगा और न एक मस्जिद रहेगी।'

तात्या—'इस तरह के समाचार सब तरफ़ से आ रहे हैं।'

मोतीबाई—'क्या सचमुच ऐसा दिन आने वाला है?'

तात्या—'विश्वास रक्खो, वह दिन कभी नहीं आवेगा। मुझको यह बतलाओ कि यहां के सिपाही खुद क्या भावना रखते हैं?'

मोतीबाई—'मुझको पक्का भरोसा है कि एक फ़ी सदी भी हिन्दू या मुसलमान सिपाही किसी भी लालच में आकर अपने धर्म-ईमान को नहीं बिगाड़ेगा।'

तात्या—'यह तो हम सब लोग जानते हैं। मुझको यह बतलाओ कि गोरों की इस हरकत का यहां की फ़ौज पर असर क्या पड़ा है?'

मोतीबाई—'उनमें से कुछ तुरन्त मारना-मरना चाहते थे, परन्तु धीरज धरकर रुक गए।'

तात्या—'अभी मारने-मरने का समय नहीं आया है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक पल्टन में से तीन अफ़सर, जो बिलकुल विश्वास के योग्य हों, चुन लिए जावें। उनको कब और क्या करना होगा, वह दो-एक महीने पीछे बतलाया जावेगा। उनसे कह दिया जाय कि वे ईसाई तो होंगे ही नहीं, पर इस समय अपना सब्र न खो बैठें। क्रोध भरे रहें, परन्तु उसको निकलने किसी प्रकार न दें, नहीं तो सब किया-कराया मिट्टी में मिल जावेगा। अबकी बार आऊँगा तब जो कुछ करना है, उसकी तारीख और समय बतला जाऊंगा। आप या जूही इस काम को कर सकेंगी?'

मोतीबाई—'मेरे लिए मशहूर है कि मैं बाहर बहुत कम निकलती हूं।

महलों में आती-जाती हूँ। फ़ौज में नृत्य गान के लिए, मेरा आना जाना तुरन्त सन्देह उत्पन्न करेगा और बाईसाहब भी यह पसन्द न करेंगी। जूही को इसी कारण महल मैं नहीं बुलाया जाता। वह बहुत अच्छा नाचती-गाती है। ईश्वर ने उसको रूप भी दिया है और ज़बरदस्त संयम। वह आपको चाहती है।'

तात्या—'मुझको! मोतीबाई, यह ज़माना बुद्धि और तलवार को माँजने का है, न कि मन को रस में डुबोने का।'

मोतीबाई—'तब आप उसको अपने रस में डूबा रहने दीजिए। तभी तो मैंने कहा कि आप नारी-प्रकृति को नहीं जानते।'

तात्या—'क्या नारी-प्रकृति पुरुष-प्रकृति से बहुत भिन्न होती है?'

मोतीबाई—'कह नहीं सकती। शायद किसी दिन आप इस विषय को समझें।'

तात्या—'ऐसा नहीं है कि मैं नारी-प्रकृति को बिलकुल ही नहीं जानता हूं। परन्तु सामने इतने महत्व का बड़ा काम है कि और कुछ सूझता ही नहीं।

मोतीबाई—'आप कृपा करके जूही से ज़रा मीठा बोलिए। एक बार उसके सिर पर शाबाशी का हाथ फेर दीजिए। वह अपने काम का कमाल कर दिखलावेगी।'

तात्या—'मैंने आपसे सबक़ लिया और गांठ बांध ली।'

मोतीबाई ने हँसकर कहा, 'आपको औरतों से अभी बहुत सीखना है।'

तात्या ने देखा मोतीबाई के प्रबल सौन्दर्य में विलक्षण शोख़ी है और शोख़ी में कोई दृढ़ सत्य।

हँसकर बोला, 'मानता हूँ। पर आपकी जूही को वह काम करते देखना है, जो मैंने बतलाया है।'

मोतीबाई ने भी हँसकर कहा, 'मेरी नहीं आपकी-आप लोगों की-जूही।'

'बेशक। बेशक। बतलाइए फ़ौज के देशी अफ़सरों पर उसका प्रभाव हो गया है?'

'हो गया है। अनेक पर।'

'इस प्रभाव को बढ़ाना है।'

'बढ़ जायगा।'

'और कोशिश यही करनी है कि अभी भड़क न उठें। जो तारीख़ और समय नियुक्त होगा, उसकी बाट जोहें।'

'हो सकेगा।'

'एक पल्टन के तीन अफ़सरों को ख़ास तौर पर चुनना है।'

'मुझको जूही की बुद्धि का भरोसा है ।'

'मैं उससे आज ही बात करूँगा। आप तो रानी साहब से बात करने के लिए ठहरेंगी।'

'फिर कभी मिल लूंगी। आप मेरी बात उनसे कह दीजिएगा। मैं जाती हूँ।'

मोतीबाई समझ गई थी कि तात्या इत्यादि बिलकुल एकान्त में, रानी से बातचीत करना चाहते हैं, इसलिए वह नहीं ठहरी।'

पूजन के उपरान्त नाना साहब और तात्या की भेंट रानी से हुई। रानी लक्ष्मीबाई आज बिलकुल लक्ष्मी सी भासित होती थीं।

नाना ने कहा, 'मैंने अपने एक विश्वस्त आदमी अज़ीमुल्लाखां को विलायत भेजा था। अर्ज़ी, अपील स्वीकृत नहीं हुई। हो जाती तो कुछ रुपया मिल जाता। कम से कम दादा साहब के ज़माने का जो छयासठ हज़ार रुपया बाक़ी है, वही मिल जाता। परन्तु अंग्रेजी सरकार तो बेईमान और अन्यायी है। उसने सब नामन्जूर करदिया। इसका अब अधिक रन्ज नहीं है। रुपए की कमी पूरी हो ही जावेगी। अज़ीमुल्ला देश विदेश घूमा है। वह इटली गया। तुर्की में रहा। रूस भी पहुँचा। और ईरान होकर लौट आया। उसने तुर्की के साथ चिट्ठी पत्री की है। इटली में इस समय एक प्रबल पुरुष गेरीबाल्डी नामका है। वह अंग्रेज़ी जहाज़ी बेड़े को अपने जहाज़ी बेड़े से नष्ट कर देगा। रूस से मदद मिलेगी। सब कहते हैं, कि अंग्रेज़ हिन्दुस्थान में खुल्लमखुल्ला और आड़ें ओट लेकर, बहुत निन्दनीय काम कर रहे हैं। बहादुरशाह बादशाह ने ईरान के शाह से लिखा पढ़ी की है। क़ाबुल तो हतोत्साह है, परन्तु शायद ईरान बादशाह की कुछ सहायता करे।'

रानी—'ऊपर ऊपर इन बातों का प्रभाव अंग्रेज़ों पर अच्छा पड़ेगा, परन्तु वास्तव में कार्य बहुत दृढ़ता और प्रबलता के साथ, अपने देश ही में होना चाहिए। मुझको विश्वास है कि जनता अपने साथ है। वह

बहुत बड़ा बल है । अंग्रेज़ों के हाथ में सीखी सिखाई हिन्दुस्थानी फ़ौज है, वह सम्पूर्ण रूप में अपने हाथ में आजानी चाहिए । तोप ढालने वाले और बारूद बनाने वाले कारीगर, हाथ में होगए हैं ? क्यों कि उपद्रव होते ही अंग्रेज़ लोग अपना सामान नष्ट कर देंगे और फिर हम ख़ाली तोपों से कोई काम नहीं कर सकेंगे ।'

तात्या—'प्रबन्ध कर लिया है ।'

रानी—'हमको ऐसी तोपें चाहनी पड़ेंगी, जो चलते समय धक्का न दें और जल्दी गरम न हो जावें ।'

तात्या—'इस प्रकार के कारीगरों को बराबर खोजा है । कुछ मिले भी हैं । खबर लगी है कि झांसी में इस चतुराई वाले कारीगर हैं ।'

रानी—'हां हैं । मैंने कुछ इकट्ठे किए हैं । ऐसी बारूद बनाने वाले भी मैंने ढूंढे हैं, जो धुआं कम दे ।'

नाना—'अब ज्यादा विलम्ब नहीं किया जावेगा ।'

रानी—'कितने दिन और लगेंगे ?'

नाना—'कुछ महीने से अधिक नहीं ।'

रानी—'मेरी सम्मति में, अभी ज़रा और संयम और अनुशासन की आवश्यकता है ।

तात्या—'मैं बिलकुल मानता हूँ बाईसाहब ! परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि विस्फोट जल्दी होगा । अंग्रेज़ लोग हिन्दू–मुसलमान सिपाहियों को ईसाई बनाना चाहते हैं । फ़ौज की सही हालत जानने के लिए, मैं अनेक साधन काम में ला रहा हूं । उन सबसे एकसा ही समाचार मिल रहा है । अंग्रेज़ कर्नल और कप्तान पादरी बने हुए हैं । अपने छापे की कलों से सहस्त्रों लाखों की संख्या में, छोटी बड़ी पुस्तकें छाप छाप कर, फौज में बांट रहे हैं । जिनमें हिन्दू और मुसलमानों के धर्मों की, बेहद निन्दा की जाती है । इसके ऊपर सिपाहियों को भांति भांति के प्रलोभन देकर, ईसाई बनाने की कोशिश की जारही है । चर्बीवाले कारतूस अब

भी बनरहे हैं। पहले मैं समझता था कि बन्द कर दिए गए हैं और चर्बी वाली बात बहुत बढ़ा बढ़ा कर फैलाई गई है। पर अब तो निश्चय हो गया है कि बात सच्ची है। सिपाहियों को यह सब बहुत अधिक खटक रहा है। वे धर्म के पीछे प्राण गंवाने को उठ-उठ पड़ते हैं। अब उनको बहुत अधिक रोका नहीं जा सकेगा।'

रानी—'जब शीघ्रता करने की अटक होगी, मैं कहूँगी कि अब काम करने में आंधी से होड़ लगाओ। तब वैसा करना। परन्तु अभी जैसे बने तैसे संयम से काम लो। नीति और युद्ध का समन्वय होना चाहिए।'

नाना—'प्रयत्न तो यही किया जा रहा है। हम लोग इधर-उधर घूमते-घामते, दक्षिण के तीर्थों को जा रहे हैं। राजाओं से कम बात करेंगे, जन-नायकों से मिलेंगे। क्योंकि बहुत दिनों तक स्वराज्य-युद्ध को चलाते रहने के लिए, हम लोगों को प्राण बुन्देलखण्ड, अवध और महाराष्ट्र से प्राप्त होंगे।'

तात्या—'यहां की स्त्रियां तो ऐसा काम कर रही हैं कि मैं दङ्ग हो हो जाता हूँ।'

रानी—'हां, मोतीबाई और उसकी संगिनें काम कर रही हैं।'

तात्या—'मोतीबाई अभी आई थी। आप पूजा में थीं। उसने बतलाया कि फ़ौज में ईसाई मत फैलाने का किस रूप में प्रयत्न हो रहा है। हमारे और लोग भी काम कर रहे हैं। उनसे मैंने अलग खोज की थी। मोतीबाई की बातों से उनके समाचारों की पुष्टि होती है।'

रानी—'मोतीबाई को यह मालूम है कि हमारे कुछ और लोग भी काम कर रहे हैं?'

तात्या—'नहीं बाईसाहब।'

नाना—'ऐसा प्रबन्ध रक्खा है कि एक विभाग वाले दूसरे विभाग वालों की बात न जान सकें।'

रानी—'एक एक पल्टन में तीन तीन अफ़सर क्यों चुन रहे हो? दो दो काफ़ी थे।'

नाना—'तीन इसलिए, कि दो दो मार दिए गए या बदल दिए गए, तो काम करने के लिए एक एक तो बच ही जावेगा।'

रानी—'तो अब आग को भड़काने की आवश्यकता नहीं है। उसको ढाँकने की आवश्यकता है।'

तात्या—'कहीं कहीं दोनों की अटक है।'

रानी—'अंग्रेजों ने भी जासूस छोड़ रक्खे हैं।'

नाना—'अन्तर इतना ही है कि उनका जासूसी विभाग, महज़ पैसे के लिए अपना ईमान और अपना देश बेचने को तैयार है और हम लोगों का जासूसी विभाग, कुछ भी न लेकर अपने धर्म, अपने देश और स्वराज्य के लिए, अपने तन, मन, धन को आग में झोंकने के लिए प्रस्तुत है। पुलिस, जो शासन का सबसे अधिक प्रचण्ड कुत्ता होता है, वह भी हमारे साथ होता चला जाता है।'

रानी—'इसलिए कि हम सबके धर्म का और रोटी का सवाल है।'

नाना—'मुसलमान और भी अधिक कुढ़े हुए हैं। बादशाह की जो नज़र–न्योछावर ईद और नौरोज़ के दिन होती थी, वह तो बारह–चौदह साल से बन्द है। अब अंग्रेज़ चाहते है कि बादशाह दिल्ली का लाल क़िला खाली करके, मुङ्गेर चला जावे और गोरे लोग क़िले में बैठकर, हिन्दुस्थान भर को लाल आंखें आराम के साथ दिखलाते रहें। जो अपने को कभी 'फ़िद्वी ख़ास' कहकर बल खाते थे, वे अब अपने को तान कर, मालिक ख़ास कहते हैं।'

रानी—'क्या वे लोग यह सब खुल्लमखुल्ला कर रहे हैं?'

नाना—'बिलकुल। उनको अब कोई डर नहीं रहा। जनता में, विविध उपायों से, हिन्दू–मुसलमानों को लड़ाने का सिलसिला जारी है।'

रानी सोचने लगीं।

बोलीं, 'बहुत सावधानी और संयम से काम लेने की आवश्यकता है। हम लोगोंके अपने कार्य की प्रगति के समाचार बराबर मिलते रहने चाहिए।'

रानी ने खिड़की के बाहर दृष्टि डाली। रात कुछ अधिक गई समझ कर, वे दोनों उठ खड़े हुए और रानी का चरण स्पर्श करके चले गए। यह पहला दिन था जब नाना और तात्या ने सहसा लक्ष्मीबाई के पैर छुए— यद्यपि वे दोनों आयु में उनसे बड़े थे।

तात्या वहां से आकर सीधा अपने प्रवास स्थान को नहीं गया। पहले जूही के घर पहुंचा।

समय कुछ अधिक हो गया था, परन्तु जूही सोई न थी।

तात्या के भीतर आते ही जूही सहमी। लाज की अरुणिमा चेहरे पर बिखर गई।

तात्या ने बैठते ही मुस्कराकर कहा, 'तुमने उस समय कुछ नहीं बतला पाया था। मैं बहुत जल्दी में था, इसलिए उतावली में ठीक तौर से पूछ भी नहीं पाया।'

जूही ने नीची पलकों को ऊँचा किया। उसकी आंखों में मोहक, मादक मधु सा छलक पड़ा।

ज़रा एक ओर देखते हुए उसने कहा, 'नहीं कोई बात नहीं। मुझे लक्ष्मी पूजन के लिए घर आना था इसीलिए चली आई थी। अब सब सुनाती हूं।

वह खड़ी थी। तात्या के कहने पर एक ओर बैठ गई। नृत्य गान द्वारा झांसी स्थित अंग्रेज़ी सेना में वह जो कुछ किया करती थी ब्यौरे-वार सुनाया। जब वह बात कर रही थी, केशजूटों में बंधे हुए चमेली के फूल, हिल हिल जाते थे।

बात की समाप्ति पर तात्या ने उठकर, जूही के सिर पर हाथ फेरा। हाथ फेरने में एक फूल टूट कर नीचे गिर पड़ा। तात्या ने फिर खोंसने की कोशिश की।

जूही ने पलकें नीची किए हुए कहा, 'जाने दीजिए।'

'वह तो मैंने खोंस दिया जूही,' तात्या बोला, 'मैं लक्ष्मी से मनाता हूँ, एक दिन आवे, जब इस देश की मुक्ति और तुम्हारे फूलों की महक का सम्मेलन हो।'

जूही खड़ी हो गई। आंखें निश्चल रूप से खुल गईं। श्वेत भूमिका काली पुतलियों से प्रकाश झर सा पड़ा।

'यदि उस काम के करने में, मैं या मेरी तरह की और स्त्रियां मर जायं, तो इस टूटे हुए फूल की महक और देश की मुक्ति के सम्मेलन के वचन को न भूलिएगा। जूही ने कहा।'

तात्या बोला, 'कभी नहीं जूही।'

जूही—'आप जा रहे हैं? कब? फिर कब आइएगा?'

तात्या—'कल चला जाऊँगा। जल्दी ही आऊँगा। कब आऊँगा, यह ठीक ठीक अभी नहीं कह सकता।'

तात्या नमस्ते करके चला गया। उस दिन तात्या को मालूम हुआ कि वास्तव में जूही का वर्गबोधक नाम मंगलामुखी सार्थक है।

[४६]

जूही का छावनी में आना जाना बढ़ गया। उसके नृत्य गान की कला में और भी मोहकता आ गई। परन्तु किसी सिपाही या अफ़सर में उसने अपने को बाल बराबर भी नहीं खोया। वे समझते थे कि जूही हृदय हीन है।

जूही को हर पल्टन में तीन तीन उपयुक्त अफ़सर ढूंढ़ने में बहुत दिन नहीं लगे। उन अफ़सरों को यह भी मालूम हो गया कि हम लोगों को किसी दिन एक महान कार्य करना है, परन्तु उनको ठीक ठीक यह नहीं मालूम था कि कब। जूही स्वयं नहीं जानती थी। कुछ और लोग जो पल्टनों के लिए इसी कर्तव्य पर नियुक्त थे उनको भी मालूम न था, परन्तु वे यह जानते थे कि जूही का काम, उसी योजना का एक अङ्ग है, जिसका एक भाग उन लोगों का भी काम था। परन्तु वे एक दूसरे से मिलते न थे। निषेध था।

एक दिन जूही के नृत्य गान का आनन्द लेने के लिए कमान डनलप भी आ गया। एक क्षण के लिए जूही सकपकाई। परन्तु उसने अपना नियन्त्रण शीघ्र कर लिया और वह बहुत मज़े में नृत्य गान करती रही।

असल में डनलप को उसके जासूस ने खबर दी कि छावनी में नर्त-कियां आती हैं और अफ़सरों से दीन धर्म सम्बन्धी कुछ बातें भी किया करती हैं। इसलिए वह सहसा वहां आ गया था।

नृत्यगान से उसका मन शीघ्र ऊब गया, क्योंकि अधिकांश अंग्रेज़ों की तरह उसको भारतीय कलाओं के प्रति उपेक्षा थी। परन्तु जूही बहुत सुन्दर थी। उसको सहज ही विश्वास न होता था कि ऐसा सौन्दर्य अपने परिधान में किसी छल कपट को छिपाए होगा। तो भी उसने सवाल किए—

डनलप—'तुम छावनी से कितना पैसा कमा ले जाती हो?'

जूही—'जब जो मिल जाय हुज़ूर।'

डनलप—'नाचने गाने के सिवाय कोई और पेशा करती हो?'

जूही—'नहीं तो। मैं अविवाहित हूँ। कुमारी।'

डनलप—'तुम लोगों में विवाह भी होते हैं?'

जूही—'जरूर। हम लोग तो केवल नाचने गाने का ही पेशा करती हैं।'

डनलप—'तुम रानी साहब के यहां भी नाचने गाने जाती हो? मैंने सुना है कि उनको गाना सुनने और नाच देखने का शौक़ है।'

जूही—'मैं वहा नहीं जाती। कभी नहीं गई। उनको भगवान के भजन सुनने का शौक़ है। नृत्य का कोई शौक नहीं।'

डनलप—'रानी साहब गाती है?'

जूही—'बिलकुल नहीं। मुझको क्या मालूम।'

डनलप—'रानी साहब ने तुमको घोड़े की सवारी नहीं सिखलाई?'

जूही—'मैं उनके पास कभी जाती ही नहीं। घोड़े की सवारी क्यों सिखलाती?'

डनलप—'और औरतों को तो सिखलातीं हैं?'

जूही—'सुना है।'

डनलप—'मोतीबाई नाम की वैश्या को जानती हो?'

जूही—'वह वेश्या नहीं है। आपसे किसने कहा?'

डनलप—'मुझसे सवाल करती है जानती है कि धक्के देकर निकलवा दूँगा।'

जूही—'मैंने आपका क्या बिगाड़ा है?'

डनलप—'अच्छा हटो। आगे कभी छावनी में मत आना।'

जूही ने मुंह उदास बना लिया और वह चली गई। परन्तु डनलप के ओट होते ही उसके ओठों पर, गालों पर, मुस्कराहट की छटा छागई। उसको याद आगया—'एक दिन आवेगा जब फूलों की महक और देश की मुक्ति का सम्मेलन हो।'

वह चाहती थी कि धक्के देकर निकाली जाती तो अच्छा होता, उसके शरीर से, कहीं से, थोड़ा सा खून निकल पड़ता तो और भी अच्छा होता।

नर्तकी चली गई, परन्तु उसका सौन्दर्य डनलप के भीतर एक कोने में हलकी छाप, एक टीस, छोड़ गया। उस टीस ने सिपाहियों के प्रतिक्षोभ का रूप पकड़ा।

डनलप बोला, 'तुम लोग इन टके वाली औरतों के मोह में अपना पैसा और समय नष्ट करते हो। इन औरतों का झूंठा जादू ही तुमको ईसाई होने से रोक रहा है। इन शैतानों को छोड़ कर सच्चे धर्म पर ईमान लाओ, तो मुक्ति भी मिलेगी और पैसा अलग।'

पैसा और मुक्ति का घनिष्ट संबन्ध सिपाही लोग बहुत दिनों से सुन रहे थे। पहले तो इस सम्बन्ध की बात पर उनको हँसी आया करती थी, अब वे खीजने लगे, जलने लगे। परन्तु सिपाहियों ने चुपचाप सुनलिया।

डनलप ने सोचा उसकी बात घर कर रही है।

डनलप कहता गया, 'तुम्हारे देवी-देवता सब बदसूरत और व्यर्थ हैं। उन पर विश्वास करने के कारण तुम मूर्ख बने हो। इसीलिए तुम्हारी तरक्की नहीं हो पाती। ईसाई होते ही तुमको एक ईश्वर और उसके एक पुत्र पर ही विश्वास लाने की ज़रूरत है। दुनियां भर की डाकिनी, पिशाचिनी और भूत-प्रेतों से पीछा छूट जावेगा। हिन्दू मुसलमान सब बेवकूफ़ हो। इञ्जील पढ़ो तो आंखे खुल जावेंगी।

सिपाहियों ने इसपर भी कुछ नहीं कहा।

डनलप बोला, 'रिसालदार, तुमको खुद ईसाई धर्म क़बूल करना चाहिए, वरना तुम्हारे हक़ में अच्छा न होगा। जैसे ही कोई ईसाई अफ़सर मिला तुम बरखास्त कर दिए जाओगे।'

रिसालदार ने कहा, 'जो हुकुम।'

डनलप समझा रिसालदार ईसाई होने के लिथ लगभग राज़ी हो गया है।'

पूछा, 'कब तक?'

रिसालदार ने उत्तर दिया, 'कुछ महीनों की ही कसर है हुजूर।'

डनलप इस वाक्य के भीतरी अर्थ को नहीं समझा।

डनलप के जाते ही सारा सिपाही समाज व्यङ्ग और क्षोभ में प्रमत्त हो गया। सुरीली और रूप वाली नर्तकी के अपमान का उनको रंज था। अपने धर्म की अवहेलना पर उनको क्रोध था और अंग्रेज़ के मुंह से रानी का नाम तक लेने पर, उनको क्षोभ था।

'उस बेचारी को धक्के देकर निकालने की धमकी दी! बड़ा हूश है।

'अरे पाजी है। कहता है, धर्म–ईमान छोड़ दो। ये शराबी-कबाबी धर्म–ईमान को क्या जानें।'

'मेरी तबियत में तो आ गया था कि पौंदों पर दुलत्ती कस दूँ।'

'ज़रा ठहरो। समय आरहा है। फिलहाल मनाई है। सहते जाओ। थोड़ी सी कसर रह गई है। हमारे मुखिया लोग इलाज सोच रहे हैं।'

'खाक सोच रहे हैं। जब धर्म न रहेगा, मन्दिर, मसज़िद साफ़ हो जावेंगे, जब हकीम जी इलाज करने आवेंगे।'

'कारतूस फिर जारी किए गए हैं! सुनता हूं, कलकत्ते के कारखाने में लाखों करोड़ों की तादाद में बनाए जारहे हैं और एक अंग्रेज़ या ईसाई को चार आने सेर के हिसाब से, गाय और सुअर की चर्बी इकठी करके कारखाने में देने का ठेका भी देदिया गया है।'

'आने दो, आने दो कारतूसों को। जीते जी तो उन कारतूसों को छुयेंगे नहीं। और यदि खोलने के लिए मजबूर किए गए, तो पहली गोली इस पाजी डनलप पर।'

'ईश्वर एक है सो तो बिलकुल ठीक है। न हिन्दू इसके खिलाफ़ कुछ मानते हैं और न मुसलमान। लेकिन ईश्वर के एक ही बेटा हुआ यह कुर्सीनामा इस डनलप को कहां से मालूम हुआ?'

'जिस कारखाने से भ्रष्ट कारतूस निकले, उसी से इस तरह का मज़हब निकला होगा।'

'हमारे यहां ईसा को पैग़म्बर माना गया है, लेकिन खुदाका बेटा नहीं माना गया।'

'उसके बेटे तो मियां हम सब लोग हैं ।'

'यह डनलप असल में अपने और अपने अंग्रेज़ भाइयों के सिवाय किसी को खुदा का बेटा नहीं मानता ।'

'हाय न जानें वह दिन कब आवेगा ।'

'बहुत दिनों अपने ही भाइयों से लड़े और इन लोगों के बहकाने से उनको तबाह किया ।'

'कहते हैं हमारा निमक खाते हो, निमक की बजाना—हम कहते हैं निमक तुम्हारे बाप का है ?'

'बेशक है । ये लोग अगर कुर्सीनामे से साबित करदें कि ये खुदा के नाती पोते, पन्ती वन्ती कुछ हैं तो बेशक है ।'

'यह तो हम लोग साबित कर सकते हैं क्योंकि हम उसकी पूजा करते हैं, उसके क़दमों में नमाज़ कहते हैं, लेकिन ये लोग—मौक़ा मिला और शराब गटकी, कलब घर में पहुंचे और नाचे मटके । इतवार को गिरजा में सातवें दिन जाकर तोबा करली और फिर वही रफ्तार जारी ।'

'कूड़ा हम साफ़ करें और मोटी मोटी तनख्वाहें ये मारें ।'

'हम हिन्दुस्थानी सिपाहियों की बारकें देखो और इनके बङ्गले । हमारी रोटी, चपाती और दाल देखो और इनके अण्डे बिस्कुट । हमारी छोटी सी तनख्वाह देखो और इनका मुहरों का ढेर, जो रोज़ रोज़ विलायत चला जा रहा है ।'

'और इस पर बदमाशों की 'डैमफूल' । तहज़ीब के साथ बात करना जानते ही नहीं । इनका मुल्क तो बिलकुल हब्शी है ।'

'सबको तबाह कर दिया । झांसी की देवी को देखो, किस मुसीबत में अपने दिन गुज़ार रही हैं ।'

'मियां तुमने देवी सच कहा । एक दिन कमासिन टौरिया की तरफ़ घोड़ा दौड़ाये जा रही थीं । मेरी आंखों में चकाचौंध लग गई । जी चाहता था कि पैर छूलूं ।'

'सच कहता हूँ डनलप सरीखे शेखीबाजों को तो वह एक तमाचे में ढीला करदें।'

'न जानें वह दिन कब आवेगा कि फिर रानी का झण्डा क़िले पर फहरावे।'

'क़िले में गोरों की बसीगत देखकर मेरा तो खून जल उठता है।'

'लोगों को क़िले में जाने की मनाई है।'

'जब हमारा राज हो जावेगा, हम इन लोगों को क़िले की हवा के पास भी फटकने देंगे।'

'महीना तारीख वक्त कुछ मुकर्रर हुआ?'

'चुप, चुप, अभी नहीं। ठहरे रहने का हुक्म है। इन्तजार करने का।

'अब तो सहा नहीं जाता। कब तक अपने धर्म और मज़हब की तौहीन बरदाश्त करते रहे।

[४७]

सन् १८५६ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्णधार, भारतवर्ष भर को ओर से लेकर छोर तक, ईसाई बनाने के स्वप्न देखने लगे थे। अस्पर्श्य चर्बी वाले कारतूसों की वास्तविकता को, स्वयं कई ज़िम्मेदार अंग्रेज़ लेखक स्वीकार करते हैं। यह ठीक है कि उनके बन्द करने का प्रयत्न किया गया, परन्तु वह था शिथिल।

कम्पनी के बोर्ड के चेयरमैन तो उस स्वर्ण-घड़ी की प्रतीक्षा में आखें अटकाए हुए थे, जब सारा भारतवर्ष-हिन्दू और मुसलमान-अपने धर्म को छोड़ कर कम्पनी के धर्म को क़बूल करके उनकी शासन सत्ता को प्रलय पर्यन्त, अपने कन्धों पर धारण किए रहे।

परन्तु इङ्गलेंड के कुछ लोगों को भारत में आने वाली विपत्ति के बादल का एक छोटा सा टुकड़ा दिखाई पड़ने लगा था। उनके मुनीम डलहौज़ी ने दूकान को भारत में इतना काफ़ी पसारा दे दिया था, कि अब उनको रोकड़ बाकी खींचने और बहीखाता सन्हालने के लिए भी, कुछ समय चाहिये था। इसलिये डलहौजी को बुलाकर कैनिंग को भेजा।

कैनिंग ने विपत्ति के बादल के उस टुकड़े को स्पष्ट देख लिया। परन्तु उसको आत्म विश्वास था इसलिए वह भारत में आया, और आने पर ईसाई मत प्रचार के लिए एक काफी रक़म हिन्दुस्थान के खज़ाने से निकाल कर रख दी। पंजाब को कम्पनी भक्त समझा जाता था। ईसाईयत के प्रचार वेग से वह भी न बचा।

इधर नाना साहब, तात्या, बहादुरशाह और उनकी बेगम ज़ीनतमहल अवध की बेगम हज़रतमहल और रानी लक्ष्मीबाई का व्यापक और सूक्ष्म प्रचार जारी था। स्वाधीनता के युद्ध के लिये क्षेत्र तैयार हो रहा था, थोड़ा सी ही कसर थी जब नियत दिन और समय पर एक साथ सम्पूर्ण हिन्दुस्थान में विस्फोट होना था। वह दिन और समव अभी नियुक्त नहीं हुआ था।

सन् १८५७ का जनवरी मास आ गया। दमदम की छावनी में एक घटना हो पड़ी।

एक मेहतर ने ब्राह्मण सिपाही से पानी पीने के लिए लोटा मांगा। ब्राह्मण सिपाही मेहतर को लोटा कैसे दे देता! वह मेहतर हो या न हो प्रचारक अवश्य था। वह भागा या हटा नहीं। दृढ़ता पूर्वक डटा रहा। बोला, 'ओहो, जातपांत का इतना घमण्ड! आ रहे हैं कारतूस जिन को दांत से खोलना पड़ेगा। उनमें सुअर और गाय की चर्बी लगी है। देखें तुम्हारी जात उन कारतूसों के प्रयोग के बाद रहती है या जाती है।'

कारतूसों की सनसनी चल तो बहुत दिनों से रही थी और अकेले दमदम में नहीं, किन्तु लगभग सारी छावनियों के हिन्दुस्थानी सिपाहियों में। दमदम में कारतूसों के बनाने का कारखाना था और उन दिनों बहुत संख्या में कारतूस बनाए भी जा रहे थे। इसलिए ब्राह्मण सिपाही के मन में यह भर्त्सना खप गई। वह अपने बेड़े के अन्य सिपाहियों से कहता फिरा। क्षोभ फैलता गया और बढ़ता गया। सिपाहियों की बात उनके अंग्रेज़ अफ़सरों तक पहुंची। उन्होंने इसको महज़ गप बतलाया। सिपाहियों ने कारखाने के हिन्दुस्तानी मज़दूरों से तलाश किया। उन्होने बात को सच बतलाया। दमदम के इन सिपाहियों ने हज़ारों चिट्ठियां हिन्दुस्थान भर की छावनियों में भिजवाईं। सिपाही कुछ कर उठने के लिए बेचैन हो उठे।

झांसी की छावनी में भी चिट्ठी आई। आश्चर्य होता है कि थोड़े दिनों में ये चिट्ठियां गुप्त रूप में कैसे सर्वत्र फैल गईं। जूही इत्यादि अब छावनी में नहीं आ-जा पाती थीं, पर उनके पता देने वाले लोग छावनी के सम्पर्क में थे।

रानी को इस घटना का समाचार मिल गया। उनको चिन्ता हुई कहीं ऐसा न हो कि ये लोग कुसमय कुछ कर बैठें।

बसन्त पञ्चमी हो चुकी थी। फरवरी का महीना था। चांदनी डूब चुकी थी। रात बिलकुल अंधेरी। हवा ठण्डी मन्द मन्द। तारे दमक रहे थे।

कुछ बड़े बड़े, असंख्य छोटे छोटे। जैसे चांदनी अपनी चादर छितरा कर छोड़ गई हो। नीचे सघन अन्धकार। सब दिशाओं में गुलाई सी बांधे हुए। झींगुर झंकार रहे थे।

रानी को नींद आ रही थी। कठिन व्यायाम से तप्त देह को ठण्ड भली लग रही थी। खिड़की खुली हुई थी। उसमें से कई बड़े बड़े तारे दिखलाई पड़ रहे थे। झींगुरों की झंकार के ऊपर दूर से आने वाला किसानों और चरवाहों के फाग–गीत का स्वर सुनाई पड़ जाता था।

रानी ने सोचा, 'क्या ये लोग ईसाई बना लिए जावेंगे? ईसाई होने पर फिर क्या अपनी फागें गा सकेंगे? इनके बच्चे गिल्ली–डण्डा और कबड्डी छोड़कर फिर क्या खेलेंगे? होली, दिवाली, दशहरा ईद सब यहां से चल देंगे? स्त्रियों का क्या होगा? ऐसी सुन्दर वेश भूषा को छोड़ कर ये सब क्या किरानी पोशाक करेंगी? ईसाई आवागमन नहीं मानते, फिर मुक्ति का क्या अर्थ? और गीता, रामायण इत्यादि का क्या होगा?'

रानी बिस्तरों में बैठ गईं। निविड़ अन्धकार में भी महल के सामने वाला ऊँचा पुस्तक–भवन, अपनी थोड़ी सी रूप–रेखा प्रकट कर रहा था।

'क्या वेद–शास्त्र, गीता, पुराण, दर्शन, काव्य ये सब व्यर्थ हो जायंगे? जला दिए जायंगे या फेंक दिए जायंगे?'

रानी ने ओंठ से ओठ दबाया। नथनों से भभक निकली।

'कदापि नहीं। कभी नहीं। मैं लड़ूंगी। उन ग़रीबों के गीतों की रक्षा के लिए। इन पुस्तकों के लिए और जो कुछ इनके भीतर लिखा है उसके लिए। ऋषियों का रक्त ऐसा हीन और क्षीण नहीं हो गया है कि उनकी सन्तान तपस्या न कर सके। कीड़ों–मकोड़ों की तरह यों ही विलीन हो जाय।'

'नहीं कृष्ण अमर हैं। गीता अक्षय है। हम लोग अमिट हैं। भगवान की दया से, शंकर के प्रताप से मैं बतलाऊँगी कि अभी भारत में कितनी लौ शेष है। और यदि मैं इस प्रयत्न में मर गई तो क्या होगा।

मोतीबाई—'सन्ध्या के समय आए और प्रातःकाल के पहले चले जायँगे। वह इसी समय दर्शन करना चाहते हैं। बाहर खड़े हैं।'

रानी—'बाहरी कमरे में बिठलाओ। मैं आती हूँ।'

रानी ने सफेद साड़ी पर एक मोटा सफेद दुशाला ओढ़ा और वह बाहरी कमरे में तात्या के पास पहुँची। मोतीबाई को रानी ने उसी कमरे में बिठला लिया।

रानी ने पूछा, 'इस चिट्ठी का क्या प्रयोजन है? मुझको तो असमय जान पड़ती है।'

'हां बाई साहब', तात्या ने उत्तर दिया, 'इसीलिए ले आया हूँ। मोतीबाई ने बतलाया कि इस प्रकार की चिट्ठियां यहां की छावनी में भी आई हैं। सिपाहियों में बेहद जोश फैला हुआ है, परन्तु न तो अभी कोई व्यवस्था कर पाई है और न काफ़ी सङ्गठन हुआ है। समय के पहले यदि विस्फोट हो गया तो अनेक सिपाही व्यर्थ मारे जावेंगे। असफलता और निराशा देश को दबा लेगी और न जाने कितने समय के लिए, यह देश विपद्ग्रस्त हो जावेगा।'

रानी—'इसको रोकना चाहिए और सङ्गठन शीघ्र कर लिया जाना चाहिए।'

तात्या—'रुपये पैसे की कोई असुविधा नहीं रही। काफ़ी समय तक लड़ाई चलाते रहने के लिए धन इकट्ठा हो गया है। बारूद का और शस्त्रों का बहुत अच्छा प्रबन्ध है। इसलिए जल्दी से जल्दी की जो तारीख हो सकती थी नियुक्त कर ली गई है। दिल्ली, लखनऊ इत्यादि वाले सहमत हैं। आपकी सहमति लेकर सबेरे के पहले रवाना हो जाऊँगा।'

'कौन सी तारीख?' रानी ने प्रसन्न होकर पूछा।

'इकतीस मई रविवार, ११ बजे दिन', तात्या ने बतलाया।

रानी—'तीन-चार महीने हैं। मुझको यह तारीख़ पसन्द है। देश भर में सब जगह एक साथ?'

तात्या—'सब जगह एक साथ। तब तक हम लोग मानते हैं कि सिपाही और जनता, आत्म-नियंत्रण से काम लें।'

रानी—'मोतीबाई, अब तुम लोगों को ऐसे साधन काम में लाने पड़ेंगे, जिसमें छावनी में कोई भी उपद्रव उस दिन और उस समय तक न होने पावे।'

तात्या—'हर पल्टन के तीन तीन अफ़सरों को इस तारीख़ और समय की सूचना कर दी जावे और उनको समझा दिया जावे कि तब तक सब प्रकार के अपमान चुपचाप सहते चले जावें। त्राण की घड़ी वही है और उनसे कह देना कि जब तक कमल का फूल छावनी में न आवे, किसी को भी तारीख़ और समय न बतलाया जावे और सिपाहियों को उत्तेजित होने से बरकाया जावे। कमल का फूल बैसाख से खिलने लगता है। प्रत्येक तालाब में काफ़ी मिलता है। वह ठीक समय पर छावनी से छावनी घुमाया जावेगा। उसका आना समग्र सिपाहियों को कर्तव्य के लिए जाग्रत करना है और तारीख़ तथा ११ बजे के समय की सूचना देना है।'

मोतीबाई—'मैं अच्छी तरह समझ गई।'

रानी—'अब कहाँ जाओगे?'

तात्या—'ग्वालियर। वहां से राजपूताने की ओर। एक चक्कर चैत के उपरान्त और लगेगा। नाना साहब तीर्थ-यात्रा के लिए निकलेंगे। उसी की आड़ में सब कार्यक्रम हर जगह बतला आवेंगे।'

[४८]

फ़रवरी में एक दुर्घटना हो गई। बारकपूर की १९ नम्बर पल्टन को कारतूस प्रयोग करने के लिए दिए गए। सिपाहियों ने प्रयोग करने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया। बंगाल में उस समय कोई गोरी पल्टन न थी। इसलिए जनरल ने तुरन्त बरमा से एक गोरी पल्टन मंगवाकर १९ नम्बर पल्टन से हथियार रखवा लेने और सिपाहियों को बरखास्त कर देने का, निश्चय कर लिया। सिपाहियों को मालूम होगया। उनमें से कुछ ने चुपचाप हथियार रख देने की अपेक्षा तुरन्त क्रांति कर डालने का संकल्प किया। उनके हिन्दुस्थानी अफ़सरों ने ३१ मई तक सब्र करने की सलाह दी। परन्तु उस पल्टन का एक सिपाही मंगल पांडे आपे से बाहर हो गया। उसने कुछ अफ़सर मार डाले। उसको फांसी दे दी गई। पल्टन तोड़ दी गई।

इस घटना की सूचना बहुत शीघ्र उत्तर–भारत में फैल गई।

नाना साहब और अज़ीमुल्ला मार्च के महीने में तीर्थ यात्रा के लिए निकल पड़े। दिल्ली में गुप्त मन्त्रणाएं हुईं। फिर अम्बाला गए इसके उपरान्त मध्य अप्रैल में लखनऊ पहुंचे। वहां नाना साहब का समारोह के साथ जलूस निकला। नाना अंग्रेज़ों से प्रत्येक स्थान पर मिलता था, जिसमें वे लोग निश्चिन्त बने रहें।

लखनऊ के बाद कालपी और झांसी आए। योजना का कार्य क्रम निश्चित करके चले गए। उत्तर हिन्द की लगभग समस्त छावनियों में होते हुए नाना और अज़ीमुल्ला बिठूर आगए। स्थान स्थान और प्रदेश प्रदेश में प्रभाव वाले व्यक्ति प्रचार के कार्य में जुट गए। अभी तक अंग्रेज़ों को क्रांति के सामूहिक रूप का बिलकुल पता न था।

गरमी आगई। सरोवरों में कमल खिल उठे। फसल भी कट कर घरों में आने लगी। स्वाधीनता–युद्ध के दो चिन्ह प्रकट हुए। एक : कमल, दूसरा : रोटी।

असंख्य कमल के फूल भारतवर्ष भर की छावनियों में फैल गए।

कमल फूलों का राजा है। सरस्वती की महानता, लक्ष्मी की विशालता उसके पराग और केशर में कहीं अदृट रूप से निहित है। वह विष्णु की नाभि से निकला और अनन्त समय के उपरान्त वहीं वापिस जायगा! वह हिन्दुस्थान की प्रकृति का, संस्कृति का, मृदुल, मंजुल, मांगलिक और पावन प्रतीक है। उसका रङ्ग हलका लाल है। वह बिलकुल रक्त नहीं है। हिन्दुस्थान में होने वाली क्रांति खूनी ज़रूर थी, परन्तु उस खूनी क्रांति के गर्भ में मन्जुलता और पावनता गड़ी हुई थी। इसीलिए सन् ५७ की क्रांति का यह प्रतिबिम्ब चुना गया। क्रांति करेंगे—मानवीयता की रक्षा के लिए, क्रांति होगी—मानवीयता लिए हुए!

कमल के साथ रोटी भी चलती थी! एक गांव से दूसरे गांव एक रोटी भेजी जाती थी। दूसरे गांव में फिर ताज़ी रोटी बनी और तीसरे गांव भेज दी गई। हिन्दुस्थान की वह क्रांति हिन्दुस्थानियों की रोटी की रक्षा के लिए हुई थी। रोटी उस रक्षा के प्रयत्न का प्रतीक थी।

जिसने सोचा उसने कल्पना का कमाल कर दिया! यह उपज हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनों की थी।

कमल और रोटी का दौरा समाप्त नहीं हुआ था कि छः मई को मेरठ में विस्फोट हो गया।

मेरठ में बड़ी छावनी थी। कई हिन्दुस्थानी और अंग्रेज़ी पल्टनें थीं। एक हिन्दुस्थानी पल्टन के नब्बे सिपाहियों को कारतूस दिए गए। सिपाहियों को विश्वास था कि कारतूस अस्पर्श्य चर्बी वाले हैं। अंग्रेज़ों ने उन्हें आश्वासन दिया, कि नहीं हैं। पचासी सिपाहियों ने कारतूसों को छूने से इनकार कर दिया। उनका कोर्टमार्शल हुआ। आज्ञा न मानने के अपराध में उनको दस दस बरस के कठोर कारावास का दण्ड मिला। नौ मई के दिन इन सिपाहियों को गोरी फ़ौज और तोपख़ाने के सामने लाकर खड़ा किया गया। वरदियां उतरवा ली गईं और हथकड़ी बेड़ियां

डाल दी गई। छावनी के बाक़ी हिन्दुस्थानी सिपाही भी इस दृश्य को देखने के लिए बुला लिए गए थे।

इसके बाद वे लोग जेलखाने भेज दिए गए।

उनके साथी सिपाही क्षुब्ध हो गए, परन्तु उनको ३१ मई तक रुके रहने की आज्ञा थी, इसलिए वे गुस्सा पी गए। घटना सुबह की थी।

संध्या समय हिन्दुस्थानी सिपाही बाज़ार में गए। सबसे पहले कुछ वेश्याओं ने आवाज़ें कसीं।

'आहा! आपकी मूँछें देखिए! कैसी भांजीं हैं!! भाइयों को जेलखाने भेजकर मुए किसी पोखरे में न डूब मरे!!!'

फिर गृहस्थ स्त्रियों ने। पुरुषों ने भी ताने कसे।

सिपाही बारकों को लौट आए। धैर्य ने साथ छोड़ दिया। स्त्रियों के शब्द कलेजे में बिंध गए। रात को गुप्त मन्त्रणा हुई। निश्चय हुआ कि ३१ मई तक नहीं ठहरेंगे। उसी रात उन लोगों ने दिल्ली ख़बर भेजी कि कल परसों तक दिल्ली पहुंचते हैं, सब लोग तैयार रहें।

दस मई को मेरठ में तलवार बन्दूक़ चल गई। अंग्रेज़ों को मारमूर कर सिपाही दूसरे दिन दिल्ली पहुंच गए। वहां की हिन्दुस्थानी सेना उनसे मिल गई। दिल्ली निवासियों ने उनका साथ दिया।

चारों ओर 'दीन दीन', 'अल्ला हो अकबर' और 'हर हर महादेव' की पुकारें एक दूसरे में होकर गूँज गईं। दिल्ली की अंग्रेज़ी फ़ौज मुहासिरे में पड़ गई।

मेरठ और दिल्ली की सम्मिलित हिन्दुस्थानी फ़ौज ने दिल्ली के लाल क़िले पर अधिकार कर लिया। बादशाह बहादुरशाह को भारत का सम्राट घोषित किया और २१ तोप की सलामी दी। बादशाह ने क्रांति का नेतृत्व स्वीकार किया और उसने सबसे पहला जो काम किया, वह था गो-वध का क़तई बन्द कर देना।

मई के महीने में लगभग सारे उत्तर हिन्द में क्रांति की आग भड़क उठी—किसी दिन कहीं, और किसी दिन कहीं।

कानपूर में चौथी जून की रात को यकायक आधी रात के समय तीन फ़ायर हुए। हिन्दुस्थानी सेना ने कानपूर में क्रांति का आरम्भ कर दिया। सबेरे ख़ज़ाना और शस्त्रागार क्रांतिकारियों के हाथ में आ गए और नाना को राजा घोषित कर दिया गया।

[४९]

स्कीन, गार्डन, डनलप इत्यादि को झांसी में मई की खबरें मिल गईं और रानी को उनसे पहले ही ! रानी ने एक विशेष समय तक के लिए, लगभग सब आने-जाने वालों का महल आना बन्द कर दिया। जो थोड़े से लोग आते-जाते थे, उनमें एक मोतीबाई थी। उसी के द्वारा रानी सब महत्वपूर्ण समाचार लेती और देती थीं मोतीबाई, खुदाबख्श और रघुनाथसिंह के सम्पर्क में थी। वह इन लोगों को सब बातें भुगता देती थी—स्वाभाविक था। ये दोनों दूसरे लोगों के सम्पर्क में थे। इस प्रकार काम जारी था।

मोतीबाई ने खुदाबख्श को महल में आगन्तुकों वाले निषेध का वास्तविक कारण बतलाया। खुदाबख्श ने पीरअली को सुनाया और पीरअली ने नवाब अलीबहादुर को। ३१ मई के दिन और समय वाली बात भी उन अंग्रेज़ अफ़सरों को मालूम हो गई। परन्तु मेरठ और दिल्ली इत्यादि स्थानों में इसके काफ़ी पहले ही काण्ड हो चुके थे इसलिए उन लोगों ने ३१ मई सम्बन्धी सावधानी पर ध्यान नहीं दिया।

स्कीन ने जो चिट्ठियां मई के महीने में लैफ्टिनेंट गवर्नर के पास आगरे भेजीं उनमें साफ़ लिखा कि झांसी में विद्रोह का कोई भी चिन्ह नहीं है और सिपाहियों का पूरा विश्वास किया जा सकता है। पहली जून की चिट्ठी में उसने सबसे पहले कुछ झंझट की सूचना दी।

'रात को मुझे खबर मिली कि कुछ ठाकुर लोग कोंच गांव पर धावा करने वाले हैं। मैंने तुरन्त डनलप को सूचित किया। सवेरे ही कुछ फौज गांव की रक्षा के लिए भेज दी। फौज के पहुंचते ही ठाकुरों का विचार बदल गया। इधर-उधर भले ही विद्रोह फैला हो, परन्तु यहां के लोग हमसे कभी नहीं बिगड़ेंगे।'

असल में रानी के दृढ़ सावधानी के कारण, झांसी में असमय विस्फोट नहीं हो पाया। महल में आगन्तुकों के निषेध की बात सुनकर

इन लोगों को और भी विश्वास हो गया कि रानी को आन्दोलन से सरोकार नहीं है। कोंच पर इकतीस मई को 'कुछ ठाकुरों' का पहुँच जाना, जिसका समाचार स्कीन को पहली जून की रात को मिला, काफ़ी अर्थ रखता था। परन्तु जान पड़ता है कि उन ठाकुरों को यह नहीं मालूम था कि ३१ मई के आगे के लिए कार्यक्रम स्थगित हो गया है। और फिर दूसरे ही दिन कुछ हिन्दुस्थानी फ़ौज का डनलप के साथ कोंच पहुँच जाना ठाकुरों के हतोत्साह होने का कारण हो गया।

चौथी जून को कानपुर में और उसी दिन झांसी में क्रांति के लक्षण प्रकट हुए। गुरबख्शसिंह नाम का हवलदार कुछ सैनिकों को लेकर कम्पनी निर्मित छोटे से क़िले में, जो पुराने क़िले से एक मील शहर बाहर है, और जिसे अंग्रेज़ लोग उसकी बनावट के कारण 'स्टार फ़ोर्ट' (तारा-गढ़) कहते थे, घुस पड़ा और लड़ाई का सब सामान और रुपया-पैसा उठवाकर ले आया। डनलप बची-बचाई सेना लेकर मुक़ाबले के लिए आया।

स्टार फ़ोर्ट में कोई भी सामान ना पाकर वह लौट गया। कमिश्नर को सूचना मिली। उसकी सलाह पर छावनी के सब अंग्रेज़ अपने बाल-बच्चे लेकर क़िले में जाने को तैयार हुए। डनलप ने नौगांव छावनी, सहायता पाने के लिए, पत्र लिखा।

अब इन लोगों को रानी की, रानी के शौर्य की, उनकी योग्यता की और उनकी तेजस्विता की याद आई।

गार्डन कई अंग्रेज़ों को लेकर रानी के महल पर पहुँचा।

गार्डन ने कहलवाया, 'अभी हमको भरोसा है कि फ़ौज में जो थोड़ी सी गड़बड़ हुई है उसको दबा लेंगे, परन्तु यदि कोई बड़ी विपद आवे तो आप हमारी सहायता करिएगा।'

रानी ने उत्तर दिलवाया, इस समय हमारे पास न तो काफ़ी शस्त्र हैं और न लड़ने वाले आदमी। देश में उपद्रव फैल रहा है। यदि

अनुमति मिल जाय तो मैं अपनी और जनता की रक्षा के लिए एक अच्छी सेना भर्ती कर लूँ ।'

डनलप सहमत होकर चला आया ।

दूसरे दिन छावनी में स्कीन, गार्डन और डनलप की बैठक हुई । उन लोगों को अब भी विश्वास था कि हिन्दुस्थानी का व्यक्तिगत रूप से अपमान करना किसी भी नुक़सान का कारण नहीं बनता । वे समझते थे कि सारी फ़ौज में कुछ व्यक्ति नाराज़ हो सकते हैं, सब नहीं ।

इसी भरोसे डनलप एक और अंग्रेज़ को साथ लेकर पल्टन में पहुँचा । सिपाहियों ने, जिनमें रिसालदार काले खां सबसे आगे था, तुरन्त गोली से मार दिया ।

अंग्रेज़ों में भगदड़ मच गई ।

गार्डन अकेला रानी के पास दौड़ा गया । मुन्दर के द्वारा बातचीत हुई ।

गार्डन—'हम लोग पुरुष हैं । हमको अपनी चिन्ता नहीं । हमारी स्त्रियों और बच्चों को अपने महल में आश्रय दे दीजिए !'

मुन्दर ने रानी को आगा-पीछा सुझाया, 'सरकार इस आफत से दूर रहिए । फ़ौज के लोग हमारे महल पर टूट पड़ेंगे ।'

रानी ने धीमे, परन्तु दृढ़ स्वर में मुन्दर से कहा, 'हमारी लड़ाई अंग्रेज़ पुरुषों से है, उनके बाल-बच्चों से नहीं । यदि मैंने सिपाहियों का नियंत्रण न कर पाया तो उनका नेतृत्व क्या करूंगी ? कह दो गार्डन से कि स्त्रियों और बालकों को तुरन्त महल में भेज दे ।'

मुन्दर ने सम्वाद दे दिया ।

गार्डन तुरन्त स्त्रियों और बच्चों को छावनी से निकाल कर शहर ले आया और उनको महल में दाखिल कर दिया । रानी ने उनको भोजन करवाया और ढाढ़स दिया ।

परन्तु स्कीन ने हठ किया, इसलिए ये सब महल से हटा लिए गए और क़िले में भेज दिए गए ।

इस बीच में सिपाही छावनी के तहस—नहस में उलझे थे। फारिग़ होकर वे क़िले पर धावा करने के लिए बढ़े। गार्डन इत्यादि ने सब फाटक बन्द कर लिए। लेकिन सिपाही बहुत थे। उनके पास तोपखाना था और क़िले में तोप न थी—युद्ध सामग्री भी थोड़ी, खाने के लिए क़रीब क़रीब कुछ नहीं।

नवाब अलीबहादुर ने उसी समय पीरअली को भेजा और कहलवाया कि हुक्म हो तो ओर्छा और दतिया से सेना बुलवा ली जावे।*

अंग्रेज़ इतने भयभीत हो गए थे या इतनी हेकड़ी में थे कि उन्होंने जवाब दिया, 'कोई ज़रूरत नहीं है। छोटा सा बलवा है। दबा लेंगे।'

पीरअली ने नवाब साहब को वह उत्तर भुगता दिया? खुदाबख्श मिल गया। उसको भी सुनाया। खुदाबख्श ने मोतीबाई को रानी के पास भेजा और स्वयं रघुनाथसिंह के पास चला गया।

मोतीबाई ने कहा, 'सरकार अब समय आ गया है।' और खुदाबख्श की कही हुई बात सुनाई।

रानी बोलीं, 'नियुक्त तारीख पर आरम्भ न होने के कारण कार्य—क्रम का रूप बदल गया है। तो भी, अपनी सेना तुरन्त तैयार करने का प्रयत्न इसी समय किया जाना चाहिए। रघुनाथसिंह को समाचार दो कि कटीलो से दीवान जवाहरसिंह को बुलालें और जितनी विश्वसनीय सेना इकठ्ठी हो सके आठ मील पर, रकसा के निकट, जमा करें। घुड़सवार अधिक हों। जब तक मेरी आज्ञा न मिले झांसी की ओर न आवें।

मोतीबाई ने दीवान रघुनाथसिंह को आज्ञा सुना दी। वह खुदाबख्श को लेकर चला गया।

उस दिन सिपाही क़िले पर बराबर आक्रमण करते रहे। परन्तु अंग्रेज़ उनको गोलियों की बौछार से पीछे हटाते रहे।

---

*नवाब अलीबहादुर का बयान जो उन्होंने सन् १८५९ में दिया था और जिसकी नक़ल नवाब बन्ने के पास है।

दूसरे दिन भी लड़ाई चलती रही। दोपहर के उपरान्त अंग्रेज़ों के पास खाने के लिए एक दाना भी न रहा। क़िले वाला महल दुबारा-तिबारा छाना कि कहीं कुछ रक्खा हो। वहां कुछ भी न मिला। शाम के बाद लड़ाई कुछ ढीली हुई। अंग्रेज़ों ने किसी प्रकार रानी के पास अपनी भूख का समाचार भेजा।

रानी ने दो मन रोटियां तत्काल बनवाईं। काशीबाई से कहा, 'तू इन रोटियों को किसी प्रकार अंग्रेज़ों के पास पहुंचा। तुझको सारे गुप्त मार्ग मालूम हैं। सुन्दर और मुन्दर को साथ लेजा, और कोई न जावे। जहां मसाल की अटक पड़े जला लेना।'

सहेलियां रानी की दया को जानती थीं, परन्तु उसकी सीमा को नहीं देखा था।

काशी ने विनम्र, शांत स्वर में कहा, 'सरकार, यदि हम लोग इस परिस्थिति में पड़े होते तो क्या अंग्रेज़ लोग हमको दाना-पानी देते?'

रानी ने उत्तर दिया, 'अंग्रेज़ों जैसे बनकर हम अपने और उनके बीच के अन्तर को क्यों मिटाएं? और फिर इन लोगों को भूखों मारकर आगे बढ़ना अपने अनुष्ठान को कलुषित करना है।'

रानी मुस्कराईं। काशी का हृदय आभासमय हो गया।

परन्तु फिर भी उसने सवाल किया, 'कब तक आप इनको इस प्रकार खिलायँगी?'

'जब तक मेरी निज की सेना तैयार नहीं हो गई,' रानी ने कहा, 'जब सेना तैयार हो जावेगी, मैं उन लोगों के हथियार रखवा लूंगी और कहीं सुरक्षित स्थान में क़ैद कर दूँगी।'

उन तीनों सहेलियों ने रोटियों के गट्ठर पीठ पर लादे और गुप्त मार्ग में होकर क़िले में ले गईं। गार्डन इत्यादि ने उन लोगों को प्रणाम किया। उनमें एक व्यक्ति मार्टिन नाम का था। मार्टिन ने सुरङ्ग का रास्ता देख लिया। दूसरे दिन फिर ये तीनों क़िले में दो मन रोटियां दे

आईं। मार्टिन चुपचाप पीछे पीछे आया और गुप्त मार्ग से बाहर निकल कर आगरा चला गया। सहेलियों को या किसी को भी नहीं मालूम पड़ा।

उस दिन घोर युद्ध हुआ। गार्डन उत्तरी फाटक के ऊपर की खिड़की में से ताक ताक कर बन्दूक़ का निशाना लगा रहा था और सिपाही उसके मारे हैरान हो रहे थे। उनको शहर का एक पुराना तीरन्दाज़ मिल गया। उस तीरन्दाज़ ने एक पत्थर की ओट लेकर गार्डन पर तीर छोड़ा। तीर गार्डन की गर्दन को फोड़कर पार हो गया। गार्डन के मरते ही, समस्त अंग्रेज़ों में उदासी और निराशा छा गई।

उधर रिसालदार कालेखां ने क़िले के उत्तर-पश्चिमी कोने पर, जिसे शंकर-क़िला कहते हैं, भयानक दाब बोली और अपनी सेना की एक टुकड़ी सहित क़िले में घुस गया। अंग्रेज़ों ने देखा कि अब कोई बचत नहीं, इसलिए उन्होंने सुलह की चर्चा छेड़ी। सिपाहियों ने रक्षा का आश्वासन दिया। स्कीन ने ८ जून के सवेरे क़िले का सदर फाटक, जो दक्षिण की ओर है, खोला और कहा कि हमको सागर चले जाने दो।

सिपाहियों ने उन लोगों को क़ैद कर लिया। सिपाहियों का मुखिया रिसालदार कालेखां छावनी चला गया।

'थोड़ी देर में वहां जेल-दरोग़ा बख्शिशअली आया। उसकी आंखें लाल थीं और मुँह झुलसा हुआ। उसने अंग्रेज़ों की ओर नहीं देखा। सिपाहियों से बोला, रिसालदार साहब रास्ते में मुझे मिले थे। हुकुम दे गए हैं कि इन सबको झोकनबाग़ ले चलो।'

सिपाही अंग्रेजों को झोकनबाग़ ले आए। वहां एक सिपाही घोड़े पर सवार आया। बख्शिशअली ने उसके कान में कुछ कहा। सवार हिचका।

बख्शिशअली बोला, 'भाइयो, यह जो स्कीन कमिश्नर खड़ा है, इसने मुझको जूतों की ठोलों से पीटा था; अब क्या देखते हो!'

सिपाही एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

बख्शिशअली—'और इसने जूतों की ठोल से मुझको इतना मारा था कि मैं गिर पड़ा था। मारने के पहले इसने मुझको सुअर की गाली दी थी।'

स्कीन भयभीत खड़ा था। परन्तु इस आरोप ने उसको जगा दिया। बोला, 'मैंने गाली कभी नहीं दी। मारा शायद हो, मगर याद नहीं आता। काम में ग़फ़लत करने पर तो कभी कभी मारना भी पड़ता है।'

वह जो सवार आया था, उसकी ओर बख्शिशअली ने भयानक दृष्टि से देखा।

सवार ने कड़कती हुई आवाज़ में कहा, 'रिसालदार साहब ने इन सबके क़तल का फ़रमान किया है।'

बख्शिशअली ने सबसे पहले स्कीन को मारा, और, फिर सब काट दिए गए। उस समय वहां सिवाय उन सिपाहियों के और कोई न था।

उसी समय रिसालदार कालेखां आ गया। खून में रंगी तलवारों को देखकर क्रुद्ध स्वर में बोला, 'यह क्या किया?'

बख्शिशअली ने कहा, 'और क्या करते?'

रिसालदार ने अपने स्वर को संयत करके पूछा, 'किसके हुकुम से? क्या रानी साहब ने कोई हुकुम दिया था?'

बख्शिशअली के पास ही वह सवार खड़ा था उसने उत्तर दिया, 'रानी साहब को कुछ नहीं मालूम। वे तो हम लोगों से कुछ कटी कटी सी जान पड़ती हैं।'

'तब किसके हुकुम से?' रिसालदार ने और भी संयत स्वर में पूछा।

बख्शिशअली ने जवाब दिया, 'आपके नाम पर मेरे हुकुम से...'

'ओफ़!' रिसालदार ने धीरे से कहा, 'हमारे बड़े मुखिया जब सुनेंगे, क्या कहेंगे! मगर...मगर...'

रिसालदार थोड़ी देर चुप रहा। सूर्य की किरणों में जलन बढ़ती चली जा रही थी। रिसालदार ने मुँह पर हाथ फेरा। माथा दबाया। थोड़ी देर खामोश रहा।

बोला, 'जो हुआ सो हुआ। आगे बिना हुकुम के कोई काम न करना। रानी साहब के महल पर चलो।'

वैसी ही तलवारें लिए सिपाही महल की ओर चल पड़े।

[५०]

सिपाहियों में अनुशासन न था। घिन और गुस्सा मन को घेरे थे। अपनी विजय पर उनको पागलों जैसा हर्ष था!

रानी के महल पर वे पीछे पहुंचे, उनका शोरगुल पहले पहुंच गया। पहरेदार ने फाटक बन्द कर लिए। सेना के कुछ सिपाही शहर को लूटने की बातचीत करने लगे। क़वायद परेड सीखे हुए वे सिपाही अच्छे नेता की कमी के कारण महज हुल्लड़ और भब्भड़ की भूमिका भरने लगे। कोई किसी की नहीं सुन रहा था। हर एक आदमी अपना अपना गुबार निकालने की धुन में था।

इतने में कालेखां चिल्लाया, 'खलक खुदा का, मुलक बादशाह का, राज महारानी लक्ष्मीबाई का।'

सब सिपाहियों ने यही नारा लगाया। सिपाहियों की विचारधारा इसी नारे की ओर मुड़ गई—उस नारे ने अनुशासन की कमी को कुछ पूरा किया। खिड़की की झरप हटी। हाथ जोड़े हुए लक्ष्मीबाई दिखलाई दीं। पीछे सशस्त्र सहेलियां।

बिलकुल गौर-बदन। गले में हीरों का कण्ठा। ओठ एक दूसरे से सटे हुए। सिपाहियों ने फिर नारा लगाया।

रानी ने नमस्कार किया। हाथ उठा कर चुप रहने का संकेत किया। भीड़ में सन्नाटा छा गया। रिसालदार आगे बढ़ा।

रानी ने तीव्र स्वर में पूछा, 'क्या है? तुम रिसालदार कालेखां हो?'

स्वर में तीव्रता होते हुए भी कण्ठ का प्राकृतिक सुरीलापन था।

कालेखां ने सैनिक-प्रणाम किया। बोला, 'हुज़ूर का ताबेदार कालेखां रिसालदार मैं ही हूं।'

रानी की अनिमेष दृष्टि से कालेखां ने अपनी आंख मिलाई। कालेखां की आंख झरप गई। नीची हो गई। रानी ने कहा, 'इन तलवारों में रक्त कैसे लगा?'

कालेखां ने बतलाया।

रानी बोलीं, 'इन्हीं कर्मों से स्वराज्य और बादशाही स्थापित करोगे? तुम लोगो ने घोर दुष्कर्म किया है। क्या तुम यह समझते हो कि संसार से सब नियम संयम उठ गए?'

कालेखां—'हुज़ूर······'

रानी—'और अभी तुम लोगों में से कुछ झांसी नगर को लूटने की भी चर्चा कर रहे थे। तुम अपने को इतना भूल गए! क्या तुम लोगों को यही सिखलाया गया?'

कालेखां—'हुज़ूर के हुकुम के खिलाफ़ अगर अब कुछ हो तो हम सबको तोपसे उड़ा दिया जाय। जो आज्ञा हो उसका हम लोग पालन करेंगे।'

रानी—'तो मैं यह कहती हूं कि छावनी को लौट जाओ। सोच विचार कर सन्ध्या तक आज्ञा दूँगी कि तुम्हें क्या करना है।'

कालेखां सिपाहियों से बातचीत करने लगा।

कुछ ने कहा, 'छावनी चलो।'

कुछ बोले, 'दिल्ली चलो। वहां मज़ा रहेगा।'

कुछ ने सलाह दी, कुछ रुपया तो पहले गांठ में कर लो।'

अन्त में सिपाहियों ने निश्चय किया, 'रानी साहब से रुपया लो और दिल्ली चल दो। रानी साहब रुपया न दें तो जितना शहर से वसूल करते बने वसूल करके, झांसी को रानी के हवाले करो और आगे बढ़ो।'

कालेखां ने सिपाहियों का निर्णय रानी को सुना दिया। कहा, 'सरकार, सिपाही भूखे हैं।'

रानी परिस्थिति को समझ गईं। उन्होंने दूरदर्शिता से काम लिया। बोलीं, 'अंग्रेज़ों ने मेरे पास रुपया नहीं छोड़ा। राज्य अंग्रेज़ों के अधीन रहा है। मैं कहां से रुपया लाऊँ?'

कालेखां ने कहा, 'हम लोग मजबूर हैं। आप मालिक हैं। आपसे कुछ नहीं कह सकते। यदि यहां से रुपया नहीं मिलता है तो हम लोग शहर से उगावेंगे।'

रानी समझ गईं कि शहर लुटने वाला है। उन्होंने गले से हीरों का कंठा उतारा और कालेखां की अन्जलि में डाल दिया।

बोलीं, 'इससे तुम्हारी सारी अटकें पूरी हो जायगीं। मनुष्यों की तरह यहां से जाओ। कहीं लूटमार बिलकुल न करना, अदब क़ायदे के साथ दिल्ली पहुंचो। हिन्दुओं को गङ्गा की और मुसलमानों को कुरान की सौगन्ध है।'

कुछ सिपाहियों ने रानी की नौकरी करनी चाही। परन्तु बहुमत दिल्ली जाने के पक्ष में था। इसलिए लगभग सब दिल्ली चले गए—केवल थोड़े से रह गए। उनमें से एक लालता तोपची था।

सिपाहियों के चले जाने पर रानी ने रकसा से दीवान जवाहरसिंह इत्यादि को तुरन्त ससैन्य बुलवाया। सिपाही फ़ौजी सामान तोपें इत्यादि अपने साथ ले गए।

[५१]

रात में दीवान जवाहरसिंह ससैन्य आ गया। रानी ने आदेश भेजा कि नगर और क़िले का प्रबन्ध करो और कल दिन में मिलो।

दूसरे दिन महल में बहुत लोग उपस्थित हुए। सेना और शासन से सम्बन्ध रखने वाले सरदार, कर्मचारी, जागीरदार, जनता के साहूकार मुखिया और पञ्च।

रानी पर्दे के पीछे बैठीं।

रानी ने कहा, 'कल कठिनाई के साथ मैंने नगर को लुटने से बचा पाया। विद्रोही तो यहां से चले गए, परन्तु अव्यवस्था छोड़ गए हैं। डकैती और लूटमार बढ़ने का बहुत भय है। मैं चाहती हूँ जनता त्रस्त न होने पावे। इसीलिए मैंने झांसी राज्य के पुराने जागीरदारों और सरदारों को कुछ सेना लेकर बुलवाया है, जिसमें अव्यवस्था न रहने पावे। आप लोगों को और जनता के मुखिया पञ्चों को सम्मति के लिए बुलाया है। बतलाइए अब क्या करना चाहिए?'

गार्डन के सरिश्तेदार ने कहा, 'मैं तो यह सलाह दूंगा कि सागर के डिप्टी कमिश्नर को बलवे की सूचना दी जावे और जबलपुर के कमिश्नर को लिखा जावे कि आपने अंग्रेज़ों की ओर से शासन की बाग-डोर हाथ में ले ली है।'

माल के सरिश्तेदार ने समर्थन किया।

कोरियों का सरपन्च पूरन बोला, 'मुसकिल से तो कम्पनी कौ राज हट पाओ है अब उन्हें जा खबर काए दई जाय कै हम तुमाए लानें अपनो मूंड़ संजोरए, आओ, और फिर किड़ बिड़ करकें झांसी के प्रान खाओ?'

दोनों सरिश्तेदारों ने आंखें तरेरीं।

काछियों के मुखिया ने कहा, 'हमें नईं चाउनैं काऊ और को राज झांसी में। करैं राज तो हमाईं बाई साब, न करैं तो हमाईं बाई साब।'

तेलियों के पन्च ने मत प्रकट किया, 'हमैं तो अपनां पुरानौं राज लौटाउनें, चाए पृथी इतै की उतै हो जाय।'

प्रमुख साहूकार मगन गन्दी बोला, 'बाट जोहते जोहते आंख पथरा गईं। आज कितनी माननाओं के बाद यह दिन देखने को मिला। हम लोग तो अपना राज्य चाहते हैं।'

सरिश्तेदारों ने फिर आंखें तरेरीं।

चमारों के मुखिया ने कहा, 'एल्लो, ऊसईं आंखें नटेररए! राज बाई साब कौ और फिर बाई साब कौ और हम सब बाई साब के।'

माल का सरिश्तेदार बोला, 'नवाब अलीबहादुर साहब को भी बुला लीजिए। वे दुनियां देखे हुए हैं। ठीक सलाह देंगे। इन बेपढ़ों की सलाह पर अमल करना ग़लत होगा।'

'हौ, तैं है बड़ौ मौलवी पंडित, 'अहीरों के नायक ने रुष्ट होकर कहा, 'हमैं परदेसियन की हकूमत नईं चाउनैं।' जो उनकी पिच्छदारी करैं तीकौ करिया मौं होजाय।'

मोरोपन्त ने जन-मत का समर्थन किया। एक लक्ष्मणराव बांडे नामका चतुर काइयां भी उस सभा में था।

बोला, 'सरिश्तेदार साहब अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ों को जानते हैं। वे वास्तव में यह चाहते हैं कि बाईसाहब दो चार रोज़ यह मुफ्त का झमेला अपने सिर लिए रहें और सागर के डिप्टी कमिश्नर को बुलाकर उनका पेशकारी दिलवादें ताकि कसकर रोज़गार चले।'

अब सरिश्तेदारों को कोई कुछ कहने लगा और कोई कुछ।

वृद्ध नाना भोपटकर ने, जो अब भी काफ़ी स्वस्थ था, कहा, 'हमलोग सरिश्तेदार साहब की सलाह पर भी विचार करेंगे। इस समय इतना तो अवश्य तै कर लेना चाहिए कि राज्य का सर्वाङ्गीण शासन बाईसाहब के हाथ में रहे और सब लोग अपने को उनकी प्रजा मानकर दृढ़तापूर्वक अपने जीवन का निर्वाह करें।'

उपस्थित जनता ने हर्ष और उत्साह के साथ इस मत को स्वीकार किया।

वे दोनों सरिश्तेदार दरबार से हटा दिए गए।

रानी बोलीं, 'आप लोग जो भार मुझे दे रहे हैं, उसको मैं अपना गौरव मानती हूँ और परमात्मा की कृपा से उसको निभाऊँगी।'

लोगों ने जय-जयकार किया।

गुलाम ग़ौसखां तोपची हाथ बांधकर खड़ा हो गया।

उसने कहा, 'श्रीमन्त सरकार, मुझको मेरी पुरानी नौकरी मिलनी चाहिए।'

रानी उसको पहिचानती थीं।

बोलीं, 'तुम सदर तोपची नियुक्त किए जाते हो सब तोपों को संभालो। जो तोपें खराब कर दी गईं उनको ठीक करो।

'जो आज्ञा,' गुलाम ग़ौसखा ने गद् गद् होकर कहा,—'एक विनय और है, 'साढ़े तीन साल से ऊपर हुए एलिस क़िले वाले महल में आया और हम लोगों के मनमें आशा बँधी कि झांसी के राज्य को लौटाने की चिट्ठी लाया होगा, तब मैंने तोपों में बारूद डाल ली थी—सलामी दाग़ने के लिए। आज मुझको अपने मन की करने का हुक्म दिया जाय।'

रानी ने सुरीले मधुर स्वर में कहा, 'अभी ऐसा क्या हो गया है?'

गुलाम ग़ौस—'हो गया है सरकार। हमारे दिलों में हो गया है। दिलों के बाहर हो गया है।'

मोरोपन्त—'हो गया है।'

लक्ष्मणराव—'हो गया है।'

नाना भोपटकर—'हो गया है।'

उपस्थित जनता ने उसी को दुहराया और जय-जयकार की।

रानी ने अनुमति दे दी।

गुलाम ग़ौस ने थोड़ी देर में तोपों को संभाला। जो चलाने लायक़ थीं, उनसे सलामी दाग़ दी।

जब भीड़ छट गई, रानी ने एकान्त में अपने सरदारों से विचार-विमर्श किया।

नाना भोपटकर—'अभी लक्षणों से ऐसा प्रतीत नहीं होता कि अंग्रेज़ी राज्य उठ गया। इसलिए एक चिट्ठी जबलपुर के कमिश्नर के पास इस विषय की भेज दी जावे कि बाईसाहब झांसी में अंग्रेज़ों की ओर से राज्य कर रहीं हैं, जिससे डकैती, बटमारी और अव्यवस्था जनता को त्रस्त न कर सकें। यदि अंग्रेज़ देश से निकाल दिए गए तो झांसी हाथ से कहीं गई नहीं और यदि अंग्रेज़ झांसी वापिस आ गए तो बाईसाहब का कोई नुक़सान नहीं हो पावेगा।'

मोरोपन्त—'मैं इस मत को अनुचित समझता हूँ। नाना साहब और दिल्ली, लखनऊ इत्यादि के अपने सहयोगी सुनेंगे तो क्या कहेंगे?'

रघुनाथसिंह—'नाना साहब इत्यादि हम लोगों को अच्छी तरह जानते हैं। उनके मन मँजे हुए हैं। भ्रम नहीं हो सकता। मेरे पास रानी विक्टोरिया की दी हुई सनद और तलवार है। सनद को परवाने का काम करने दीजिए और तलवार को देश की स्वाधीनता का।'

दीवान दूल्हाजू—'मैं अपने शरीर के टुकड़े टुकड़े करने कराने को तैयार हूं। खूब डटकर राज्य हो और कसकर लड़ाई। मैं तो आज हर्ष के मारे बेक़ाबू हुआ जा रहा हूँ।'

जवाहरसिंह—'दीवान साहब समय पड़ने पर सब देखा जायगा।'

दूल्हाजू—'कैसे दीवान साहब?'

जवाहरसिंह—'आप तो रुष्ट होने लगे! लड़ना मरना सबको आता है। यह समय शान्ति के साथ सलाह करने का है, मेरे निवेदन का इतना ही अर्थ है।'

भाऊबख्शी—'मेरी समझ में नाना भोपटकर जो कह रहे हैं, वह ध्यान देने योग्य है।'

मोरोपन्त—'मैं इस सलाह के विरुद्ध नहीं हूं। परन्तु झंडे का सवाल उठता है। जगह जगह बादशाह का हरा झंडा फहराया जारहा है।'

रानी—'झांसी पर केवल भगवां झंडा उड़ाया जावे।'

नाना भोपटकर—'मेरी भी यही राय है।'

रानी—'नीति का काम नाना भोपटकर जी को सौंपा जाय वे जैसा ठीक समझें करें। मैं स्वयं रणनीति और राजनीति के समीकरण में विश्वास करती हूँ। एक का पलड़ा भारी हुआ कि दूसरा झमेले में पड़ा।'

नाना भोपटकर—'मैं स्वयं चिट्ठी नहीं लिखूंगा। गार्डन के सरिश्तेदार से लिखवाकर भेजूंगा। वह यहां से खिसिया कर गया है। मना लूंगा।'

इस बात के तै होने पर राजकार्य का विभाग किया गया और पदाधिकारी नियुक्त किए गए। लक्ष्मणराव प्रधान मन्त्री, बख्शी और तोपें ढालने वाला भाऊ, प्रधान सेनापति दीवान जवाहरसिंह, पैदल सेना के तीन कर्नल—एक दीवान रघुनाथसिंह दूसरा मुहम्मद ज़मांखां तीसरा खुदाबख्श। घुड़ सवारों की प्रधान स्वयं रानी। कर्नल—सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई। तोपखाने का प्रधान गुलाम गौसखां, नायब दीवान दूल्हाजू। न्यायाधीश नाना भोपटकर। मोरोपन्त कमठाने के प्रधान। जासूसी विभाग मोतीबाई के हाथ में, नायब जूही।

पुलिस, माल विभाग, दान धर्म विभाग इत्यादि के भी कर्मचारी नियुक्त कर दिए गए। तहसीलों के तहसीलदार भी। मऊ का परगना काशीनाथ भैया नामक एक महाराष्ट्र और आनन्दराय के हाथ में दिया गया।

उस दिन खूब लू चली। काफ़ी गरमी पड़ी। परन्तु किसी ने यह न जाना कि दिन कैसे निकल गया। जब सब काम अच्छी तरह से निबटा लिया तब रानी ने सभा विसर्जित की।

[५२]

सब कर्मचारियों को अपने अपने विभागों को दृढ़ता और सावधानी के साथ संभालने और चलाने का आदेश रानी ने कर दिया।

सवेरे से ही रिसालें और पैदल पल्टनों की क़वायद और निशानेबाजी शुरू हो गई। समय पर बिगुल बजा और ठीक समय पर सब काम हुआ और होता रहा। सेना में लगभग सब पुराने सिपाही आ गए। नई भर्ती भी बहुत हुई। सब जातियों और वर्गों के आदमी लिए गए। रानी की हिदायत थी कि सेना को सारे राज्य की जनता अपना समझे—और यह तभी हो सकता था जब सेना में सब जातियों के लोग रक्खे जाते।

झांसी का राज्य लेने पर अंग्रेज़ों ने लगभग सब पुरानी तोपों को कीले ठोक कर, बेकार कर दिया था। तोपों को ढालने के कारखानों को चालू करने का कार्य तुरन्त शुरू कर दिया गया। गोले गोलियां बनाने का, तलवारें बन्दूकें, पिस्तौलें इत्यादि तैयार करने का भी काम जारी हो गया। परन्तु नए हथियारों का कारखानों से बन कर निकलना शीघ्र सम्पादित नहीं हो सकता था। इसलिए रानी ने, जहां मिले, पुराने हथियार इकट्ठे किए। जनता ने जी खोलकर रुपया दिया।

गुलाम गौसखां ने दो दिन में तोपों को ठीक कर लिया। कुछ तोपें गड़ी हुई पड़ी थीं। उनको भी संभाल लिया।

यह अच्छा हुआ क्योंकि राज्य को हाथ में लेने के ठीक पांच दिन बाद (१३ जून की रात को) रानी को मोतीबाई ने खबर दी कि करेरा के क़िले पर सदाशिवराव नेवालकर ने हमला किया है और काफ़ी सेना इकठ्ठी करली है।

सदाशिवराव झांसी की गद्दी का दावेदार था। झांसी में ही रहता था। ३१ मई की हलचल की उसको खबर थी। वह अपनी लुड़िया मारने के लिए झांसी से निकल गया। गांवों में लोग क्रान्ति के लिए तैयार थे ही, बहुत से मनचले नौजवान हथियार बांध कर सदाशिव के साथ हो गए।

करेरा में थानेदार और तहसीलदार अंग्रेज़ों की ओर से नियुक्त थे। उनको सदाशिवराव ने मार भगाया। तुरन्त अड़ोस-पड़ोस के जागीरदारों से रुपया वसूल किया और दो एक दिन के भीतर ही अभिषेक करवा लिया। पदवी धारण की—महाराजा श्री सदाशिव नारायण ! और प्रसिद्ध किया कि मैं ही झांसी राज्य का सच्चा और सही अधिकारी हूं। गांव गांव में अपने 'महाराज' होने के घोषणा पत्र भिजवाए। जिसने उसको झांसी का राजा न माना उसकी तुरन्त जायदाद ज़ब्त करली। ऐसे सपाटे के साथ क़दम बढ़ाया मानो दो चार हफ्ते में ही सारे हिन्दुस्थान का चक्रवर्ती हो जायगा।

उसने समझा झांसी अनाथ है—एक महज़ अल्प वयस्क स्त्री के हाथ में है।

खबर पाते ही रानी ने तैयारी कर दी। नगर का प्रबन्ध मज़बूत था ही। उत्तर, पूर्व और दक्षिण के भागों का शीघ्र सन्तोष जनक प्रबन्ध कर लिया। करेरा पश्चिम दिशा में था। गड़बड़ केवल इसी दिशा में 'महाराजा' सदाशिव के कारण थी।

झांसी की सेना अधकचरी थी, परन्तु सेनापति चतुर और उत्साही थे। करेरा कूच करने के पहले तीनों सहेलियों से मुस्कराकर रानी ने कहा, 'तुम तीनों कर्नलों की परीक्षा महाराजा सदाशिव नारायण के सामने होगी।'

मुन्दर बोली, 'यदि महाराजा साहब हमारे जनरल का नाम सुनते ही न भाग गए तो।'

रानी हँसी। जैसे मोतियों ने आभा बरसाई हो। काशी शान्त प्रकृति की होते हुए भी बहुत हँसी।'

रानी ने कहा, 'काशी, मैं बिलकुल पीछे रहूँगी। तुझको आगे जाकर लोहा लेना पड़ेगा।'

काशी बोली, 'बाईसाहब, उस समय या तो आपका घोड़ा न मानेगा या आप न मानेंगीं।'

रानी ने काशी के कन्धे की चुटकी भरी और कहा, 'तेरी एक बात तो सची हो गई। उस दिन तूने कहा था—जवाहरसिंह सेनापति होगा। सो हो गया। अब देखूँ करेरा के सम्बन्ध में मुन्दर की बात ठीक निकलती है या नहीं। युद्ध होगा।'

'सरकार', मुन्दर उत्साह के साथ बोली, 'अब की बार मेरी वाणी सची होगी।'

'तो अपने हाथ से लड्डू बनाकर खिलाऊँगी', रानी ने कहा।

मुन्दर को उन थाल भर लड्डुओं की याद आ गई जो रानी ने अपने हाथ से उस दिन बनाए थे और रघुनाथसिंह इत्यादि को खिला दिए थे।

रानी ने कूच कर दिया।

वे इतने वेग के साथ अपने घुड़ सवारों को लेकर करेरा पहुचीं कि 'महाराजा' सदाशिवराव को लड़ने तक का मौक़ा नहीं दिया!

रानी ने पहुंचते ही करेरा के क़िले को ऐसा घेरा कि सदाशिव ने मुश्किल से भाग कर अपनी जान बचा पाई। सिन्धिया के राज्य में, नरवर में जाकर दम ली।

वहां से सदाशिव ने सिन्धिया से सहायता की याचना की। ग्वालियर से थोड़ी सी सहायता आई थी। परन्तु रानी ने सदाशिव को नरवर में घेर लिया—और पकड़कर झांसी ले आई। झांसी के क़िले में क़ैद कर दिया।

मुन्दर ने कहा, 'बाईसाहब, मेरी भविष्यद्वाणी कैसी अक्षर अक्षर सत्य निकली!'

काशी बोली, 'और मेरी भी। मैंने कहा था न कि बाईसाहब सबसे आगे होंगी।'

रानी ने कहा, 'मेरे दोनों कर्नल सच्चे।' मुन्दर ने अपनी सुन्दर आंखों से ज़रा तृष्णा प्रकट की।

रानी बोलीं, 'तू भी नाम करेगी सुन्दर। अबकी तेरी बारी है।'

[५३]

कानपूर की सेना के जनरल व्हीलर ने क़िलेबन्दी की और उसके अन्दर सब अंग्रेज़ों को बाल बच्चों सहित ले गया।

नाना ने व्हीलर को चेतावनी दी कि शाम तक आत्मसमर्पण कर दो वरना क़िले पर हमला किया जावेगा। व्हीलर ने नहीं माना। क़िलेबन्दी का मुहासिरा कर दिया गया और गोले बरसाए जाने लगे। व्हीलर भी खूब लड़ा। २१ दिन युद्ध हुआ।

इलाहाबाद में भी विप्लव हो गया था बंगाल की ओर से जनरल नील फ़ौज लेकर आया। उसने अत्यन्त निर्दयता के साथ मार्ग में पड़ते हुए ग्रामों को जलाया, अपराधी और निरपराधी ग्रामीणों की हत्याएं कीं। जब इलाहाबाद के विजन से घबराकर हिन्दुस्थानी पुरुष स्त्री और बालक नावों में बैठकर भागे उसके सैनिकों ने गोलाबारी की और उनमें से अधिकांश को मार दिया। इतना अन्याय और ऐसा नरसंहार किया कि सर्वत्र सनसनी, भय और क्रोध फैल गया। कानपूर में भी नील और उसके सहयोगियों के नृशंस कुकृत्यों के समाचार पहुँचे। आग सी लग गई।

हिन्दू मुसलमान स्त्रियों के भी कलेजे दहक उठे। अजीज़न नाम की एक वेश्या घोड़े पर सवार, तलवार बांधे शहर की गलियों और छावनी में उत्तेजना और प्रोत्साहन देने के लिए दौड़ धूप करने लगी!

व्हीलर ने लखनऊ से सहायता मांगी। लखनऊ खुद घिरी हुई थी। सहायता न आई। व्हीलर ने अपनी क़िले बन्दी पर सुलह का सफेद झंडा गाड़ दिया।

इसी समय इलाहाबाद के आसपास से नील की पल्टन के बीभत्स-अत्याचारों के समाचार आए। हिन्दुस्थानी सेना क्रोध में और भी पागल हो गई।

कानपूर की घिरी हुई अंग्रेज़ सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया। उनको इलाहाबाद भेज देने के लिए ४० नावें तैयार करा दी गईं। नाना अपने बिठूर वाले महल में था। सिपाहियों ने गुस्से में आकर अंग्रेज़ पुरुषों को मार डाला। इस क्रूर दुष्कृत्य के उपरान्त उन लोगों ने स्त्रियां और बच्चों का बध करना चाहा, परन्तु नाना को खबर लग गई और उसने तुरन्त प्रयत्न करके इन को बचा लिया। फिर कुछ समय उपरान्त जब इनको नावों में बिठलाकर इलाहाबाद की ओर भेजा जा रहा था, सिपाहियों ने, नाना की आज्ञा बिना, बल्कि उसकी आज्ञा के प्रतिकूल, क़तल करके अपने को कलंकित किया।

कानपूर के कुल अंग्रेज़ों में से एक स्त्री और चार पुरुष बचकर निकल पाए थे।

इन घटनाओं ने अंग्रेज़ और हिन्दुस्थानी की परस्पर हिंसा को बेहद बढ़ा दिया।

लखनऊ में विप्लव ३० मई को आरम्भ हुआ था। अवध भर में विप्लव की आग फैल गई। तो भी कई स्थानों पर विप्लवकारियों ने अंग्रेज़ स्त्री-बच्चों की प्राणपण से रक्षा की।

इलाहाबाद को क़ब्ज़े में करके नील लखनऊ की ओर बढ़ा और जनरल हैवलॉक कानपुर की ओर।

अवध अदम्य जान पड़ता था।

पन्जाब की छावनियों में भी गड़बड़ हुई, लेकिन उसको दबाने में अंग्रेज़ों को ज्यादा मुश्किल का सामना नहीं करना पड़ा।

झांसी के विप्लव का समाचार सागर और बुन्देलखण्ड के अन्य ज़िलों में पहुँचा। गार्डन के सरिश्तेदार ने सागर चिट्ठी भेजी, जिसमें अंग्रेज़ों की ओर से रानी द्वारा झांसी का प्रबन्ध किए जाने की ओर संकेत था। सागर के अंग्रेज़ों को यह भी विदित कर दिया गया कि झांसी

के अंग्रेज़ स्त्री-पुरुषों और बालकों की हत्या में रानी का बिलकुल भी हाथ नहीं था। इसी चिट्ठी के पहुँचने पर सागर के अंग्रेज़ सावधान हुए, परन्तु वे विप्लव को थोड़े समय तक ही रोकने में सफल हो पाए। सागर की एक हिन्दुस्थानी पल्टन विप्लव में शामिल हो गई। दूसरी पल्टन सरकार-भक्त बनी रही।

[५४]

विन्ध्यखण्ड की समग्र जनता में सनसनी फैली हुईथी। यहां की जनता ने कभी किसी अत्याचारी का शासन आसानी के साथ नहीं माना। स्वाभिमान को आघात पहुंचा कि व्यक्ति ने सिर उठाया और हथियार हाथ में लिया। शायद भारत का यही खंड एक ऐसा है जहां डाकू को 'बाग़ी' कहते हैं।

विन्ध्यखण्ड छोटी-बड़ी रियासतों में बिखरा हुआ था। सब बड़ी बड़ी रियासतें कम्पनी सरकार का साथ दिए थीं। बानपूर और शाहगढ़ साधारण राज्य थे। ये राज्य विप्लव में शामिल हुए।

रानी को इन दोनों राजाओं के स्वाधीनता-प्रिय विचारों का पता था। इन दोनों को उन्होंने स्वराज्य-स्थापना के संग्राम में भाग लेने के लिए पत्र भेजे। वे दोनों लड़ने के लिए उद्यत हो गए।

बानपूर राज्य के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना को लेकर सागर ज़िले में प्रवेश किया और खुरई तहसील तथा नरयावाली के परगने पर अधिकार कर लिया। इसके उपरान्त वह झांसी ज़िले के दक्षिण में ललितपुर आया और चन्देरी की ओर बढ़ा। चन्देरी अंग्रेज़ों के अधिकार में थी। वहां विप्लव नहीं हुआ था।

वहां के हाकिम परगना को राजा मर्दनसिंह के आने की ख़बर एक चन्देरी निवासी ने दी। वह कचहरी में था। रैडटेपिज्म (लाल फ़ीता—ज़ाब्ता) का पुजारी था।

ख़बर देने वाले ने कहा, 'साहब बलवा हो गया है। फ़ौज चढ़ी चली आ रही है।'

साहब उपेक्षा के साथ बोला, 'अर्ज़ी लिखवाकर लाओ। ज़बानी नहीं सुना जायगा।'

थोड़ी देर में राजा मर्दनसिंह आगया उसने बिना किसी अर्ज़ी-दरख्वास्त के चन्देरी को घेर लिया और बिना किसी अर्जी-पुर्जी के चन्देरी में अंग्रेज़ी शासन को ख़तम कर दिया।

शाहगढ़ का राजा बखतबली था। उसने भी विप्लव किया।

सागर, दमोह जबलपूर के ज़िलों में विद्रोहियों की संख्या बहुत बढ़ गई। दमोह ज़िले के तो समस्त लोधी क्रांति में सम्मिलित हो गए। ये सब शाहगढ़ के राजा के साथ थे। उससे लड़ने के लिए सागर से पल्टन आई, पर राजा बखतबली ने उसको आसानी से हरा दिया। इस राजा के एक सरदार बोधन दौआ ने गढ़ाकोटा पर चढ़ाई की और उस पर अधिकार कर लिया। राजा मर्दनसिंह चन्देरी को अधिकृत करके सागर लौटा। उसी समय जबलपूर की हिन्दुस्थानी पल्टन ने भी विप्लव कर दिया। अंग्रेज़ों ने पन्ना राज्य से सहायता मांगी। पन्ना के राजा ने अंग्रेज़ों की सहायता के लिए अपनी काफ़ी सेना भेजी। पन्ना की सेना ने विप्लव-कारियों को दमोह के ज़िले में पराजित किया और अंग्रेज़ों की ओर से दमोह का शासन किया। पन्ना की सेना जबलपूर की विप्लवकारिणी पल्टन से भी लड़ी और उसको भी हरा दिया।

झांसी के चारों ओर, दूर और पास, इसी प्रकार की परिस्थिति थी। इस परिस्थिति में रानी लक्ष्मीबाई झांसी में एक सुदृढ़ स्फटिक सी थीं। झांसी ज़िले में उन्होने प्रबलता के साथ शान्ति स्थापित की।

उनकी दिनचर्या वैसे ही नियम-संयम के साथ चली जा रही थी।

उनकी चर्या में केवल दो अन्तर आए। एक तो वे सुबह के नित्य कृत्यों और पूजा ध्यान के उपरान्त राज्य के कर्मचारियों को मिलने और उनकी समस्याओं को सुनने के लिए समय देने लगीं; दूसरे ठीक तीन बजे के पश्चात् वे कचहरी करने लगीं। बड़े और महत्वपूर्ण मुक़द्दमे वे स्वयं सुनती थीं और तुरन्त निर्णय कर देती थीं। कभी कभी दण्ड भी स्वयं अपने हाथ से दे देती थीं परन्तु केवल उन मामलों में जिनमें किसी ने बालक या स्त्री को सताया हो।

वे कचहरी में टोपी लगाकर बैठती थीं। भीतर लोहा ऊपर लाल रेशम। टोपी झालर दार-मोतियों और जवाहरों की। कंठ में हीरों की माला। सुडौल और भरे हुए वक्षस्थल पर कंचुकी, जो सुनहरी ज़रीदार

कमरपेटी से कसी रहती थी। कभी साड़ी और कभी ढीला पैजामा पहिन आती थीं।

रानी के आसन के पास ही दीवान लक्ष्मणराव काग़ज़, क़लम, दावात लिए बैठता था।

यद्यपि वह पढ़ा लिखा बहुत कम था, परन्तु वह अपनी निरक्षरता को खूबी के साथ छिपाए रहता था। कभी कभी रानी अपने हाथ से फैसला लिखती थीं और कभी बोल देती थीं। लक्ष्मणराव लिखने का बहाना करता था और नीचे बैठे हुए मुसद्दियों से लिखवा कर झटपट मुहर लगा देता था!

आए गए की उनको ज़बरदस्त याद रहती थी। नित्य का आने वाला यदि एक दिन भी चूक जाय तो वह उसके आते ही ग़ैरहाज़िरी का कारण पूछती थीं, और समय की वे कठोर पाबन्दी करती थीं।

वर्षा का आरम्भ विलम्ब से हुआ, परन्तु प्रचंडता के साथ। फिर भी उनके कार्यों में शिथिलता न आई—घोड़े की सवारी करने से ज़रूर विवश थीं!

ऐसी ऋतु में प्राय; डकैती बटमारी बन्द हो जाती है, परन्तु इन्हीं दिनो उनको सूचना मिली कि बरवासागर के पास सागरसिंह—कुँवर सागरसिंह—डाकू ने लगातार कई डाके डाले हैं और बरवासागर का थानेदार उसका कुछ भी नहीं कर पारहा है। रानी ने तुरन्त निश्चय किया। मोतीबाई द्वारा खुदाबख्श को बुलवाया।

आने पर खुदाबख्श से कहा, 'सागरसिंह का शीघ्र दमन किया जाना चाहिए।'

खुदाबख्श ने हाथ जोड़ कर स्वीकार किया।

रानी—'तुम इसी समय २५ सिपाही लेकर बरवासागर जाओ और सागरसिंह को जीवित या मृत लेआओ। उसकी दुष्टता के कारण बरवासागर और बरवासागर का पड़ोस त्रस्त और सन्तप्त हो उठा है। इस काम को कितने दिन में पूरा कर सकोगे?—एक महीने में?'

खुदाबख्श—'श्रीमन्त सरकार, जितनी जल्दी हो सकेगा उतनी जल्दी। केवल वर्षा की कठिनाई है।'

रानी—'परन्तु सागरसिंह को वर्षा कोई वि न बाधा नहीं पहुँचाती!'

खुदाबख्श—'सरकार—'

रानी—'कहो, कहो।'

खुदाबख्श—'सरकार, ये लोग कुछ ग्रामीणों से मिलकर बनियों महाजनों को लूटते हैं और फिर सघन जंगलों में भाग कर छिप जाते हैं।'

रानी—'पानी बरसते घने जंगलों में वे सोते खाते कहां होंगे? यदि तुम उन्हें उनके अड्डों पर ढूंढ़ो तो वे जंगलों में नहीं मिलेंगे बल्कि अपने अड्डों पर। कुछ और सिपाही चाहिए हों तो ले जाओ।'

खुदाबख्श नहीं सरकार इतने ही बहुत हैं। यदि अटक पड़ेगी तो समाचार दूँगा।'

खुदाबख्श चला गया।

रानी ने अपनी सहेलियों से एकान्त में सलाह की।

रानी ने प्रश्न किया, खूब बरसते पानी में घोड़ा दौड़ा सकोगी?'

मुन्दर ने उत्तर दिया, 'दौड़ा लूँगी। अभ्यास तो किया है।'

'तुम सुन्दर और काशीबाई?' रानी ने पूछा।

उन दोनों ने भी हां भरी, परन्तु काशीबाई की हां में कुछ दुर्बलता था।

रानी ने मुस्करा कर कहा, 'काशी हाल में कुछ अस्वस्थ रही है इसलिए वह महल में ही रहेगी और यहां का काम काज देखेगी। मेरी अनुपस्थिति का समाचार झांसी से बाहर न जाने पावे। खुदाबख्श के बरवासागर पहुंचने के बाद किसी दिन हम लोग यहां से चलेंगे।'

खुदाबख्श उसी दिन चला गया। सन्ध्या तक बरवासागर पहुंचा। भीगा हुआ और भूखा। परन्तु उसको मानसिक क्लेश कुछ न था।

ज़रा सुस्ता कर भोजन किया। थानेदार से सागरसिंह की गतिविधि पर बातचीत की। खुदाबख्श झांसी से यह ख्याल लेकर आया था कि बरवासागर का थानेदार किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया है, परन्तु उसका यह

भ्रम निकला। सागरसिंह बहुत चालाक और बड़ा साहसी था। उसके साथ उत्पातियों का काफ़ी बड़ा गिरोह था। बरवासागर का थाना प्रयास करने पर भी उसके कार्यक्रम में बहुत कम बाधा डाल सकता था।

सागरसिंह का घर रावली ग्राम में, बरवासागर से पांच छः कोस की दूरी पर था, परन्तु वह घर पर रहता बहुत कम था।

खुदाबख्श को बरवासागर आकर अपने आसामी की विकटता का पता लगा। और अधिक सिपाही मँगाने में नाक सी कटती थी। समय केवल एक महीने का था। मोतीबाई की याद आई। अपने जादू से शायद वह कुछ कर डालती। तुरन्त उसके मन ने इस कल्पना को धिक्कारा।

दूसरे दिन बादल ज़रा खुला। भरे भरे सांवले धूंधरे बादल आते और चले जाते थे। एकाध फुहार छोड़ जाते। नदियां नाले भरे, इठलाए हुए और सवेग। खुदाबख्श ने बरवासागर के थानेदार, उसके सिपाहियों और अपने सिपाहियों को लेकर सवेरे ही रावली की ओर दौर कर दी। छिपे लुके, भीगे और कीचड़ में लतपत, बन्दूकों को कपड़ों से ढांके, जेबों में भुने चने और प्याज़ भरे, ये लोग दुपहरी में रावली के गोंवड़े पहुंच गए। खेतों में कोई काम नहीं हो रहा था, इसलिए मार्ग में किसी से भेंट नहीं हुई। सब लोग गांव में थे और पानी के खुलने की मना रहे थे। सागरसिंह भी घर पर था।

सागरसिंह का मकान ऊँची टौरिया पर था। सागरसिंह खाना खाने के बाद झपकी ले रहा था। झकोरों हवा चल रही थी और कभी कभी फुहार पड़ जाती थी, इसलिए खुदाबख्श के दल का शब्द नहीं सुनाई पड़ा।

जब तक गांव वाले सागरसिंह को सचेत करें कि खुदाबख्श ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। उसको फाटक लगवा लेने का अवसर मिल गया। हवेली में उसके कुछ आदमी थे। वे सब जल्दी तैयार हो गए।

सागरसिंह को आश्चर्य था कि कुऋतु और कुसमय पर किसने घेरा डालने की हिम्मत की। दीवारों के तीरकशों में होकर उसने परख लिया कि घेरने वालों के साथ तोप नहीं है और वे केवल घर में घुसकर ही नुक़सान पहुंचा सकते हैं। सोचा शाम तक यों ही पड़ा रहने दूं और देखता रहूँ, फिर उसको ख्याल आया कि घेरने वाले रानी के सिपाही होंगे और इनकी पीठ पर कुछ बल कहीं और लगा होगा। इसलिए उसने तुरन्त लड़ डालने की ठानी। वह जानता था कि घेरने वाले अधिक समय बन्दूक़ नहीं चला सकेंगे और वह स्वयं सूखी जगह में बैठ कर बहुत अच्छा और बड़ी देर तक लड़ सकेगा।

हवेली टौरिया की ठीक चोटी पर न थी। किन्तु अधवारी से ज़रा ऊपर। खुदाबख्श ने इस स्थिति से लाभ उठाने का प्रयत्न किया, परन्तु सागरसिंह की पहली बाढ़ ने ही खुदाबख्श के कई सिपाहियों को घायल कर दिया। खुदाबख्श ने तुरन्त हवेली पर चढ़ जाने की आज्ञा दी। स्वयं आगे हो गया। जब तक सागरसिंह फिर बन्दूकों को भरे, खुदाबख्श हवेली पर चढ़ गया और उसके कई साथी भी। सागरसिंह ने फिर बाढ़ दाग़ी, परन्तु ख़ाली गई।

सागरसिंह ने समझ लिया कि अब गए। उसने तलवार हाथ में ली। खुदाबख्श और उसके साथी आंगन में कूद पड़े।

सागरसिंह का मुक़ाबिला न हो सका। खुदाबख्श घायल होकर गिर पड़ा। और सागरसिंह उसके साथियों को चीरता हुआ बाहर निकल गया। तब खुदाबख्श के अन्य सिपाही फाटक से होकर भीतर आ गए।

खुदाबख्श और उसके साथियों ने गांव में टिकना ठीक नहीं समझा। खुदाबख्श बैलगाड़ी से रात होते बरवासागर आ गया।

घाव बहुत गहरे न थे, परन्तु थे कई और खून काफ़ी निकल चुका था। उसकी और उसके घायल सिपाहियों की मरहम पट्टी की गई। रात में खुदाबख्श को बेहोशी रही।

सवेरे रानी के पास समाचार भेज दिया गया।

[५५]

मेघ छाए हुए थे। हवा सन्न थी। पानी रिमझिम रिमझिम बरस रहा था। महल के ऊपरी खण्ड के हवाई कमरे में रानी आंखें मूँदे हुए मोतीबाई का भजन सुन रही थीं। मुन्दर जमुहा रही थी। सुन्दर बैठे बैठे सावधानी के साथ निद्रामग्न हो गई थी। काशी सचेत थी।

भजन की समाप्ति पर रानी का ध्यान टूटा, मुन्दर की जमुहाई हटी। परन्तु सुन्दर की निद्रा–समाधि भङ्ग न हुई।

रानी ने हँसकर कहा, 'सुन्दर, देख यह भालू कहां से आ गया है।'

सुन्दर हड़बड़ा गई। भौंचक्की होकर बोली, 'कहां है बाई साहब।'

'ढूंढ़ तो पता लग जायगा', रानी ने कहा, 'साधारण भालू तो है नहीं।'

सुन्दर लज्जित हो गई।

हाथ जोड़ कर बोली, 'सरकार, दिन भर की थकी थी, इसलिए अभी अभी थोड़ी सी नींद आ गई।'

काशीबाई—'सरकार, यह आज दिन भर चक्की चलाती रही है, इसलिए बहुत थक गई।'

सुन्दर—'नहीं काशीबाई, चक्की नहीं चलाई तो और काम तो बहुत किया है।'

मुन्दर—'तुम अकेली ने!'

उसी समय पहरे वाली ने निवेदन किया, 'बरवासागर से एक सिपाही आवश्यक समाचार लाया है।'

रानी ने दूसरे कमरे में उसको बुलवाया। उनका आदेश था कि आवश्यक समाचार के लिए समय–कुसमय न देखा जावे और उनको तुरन्त सूचना दी जाया करे।

रानी सहेलियों के साथ दूसरे कमरे में गईं।

समाचार–वाहक ने कहा, 'सरकार, रावली के बागियों से सरदार खुदाबख्श की लड़ाई हुई। वे घायल हो गए हैं। सात सिपाही भी

घायल हुए हैं। सरदार को तलवार के घाव लगे हैं और सिपाहियों को गोलियों के। भगवान की कृपा से मरे कोई नहीं हैं। और, न किसी के लिए इस तरह का भय है। सागरसिंह भाग गया है। लड़ाई रावली में सागरसिंह के घर पर हुई थी।'

मोती का चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने पूछा, 'रावली बरवासागर से कितनी दूर है?'

उसने उत्तर दिया, 'पांच-छः कोस है सरकार। जासूस ने पता दिया कि सागरसिंह अपने घर है। सरदार ने धावा बोल दिया।'

रानी—'खुदाबख्श को कहां चोट आई है और अब क्या हाल है? लड़ाई को कितने दिन हो गए?'

उत्तर—'लड़ाई को आज चौथा दिन है। घाव बांहों और जांघों में हैं। सिर पर भी एक वार है। अच्छे हो रहे हैं। सिपाहियों के घाव अलबत्ता ज्यादा गहरे हैं।'

रानी—'तुमको समाचार लाने में इतना विलम्ब क्यों हुआ?'

उत्तर—'बेतवा इतनी चढ़ी हुई है कि नाव नहीं लग सकी, सरकार। आज दोपहर कुछ उतरी तब आ पाया हूं।'

रानी—'प्रबन्ध करती हूँ। तुम जाओ।'

रानी अपने कक्ष में लौट आईं।

रानी ने कहा, 'कल बरवासागर चलना चाहिए।'

काशी बोली, 'सरकार न जाएँ। कुछ ठीक नहीं किस समय ज़ोर से पानी बरस पड़े, नदी चढ़ आवे। उस दिन जब आपने बरवासागर जाने का निश्चय किया, मैं कुछ न कह सकी थी, परन्तु आज तो मैं हठ करूँगी।'

रानी सोचने लगीं। उन्होंने मोतीबाई की उदासी देख ली, और पहिचान ली।

रानी—'तुम ठीक कहती हो काशी। परन्तु स्थिति की मांग हम पर प्रबल है। यदि कल पानी न बरसा तो अच्छे घोड़ों पर चल देंगे। हाथी

भी जा सकती है, परन्तु मैं इस समय प्रदर्शन बचाना चाहती हूँ, और यह सवारी बहुत धीमी भी है।'

मोतीबाई—'सरकार को कुछ घुड़सवार साथ में ले लेने चाहिए।'

रानी—'लूँगी। दीवान रघुनाथसिंह को सवेरे सूचना दे देना।'

काशीबाई—'मैं भी चलूँगी।'

रानी—'चलना' मैं क्या रोकती हूँ !'

मोतीबाई—'आज्ञा हो तो मैं भी चलूँ।'

रानी—'नाव न लगी तो घोड़े पर नदी पार कर लेगी ?'

मोतीबाई—'सरकार की सेवा में रहते, मुझको आग-पानी, किसी का भी डर नहीं रहा।'

रानी ने स्वीकृत किया।

रात में पानी थोड़ा थोड़ा बरसता रहा। सबेरे बादल खुला सा दिखलाई दिया। रानी सहेलियों समेत बरुआसागर की ओर चल दीं। पचीस घुड़सवार साथ में ले लिए। दीवान रघुनाथसिंह संग में। शीघ्र ही घाट पर यह दस्ता पहुंच गया। देखें तो बेतवा दोनों पाट दाबे वेग से चली जा रही है।

ऊपर ज़्यादा पानी बरस गया था, इसलिए बेतवा वेतहाशा इठला गई। हवा, आँधी के रूप में चल रही थी। मल्लाहों के लिए नाव का लगाना असंभव था। अनेक घुड़सवारों के दिल टूटने लगे।

उस पार की पहाड़ियों का लहरियादार सिलसिला हरियाली से ढका हुआ था। बादल के सफेद धूमरे टुकड़े पहाड़ियों की चोटी और हरियाली को चूमने के लिए नभ से उतर उतर कर टकराते चले जा रहे थे। बेतवा का शोर आँधी का साथ पाकर तुमुल हो उठा।

रानी ने मुड़कर मोतीबाई की ओर देखा। वह उस पार की पहाड़ियों से टकराते हुए मेघ खंडों पर दृष्टि जमाए थी।

रानी ने आज्ञा दी, 'कूद पड़ो।' और वे सबसे आगे घोड़े पर पानी में धस गईं।

पहाड़ों की कन्दराओं में घुसे हुए, उनको अच्छादित किए हुए बादलों में होकर वह बकुलावलि छिपती हुई सी मालूम पड़ी। और फिर तितर-बितर हुई। जैसे हिलती हुई सांवली सलोनी चादर में टके हुए सितारे। पहाड़ पर बड़े बड़े और सघन पेड़। गहरे हरे श्यामल। बगुले एक पेड़ पर जा बैठे मानो वनदेवी ने प्रभा छिड़क दी हो। उस विषम धार के पार थोड़ी देर में किनारा दिखलाई दिया।

रानी फिर हँसी। बगुलों की सफेदी से रानी के दांतों ने तुरन्त होड़ लगा दी।

चिल्लाकर बोलीं, देखो किनारा आ गया। पहाड़ मार लिया।

थोड़ी देर में पूरा दस्ता नदी पार हो गया। सब भीग गए थे। परन्तु पीठ पर कसे ढके हुए हथियार लगभग सूखे थे। घोड़े ठिठुर गए थे।

घाट पर कपड़े सुखाने, बदलने में और घोड़ों को आराम देने में थोड़ा सा समय लगा।

फिर दौड़ लगी और रानी बरवासागर के क़िले में दोपहर के क़रीब पहुंच गई।

बरवासागर का क़िला विशाल झील के ठीक ऊपर है। झील में बरवा नाम का बड़ा नाला पड़ता है। झील को विशालता इस नाले ने ही दी है।

घायल सिपाही और खुदाबख्श इसी क़िले में पड़े हुए थे।

रानी ने तुरन्त इन सबको देखा। किसी के सिर पर हाथ फेरा, किसी की मरहमपट्टी की देखभाल की। सिपाही अपनी रानी के स्नेह को पाकर मुग्ध और गद् गद् हो गए।

फिर खुदाबख्श के पास पहुंचीं। खुदाबख्श ने चारपाई से उठने का प्रयत्न किया, परन्तु न उठ सका।

रानी को देखते ही उसके आंसू आ गए। चरण स्पर्श करने की कोशिश की।

रानी ने फिर सिर पर हाथ फेरा। चौकी पर बैठ गईं। सहेलियां खड़ी थीं। मोतीबाई सहेलियों के पीछे से खुदाबख्श को एकटक देख रही थी। खुदाबख्श ने उसको देख लिया, परन्तु आंखें उसकी मोतीबाई की ओर न थीं।

खुदाबख्श ने रानी को सागरसिंह की लड़ाई का ब्योरेवार हाल सुनाया।

रानी—'कुछ पता चला सागरसिंह अब कहां चला गया है?'

खुदाबख्श—'सरकार गांव वाले पता नहीं बतलाते। वे ही उसको शरण, भोजन इत्यादि सब देते हैं। इतना तो भी मालूम हो गया है कि वह पड़ौस के जंगल में है।'

रानी—'गांव वाले डाकुओं से डरते हैं उनके पास निर्भय होने का कोई साधन नहीं है। अंग्रेज़ी राज्य ने पञ्चायतों का सर्वनाश कर दिया है इसलिए गांवों में परस्पर सहायता की प्रणाली उठसी गई है और उसने डाकुओं को सहायता देने का रूप पकड़ लिया है। देखूंगी। तुम चिन्ता मत करो।'

खुदाबख्श—'अब सरकार स्वयं यहां आगई है। मुझको किस बात की चिन्ता? घाव लगभग अच्छे हो गए हैं। एकाध दिन में ठीक हुआ जाता हूँ। फिर देखता हूँ सागरसिंह को।'

रानी ने उसको विश्राम करने का हठ किया। मोतीबाई को खुदाबख्श के पास छोड़कर, क़िले के महल वाले हिस्से में चली गईं। स्नान ध्यान में लग गईं।

अब मोतीबाई की आंखें तरल हुईं! रुद्ध कंठ मुखरित होने के लिए आकुल हो गया। खुदाबख्श ने देख लिया।

बोला, 'यह क्या! आंखों में आंसू! आपको तो हर्ष और गर्व से हँसना चाहिए था। आपका क़ैदी—नहीं—आपकी सरकार का सिपाही, अपने मालिक के लिए कुछ तो कर सका।'

मोतीबाई ने आंख पोंछ कर कहा, 'क्या दर्द बहुत है?'

खुदाबख्श ने जवाब दिया, 'ज़रा भी नहीं। मालिक ने हाथ क्या फेरा, अमृत लुढ़का दिया। सच कहता हूँ, अभी उनकी आज्ञा हो तो घोड़े पर बैठ कर उस अत्याचारी से दो हाथ करूँ।' फिर उसने करवट लेने की कोशिश की। ज़रा कष्ट हुआ।

एक आह को दबाकर बोला, 'जान पड़ता है कि श्रीमन्त सरकार मेरे स्वस्थ होने-तक नहीं ठहरेंगी।'

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से कहा, 'मैं भी उनके साथ जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आंख मीचली। बोला, 'आप भी जाओगी।'

'क्यों ? मुझे क्या हुआ ? उनकी छाया में आदमी आंधी बन जाता है, तो औरत क्या आदमी भी नहीं बन सकती।'

मोतीबाई को रत्नावली नाटक में रङ्गमंच पर रत्नावली का अभिनय करते देखा था। स्मरण हो आया। एक साथ कोमलता और प्रसूनों के चित्र आंखों में घूम गए। खुदाबख्श ने एक निश्वास लिया।

आंखें मूंदे ही बोला, 'मेरी मरहम-पट्टी के लिए रह जाना।'

मोतीबाई ने सस्नेह कहा, 'सरकार से कह देना। मैं खुशी से रह जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आंख खोली। भ्रकुटि भङ्ग की। ज़रा रुखाई के साथ बोला, 'श्रीमन्त सरकार से भिक्षा मागूंगा कि रत्नावली को सेवा टहल के लिए दे दीजिए!'

मोतीबाई ने उसकी रुखाई की उपेक्षा की।

कहा, 'रत्नावली कौन ?'

खुदाबख्श को आश्चर्य हुआ। बोला, 'क्या मैंने रत्नावली कहा ?'

मोतीबाई हँसी। उसकी हँसी में चमत्कार था। परन्तु खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

मोतीबाई—'रत्नावली ही तो कहा। क्या कोई सपना देख रहे थे ?'

दाबख्श—'वह सपना था। अब मीठा जागरण सामने है।'

मोतीबाई ने खुदाबख्श की आंखों में स्नेह को पकड़ने का प्रयत्न किया।

बोली, 'तब मैं खुद तो उनसे नहीं कह सकूंगी। वह सोचेंगी, मैं बहुत टुची हूं।'

'जी हां', खुदाबख्श ने ज़रा सा सिर उठाकर कहा, 'आप चाहती हैं वह आपको बहादुर समझें और मुझे टुच्चा और निकम्मा।'

मैंने यह तो नहीं कहा', मोतीबाई बोली, 'खुदा करे आप जल्दी अच्छे हो जावें', और वह वहां से चली गई।

ऊपर की छत को घेरे हुए क़िले की दीवार थी। दीवार में मुडेरदार खिड़की। उसमें होकर मोतीबाई झील की लहरों को परखने लगी—और रोने लगी। जब उसने रत्नावली का अभिनय किया था इतनी नहीं रोई थी।

नियन्त्रण करके वह अपने काम में लग गई।

[५६]

सन्ध्या के पहले बरवासागर के मुखिया और पञ्च रानी से मिलने के लिए आए। नज़र न्योछावर हुई। रानी ने सबसे कुशलक्षेम की वार्ता की।

जब एकान्त पाया थानेदार ने रानी को सागरसिंह के विषय में सूचना दी। मालूम हुआ कि खिसनी के जङ्गल में आश्रय पाए हुए हैं। खिसनी का जंगल बरवासागर से १२ मील था। थानेदार को उन्होंने आदेश दिया।

'सवेरे आठ बजे तैयार रहना। किसी को मालूम न होने पावे।'

सवेरे सब तैयार हो गए।

ठीक समय पर उन्होंने मोतीबाई को बुलाकर कहा, 'तुम यहीं रहो। खुदाबख्श की मरहम पट्टी और देख भाल करना।'

मोतीबाई ने पलकें नीची कीं। बोली, 'मैं तो सरकार की सेवा में चलूंगी। क्या किसी ने प्रार्थना की है?'

'नहीं, मैं ही कह रही हूँ,' रानी ने उत्तर दिया।

मोतीबाई ने चलाने का हठ किया। उनकी अन्य सहेलियों ने भी अनुरोध किया। रानी मान गईं।

रानी अपनी और बरवासागर के थाने की टुकड़ी को लिए हुए चल दीं। उन्होंने इस टुकड़ी के दो भाग किए। एक को दीवान रघुनाथ-सिंह की अधीनता में रावली की ओर रवाना किया और दूसरी को स्वयं लेकर खिसनी के जंगल की ओर चल दीं।

दीवान रघुनाथसिंह ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। एक गांव वाले से कहलवा भेजा, 'हथियार डालकर मेरे पास आ जाओ। रानी साहब कुछ रियायत कर देंगी; नहीं तो हवेली की ईंट से ईंट बजा दूँगा।'

गांव वाले ने कहा, 'कुँवर सागरसिंह हवेली में नहीं हैं।'

रघुनाथसिंह—'तब तो हवेली को पटक देने में और भी सुभीता रहेगा।'

परन्तु जब उसको निश्चय हो गया कि सागरसिंह हवेली में नहीं है, उसने रानी के पास सन्देशा खिसनी की ओर भेज दिया। खुद हवेली का घेरा डाले रहा।

रानी जब जंगल को घेरने की योजना तैयार कर रही थीं, तब उनको यह संदेसा मिला। उनका मन कह रहा था कि सागरसिंह इसी डांग में है।

जासूस ने घंटे भर के भीतर सूचना दी, 'दो पहाड़ियों की दून के सिरे पर एक बड़ी सी पर्णकुटी में बागी खाने पीने की तार में लगे हुए है। उनके पास घोड़े हैं।'

रानी ने दोनों पहाड़ियों की ऊँचाइयां बन्दूकवालों से घिरवा लीं और दून के सिरे पर भी कुछ आदमी भेज दिए। स्वयं तीनों सहेलियों और मोतीबाई के साथ दून के निकास पर दो क़नारों में ओट लेकर घोड़ों समेत ठहर गईं।

उनकी आज्ञा थी कि ऊपर वाले सिपाही धीरे धीरे दून के ढाल की ओर बढ़ें और जब डाकुओं के ज़रा निकट आ जावें तब बन्दूकों की बाढ़ दागें।

ऐसा ही किया गया।

डाकू बेहद हड़बड़ा गए। खाना-पीना और साज़-सामान छोड़ कर घोड़ों पर नंगी पीठ सवार हुए और दून के निकास की ओर भागे।

ऊपर, तीन ओर से बन्दूकें चल रही थीं, परन्तु डाकुओं का एक आदमी भी घायल तक नहीं हुआ।

निकास पर पहुंचते ही उनके ऊपर सामने से पांच बन्दूकें चलीं। घोड़े मरे, डाकू घायल हुए। उन लोगों ने बन्दूकों से जवाब दिया, परन्तु रानी का दल आड़े लिए हुए था। इसलिए कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

डाकू सिर पर पैर रखकर इधर-उधर भागे।

काशी, सुन्दर और मोतीबाई ने अलग अलग पीछा किया।

रानी और मुन्दर के पास से जो डाकू घोड़े पर सवार, ज़रा पीछे निकला वह सतर्क था। नंगी तलवार हाथ में, गले में सोने का ज़ेवर।

वस्त्र भी उसके अच्छे थे। जो वर्णन उनको सागरसिंह का मिला था, उससे इस डाकू–सवार की हुलिया मिलती थी। रानी ने निर्णय किया कि यही सागरसिंह है। रानी ने मुन्दर को मुस्कराकर इशारा किया। मुन्दर ने ओठ दाबे और सपाटे के साथ उसपर टूटी। रानी दूसरी बग़ल से। सागरसिंह ने घोड़ा तेज़ किया। इन दोनों ने पीछे किया। जब तक मार्ग ऊबड़-खाबड़ रहा सागरसिंह बचता हुआ चला गया। जब मार्ग कुछ समस्थल आया ज़िमीन मुलायम और कीचड़ वाली मिली। सागरसिंह का घोड़ा अटकने लगा। रानी और मुन्दर के घोड़े बहुत प्रबल थे—दोनों काठियावाड़ी। सागरसिंह को एक ओर से मुन्दर ने दबाया और दूसरी ओर से रानी ने।

रानी गले में हीरों का दमदमाता हुआ कण्ठा डाले थीं। उनको देखते ही सागरसिंह समझ गया कि जिस रानी के विषय में बहुत सुना करते थे, वह स्वयं आज, इसी क्षण उसके प्राणों की गाहक बनकर आ कूदी है।

आत्मरक्षा के भाव से प्रेरित होकर उसने रानी पर वार किया। तुरन्त मुन्दर ने चपल गति से अपनी तलवार उसपर ढाई। वार ओछा पड़ा, घोड़े की पीठ पर। उधर रानी ने घोड़े को फुर्ती के साथ ज़रा सा रोका। वह कुछ अंगुल पीछे हुईं, और सागरसिंह का वार उनसे आगे खिंच गया। रानी ने अपनी तलवार ऐसी कसी कि सागरसिंह की तलवार के दो टुकड़े हो गए। उसने अपने घोड़े को बहुत खींचा दाबा, परन्तु उसकी पीठ कट चुकी थी। मुन्दर ने सागरसिंह की गर्दन को ताक कर तलवार उबारी कि रानी ने तुरन्त कहा, 'जीवित पकड़ना है', और रानी ने इस तरकीब से अपना घोड़ा सागरसिंह की बराबरी पर किया कि वह सट गया। रानी ने सागरसिंह की कमर में अपना हाथ डाला। मुन्दर समझ गई कि क्या करना है। दूसरी ओर से उसने अपना हाथ उसकी कमर में लपेट दिया और झटका देकर घोड़े पर से उठा लिया। घोड़ा पीछे रह गया। सागरसिंह ने इस वज्रपाश में से निकलने, खिसकने की

बहुत कोशिश की, परन्तु वह सफल न हो सका। उसने अपने दांतों को काम में लाने का प्रयत्न किया। रानी ने तुरन्त कहा, 'सावधान' यदि मुँह खोला तो तलवार ठूँस दूँगी।'

सागरसिंह को रानी और मुन्दर के बल की प्रतीति हो गई और उसने अपनी रक्षा को अपने भाग्य के हवाले कर दिया। थोड़ी दूर चलने पर रानी के दस्ते के लोग सिमट आए। सागरसिंह उस वज्रपाश में से निकला और रस्सियों से बांध लिया गया। घोड़े पर लादकर यह टुकड़ी एक जगह ठहर गई। मोतीबाई, काशी और सुन्दर की बाट देखने लगी! रानी ने बिगुल बजवाया। वे तीनों थोड़ी देर में उस स्थल पर आ गईं। मालूम हुआ कि बाक़ी डाकू निकल भागे। दीवान रघुनाथसिंह को समाचार देकर रानी बरवासागर चली आईं। उन्होंने कहा, 'ये भागे हुए डाकू इस समय हाथ नहीं लगेंगे। समय काफ़ी हो चुका है। बरवासागर संध्या के पहले पहुंचजाना चाहिए।'

रानी संध्या के पहले ही बरवासागर पहुंचगईं। सागरसिंह सख्त पहरे में रख दिया गया। रात होनेके पहले रघुनाथसिंह अपने दल समेत आगया।

रानी की बुद्धि और बिकट वीरता की घर घर महिमा बखानी जाने लगी। दूसरे दिन गांव गांव में चर्चा फैल गई।

समय पर सागरसिंह रानी के सामने पेश किया गया। उसने प्रणाम किया और पैर छूने के लिए हाथ बढ़ाने चाहे। पहरे वालों ने रोक लिया।

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा नाम?'

उसने उत्तर दिया, कुँवर सागरसिंह, श्रीमन्त सरकार।'

रानी मुस्कराईं। सागरसिंह उस मुस्कराहट से काँप गया।

रानी ने कहा, 'कुँवर होकर यह निकृष्ट आचरण कैसा?'

सागरसिंह बोला, 'सरकार हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराजा ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रहकर युद्ध किए। जब अंग्रेज़ आए तब उनकी आधीनता जिन

ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुए और डाके डालने लगे। मैं अपने लिए और अपने साथियों के लिए गङ्गा जी की शपथ लेकर कह सकता हूँ कि हम-लोगों ने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।'

रानी ने कहा', इन दिनों ने जिन लोगों पर तुमने डाके डाले वे सब मेरी प्रजा हैं, अंग्रेज़ों की नहीं। डाके के लिए दण्ड प्राणों का है। तैयार हो जाओ। तुम्हारे साथी भी न बचेंगे और न तुम्हारे और उनके घर। मिट्टी में मिलवा दूँगी।'

सागरसिंह ने कनखियों रानी को देखा। उसने इतनी बड़ी, ऐसी करारी और प्रतापूर्ण आंख न देखी थी। उसको ऐसा लगा मानो साक्षात् दुर्गा सामने खड़ी है।

सागरसिंह बोला, 'सरकार, मैं कुछ प्रार्थना कर सकता हूं?'

रानी ने अनुमति दी।

सागरसिंह ने प्रार्थना की, 'मुझको प्राण दण्ड गोली या तलवार से दिया जाय, फांसी से नहीं। यदि फांसी दी गई तो मेरा और जाति भर का अपमान होगा। बाग़ी बढ़ जावेंगे। घटेंगे नहीं सरकार।'

रानी—'तुमको यदि छोड़ दूँ तो क्या करोगे?'

सागरसिंह—'श्रीमन्त सरकार के सामने झूठ नहीं बोलूंगा। यदि काम न मिला तो फिर डाके डालूंगा, परन्तु सरकार के राज्य में नहीं।'

रानी—'यदि मैं कहूँ कि तुम डाके बिलकुल न डालो तो इसके बदले में क्या चाहोगे?'

सागरसिंह—'सरकार के चरणों की नौकरी, जहां रह कर लड़ाई में कल की अपेक्षा अधिक पराक्रम दिखला सकूँगा।'

रानी—'तुम्हारे साथी कितने हैं?'

सागरसिंह—'जङ्गल में १५, १६ थे। गांव में ६०, ६५ हैं और अदृष्ट सहायक मेरे सब नातेदार।'

रानी—'वे लोग क्या करेंगे?'

सागरसिंह—'सरकार की आज्ञा हुई तो सरकार की सेना में मेरे साथ नौकरी।'

रानी—'यदि मैंने आज्ञा न दी तो?'

सागरसिंह—'सरकार के राज्य के सिवाय और सब जगह उनकी बग़ावत का अधिकार-क्षेत्र चाहूँगा।'

रानी—'तुमको मैं इसी समय छोड़ दूं तो सीधे कहां जाओगे?'

सागरसिंह—'सरकार, झांसी।'

रानी—'तुम सब से बड़ी सौगन्ध किसकी मानते हो?'

सागरसिंह—गङ्गाजी की। सरकारके चरणों की, अपनी तलवार की।'

रानी—'मै तुमको छोड़ती हूं सागरसिंह। सौगन्ध खाओ और अपने साथियों सहित झांसी की सेना में भर्ती हो जाओ।'

सागरसिंह ने सौगन्ध खाई। रानी ने उसको छोड़ दिया। वह उनके पैरों में गिर पड़ा। हाथ जोड़ कर बोला, 'सरकार मैं, झांसी चलूंगा। वहां सेना में भर्ती होने के उपरान्त घर लौटूंगा और अपने साथियों को बटोर कर झांसी ले आऊँगा। और उन सबको भर्ती कराऊँगा।

'नहीं सागरसिंह,' रानी ने कहा, 'मैं बरवासागर तब छोड़ूंगी जब तुम्हारे सब साथी मेरे सामने आ जायं और सौगन्ध खा जायं नहीं तो मैं उनको पकड़ूंगी और दण्ड दूंगी।

'मेरा नाम कुँवर सागरसिंह नहीं जो मैंने सरकार के सामने सबों को पेश न किया।' सागरसिंह ने दम्भ को दबाते हुए कहा।

आंखों में झेंप थी।

रानी ज़रा हँसीं। सोचने लगीं।

बोलीं, 'तुमको कुंवर शब्द से सम्बोधन करने के पहले, मेरा एक और सामन्त इस पदवी के पाने का पात्र है। वही जो तुमको पकड़ने के लिए तुम्हारी हवेली में पहुँच गया था और जिसको तुमने घायल कर दिया था।

'सरकार' सागरसिंह बोला, 'उस दिन यदि मैंने उस सामन्त को घायल न कर पाया होता तो मैं किसी प्रकार भी न बच पाता।'

रानी—'वह यहीं है। अभी अस्वस्थ है।'

सागरसिंह—'मैं उसके दर्शन करना चाहता हूँ। क्षमा मागूंगा।'

रानी ने खुदाबख्श की कुशलवार्ता मँगवाई। वह एक सिपाही का सहारा लेकर आ गया। सागरसिंह ने उसका अभिवादन किया।

रानी ने कहा, 'क्या हाल है?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, इतने बड़े स्वामी की रक्षा होते हुए हाल बुरा हो ही नहीं सकता। जिस समय सरकार के पराक्रम की बात मालूम हुई उसी समय दुख दर्द एक स्वप्न सा हो गया।'

रानी ने कहा, 'तुमने सुन लिया होगा कि मैंने अपराधी को छोड़ दिया है।'

खुदाबख्श बोला, 'मैंने सरकार की दया का सब हाल सुन लिया।'

रानी ने कहा, 'आज से तुम कुँवर खुदाबख्श कहलाओगे और यह कुँवर सागरसिंह। जितने लोग अनोखी सूरबीरी के काम करेंगे, वे सब कुंवर कहलावेंगे और उनका वर्ग कुंवर मण्डली के नाम से राज्य के काग़ज़ पत्रों में सम्बोधित होगा।'

खुदाबख्श गद्गद् हो गया। पैर छुए और बोला, 'सरकार, कुंवर मण्डली का नाम सच्चा तब होगा जब कदमों की सेवा करते हुए हम सबके सिर कटें।'

रानी ने कहा, 'जाओ कुंवर खुदाबख्श आराम करो।'

खुदाबख्श बोला, माता का आशीर्वाद मिल गया अब आराम ही आराम है।'

'सागरसिंह', रानी ने कहा, 'तुम्हरा नाम हमारे काग़ज़ों में कुंवर युक्त लिखा जावेगा, परन्तु मुझको बराबर कुंवर, राव, दीवान इत्यादि कहने में अड़चन जान पड़ती है। क्या बुरा मानोगे?'

सागरसिंह का गला रुद्ध हो गया। जिस मनुष्य ने एक दीर्घ समय डकैती और बटमारी में बिताया था उसको जान पड़ा मेरे भीतर कुछ पवित्र भी है!

हाथ जोड़कर बोला, 'नहीं सरकार, कभी नहीं। यदि मेरा आधा नाम ही लिया जायगा तो बहुत है। मुझको क्षमा किया जाय।'

कुँवर रघुनाथसिंह ने कहा, 'जब हम लोग पूरे कुंवर की पदवी पर पहुंच जावेंगे तब हमारा नाम आधा लिया जावेगा।'

[५७]

बरवासागर में रानी कुल पन्द्रह दिन रहीं। सागरसिंह का पूरा गिरोह हथियार डालकर उनकी शरण में आगया और सेना में भर्ती हो गया।

खुदाबख्श चङ्गा तो उसी दिन से हो चला था, अब स्वस्थ हो गया। रानी झांसी ससैन्य लौट आईं। लोगों की छाती रानी के पराक्रम से उमग उठी।

नवाब अलीबहादुर रानी को बधाई देने आए। इत्र पान लेकर चले गए। कमसे कम मोतीबाई को उनकी बधाई की सचाई में विश्वास नहीं था।

अलीबहादुर और पीरअली में सलाह हुई।

अलीबहादुर—'पीरअली यह वही सागरसिंह है, जो झांसी की जेल तोड़कर भागा था। रानी ने उसी को नहीं बल्कि उसके सारे गिरोही डाकुओं को, फ़ौज में भर्ती कर लिया है। यह सब सरकार बहादुर के खिलाफ़ तैयारी का सबूत है।'

पीरअली—'और हजूर, तुर्रा यह कि उनके नए पुराने कामदार, अंग्रेज़ सरकार को इस धोखे में रखना चाहते हैं कि झांसी का राज नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की तरफ़ से किया जा रहा है और रानी साहब तो केवल मुन्तज़िम हैं।'

अलीबहादुर—'असली बात की इत्तिला जबलपूर पहुँचनी चाहिए, जैसे हो तैसे।'

पीरअली—'हुजूर का हुकुम हो तो मैं चला जाऊँ। मगर मेरे जाने से शक हो जावेगा।'

अलीबहादुर—'माल का सरिश्तेदार रानी के बुरे सलूक की वजह से नाराज़ है। वह इस काम के करने के लिए तैयार हो जावेगा। अगर जाए तो खर्चा मैं दे दूँगा।'

पीरअली—'मैं कहूंगा। वे मान जायेंगे। उनको टीकमगढ़ होकर भेजा जाय। वहां से दीवान नत्थेखां की चिट्ठी और उनके कुछ आदमियों को साथ लेते जावें, क्योंकि रास्ते में खतरा है।'

अलीबहादुर—'बिलकुल ठीक है। तुमने इस बात को तलाश किया कि झांसी खास में रानी के खिलाफ़ कितने आदमी हैं ?'

पीरअली—'ऐसे किसी खास आदमी का नाम नहीं ले सकता। मगर औरतों में रानी साहब ने जो इतनी आज़ादी फैला रक्खी है वह ज़रूर बहुत लोगों को खटकती है।'

अलीबहादुर—'रानी के खिलाफ़ बहुत लोग होंगे, मगर तुमको वे लोग रानी का आदमी समझने लगे हैं इसलिए अपने मन की बात नहीं बतलाते।'

पीरअली—'ऐसी हालत में कम से कम कुछ ऐसे आदमी हुज़ूर के पास तो ज़रूर आते, जो रानी से बैर मानते हों।'

अलीबहादुर—'हो सकता है। सम्भव है। कम से कम सरिश्तेदार वग़ैरह उनके बहुत खिलाफ़ हैं।'

नवाब अलीबहादुर ने सरिश्तेदार को इस प्रपंच के लिए राज़ी कर लिया। अपनी चिट्ठी दी। वह पहले टीकमगढ़ गया। टीकमगढ़ से उसने आदमी लिए और रुपया भी। दीवान नत्थेखां को अलीबहादुर की योजना पसन्द आई। उसने अलीबहादुर के पास अपना एक विस्वस्त आदमी भेजा। उसके द्वारा परस्पर सहायता देने की बात निश्चित हो गई। नवाब साहब को आशा हो गई कि किसी दिन नत्थेखां झांसी पर आक्रमण करेगा। वे उस दिन की बाट जोहने लगे।

ओर्छा के राजा भारतीचन्द के पीछे सन् १७७६ में विक्रमाजीत राजा हुए। राज्य की बहुत हीन अवस्था हो गई थी। राजा के पास केवल ५० सैनिक, एक हाथी और दो घोड़े रह गए थे। छः सात बरस में इन्होने अपने राज्य का फिर विस्तार कर लिया। राजधानी टीकमगढ़ में क़ायम की। सन् १८१२ में अंग्रेजों से संधि हुई। इन्होंने अपने जीवनकाल में अपने लड़के धर्मपाल को गद्दी दे दी, परन्तु उसका देहान्त हो गया और फिर बहुत वृद्धावस्था में मर गए। इनके भाई ने ७ वर्ष राज्य किया। सन् १८४१ में गद्दी खाली थी। धर्मपाल की विधवा रानी लड़ई दावेदार

हुईं। सुजानसिंह उक्त वृद्ध राजा के भतीजे थे। उनका रानी लड़ई से झगड़ा था। वे झांसी चले आए। राजा रघुनाथराव वाले महल में, नईबस्ती में, गङ्गाधरराव ने इनको ठहराया था। अलीबहादुर को अपना ठौर छोड़ना पड़ा था, इसलिए उनके मनमें झांसी के राजा के प्रति क्षोभ और भी सघन हो गया। सुजानसिंह के देहान्त के बाद सन् १८५४ में रानी लड़ई को गोद लेने की अनुमति मिल गई और उन्होंने हमीरसिंह को गोद ले लिया। सन् ५७ के विप्लव के समय रानी लड़ई हमीरसिंह की ओर से अभिभावक थीं और नत्थेखां मन्त्री था। इधर-उधर से कुछ अंग्रेज़ अफ़सर भागकर टीकमगढ़ आए। राज्य ने उनको शरण दी।

इन लोगों की सलाह से अलीबहादुर की चिट्ठी जबलपूर भेज दी गई और एक खास दूत द्वारा इनको कहला भेजा कि झांसी में अपने अनुकूल एक गिरोहबन्दी कर लो, एकाध झगड़ा-बखेड़ा हो जाय तो और भी अच्छा, हम ठीक मौक़े पर टीकमगढ़ से सेना लेकर आते हैं। नत्थेखां ने तैयारी शुरू कर दी।

अलीबहादुर को खुशी हुई। मुहर्रम आने वाला था। उपयुक्त अवसर की कमी न थी। पानी खूब बरस कर यकायक रुक गया। बादल खुल गए। दिन को कड़ी धूप, रात को धुले हुए निर्मल तारे और शीतल पवन। जनता दिन में परिश्रम करती, सन्ध्या समय आमोद-प्रमोद। रात को गहरी नीद में सो जाती।

उसके नीचे जो सुरंग तैयार की जा रही थी उसका बिचारी जनता को पता न था।

हिन्दू रियासतों में एक ज़माने से शिया मुसलमान काफी संख्या में आ बसे थे। कोई नौकर थे, कोई कारीगर, हकीम, जर्राह इत्यादि। परन्तु संख्या सुन्नी मुसलमानों की अधिक थी। इनमें भी उनाव-दरवाज़े की तरफ मेवाती और बड़ागांव दरवाज़े के निकट पठान। इन मुहल्लों में केवल मुसलमान ही न बसते थे-मराठे, ठाकुर, तेली, काछी इत्यादि

हिन्दू बीच बीच में। बड़ेगांव दरवाज़े मसज़िद थी और थोड़ी दूर पर बिहारी जी का मन्दिर। हिन्दू और मुसलमान, सब, अपने अपने विश्वास के अनुसार परम्परा क्रमागत त्योहारों को मनाते आए थे। कभी कोई झंझट खड़ा नहीं हुआ।

उस साल डोल एकादशी और मुहर्रम एक ही दिन–सोमवार को पड़े। सुन्नी मुसलमान ९, १० दिन पहले से ताज़ियों की तैयारी में लगे–अबकी साल उनको ताज़िए और भी अधिक धूमधाम के साथ निकालने थे क्योंकि उनकी झांसी स्वतन्त्र हो गई थी, उनकी रानी राज्य कर रही थीं। मन्दिरों में भी खूब नाच और गान के साथ मनकी ओर प्रस्फुटित हो रही थी। इन दिनों भी झांसी के मन्दिरों में जो नित्य नई सजावट की जाती है उनको 'घटा' कहते हैं। किसी दिन नीली घटा, किसी दिन पीली घटा, किसी दिन कोई और। सारे मन्दिर में एक ही प्रकार के रंग के वस्त्र और फूल। यह सब कई दिन एकादशी तक चलता रहा। सोमवार के रोज़ शाम के समय ताज़िए दफनाए जाने को थे और उसी समय विमानों का जलविहार होना था। यदि दोनों धर्म वालों में मेल–जोल हो तो मज़े में सब रस्में निभाली जायँ, और यदि एक दूसरे से अनमने हों, तो एक डग भी रखने को जगह नहीं।

मोतीबाई और जूही जैसे दीवाली मनाती थीं वैसे ही ताज़ियादारी भी करती थीं। और उसी उत्साह के साथ वे 'मुरलीमनोहर' के मन्दिर में, जिस समय रानी दर्शन के लिए जाती थीं, नृत्य और गान भी करती थीं—उन्हीं दिनों मुहर्रम के ज़माने में! परन्तु उनके इस कार्य पर मुसलमान किसी प्रकार का आक्षेप नहीं कर रहे थे, क्योंकि वे प्रायः रानी के साथ रहा करती थीं।

दुर्गाबाई सुन्नी मुसलमान थी। वह भी ताज़ियादारी करती थी और नाचना उसका पेशा था। मन्दिरों में उसके नृत्य की मांग थी। वह मन्दिरों में नृत्य के लिए जाने लगी।

कुछ मुसलमानों को असंगत लगा। चर्चा शुरू हो गई। इस चर्चा में पीरअली ने प्रधान भाग लिया।

सवेरे का समय था। ठंडी हवा चल रही थी, धूप में तेज़ी न आई थी। हलवाइयों की दूकान पर ताजी मिठाइयां थालों में सजतीं और बिकती चली जा रही थीं। दूसरी ओर मालिनों की, फूलों से भरी हुई डलियां, थोड़ी ही देर में खाली होने को थीं।

दुर्गा नर्तकी ने हलवाई के यहां से मिठाई ली और मालिन के यहां से फूल। मार्ग में एक जगह ठेवा लगा। पैर में ज़रा सी चोट आई। साथ ही मिठाई के दोने में से कुछ सामान नीचे जा गिरा। उसका मुँह बिदरा। पास से जाने वाला एक आदमी हँस पड़ा। दूसरे का कष्ट उसका विनोद बना। और भी कुछ लोग हँसे। एक ने कहा, 'उठालो दुर्गा नीचे पड़ा हुआ सामान, वह भी एक अदा ही होगी।'

'अरे रे मुझको तो लग गई तुम हँसते हो।' दुर्गा हँसती हुई बोली।

वहीं पीरअली भी था। वह भी हँसा था।

'अभी क्या हुआ दुर्गाबाई जी' पीरअली ने कहा, 'जैसा करोगी वैसा पाओगी।'

बात कुछ नहीं थी, परन्तु दुर्गा को आग सी लग गई। पीरअली शिया था। उसकी व्यर्थ बात में कोई गूढ़ प्रच्छन्नव्यङ्ग अवगत करके बोली, 'तुम कहां के दूध के धुले हो मियां। किसी दिन तुमको भी खुदा ऐसा समझेगा कि याद करोगे।'

पीरअली—'मैं तुम सरीखी औरत को मुँह नहीं लगाना चाहता, अपनी राह देखो।'

दुर्गा—'तुम्हीं मुँह लगने को फिरते हो। मैं तो ऐसों पर लानत भेजती हूं।'

पीरअली—'खबरदार जो बदज़बानी की। जीभ काटकर फेंक दूँगा।'

दुर्गा—'हां बल पोरख औरतों पर ही चलाने आए हो पर मेरी जबान काटने आओगे तो मैं कौन तुम्हारी जीभ की पूजा करने बै जाऊँगी। जानते हो किसका राज है?'

पीरअली दांत पीस कर रह गया।

कई लोगों ने 'जाओ जाओ,' 'रहने दो, रहने दो' कहा।

ऊपर से झगड़ा रफ़ा दफ़ा हो गया, लेकिन भीतर भीतर आग सुलग उठी।

एक सुन्नी औरत ने, सो भी नर्तकी, वेश्या ने, एक शिया मर्द पर, मुहर्रम के दिनों में लानत भेजी!

शिया सुन्नियों के झगड़े का इस अत्यन्त क्षुद्र घटना के कारण सूत्रपात हुआ।

शिया लोग घरों में चुपचाप मातम मनाते हैं। सुन्नियों में भी मातम मनाया जाता है। परन्तु ताज़िया इत्यादि बनाने की कोई पाबन्दी नहीं। तो भी बनाए जाते थे और धूमधाम के साथ निकाले जाते थे।

रघुनाथराव के समय में अलीबहादुर का बहुत प्रभाव था। शिया थे। कदाचित इसलिए भी राज्य की ओर से ताज़ियों की कोई धूमधाम नहीं की जाती थी। अलीबहादुर का प्रभाव उठ गया था, परन्तु ताज़िया सम्बन्धी परम्परा अवशिष्ट थी। शिया अपने ताज़िए चुपचाप निकाल ले जाते थे और उनका समय भी सुन्नियों के ताज़ियों के निकालने के समय से टक्कर न खाता था। परन्तु एकादशी के दिन डोल भी निकलते थे। दिन में दिन में ही शियों-सुन्नियों के ताज़िए भी निकलते थे। दोपहर दोपहर तक दोनों फ़िर्क़ों के ताज़िए निकल जायँ। और २ बजे से विमान निकलें, यही योजना सम्भव जान पड़ती थी। पर शिया-सुन्नी इसपर राज़ी नहीं दिखलाई पड़ते थे। दीवान ने समझाने-बुझाने और मनाने की कोशिश की। विफल हुआ।

ताज़ियादार कहते थे:—

'हमारा ताज़िया तीसरे नम्बर पर उठा करता है। पहले नम्बर वाला पहले उठे और चल पड़े और उसके पीछे दूसरे नम्बर वाला, हम तुरन्त उसके पीछे हो जायँगे।'

'हमारा पहला नम्बर ज़रूर है, परन्तु ताज़िया हमारा हमेशा तब उठा है, जब शियों के ताज़िए निकल गए। आप कहते हैं कि नौ बजे से ताज़िए निकालना शुरू कर दो। हम तैयार हैं, परन्तु शियों के ताज़िए पहले निकलवा दीजिए।'

और शियों के ताज़िए उतने सवेरे निकल नहीं सकते थे। विवश कोई किसी को कर नहीं सकता था। धर्म का मामला ठहरा!

अच्छा यही था कि यह झंझट दो दिन पहले खड़ा हो गया था।

शिया लोग अपने ताज़िए यदि आतुरता के साथ बड़े भोर निकाल भी ले जाते तो भी इसमें सन्देह था कि सुन्नी अपने ताज़िए हर साल के समय के प्रतिकूल दफ़ना देते या नहीं।

पीरअली इस झंझट में कहीं भी ऊपर नहीं दिखलाई पड़ता था, परन्तु भीतर भीतर उसकी उत्प्रेरणा मौजूद थी।

जब दीवान समस्या को न हल कर सका तब उसने कोतवाली से पुराने काग़ज़ मँगवाए। परन्तु पुराने काग़ज़ विप्लव के आरम्भ में ही भस्मीभूत हो चुके थे—और उनसे कुछ सहायता मिल भी नहीं सकती थी। दीवान हैरान था।

निदान मामला रानी के सामने पहुचा।

हिन्दू–मुसलमानों की भीड़ इकट्ठी हो गई।

रानी ने समझाने का यत्न किया। लड़ाना–भिड़ाना चाहतीं तो सहज ही ऐसा कर सकती थीं, परन्तु वे तो मेल कराने पर तुली हुई थीं।

जब वे कोई सुझाव देतीं तो सब 'बहुत ठीक सरकार, बहुत ठीक सरकार' कह देते, और थोड़ी देर चुप रहने के बाद 'किन्तु' 'परन्तु' करने लगते।

रानी ने यकायक कहा, 'क्या इतने हिन्दू–मुसलमानों में कोई ऐसा नहीं जो इस कठिनाई को हल कर दे?'

महल के पड़ोस में एक बढ़ई रहता था। वह आगे आया। उसने विनय की, 'सरकार, मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।'

रानी—'कहो ।'

बढ़ई—'सरकार, राम और रहीम सबसे बड़े हैं। उसी तरह उनका मन्दिर विमान से बड़ा और इनकी मसजिद ताज़िया से बड़ी। मसजिद में रहीम की पूजा की जाती है। मैं मसजिद बनाकर ठीक समय पर निकाल दूंगा। सब ताज़िए उसके साथ निकल जाना चाहिए। आगे पीछे का कोई सवाल नहीं खड़ा होता।'

सुन्नी ताज़िएदार सहमत हो गए।

'मसजिद बेशक सबसे बड़ी।'

'मसजिद ज़रूर सबसे आगे रहेगी।'

'मसजिद के पीछे पीछे हम सब के ताज़िए चलेंगे।'

उस बढ़ई ने दो दिन के भीतर कागज़ और गोंद की एक सुन्दर मसजिद बनाई। एकादशी के दिन ठीक समय पर सब ताज़िए निकल गए। सब से आगे बढ़ई की मसजिद थी। हिन्दुओं के विमानों को निकलने में कुछ विलम्ब हो गया, परन्तु इसका किसी ने बुरा न माना। इस प्रकार वह उठता हुआ तूफ़ान बिना प्रयास के ठंडा हो गया।

परन्तु दूसरा तूफ़ान जो उठ खड़ा हुआ था वह न बैठ सका।

नत्थेखां ने तैयारी कर दी थी। झांसी में झगड़ा खड़ा हो जाता तो अच्छा ही था, नहीं खड़ा हुआ तो भी उसको प्रहार करना ही था। वह एकादशी के दो दिन बाद ओर्छा में ससैन्य आ गया×। तीसरे दिन अनन्त चतुर्दशी थी।*

अनन्त चतुर्दशी के दिन भोर होते ही नत्थेखां का दूत दीवान के पास आया।

× कहते हैं कि यह बीस सहस्र सेना लेकर आया था।

*अनन्त चतुर्दशी उस साल तीन सितम्बर को थी।

[५७]

नत्थेखां के दूत ने जो संदेशा दिया, उसका सार यह था कि झांसी पहले ओर्छा का अंश था, वह अनुचित प्रकार से ओर्छा से काट दिया गया, अब ओर्छा को वापिस मिलना चाहिए। अंग्रेज़ जो पांच सहस्र वृत्ति रानी साहब को देते थे। उन्हें ज्यों की त्यों मिलती रहेगी, क़िला नगर और शस्त्र हमारे हवाले करदो।

नगर में समाचार फैलते देर न लगी। नईबस्ती से, जहां अलीबहादुर का निवास था, खबर फैली कि नत्थेखां फ़ौज लेकर आभी गया है और शहर के चारों ओर घेरा पड़ गया है। लोग घबराए!

मोतीबाई ने रानी को समाचार दिया, 'नत्थेखां बीस सहस्र सेना और अनेक तोपें लेकर ओर्छा से कूच करने वाला है।

रानी ने पूछा, 'वह ओर्छा में आया कब?

'कल आया था,' मोतीबाई ने उत्तर दिया।

रानी ने कर्मचारियों से विचार-विमर्श किया। झांसी में अच्छी तैयारी न थी। कर्मचारी सब घबराहट में थे।

अकेली रानी धैर्य धारण किए थीं। उन्होंने कहा, 'राजनीति की आप लोग जानो। युद्ध का संचालन मैं करती हूं। नत्थेखां को भागने के लिए कठिनता से गली मिलेगी।'

नाना भोपटकर ने अनुरोध किया, 'सरकार विजय की मूर्ति हैं। हमको युद्ध के अंतिम परिणाम के विषय में कोई सन्देह नहीं। यदि सरकार को मेरी राजनीति में विश्वास है, तो मेरी एक प्रार्थना मानी जाय।'

रानी ने स्वीकार किया।

भोपटकर ने कहा, 'हमारे यहां अंग्रेज़ी झंडा, यूनियन-जैक रक्खा हुआ है। अपने झंडे के साथ हम उसको भी खड़ा करेंगे। क़िले में जो अंग्रेज़ बन्द हो गए थे उनमें से एक मार्टिन नाम का व्यक्ति, फ़ौज वालों के हाथ से भाग निकला था। वह आगरा में है। एक चिट्ठी मैं उसको

इस प्रकार की लिखूंगा कि हम लोग नत्थेखां के विरुद्ध अंग्रेज़ों की ओर से लड़ रहे है। मेरी राजनीति को इस चिट्ठी से सहायता मिलेगी।'

रानी बोलीं, 'परन्तु यह राजनीति चलेगी कितने दिनों? हमको अन्त में, सारे देश में स्वराज्य स्थापित करना है। यूनियन जैक झंडे के नीचे स्वराज्य की स्थापना असम्भव है। चिट्ठी चाहे जिसको मनमानी लिखो, परन्तु झंडा तो चिट्ठी से बहुत बड़ा होता है।'

'सरकार,' भोपटकर ने कहा, 'चिट्ठी और झंडे का सामन्जस्य है। हम कुछ समय तक अपने आदर्श को ढका मुँदा रखना चाहते हैं। यदि स्वराज्य का प्रयत्न देश भरमें ३१ मई को एक साथ ही हो गया होता, तो राजनीति की दिशा कुछ और होती, परन्तु अब उसमें परिवर्तन आवश्यक है।'

लालाभाऊ बख्शी बोला, 'सरकार, देखने के दांत कुछ और खाने के कुछ और। भोपटकर साहब का यही तात्पर्य है।'

रानी मुस्कराईं। दरबारियों ने समझ लिया कि इन्होंने कोई दृढ़ निश्चय कर लिया है।

'नाना की बात को मैं नहीं टाल सकती हूँ,' रानी ने कहा, 'परन्तु गेरुआ झंडा सबसे ऊपर की बुर्ज पर रहेगा और अंग्रेज़ों का झंडा चाहे जहां, नीचे की बुर्ज पर लगा लो।'

मन्त्रिमण्डल ने स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'लालाभाऊ, तोपों का तुरन्त प्रबन्ध करो। जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि को सावधान करो। सब फाटक बन्द करके फाटकों की बुर्जों पर गोला बारूद इसी समय जमा करो। नत्थेखां कई ओर से आक्रमण करेगा। क़िले पर बड़ी तोपें चढ़ी हैं?'

भाऊ ने उत्तर दिया, 'सरकार, केवल कड़क बिजली नीचे रक्खी है। उसको अभी चढ़वाता हूं और सरकार की अन्य. आज्ञाओं का पालन करता हूँ। दीवान जवाहरसिंह यहीं हैं, परन्तु दीवान रघुनाथसिंह उनाव की ओर गए हुए हैं!'

रानी—'तुरन्त बुलाओ।'

भाऊ—'जो आज्ञा सरकार।'

रानी—'बरवासागर वाला सागरसिंह कहां है ?'

भाऊ—'मऊ वाले काशीनाथ भैया के साथ करेरा की ओर गए हुए हैं।'

रानी—'दोनों को वहां से बुलवाओ। सेना हमारे पास बहुत थोड़ी है! यदि नत्थेखां वास्तव में २० सहस्र सेना लेकर आरहा है, तो कड़ा सामना पड़ेगा, परन्तु चिन्ता मत करो। हमारे पास क़िला है। बुर्जें और तोपें हैं। और गोलन्दाज़ अच्छे हैं।'

भाऊ—'गोलन्दाज़ हमारे पास कुछ कम हैं, परन्तु सरकार का जैसा आदेश होगा, उनकी वैसी ही नियुक्ति कर ली जावेगी।'

रानी—'मैं कुछ स्त्रियों को तोपची का काम सिखलाना चाहती थी, अभी उनकी शिक्षा पूरी नहीं हो पाई है, इसलिए ग़ुलाम ग़ौसखां को ओरछे दरवाज़े के लिए तैयार रक्खो और तुम स्वयं क़िले की दाक्षिणी बुर्ज पर कड़कबिजली चढ़ाकर काम करो। मैं अपनी स्त्री सेना को लेकर सब मोर्चों पर जवाहरसिंह की और ग़ौस की सहायता करूंगी। बस्ती वालों से कह दो कि निश्चित रहें परन्तु भीड़बांधकर बाहर न चलें फिरें।'

भोपटकर ने मार्टिन के नाम एक पत्र आगरा भेजा, और नीचे वाली बुर्ज़ पर यूनियन जैक झंडा चढ़ा दिया।

ओर्छा के दूत को नत्थेखां के सन्देसे का उत्तर दिया कि लक्ष्मीबाई एक स्त्री हैं, खांसाहब को अबला रक्षा करनी चाहिए नकि उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार। रानी अंग्रेज़ों की ओर से झांसी का प्रबन्ध कर रही हैं, ओरछा अंग्रेज़ों का मित्र राज्य है, इसलिए ओर्छा की ओर से झांसी पर आक्रमण होना बिलकुल अनुचित है, यदि आक्रमण हुआ तो झांसी अपनी रक्षा करेगी।

दूत संदेसे का उत्तर लेकर तुरन्त चला गया।

रानी ने दीवान से कहा, 'मुझे खेद है कि झांसी के समग्र निवासी युद्ध-विद्या में निपुण नहीं किए जा सके हैं। मैं नत्थेखां से निबटलूँ तब अवश्य इस ओर अधिक ध्यान दूँगी।'

इसके उपरान्त वह अनन्त चतुर्दशी की पूजा के उपकरणों में संलग्न हो गईं।

जवाहरसिंह, कर्नल ज़मांखां, भाऊ बख्शी, गुलाम ग़ौसखां, इत्यादि अपने काम में ज़ोर के साथ जुट पड़े। उनके लिए एक एक क्षण महत्व का था।

भाऊ बख्शी ने कड़कबिजली दक्षिण की ऊँची बुर्ज पर चढ़ादी। गुलाम ग़ौसखां एक बड़ी तोप और कई छोटी तोपें लेकर ओर्छे दरवाज़े पर पहुँच गया। सब फाटकों की बुर्जों पर तोपें रख दी गईं। उनका मसाला तथा गोलन्दाज़ भी यथा स्थान नियुक्त कर दिए गए। जवाहरसिंह की सेना फाटकों और परकोटे के दीवारों के छेदों के पास बन्दूकें लेकर डटगई। उन सबके भोजन और शयन का वहीं प्रबन्ध हो गया। चार पांच घन्टे के भीतर झांसी ने रणक्षेत्र का रूप धारण कर लिया।

तीसरे पहर लगभग ३ बजे रानी अनन्त चतुर्दशी का पूजन समाप्त करने को ही थीं कि एक धड़ाका हुआ। दामोदरराव को अनन्त रक्षा का गंडा बँधवा कर बाहर हुई थीं कि समाचार मिला, 'नत्थेखां ने चढ़ाई करदी है और गोला शायद शहर में गिरा है।'

रानी ने दिन भर उपवास किया था। थोड़ा सा फलाहार किया। इतने में समाचार आया कि टकसाल के पीछे एक सेठ के मकान में गोला गिरा है। रानी ने कल्पना की, कि यातो नत्थेखां का गोलन्दाज़ अजान है, इतने बड़े क़िले को उसने अनी पर नहीं साध पाया, या काफ़ी चतुर है—अनुमान से महल को निशाना बनाया, परन्तु गोले ने करवट लेली और महल को बचा गया।

योधा वेश में तुरन्त घोड़े पर सवार हुईं और अपनी तीनों सहेलियों को लेकर ओर्छे दरवाज़े पहुँचीं। गुलाम ग़ौसखां को आज्ञा दी, 'शत्रु इसी ओर है। गोलों की लगातार वर्षा करो।'

काशीबाई से कहा, 'तू तुरन्त क़िले पर जा। बख्शी से कहना कि जैसे ही नत्थेखां की सेना टौरियों का आश्रय लेने के लिए पश्चिम में

सैंयर फाटक की ओर बढ़े कड़कबिजली की मार करे। जब तक उसकी सेना ओर्छा फाटक से पश्चिम की ओर न बढ़े, कड़कबिजली चुप बनीरहे।'

काशीबाई तुरन्त गई।

ग़ौस ने अपने तोपखाने को सँभाला। एक के बाद दूसरी तोप पर पलीता पड़ना शुरू हुआ। ११ तोपें थीं। जब तक अन्तिम तोप गोला उलगती तब तक पहली विनाश–वमन के लिए तैयार हो जाती।

गोला बारूद और काम करने वाले सुव्यवस्थित।

ओर्छा फाटक से पूर्व उत्तर की ओर थोड़ी दूरी पर सागर खिड़की और उसमे कुछ अधिक दूरी पर लक्ष्मी फाटक था। सुन्दर और मुन्दर के साथ रानी सागर खिड़की पर आई। इस खिड़की से पश्चिम की ओर ओर्छा फाटक की तरफ़–कुछ ही डग के फ़ासले पर एक मुहरी थी। नगर के दक्षिणी भाग के पानी का बहाव इसी में होकर था। यह मुहरी इतनी बड़ी थी कि नाटे क़द का आदमी आसानी से इसमें होकर निकल सकता था। सागर खिड़की के ऊपर जो तोपें थी, उनमें से एक को रानी ने, इस मुहरी के ऊपर दीवार के पीछे लगा दिया। एक से अधिक तोपें वहां रक्खी भी नहीं जा सकती थीं।

सागर खिड़की पर दीवान दूल्हाजू गोलन्दाज़ था। उसको रानी ने आदेश दिया, 'तुम पश्चिम दक्षिण की ओर कुछ अन्तर से तोप दागो। कोई दिखलाई पड़े या नहीं, परन्तु जब तक मेरा निषेध न मिले, ऐसा ही करते जाना।'

दूल्हाजू ज़रा ठमठमाया।

रानी ने समझाया, 'मैं चाहती हूँ कि नत्थेखां की सेना और तोपें दक्षिण की ओर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक के बीच में ही बनी रहें। तुम्हारे पास से होकर पूर्व और उत्तर की ओर न बढ़ने पावें। मैं जहां चाहती हूँ, युद्ध वहीं हो। समझ गए?'

दूल्हाजू ने कहा, 'हां सरकार।'

इसी प्रकार सब फाटकों पर आवश्यक आज्ञा देकर रानी ओर्छा फाटक पर फिर आगईं। नत्थेखां की सेना मार खाकर पीछे हटी, परन्तु टौरियों पर नहीं चढ़ी। उनके बीच में जो खाइयां थीं, उनमें रक्षा का यत्न करने लगी।

इतने में रात हो गई। रानी मुन्दर को वहीं छोड़कर महल चली आईं। गीता के अठारहवें अध्याय का पारायण या श्रवण वह यथासंभव नित्य करती थीं। पाठ समाप्त करके आधी घड़ी विश्राम किया था कि मुन्दर ने समाचार दिया—'नत्थेखां ने नगर-कोट पर चारों ओर से आक्रमण किया है, ओर्छा फाटक पर आक्रमण सबसे अधिक भयंकर है।'

रानी सहेलियां समेत सवार होकर तुरन्त ओर्छा फाटक पर पहुंची।

चांदनी रात। आकाश निर्मल। पास का काफ़ी अच्छा दिखलाई पड़ रहा था और दूर का धूमरा धूमरा। सागर-खिड़की पर गोले बरस रहे थे और ओर्छा-फाटक तो ऐसा जान पड़ता था कि अब गया, अब गया।

रानी ने गुलामग़ौस और उसके तोपचियों को समझाया, 'दो बाढ़ें जल्दी जल्दी दाग़ कर बिलकुल चुप हो जाओ। बैरी समझेगा कि तोपें बन्द करलीं। बढ़ेगा। बढ़ते ही दीवार के छेदों में से बन्दूकों की बाढ़ दाग़ी जाय। बैरी अपनी तोपें ऊँची टौरिया पर चढ़ा ले जावेगा और वहां से फाटक और बुर्ज को धुस्स करने का उपाय करेगा। उस समय तोपें दाग़ना।'

काशीबाई से कहा, 'तुम भाऊ बख्शी से क़िले में जाकर कहो कि कड़कबिजली के प्रयोग का समय आ गया। जैसे ही ओर्छा-फाटक की हमारी तोपें बन्द हों और अपनी बन्दूक़ों की बाढ़ के उपरान्त शत्रु के तोपख़ाने से बाढ़ दागे, वह कड़कबिजली और उसी बुर्ज के तोपख़ाने से ओर्छा-फाटक के बाहर की दाईं ओर वाली ऊँची टौरिया को अपना अचूक निशाना बनावे और अनवरत गोलाबारी करे।'

काशीबाई सम्वाद लेकर गईं।

रानी ने मुन्दर और सुन्दर को कुछ हिदायतें देकर दूसरी दिशाओं में भेजा।

गुलामग़ौस ने अपनी तोपों से जल्दी जल्दी दो बाढ़ें छोड़ीं। नत्थेखां की सेना ने जवाब दिया। ग़ौस की तोपें बिलकुल बन्द हो गईं। नत्थेखां ने सोचा तोपची मारे गए। उसके सिपाही दीवार पर चढ़ने के लिए बढ़े। इधर से बन्दूकों की बाढ़ दगी। उसका कोई बड़ा असर नहीं हुआ। जब बाड़ों पर बाढ़ें दगीं तब उसके सिपाही पीछे हटे। नत्थेखां ने निश्चय किया कि ऊँची टौरिया पर तोपखाना चढ़ा कर ओर्छा–फाटक और अगल–बगल की दीवारों पर गोलाबारी करने से शहर के लिए मार्ग मिल जायगा और फिर क़िले को अधिकृत कर लेना सहज हो जायगा। सागर–खिड़की की ओर से बराबर गोलाबारी हो रही थी और उसका एक तोपखाना उस ओर मोर्चा लगाए था। ओर्छा–फाटक की तोपें बन्द थीं, इसलिए उसको अपना यही उपाय महाफलदायक जान पड़ा।

उसने ऊँची टौरिया पर अपनी तोपें चढ़ा दीं और फाटक पर बाढ़ दागी। दीवारों पर उस बाढ़ का विनाशकारी प्रभाव पड़ा। तोपची उकता उठे। रानी ने वर्जित किया।

नत्थेखां की तोपों से दूसरी बाढ़ नहीं दगने पाई। टौरिया पर धम धम हुआ और विकट चीत्कार और तुरन्त क़िले से चली हुई तोपों का भयंकर गर्जन–तर्जन सुनाई पड़ा। भाऊ का निशाना अचूक बैठा। फिर बाढ़ आई। इधर रानी ने गुलाम ग़ौस को अपनी तोपों पर पलीता देने की आज्ञा दी।

अब नत्थेखां को मालूम हुआ कि किसका सामना कर रहा हूं।

उसने स्थिति को सँभालने का प्रयत्न किया, परन्तु कुछ न बन पड़ा। तोपों और सामान को छोड़कर नत्थेखां भागा। वह केवल एक दाग़ लगा गया—लक्ष्मी–फाटक पर कर्नल ज़मांखा मारा गया।

रात को लड़ाई बहुत धीमी गति से चली। परन्तु रानी की सावधानी में रत्ती भर भी अन्तर नहीं आया।

दूसरे दिन भी लड़ाई चली, परन्तु शहर से ज़रा हट कर। नत्थेखाँ की सेना का एक बड़ा भाग झाँसी के उत्तर में जाकर प्रताप मिश्र के परकोटे की आड़ पा गया, परन्तु यही उसके नाश का भी कारण हुआ।

दीवान रघुनाथसिंह एक दूर गांव में था, इसलिए विलम्ब से समाचार मिला था। वह लड़ाई के दूसरे दिन उनाव की ओर से, जो झांसी के उत्तर में है, आ गया। फाटक सब बन्द थे। खुलवाने की ज़रूरत भी न थी। उसने नत्थेखां की सेना की उस टुकड़ी पर ज़ोर के साथ हमला किया, जो प्रताप मिश्र के परकोटे से झाँसी के उत्तरी भाग को परेशानी में डाले थी। इस परकोटे के क़रीब एक पहाड़ी है। इस पहाड़ी की ओट से रघुनाथसिंह और नगर—कोट के पीछे से झांसी सेना की बन्दूकों ने नत्थेखाँ की सेना को छलनी कर दिया। ठीक अवसर पाकर रघुनाथसिंह ने प्रचण्ड वेग के साथ प्रहार किया और उस टुकड़ी को तहस—नहस कर डाला। दक्षिण—पश्चिम की ओर से काशीनाथ भैया आ पहुंचा। सर्वनाश में जो कसर रह गई थी वह उसने पूरी कर दी।

फिर कई दिन तक झांसी से ज़रा दूर नत्थेखां की सेना की छोटी-बड़ी टुकड़ियां भागते भागते लड़ती रहीं। परन्तु तोपें और बहुत सी युद्ध-सामग्री छोड़कर नत्थेखाँ को पराजित होकर भागना पड़ा।

नत्थेखां एक टुकड़ी समेत नवाब अलीबहादुर के नईबस्ती वाले महल में आ गया था। नवाब नहीं चाहते थे, परन्तु विवश थे।

नत्थेखां के भागने पर उनके महल पर काशीनाथ के दस्ते ने आक्रमण किया। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया उनके महल के पाछे बहुत निचाई पर मेंहदीबाग़ नाम का उद्यान था। एक सुरङ्ग में होकर इस बग़ीचे से निकल जाने का मार्ग था। जवाहर इत्यादि जितना सामान बना लेकर पीरअली के साथ बाहर निकल आए। बालबच्चे और एक नौकर भी।

सुरक्षित स्थान में पहुँचने पर पीरअली ने कहा, आप अकेले भांडेर चले जाइए। मैं यहीं रहूँगा। रानी की सेना के साथ मिलकर महल पर

मैं भी हमला करूँगा। उनका भला बन जाऊँगी और महल में जो कुछ बचाने योग्य है, बचाने की कोशिश करूँ। यहां रहकर आपकी अधिक सेवा कर सकूँगा।'

'किस तरह?' अलीबहादुर ने आतुरता के साथ पूछा।

पीरअली ने उत्तर दिया, 'आपको समय समय पर समाचार मिलता रहेगा और जब अंग्रेज़ यहां रानी से लड़ने के लिए आवेंगे तब उनको आपके सेवक के द्वारा बड़ी सहायता मिलेगी। आप फिर झांसी आवेंगे, फिर महल आपके होंगे और कोई बड़ी जागीर भी कम्पनी सरकार की तरफ़ से आपको मिलेगी, क्योंकि रानी का राज थोड़े दिन ही और टिकेगा। इस वक्त तो खून का सा घूँट पीकर रह जाइए। अपमान का बदला लिया जायगा आप प्रतीत रखिए।'

अलीबहादुर चले गए। पीरअली रानी के सैनिकों की ओर लौट पड़ा। उसको सैनिक पहिचानते थे। वे मारने पकड़ने को दौड़े। सागरसिंह उस भीड़ में था।

पीरअली ने कहा, 'क्या करते हो, मैं तो तुम्हारा मित्र हूं। महारानी साहब का शुभचिन्तक। बस्ती भर जानती है! नौकरी नवाब साहब की ज़रूर करता रहा हूँ परन्तु सदा उनको समझाता रहा कि सीधे रास्ते पर चलो। वे नहीं माने उन्होंने भुगता। मैं तुम्हारी सहायता करने आया हूँ। यह महल गोला गोली लायक़ नहीं है। इसमें आग लगाओ।'

सैनिकों को कुछ आश्वासन हुआ।

सागरसिंह ने पूछा, 'किधर से आग लगाएँ? नवाब साहब कहां हैं?'

'भीतर,' पीरअली ने उत्तर दिया, 'आग फाटक से लगाना शुरू करो। दरवाज़ा अपने आप खुल जायगा। भीतर काफ़ी माल है। मुझको सब पता है। राई-रत्ती बतलाऊँगा।'

सिपाहियों ने फाटक में आग लगा दी। जल जाने पर घुसने का मार्ग मिल गया। फिर भीतर के फाटकों में आग लगाई। एक दो जगह और।

पीरअली ने स्वयं कई जगह अग्नि प्रज्वलित की। जब भीतर पहुँचे तो वहां कोई न मिला।

'मालूम होता है गड़बड़ में नवाब साहब निकल भागे। मगर असबाब सामान तो मौजूद हैं।'

पीरअली ने उनकी साधारण धन सम्पत्ति लुटवा दी। थोड़ी देर में आग शान्त हो गई, परन्तु काफ़ी क्षति हो गई थी।

पीरअली का नाम हो गया कि रानी की सेना के साथ वह नवाब साहब और नत्थेखां की फ़ौज के खिलाफ़ लड़ा। काशीनाथ और सागरसिंह ने विश्वास दिलाया। मोतीबाई को आश्चर्य था। परन्तु विजय के हर्ष में अपने हितचिन्तक पर सन्देह करना, ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा को कम करना था। इसलिए पीरअली शीघ्र विश्वासपात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

रानी ने गुलाम ग़ौसखां, रघुनाथसिंह और भाऊ बख्शी को विशेष तौर पर पुरस्कृत किया।

दीवान ख़ास में जब रघुनाथसिंह अकेला रह गया तब उसने रानी से प्रार्थना की।

'सरकार मुझको सब कुछ मिल गया। केवल लड्डू रह गए।'

रानी हँसी। मुन्दर पास खड़ी थी। उससे कहा, 'उस दिन तू ही थाल उठा लाई थी। आज भी तू ही ला।'

मुन्दर थाल ले आई। बहुत प्रसन्न थी।

रानी ने आदेश दिया, 'अब तू ही खिला भी दे।' मुन्दर ने रघुनाथसिंह को लड्डू खिलाए। वह हँस हँसकर लड्डू खिलाने में सचेष्ट थी, परन्तु रघुनाथसिंह अधिक नहीं खा सका। उसके गले में कुछ अटक अटक जाता था।

[५९]

रात को मोतीबाई आई। रानी ने भजन सुना। समाप्ति पर काशीबाई ने कहा, 'सरकार मैं बड़ी तोप चलाने का काम सीखना चाहती हूँ। जब बख्शीजी कड़कबिजली चला रहे थे, मैं उनके पास थी। निशाना मिलाना, ध्यान के साथ बाहर की स्थिति को परखकर तोप का रुख बदलना और पलीता छुलाकर बैरी की बड़ी सेना में भी अकेले खलबली उत्पन्न कर देना, मुझको बहुत अच्छा लगा।'

रानी बोली, 'मैंने निश्चय कर लिया है। तुम सबको तोप का काम सिखलाऊँगी। परन्तु पूरी शिक्षा के लिए कुछ समय लगेगा।'

सुन्दर ने कहा, 'अपने यहाँ गुलाम गौस तो बहुत चतुर तोपची है ही, अँग्रेज़ी सेना से आया हुआ एक लालता ब्राह्मण भी बहुत अच्छा जानकार है। उसके ज्ञान का भी लाभ उठाया जाय।'

'दीवान रघुनाथसिंह भी इस काम को बहुत अच्छा जानते हैं', मुन्दर ने उत्साह के साथ कहा।

एक पल के बहुत छोटे अंश के लिए रानी की आंख असाधारण सजग हुई, और तुरन्त ही शान्त। मुन्दर ने लक्ष नहीं किया।

रानी ने मोतीबाई से पूछा, 'तू नाटक खेलना भूल गई कि अभी आता है?'

मोतीबाई—'सरकार, जो एक बार पानी में तैरना सीख लेता है, वह फिर कभी नहीं भूल सकता। आज्ञा हो तो किसी दिन कोई अच्छा खेल दिखलाऊँ?'

रानी—'सुचिन्त हो जाऊँ तो किसी दिन अवश्य देखूंगी। तू किस खेल को सबसे अच्छा समझती है?'

मोतीबाई—'रत्नावली को। वैसे शकुन्तला, हरिश्चन्द्र, प्रबोध-चन्द्रोदय भी बहुत अच्छे हैं।'

रानी—'मैंने सुना है कि ग्वालियर में एक मण्डली हरिश्चन्द्र नाटक बहुत अच्छा खेलती है ।'

मोतीबाई—'हम लोगों का और ग्वालियर की मण्डली का भी अभिनय देखा जावे । फिर सरकार तुलना करें । मुझको विश्वास है कि झांसी की बात सिरे पर रहेगी ।'

रानी—'मोती, मैं झांसी को हर बात में आगे देखना चाहती हूँ । अश्वारोहण और असि-विद्या में उस्ताद वज़ीरखां, अमीरखां; गोलन्दाज़ी में गुलाम ग़ौस; सैन्य-संचालन में जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह; गायन में मुग़लखां; शस्त्र बनाने में भाऊ बख्शी; कपड़े सीने में बल्देव दर्ज़ी; नृत्य में दुर्गा । ये सब झांसी के गौरव हैं । मैं चाहती हूँ कि प्रत्येक विद्या में झांसी देश भर में सबसे आगे रहे, परन्तु होगा यह तभी जब देश को अंग्रेज़ों के पंजे से छुटकारा मिल जाय ।'

मोतीबाई—'सरकार ने जिस यज्ञ का आरम्भ किया है, वह किसी न किसी दिन वरदान देगा ।'

मुन्दर—'सरकार, ब्राह्मण लोग कहते हैं कि एक यज्ञ भी होना चाहिए ।'

रानी—'ब्राह्मणों को यज्ञ और मिष्ठ-भोज चाहिए । करा दूंगी, परन्तु युद्ध के देवता कार्तिकेय, इस युग में बारूद और गोले का होम अधिक पसन्द करने लगे हैं । और ब्राह्मणों को कलियुग की यह बात कम मालूम हैं ।'

मुन्दर—'अपने यहां के भट्ट और शास्त्री लोग अनुष्ठान के लिए बहुत आग्रह कर रहे हैं । कहते हैं कि सब काम छोड़कर, पहले उनके विधान का पालन होना चाहिए ।'

रानी—'सब काम छोड़कर तो ऐसा न होगा, परन्तु और सब कार्यों के साथ साथ अवश्य हो जायगा । तो पहला काम यह है कि कल से तोप चलाना मोतीबाई ग़ौस से, काशीबाई भाऊ बख्शी से, मुन्दर रघुनाथसिंह से और सुन्दर.........'

मुन्दर—'सरकार, दीवान दूल्हाजू भी अच्छे जानकार हैं।'

रानी—'उस पर ध्यान नहीं जम रहा था। उस दिन वह ठमठमा गया था, परन्तु तोप अच्छी चलाता है। ठीक है। उससे मुन्दर सीखे।'

काशीबाई—'उस रात भाऊ बख्शी ने ऐसा प्रहार किया, कि नत्थेखां इस जन्म में तो भूलेगा नहीं। मेरे कान तो आज तक सनसना रहे हैं।'

रानी—'अबकी बार दिखता है कि गोरों का सामना होगा। तुम सब की उस समय परीक्षा होगी।'

काशीबाई—'सरकार, हम लोगों की परीक्षाके फल से निराश न होंगी।'

मोतीबाई को एक बात कसक रही थी। उसने प्रसङ्ग-विक्षेप सा करते हुए कहा।

'सरकार ने कहा था कि सब कार्य साथ साथ चलेंगे, तो नाटकशाला का भी काम चालू कर दूँ?'

'तुमको उसके लिए विशेष प्रयत्न करना ही क्या पड़ेगा?' रानी बोलीं, 'नृत्य गान जानती ही हो। अवसर आने पर बतला दूँगी।'

मोतीबाई—'सरकार ने दुर्गा के नृत्य के विषय में कहा था। वह कत्थक नृत्य बहुत अच्छा करती है, परन्तु प्राचीन नृत्यकला को बिलकुल नहीं जानती।'

रानी मुस्कराई।

रानी—'मैं भूल गई थी मोती। नृत्य के विषय में झांसी का गौरव वास्तव में तुम हो, परन्तु बैरियों को तो गोलों से रिझाना होगा।'

मोतीबाई ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'सरकार उनको ऐसा रिझाया जावेगा कि अनन्त काल तक उसकी चर्चा होगी।'

मुन्दर ने अनुरोध किया, 'सरकार, नाटक भी किसी दिन खिलवाया जाय।'

'अच्छा मुन्दर', रानी ने कहा, 'मोतीबाई उसकी भी तयारी करेगी। यज्ञ की जिस दिन पूर्णाहुति होगी, उसी रात नाटक होगा। मोती, नाटक के सम्बन्ध में, मैं तुमसे कुछ पूछना चाहती हूँ।'

मोतीबाई—'आज्ञा हो सरकार।'

रानी—'तू जब अभिनय करती है, तब क्या अपने को बिलकुल भूल जाती है?'

मोतीबाई—'बिलकुल तो नहीं भूल सकती सरकार।'

रानी—'क्या क्या याद रहता है?'

मोतीबाई—'अपना निजत्व, दर्शक और अभिनय।'

रानी—'क्या सब दर्शक?'

मोतीबाई—नहीं सरकार। जो दर्शक विशेष रुचि दिखलाते हैं, उनके ऊपर प्रायः ध्यान जाता है। तभी अभिनय अच्छा हो सकता है।'

रानी—'तुमको अपने दर्शक याद रहते हैं?'

मोतीबाई—'यदि वे बार बार नाटकशाला में आवें तो।'

रानी—'तुम्हें अपने कुछ दर्शकों का अब भी स्मरण है?'

मोतीबाई की आंख ज़रा लजीली हुई, परन्तु उसने तुरन्त संभल कर कहा, 'हां सरकार कोई कोई याद रह जाते हैं।'

रानी ने पूछा, 'तुझे कौन सबसे अधिक याद है?'

क्षण के दशांश के लिए सहेलियों ने एक दूसरे के प्रति दृष्टिपात किया। मोतीबाई की आंख परवश नीची पड़ गई। सिर उठाया। कहने को हुई। ज़रा सा हँसी। फिर गंभीर हो गई। खांसी।

बोली, 'कोई नाम नहीं याद आता सरकार।' और हँसी।

रानी को भी हँसी आगई।

'अच्छा जब याद आ जावे तब बतलाना,' रानी ने कहा, 'अभी कोई जल्दी नहीं।'

मोती ने निष्कृति की सांस ली।

काशीबाई—'सरकार, इनके साथ जूही भी अभिनय किया करती थी।'

रानी—'वह भी अब अपना काम कर रही है।'

मोतीबाई—'उसने खूब काम किया और करेगी।'

रानी—'उसको भी गुलाम गौस से तोप चलाना सिखलाओ। हमको बहुत तोपचियों की आवश्यकता पड़ेगी। जिसके पास तोपें और तोपची, उसी के हाथ विजय।'

काशीबाई—'जहां हमारी श्रीमन्त सरकार होंगी, वहीं विजय होगी।'

[६०]

झांसी के दक्षिण में सागर का ज़िला और सागर के दक्षिण पश्चिम में भोपाल रियासत। भोपाल रियासत में आमापानी नाम की गढ़ी थी। थोड़ी दूर पर राहतगढ़ नाम का क़िला था। आमापानी के अधिकारी ने राहतगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया। राहतगढ़ में बहुत से पठान इकट्ठे होगए।

सागर की सेना ने विद्रोह किया और सागर को लूट लिया। जबलपूर में विप्लव हुआ। सारे विन्ध्यखण्ड में विप्लव की लपटें बढ़ीं।

सन् १८५८ के मध्य सितम्बर में जनरल सर ह्यू रोज़ ससैन्य इंगलैंड से बम्बई उतरा। विप्लवकारियों से बदला लेना और विप्लव का दमन करना उसका दृढ़ निश्चय था।

उसी महीने में दिल्ली का पतन हुआ। बहादुरशाह क़ैद कर लिया गया और उसके दो शहज़ादे मार डाले गए। लखनऊ का मुहासिरा समाप्त हुआ। कानपूर में तात्या टोपे ने अंग्रेज़ों के कम से कम तीन जनरलों को लड़ाई में हराया। परन्तु दिल्ली के पतन का विप्लवकारियों पर बुरा प्रभाव पड़ा।

लखनऊ के प्रथम पतन पर भी अवध में जनता ने युद्ध जारी रक्खा। अंग्रेज़ों ने इलाहाबाद, फ़तेहपूर इत्यादि में प्रचण्ड हिंसावृत्ति से प्रेरित होकर भीषण और बीभत्स क्रूर कृत्य किए। इनके समाचार झांसी में आए। बिठूर में पतन हुआ। नाना साहब कठिनाई से रात के समय अपनी पत्नियों और विमाता को नाव में बिठला कर निकल पाए और लखनऊ की बेगम के पास पहुंच पाए। झांसी वालों के संसर्ग में फिर कभी नहीं आए। राव साहब और तात्या टोपे अपनी सेना लेकर कालपी आ गए और यहां से युद्ध की योजनाएँ प्रयुक्त करने लगे। यह समाचार भी झांसी आया।

झांसी में हार खाकर नत्थेखां टीकमगढ़ में शांति के साथ नहीं बैठा, वरन झांसी के पूर्वीय परगनों में डेढ़ दो महीने तक लूट मार करता

रहा। उसकी पंडवाहा, गरौठा और नौटा की लूट विख्यात है। परन्तु रानी ने थोड़े समय में ही यह सब लूट मार कुचल दी और नत्थेखां को बिलकुल हट जाना पड़ा।

रानी की छोटी सी सेना को दहलाने और हैरान करने के लिए यह सब काफ़ी था, परन्तु रानी को घबराया हुआ या चिन्तित कभी किसी ने नहीं देखा। उनका कार्य सतत, अनवरत जारी था।

वही कार्य क्रम। वही दिन चर्या। वही सद्भावना और जनता की रक्षा तथा जनता के नायकत्व का वही दृढ़ संकल्प। 'यदि अकेले ही स्वराज्य की लड़ाई लड़नी पड़े तो लड़ी जायगी'—यह रानी का अटल निश्चय था। और उनका अचल विश्वास था कि एक युद्ध और एक जन्म से ही कार्य पूरी तौर पर सम्पन्न नहीं होता।

'संभवामि युगे युगे'

उन्होंने पढ़ा था, उनको याद था और उनके कण कण में व्याप्त था।

वे अपने युग के उपकरण और साधन काम में लाती थीं। जिस समाज में उनका जन्म हुआ था, उसी में होकर उनको काम करना था, परन्तु उस समाज की हथकड़ियों और बेड़ियों की उन्होंने पूजा नहीं की। वे अपने युग से आगे निकल गई थीं, किन्तु उन्होंने अपने युग और समाज को साथ ले चलने का, भरसक प्रयत्न किया। झांसी में विशेषतः और विन्ध्यखंड में साधारणतया, स्त्री की अपेक्षाकृत स्वतन्त्रता और नारीत्व की स्वस्थता लक्ष्मीबाई के नाम के साथ बहुत सम्बद्ध है।

मंगल और शुक्र के दिन रानी, महालक्ष्मी के मन्दिर में जाया करती थीं, जो लक्ष्मी-फाटक के बाहर, लक्ष्मीताल के ऊपर है। कभी पालकी में, कभी घोड़े पर। कभी पालकी पर चिक डालकर, कभी बिना चिक के कभी साड़ी पहिन कर, कभी पुरुष वेश में—सुन्दर साफ़ा बाँधे हुए। कभी बिलकुल अकेली, और कभी धूमधाम के साथ। जब पालकी पर जातीं कुछ स्त्रियां अलंकारों से लदीं, लाल मखमली जूते पहिने,

के दिए जलाए, पाठ करने पर नियुक्त। जब यज्ञ समाप्त हुआ मुख्य संकल्प रानी के नाम से और नान्दीश्राद्ध दामोदरराव के हाथ से कराया गया। पूना तरफ के एक ब्राह्मण ने आक्षेप किया और शास्त्रों के वचन उधृत करने आरम्भ किए। उसकी बात मानी गई। वह विजय—गर्व से फूल गया।*

रानी को यह दुस्सह हुआ।

रानी ने काशीबाई से कहा, 'काशी तू शान्ति के साथ सोच विचार किया करती है। ब्राह्मणों का यह विवाद तुझको कैसा लगा?'

काशी ने उत्तर दिया, 'सरकार, इन लोगों का वितंडावाद कभी न झुका, देश का दुर्भाग्य कभी न रुका — ये लोग सदा इसी में मस्त रहे। मालूम नहीं भगवान ने इतनी ना समझी क्यों इन शास्त्रज्ञों के ही पल्ले में परसी है।'

रानी ने कहा, 'कर्म अच्छा है, परन्तु उसके कराने वाले अकर्मण्य हैं'

'बड़ी बात यह है कि राज्य का भार इन लोगों पर नहीं है, नहीं तो हम सब डूब जाते,' काशी बोली, राजकीय समस्याओं के सुलझाने में यदि ये लोग इतना विवेक खर्च करें तो कितना बड़ा काम हो।'

'काशी,' रानी ने कहा, 'जब ये लोग राजनीति का व्यायर्भ करते हैं तब वितण्डा नहीं करते। धर्म से ही न जानें ये लोग क्यों ऐसे रूठे हैं।'

विजयादशमी के दिन दरबार हुआ। अंग्रेज़ों ने जो जागीरें जब्त कर ली थीं, वे वापिस कर दी गईं। नत्थेखां वाली लड़ाई में जिन लोगों ने बड़े काम किए थे, उनको या उनके वारिसों को, जो पहले ही पुरस्कृत नहीं हो चुके थे, पारितोषिक दिए गए। सागरसिंह और पीरअली भी खाली हाथ न लौटे।

जब सागरसिंह सामने आया रानी ने कहा, 'तुमको नवाब साहब की हवेली में से कितना माल मिला?'

---

* देखिए परिशिष्ट।

सागरसिंह ने उत्तर दिया, 'बहुत कम सरकार। पीरअली मेरे गवाह हैं। वे साथ थे। नवाब साहब की हवेली में आग लगाने वालों में थे सबसे आगे थे।' पीरअली आगे बढ़ा।

बोला, 'श्रीमन्त सरकार, मैंने नवाब साहब का बहुत दिनों नमक अदा किया, परन्तु जब देखा कि वे श्रीमन्त सरकार के विरुद्ध हैं, तब उनसे अलग हो गया। बेबस मुझको लड़ना भी पड़ा! आग मैंने सबसे पहले नहीं लगाई। आग लग चुकी थी। माल अवश्य मैंने सिपाहियों को बतलाया, क्योंकि उचित था। थोड़ा ही मिला। नवाब साहब पहले ही निकाल ले गए।'

रानी को अच्छा नहीं लगा, परन्तु उन्होंने कहा कुछ नहीं।

रात को नाटक हुआ। पुरुष और स्त्रियों का—दोनों का—अभिनय, स्त्रियों ने ही किया। नाटकशाला में भी स्त्रियों के सिवाय पुरुष एक भी न था। खेल शकुन्तला का था। जूही ने शकुन्तला का अभिनय किया, मोती ने उसकी सहेली का और काशी ने दुष्यन्त का।'

नाटक की समाप्ति पर रानी ने मोतीबाई से पूछा, 'पहले भी ऐसा ही अभिनय किया करती थी?'

मोतीबाई—'आज सरकार, हम लोगों ने अच्छे से अच्छा प्रयत्न किया है।'

रानी—'जूही तो शकुन्तला जैसी जची, परन्तु इसका दुष्यन्त रद्दी था।'

जूही—'नहीं सरकार।'

रानी को कुछ स्मरण हो आया।

बोलीं, 'ठीक कहती है जूही। तेरा और तेरे दुष्यन्त का जौहर युद्ध में देखूँगी।'

जूही ने निस्संकोच कहा, 'सरकार मेरा और मेरे दुष्यन्त का जौहर देखकर पुरस्कार देंगी।'

काशीबाई हँसकर बोली, 'मुझको तो आगे कभी दुष्यन्त बनना नहीं।'

रानी ने चुटकी काटी। कहा, तब और कोई दुष्यन्त बनेगा।' और मोतीबाई की ओर देखा। मोतीबाई ने गर्दन मोड़ी। जूही झेंपकर पीछे हट गई।

सहेलियों में विनोद छा गया।

जाते जाते रानी ने मोतीबाई से अकेले में कहा, 'खुदाबख्श से कहना कि बारूद के कारखाने का ध्यान रक्खें। हमको इतनी बारूद चाहिए कि हम क़िले में बैठकर महीनों लड़ सकें।'

मोतीबाई ने नीचा सिर किए हुए पूछा, 'सरकार की इस आज्ञा का कथन मैं ही करूँ ?'

'और कौन करेगा पगली,' रानी ने हँसकर कहा, 'तात्या टोपे का भी समाचार मँगवा। देख, क्या वे अब भी कालपी में हैं ? उनका झांसी आना जाना बना रहना चाहिए। न मालूम अंग्रेज़ कब आ जावें। हम लोग झांसी में घिरे हुए अनन्त काल तक तो लड़ नहीं सकते। उनको इतना समीप रहना चाहिए कि अटक पड़ने पर सहायता लेकर, शीघ्र आ सकें।'

दूसरे दिन रानी ने दीवान खास में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह को बुलवाया। रानी कार्य की प्रगति को और तेज़ करना चाहती थीं।

रानी—'तोपें ऐसी ढल रही हैं न, जो पीछे धक्का न दें और जल्दी गरम न हों ?'

जवाहरसिंह—'हां सरकार, बख्शी जी और उनके कारीगर इस विद्या में निपुण हैं।'

रानी—'बारूद ?'

रघुनाथसिंह—'तीन महीने की लड़ाई के लिए तैयार है। आज से कुँवर खुदाबख्श ने और भी तेज़ी पकड़ी है।'

रानी—'अच्छी बन्दूकें और तलवारें भी बहुत संख्या में चाहिए।'

जवाहरसिंह—'बन गई हैं और बन रही हैं।'

रानी—'गोले ?'

जवाहरसिंह—'भाऊ बख्शी आध सेर से लेकर पैंसठ सेर तक के गोले तैयार कर रहे हैं। ठोस और पोले—फटने वाले भी!'

रानी—'मैं चाहती हूं कि इन सब हथियारों के चलाने वाले भी अधिकता से तैयार किए जावें।'

जवाहरसिंह—'जनता में बहुत उत्साह है। ऊँची नीची सब जातियां युद्ध की उमङ्ग से उमड़ रही हैं।'

रानी—'सबसे अधिक किन लोगों में उत्साह है?'

जवाहरसिंह—'सरकार यह बतलाना कठिन है। ठाकुरां और पठानों में तो स्वभाविक ही है। कोरियां, तेलियों और काछियां में भी बहुत उमङ्ग है। बनिए और ब्राह्मण भी पीछे नहीं हैं।'

रानी—'क्या शास्त्रियां में भी?'

जवाहरसिंह—'वे भी तो झांसी के ही हैं, परन्तु उनको जब शास्त्र और पूजन से अवकाश मिलता है तब।'

रानी—'हमारे देश में ऊँच नीच का भेद न होता तो कितना अच्छा होता।'

जवाहरसिंह—'भेद तो भगवान ने ही बनाया है, सरकार।'

रानी चुप रहीं। थोड़ी देर बाद बोलीं, 'मैं चाहती हूं कि सब जातियों के चुने हुए लोगों को, तोप बन्दूक का चलाना सिखलाया जावे।'

जवाहरसिंह ने बहुत उत्साह बिना दिखलाए कहा, 'यह काम जारी है सरकार।'

रानी—'मैं अपनी सहेलियों और कुछ अन्य स्त्रियों को, बहुत अच्छा गोलन्दाज़ बनाना चाहती हूँ।,

रघुनाथसिंह—आज्ञा मिल गई है। उसके अनुसार काम किया जायगा। अवश्य।'

रानी—'क़िले में अन्न इत्यादि भी काफ़ी जमा करलो। कुछ ठीक नहीं कब घेरा पड़ जाय।'

जवाहरसिंह—'काफ़ी अन्न एकत्र किया जारहा है और शीघ्र ही क़िले के कमठाने में जमा कर लिया जावेगा।'

रानी—'चूना, ईंट, पत्थर भी इकट्ठा कर रखना। कारीगर भी हाथ में रहें।'

जवाहरसिंह—'जो आज्ञा।'

रानी—'सेना का और युद्ध का कोई भी अङ्ग निर्बल न रहने पावे।'

[६१]

उत्तर और पूर्व में अंग्रेज़ों की विजय–पराजय का क्रम चालू था। लखनऊ के पतन के उपरान्त उसका फिर उत्थान हुआ। शहर में, बग़ीचों–बारहदरियों में, महलों में युद्ध होता रहा। कानपूर के सूत्र को तात्या टोपे ने फिर पकड़ा। वह ग्वालियर गया और वहां की अंग्रेज़ी–हिन्दुस्थानी सेना को फोड़कर अपने साथ ले आया और उसने अंग्रेज़ों के जनरल विंढम को हराया। परन्तु अंग्रेज़ सत्तरह सहस्र गोरी सेना, नौ सहस्र गोरखा और बहुसंख्यक सिक्खों का दल लेकर लखनऊ पर पहुंच गए। विप्लवकारियों ने बहुत करारे युद्ध किए। उत्तर और पूर्व के युद्धों में तात्या टोपे ने बहुत भाग लिया। अन्त में जब बिठूर मिट गया और कानपूर अन्तिम बार अंग्रेज़ों की अधीनता में चला गया, तब तात्या कालपी के आस पास युद्ध करने लगा।

शीत काल आ चुका था। बिहार और अवध में घोर लड़ाई जारी थी, परन्तु विप्लवकारियों में व्यवस्था न थी। बड़े सरदार या राजा के निधन पर छोटी स्थिति वाले नायक का नेतृत्व मान्य न होता था, इसलिए अंग्रेज़ धीरे धीरे एक स्थान के बाद दूसरे स्थान को और एक भूखण्ड के उपरान्त दूसरे भूखण्ड को अधिकृत करते चले जा रहे थे। अंग्रेज़ों की क्रूरताओं ने भी विप्लव को नहीं दबा पाया था और न गोरखों और सिक्खों की सहायता से वे इस देश को पुनः प्राप्त कर सकते थे। विप्लव–कारियों में सामन्त नेता के देहान्त के पश्चात ही अनुशासन की कमी उत्पन्न हो जाती थी और इसी कारण उनको हार पर हार खानी पड़ी। नहीं तो तात्या टोपे इत्यादि सेनापतियों के होते हुए बड़े बड़े अंग्रेज़ जनरल भी मात खा जाते।

यही कारण दक्षिण में काम कर रहा था। जनरल रोज़ ने अपनी सेना के दो भाग किए। एक को उसने मऊ छावनी की ओर भेजा और दूसरे को लेकर वह सागर की ओर बढ़ा। राहतगढ़ सागर से चौबीस

मील के फ़ासले पर था। यहां से पठान जनरल रोज़ का मुक़ाबिला कर रहे थे। चार दिन घनघोर युद्ध करने के बाद पठानों को क़िला छोड़ना पड़ा। राहतगढ़ से १५ मील पर बरोदिया का क़िला था। यहां बानपूर के राजा मर्दनसिंह के आश्रय में अंग्रेज़ी फ़ौज के कुछ विद्रोही थे। रोज़ ने इनको भी हरा दिया और फिर वह सागर की ओर बढ़ा। पूर्व की ओर गढ़ाकोटा का क़िला पड़ता था। वह विप्लवकारियों के हाथ में था। उसको लेने के पहले रोज़ ने सागर पर चढ़ाई की।

नर्मदा के उत्तरी किनारे का अधिकांश भूखण्ड विप्लवकारियों के हाथ में था। इसको अपने हाथ में किए बिना जनरल रोज़ झांसी की ओर नहीं बढ़ सकता था। सागर और झांसी के बीच में बानपूर का राजा मर्दनसिंह और शाहगढ़ का राजा बख़तबली लोहा लेने को तैयार थे।

अंग्रेज़ों का प्रधान सेनापति सर कालिन कैम्बेल था। वह उत्तराखंड के विप्लव के दमन में संलग्न था। उसका मत था कि जब तक झांसी नहीं कुचली जाती, तब तक उत्तराखंड हाथ नहीं आता। इसलिए रोज़ सागर के द्वार से झांसी की ओर आ रहा था। बीच में ऊबड़-खाबड़ भूमि और ऊबड़-खाबड़ लड़ाकू जनसमूह। परन्तु रोज़ इत्यादि अंग्रेज़ जनरलों को विश्वास था—जहां विप्लवकारियों के नेता राजा, नवाब, जागीरदार मारे गए तहीं विप्लव समाप्त हो जायगा।

[६२]

विकट ठंड। ऊपर से हड्डी कपाने वाली हवा। कुछ ही दिन पहले पानी बरस चुका था। ठिठुरी हुई घास के ऊपर बड़े बड़े ओसकण। मृदुल बाल-रवि की रश्मियां उनके ऊपर सरकती हुईं। झलकारी कोरिन कन्धे पर बन्दूक़ रक्खे, बग़ल में बारूद और गोलियों का झोला लटकाए उनाव फाटक से बाहर हुई। जब हाथ ठिठुर जाते तब बन्दूक़ को बग़ल में दाब लेती और दोनों हाथ ओढ़नी में छिपा लेती। उनाव फाटक के उत्तर में एक टौरिया है, जिसको अन्जनी की टौरिया कहते हैं। उसके दक्षिणी सिरे पर अन्जनी और हनुमान का एक छोटा सा चबूतरा है थोड़ी देर में झलकारी इसी इसी चबूतरे के पास पहुँची और धूप लेने लगी। ठंडी हवा और सूर्य की कोमल किरणें उसकी बड़ी बड़ी आंखों को सुरमा सा लगाने लगीं।

जब दिन चढ़ आया तब वहां से ज़रा हटकर निशाना बाज़ी करने लगी। काफी समय तक करती रही।

अन्जनी की टौरियां की उपत्यका विषम थी। वहां ऐसे समय कोई आता जाता न था। लेकिन भेड़ बकरी और ढोर चरने के लिए आ निकलते थे। अकस्मात् झलकारी की गोली एक पशु को लगी। उसने ठीक तौर पर नहीं देख पाया कि गोली भेड़ को लगी या बछिया को। सन्देह था कि बछिया को लगी, परन्तु मन कहता था कि भेड़ को लगी होगी।

वह बेतहाशा घर आई। पूरन घरू काम कर रहा था। झलकारी ने उसको अपनी घबराहट का कारण बतलाया। पूरन को हद दर्जे की खीझ हुई।

बोला, 'तुमने जा तक न देखो कै बछिया हती कै भेड़, और न काऊ सें जा पूंछी कि की कौ ढोर हतो?'

झलकारी ने खिसिया कर कहा, 'मैं उतै कीसें पूँछती! उतै बरेदी तो हतोई नईं बरेदी होतो तो ढोर उतै कैसें आजाते?'

पूरन चिन्तित था। खोज करने के लिए निकला। यदि भेड़ मरी है तो उसका दाम दे दिया जवेगा, जाति में कुछ दंड लगेगा वह भुगत लेगा, परन्तु यदि बछिया मरी है या घायल ही हो गई है तो आई महान् विपद्। पूरन सोच रहा था।

निशाने से उचट कर एक बछिया के पैर में गोली लगी थी। वह घायल हुई और गिर पड़ी। बछिया एक ब्राह्मण की थी। मशहूर हुआ कि बछिया मर गई—झलकारी ने मार डाली। बरेदी अपनी अनुपस्थिति अस्वीकृत करता था। उसने कहा, 'मैंने झलकरी को गोली मारते अपनी आंखों देखा है।'

शहर में रौरा मच गया। झलकारी कभी कभी रानी के पास जाती थी। रानी ने स्त्रियों की जो सेना बनाई थी, उसकी एक सिपाही झलकारी भी थी। संध्या समय साफ सुथरे और रंगीन कपड़े पहिन कर थाली में दिए संवार कर, फूल सजा कर वह मन्दिर में पूजन के लिए आया करती थी और अपने गले में फूलों का हार डाले भी दिखलाई देती थी। अन्य जाति की स्त्रियां भी इस प्रकार की स्वतन्त्रता पाए हुई थीं, परन्तु झलकारी की स्वतन्त्रता में एक ओज था—और वह ऊँची जाति वाले अनेक लोगों को खटकता था।

'झलकारी ने एक ग़रीब ब्राह्मण की बछिया मार डाली।'

'अरे वह इतनी मस्त हो गई है कि अपने पति तक की मारपीट करती है।'

'वह अच्छों अच्छों को किसी गिनती में नहीं लेखती।'

'इस प्रकार की स्त्रियां रानी साहब को बदनाम कर रही हैं।' इत्यादि उद्गार बाज़ार में निसृत हो रहे थे।

'प्रायश्चित कराओ।'

'गधे पर बिठलाकर काला मुँह करो।'

'जब तक प्रायश्चित न हो जाय तब तक कुआं बाजार, पड़ोस सब बन्द रहें।'

'खाना पकाने के लिए कोई पूरन को आगी तक न दे।'

'कोई उसको छुए नहीं।' इत्यादि व्यवस्थाएँ भी दे डाली गईं।

पूरन ने खोजकर पता लगा लिया कि बछिया मरी नहीं है। परन्तु लोगों को अपनी बात और व्यवस्था वापिस नहीं लेनी थी, इसलिए ब्राह्मण को फोड़ लिया और उनसे घायल बछिया को छिपा लिया। कह दिया कि न जाने कहां गई—मर गई।

कोरियों ने पञ्चायत की। बहिष्कार का दण्ड दिया। उस युग के हिन्दू के लिए रौरव नरक से बढ़कर।

काला मुँह करके गधे पर चढ़ाकर बाज़ार में जलूस निकालने की बात तै की। पूरन के बहुत घिघियाने-पतियाने और कुछ और स्त्रियों के आड़े आ जाने के कारण काला मुँह करना तो निर्णय में से कम कर दिया गया बाक़ी सज़ा बहाल रही।

जिस दिन प्रायश्चित का यह रूप प्रकट होना था, उस दिन शुक्रवार था। सन्ध्या का समय निश्चित था।

उसी दिन रानी महालक्ष्मी के मन्दिर को जाने वाली थीं। वे हलवाईपुरे के पश्चिमी सिरे पर उस दिन अकेली सवार आ रही थीं। थोड़ी दूर पीछे एक अङ्गरक्षक था।

कुछ अधनङ्गे मङ्गतों ने घेरा।

रानी ने पूछा, 'क्या है?'

उत्तर मिला—'ठण्ड के मारे मर रहे हैं। कपड़ा नहीं है।'

रानी ने अङ्गरक्षक को बुलाकर आज्ञा दी, दीवान से कहो कि शहर में जितने मांगनें, भिखारी, साधू, फ़क़ीर हों, उन सबको एक एक कुर्ता बनवा दें और एक एक कम्बल दें।'

मङ्गतों को विश्वास हो गया कि आज्ञा का पालन होगा।

हलवाईपुरा के मध्य में पहुचीं कि पूरन घोड़े के सामने जा गिरा।

रानी के पूछने पर उसने अपनी विपत्ति सुनाई। रानी सोच-विचार में पड़ गईं।

'पञ्चायत के निर्णय का कैसे उल्लँघन करूँ ?'

'सरकार, बछिया मरी नइयाँ।'

'ब्राह्मण को बुलवाओ जिसकी बछिया थी।'

जब तक ब्राह्मण आया, तब तक रानी बाज़ार वालों से, उनके बाल बच्चों की कुशलवार्ता पूछती रहीं।

ब्राह्मण के आने पर रानी ने अपनी सौगन्ध धराकर सच्चा हाल कहने का आग्रह किया। कोई गुञ्जायश झूठ बोलने के लिए न रही।

ब्राह्मण ने कहा, 'महाराज, चाहे मारें चाहे पालें, सच बात यह है कि बछिया मरी नहीं है। वह मेरे एक नातेदार के यहाँ दतिया राज्य में भेज दी गई है।'

रानी ब्राह्मण को उसके फ़रेब के लिए कुछ दण्ड देना चाहती थीं, परन्तु बाज़ार के मुखिया-चौधरी आड़े आ गए। ब्राह्मण छोड़ दिया गया।

परन्तु बाज़ार वाले भौंचक्के से रह गए। जो लोग झलकारी की गधा-सवारी का जलूस देखने के आकांक्षी थे, बहुत निराश हुए। पञ्चों को अपना निर्णय वापिस लेने में असुविधा हुई। वापिस लेना पड़ा, परन्तु पूरन को एक पङ्गत बछिया के घायल होने के कारण तो भी देनी पड़ी। प्रायश्चित की ऐसी पङ्गतों में कुछ ब्राह्मण और कुछ अन्य जातियों के सरपञ्च बुलाए जाते थे। पूरन ने कुछ ब्राह्मण तो न्योत लिए, परन्तु बाज़ार के सरपञ्च श्याम चौधरी और मगन गन्दी को नहीं बुलाया। ये दोनों बिना निमंत्रण के पूरन के यहां पहुँच गए। पूरन को आश्चर्य और परिताप हुआ।

श्याम चौधरी ने कहा, 'तुम न्योतना भूल गए तो हम पङ्गत में आना तो नहीं भूले।'

ऐसे लोगों के लिए भोजन ब्राह्मण बनाता था और ये लोग भोज में शरीक होते थे। इसी प्रकार के सहयोग के कारण तत्कालीन समाज के वे दुखदायक पहलू किसी प्रकार भुगत लिए जाते थे।

[६३]

जब जनरल रोज़ ने सागर पर आक्रमण करके क़ैदी अंग्रेज़ों को मुक्त किया, उनको इतना हर्ष हुआ कि उन्होंने तोपों की सलामी दागी! सागर को अधिकार में कर लेने के बाद रोज़ ने गढ़ाकोटा को हाथ में लिया। परन्तु जगह जगह विप्लवकारियों के सशस्त्र दल बिखरे हुए थे। इनका दमन करने के लिए रोज ने अपनी सेना के कई भाग किए और उनको भिन्न-भिन्न दिशाओं में भेजा। वह स्वयं सेना के एक बड़े भाग के साथ झांसी के लिए नारहट घाटी की ओर आया। उसकी सेना का एक भाग शाहगढ़ के राजा बखतबली का मुक़ाबिला करने के लिए गया था। वहां देखा तो बखतबली काफ़ी बड़ी सेना लिए हुए मौजूद है। नारहट घाटी पर मर्दनसिंह की भी सेना बहुसंख्यक थी। रोज़ अपनी सेना लेकर मदनपूर घाटी की ओर बढ़ा। मर्दनसिंह ने भी उसी ओर बाग मोड़ी, रोज़ चाहता था कि बखतबली और मर्दनसिंह मिलने न पावें, इसलिए उसने सेना का एक भाग मर्दनसिंह को अटकाने के लिए नारहट घाटी की ओर लौटाया और स्वयं मदनपूर की ओर चल दिया मदनपूर उस स्थल से पूर्व दक्षिण की ओर लगभग २० मील था।

मर्दनसिंह रोज़ की इस चाल को न समझ सका और वह मदनपूर की ओर न बढ़कर नारहट घाटी पर लौट आया।

बखतबली के साथ रोज़ का घोर युद्ध हुआ। दो पहाड़ी के बीच में मदनपूर का गाँव और झील है। इस सुहावनी झील के पास ही वह भयंकर संग्राम हुआ था। बहुत अंग्रेज़ी सेना मारी गई। खुद रोज़ घायल हुआ। परन्तु वह लड़ाई जीत गया। यदि मर्दनसिंह और बखतबली की सेनाओं का मेल होगया होता तो रोज़ की पराजय निश्चित थी—मदनपूर की झील में रोज़ के सेनापतित्व का अन्तिम इतिहास उसी दिन लिख गया होता।

बखतबली के अनेक सरदार पकड़े गए और मार डाल गए। बखतबली की पराजय का हाल सुनकर, मर्दनसिंह नारहट घाटी को छोड़कर

भागा। रोज़ ने अपनी सेना के भिन्न-भिन्न टुकड़ों को आदेश दिया कि विप्लवकारियों का पीछा करते हुए वे उसको झांसी के निकट मिलें।

बानपूर के राजा मर्दनसिंह ने मदनपूर की पराजय और नर-संहार का वृतान्त झांसी भेजा। झांसी में और राज्य के बड़े बड़े नगरों और ग्रामों में, जहां जहां गढ़ और क़िले थे, तैयारी शुरू हो गई।

उन्हीं दिनों ग्वालियर से झांसी में एक नाटक मण्डली आई।

मुन्दर ने अनुनय पूर्वक कहा, सरकार, लड़ाई के आरम्भ होने के पहले एकाध खेल अपनी नाटकशाला में भी हो जानेकी अनुमति दीजाय।'

'यह समय नाटक और तमाशों का नहीं है, 'रानी मिठास के साथ बोलीं।'

मुन्दर ने अनुरोध किया, 'मैं लड़ाई में मारी गई तो फिर कब नाटक देखूँगी ?'

रानी ने हँसकर कहा, 'दूसरे जन्म में। उस समय तुझको स्वराज्य स्थापित किया हुआ मिलेगा।'

काशीबाई ने आग्रह किया, 'केवल एक खेल सरकार, और फिर हम लोग जो खेल खेलेंगी उसको स्वराज्य वाले सदा स्मरण किया करेंगे।'

युद्ध वास्तव में है ही किस निमित्त ?', रानी मुस्करा कर बोलीं, अपने जीवन और धर्म की रक्षा के लिए, अपनी संस्कृति और अपनी कला के बचाने के लिए। नहीं तो युद्ध एक व्यर्थ का रक्तपात ही है। यह खेल जल्दी हो जाय और फिर उस खेल को ऐसा खेलो कि अंग्रेज़ों के छक्के छूट जायँ और यह देश उनकी फांस से मुक्त हो जाय।'

मुन्दर ने हर्ष में कहा, 'सरकार, खेल मराठी में होगा।'

रानी बोली--'झांसी में मराठी! महाराष्ट्र यहां बड़ी संख्या में हैं यह ठीक है, और वे लोग अपने मनोरञ्जन के लिए मराठी में नाटक खिलवावें, परन्तु वह नाटक मण्डली राज्य का आश्रय तभी पावेगी जब नाटक हिन्दी में खेले। अवश्य मेरा जन्म महाराष्ट्र कुल में हुआ है,

परन्तु मैं अपने को महाराष्ट्र न समझ कर विन्ध्यखण्डी समझती हूँ। मेरी झांसी की भाषा हिन्दी है। नाटक यदि हिन्दी में हो, तो हो, नहीं तो मुझसे कोई सरोकार न होगा। मेरा निश्चय है।'

सहेलियों ने स्वीकार कर लिया।

नाटक मण्डली वालों से कहा गया। उनमें थोड़े अभिनेता ही हिन्दी जानते थे। उनकी यह कठिनाई दूर कर दी गई। झांसी के हिन्दी जानने वाले अभिनेता शामिल कर लिए गए। उस मण्डली ने हरिश्चन्द्र का अभिनय उत्कृष्टता के साथ किया। मोतीबाई इत्यादि जानकारों तक ने सराहना की। रानी ने मण्डली के प्रबन्धक को चार सहस्र रुपया पुरस्कार दिया। मण्डली ग्वालियर चली गई।*

रानी ललित कलाओं की प्रबल पोषक थी। उस कठिन और चिन्ताकुल समय में भी रानी प्रत्येक नवागन्तुक गायक, वीणकार सितारिए इत्यादि को सुनने के लिए थोड़ा बहुत समय दिया करती थीं और उचित पुरस्कार भी। कवि, चित्रकार, शिल्पी कोई भी उन्मुख नहीं जाता था। शास्त्री, याज्ञिक, ज्योतिषी, वैद्य, हकीम इत्यादि भी पोषण पाते थे। अपनी इसी वृत्ति को वे स्वराज्य में विकसित और प्रसरित देखना चाहती थीं।

पीरअली देर-सबेर सब महत्वपूर्ण समाचार नवाब अलीबहादुर के पास बड़ी सावधानी के साथ भेजता रहता था। झांसी छोड़ने के कुछ दिनों बाद वे घूमते-घामते दतिया पहुंचे। वहां थोड़े समय रहकर भांडेर पहुंच गए। झांसी से दतिया १७ मील और भांडेर चौबीस।

नवाब अलीबहादुर उन्हीं स्थानों से अंग्रेजों को काम के समाचार भेजते रहते थे। रोज़ इत्यादि अंग्रेज़ जनरल झांसी को अधिकृत करने के महत्व को जानते थे। उन लोगों को नवाब से निरर्थक और सार्थक-सभी तरह के—हाल समय समय पर मिलते रहते थे। मदनपूर युद्ध के पश्चात झांसी रोज़ का प्रथम लक्ष्य और पहला कर्तव्य बनी।

---

* देखिए परिशिष्ट।

अस्त

(क्या सचमुच ?)

[६४]

मदनपूर की लड़ाई जीतने के बाद रोज़ की सेना ने शाहगढ़ को अधिकार में किया। फिर मड़ावरा की गढ़ी को कब्जे में करने के उपरान्त बानपूर राज्य को अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया। बानपूर के महल के कुछ भाग को तोप से उड़ा दिया, बाक़ी को जला दिया और इन दोनों राज्यों के बड़े कर्मचारियों को फांसी पर चढ़ा दिया। इन महलों में पुस्तकों और चित्रों का भी संग्रह था, परन्तु विप्लवकारियों की सम्पत्ति होने के कारण वे अस्पृश्य हो गए थे।

वध और अग्नि बरसाती हुई, रोज़ की सेना १२ मार्च सन् १८५८ को तालबेहट आ पहुंची। तालबेहट का प्राचीन दृढ़ क़िला, लड़ाई के लिए उपयुक्त था, परन्तु उसमें विप्लवकारी बहुत थोड़ी संख्या में थे और उनका नायक कोई बड़ा आदमी न था। मुक़ाबले में रोज़ सरीखा चतुर और विजय प्राप्त सेनापति तथा अंग्रेज़ों की विशाल सेना और तोपें। विप्लवकारी भाग गए और रोज़ ने तालबेहट का क़िला सहज ही अधिकार में कर लिया। चंदेरी में बानपूर के राजा का एक दस्ता था। रोज़ ने

सोचा बग़ल के इस कांटे को पहले निकाल डालना चाहिए। उसने चंदेरी पर हमला करने के लिए अपने एक अफ़सर ब्रिग्रेडियर स्टुअर्ट को भेजा। स्टुअर्ट ने बिना किसी कठिनाई के चंदेरी को पराजित कर दिया।

झांसी की पूर्वी तहसील मऊ में एक छोटा सा गढ़ था। इस गढ़ में रानी की ओर से काशीनाथ भैया और आनन्दराय इत्यादि छोटे छोटे जागीरदार तैयारी कर चुके थे। मऊ के दमन के लिए रोज़ ने बानपूर विध्वन्स के बाद अपना एक दस्ता सीधा भेज दिया था। रोज़ ने झांसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास सम्वाद भेजा।

'आप अपने दीवान लक्ष्मणराव, लाला भाऊ बख्शी, मोरोपन्त ताम्बे (आपके पिता), नाना भोपटकर, दीवान जवाहरसिंह, दीवान रघुनाथसिंह, कुंवर खुदाबख्श और मोतीसाईं के साथ निश्शस्त्र चली आवें अन्यथा कठोर और भयंकर फल के लिए तैयार रहें।'

इस प्रकार के सम्वाद के लिए रानी तैयार थीं, परन्तु जिस मोतीसाईं को जनरल रोज़ चाहते थे, उसके स्मरण से रानी के दीवान ख़ास में हँसी का तूफ़ान खड़ा हो गया।

'नाना साहब,' रानी ने हँसी को रोक कर कहा, 'इस मोतीसाईं को कहां से पकड़ बुलाऊं?'

नाना भोपटकर ने कहा, 'सरकार के यहां यदि बनावट चलती होती और जाली सिक्के ढलते होते तो किसी न किसी को साईं का चोगा पहिना दिया जाता।'

मोतीबाई दीवान खास में मौजूद थी। झुंझलाई हुई सूरत बनाकर बोली, 'सरकार, दूत को बुलाकर पूछा जाय कि मोतीसाईं किस हुलिया का आदमी है।'

मोरोपन्त ने कहा, 'उसके लम्बी दाढ़ी होगी, बड़े बड़े केश और खूनी आंखें। सांइयों और साधुओं ने अंग्रेज़ी फ़ौज के भड़काने में ज्यादा

दीवान लक्ष्मणराव गंभीर होकर बोला, 'सरकार, उत्तर जल्दी भेज दिया जाना चाहिए। दूत को शीघ्र लौटना है, क्योंकि उसको कोई भी अपने घर नहीं ठहरना चाहेगा।

भाऊ बख्शी ने कहा, 'और रोज़ यहां से बहुत दूर भी नहीं है। शायद दूत के पीछे पीछे आ रहा हो।'

मोतीबाई ने पूछा, 'और यह मोती साईं कौन सी बला है? इसका क्या उत्तर होगा?'

रानी ने हँसी को दबाकर कहा, 'मैं बतलाऊँगी।'

लक्ष्मणराव फिर बोला, 'क्या उत्तर दिया जाय।'

रानी ने और भी अधिक गंभीर होकर कहा, 'मैं अकेली उत्तर देने वाली कौन होती हूं? झांसी के समग्र मुखियों को सब जातियों के पञ्चों को जोड़ो। अपने सब सरदार इस समय झांसी में ही हैं। वे सब और आप लोग एकमत होकर कहदें तो मैं अकेली निश्शस्त्र चली जाऊँगी।'

वाक्य समाप्त होते होते रानी ने श्वास और उच्छ्वास लिए और किसी उखड़ते हुए भाव का कठिनता के साथ, कठोरता के साथ नियन्त्रण किया।

तुरन्त झांसी के मुखिया, पञ्च, सरदार, इत्यादि इकट्ठे किए गए। जो कुछ उन लोगों ने कहा उसमें महत्व की बातें ये थीं।

'लड़ेंगे। अपनी झांसी के लिए, अपनी रानी के लिए, मरेंगे।'

'हमारे पास जितना रुपया और आभूषण हैं, सब स्वराज्य की लड़ाई के लिए रानी के हाथ संकल्प है।'

'हम दिखलायंगे कि झांसी का पानी कितना स्वच्छ और कितना गहरा है।'

'आप अंग्रेज़ों को उत्तर दीजिए कि झांसी उन लोगों को मां की छठी के दूध की याद दिलावेगी।'

जनमत रानी के मन से मिला हुआ था ही, इस समय बहुत प्रबल हो गया। परन्तु रानी ने झांसी की हुँकार को, वीणा की टंकार में परिवर्तित करके भेजा। उन्होंने लिखा।

'मिलने के लिए क्यों बुलाया—इसका व्योरा आपने क्यों नहीं दिया। मिलाप के पर्दे में मुझे धोखा दिखलाई पड़ता है। मैं स्त्री हूँ। निश्शस्त्र कैसे आ सकती हूँ? राज्य के दीवान और बख्शी ससैन्य आ सकते हैं।' रानी ने इस चिट्ठी पर अपने हस्ताक्षर किए।

झोपटकर से कहा, 'आपकी नीति का क्या फल हुआ?'

उसने उत्तर दिया, 'यही कि अंग्रेज़ लोग बिना सूचना के झांसी पर नहीं चढ़ दौड़े।'

'मार्टिन को चिट्ठी लिखी थी?'

'हां सरकार। उसने जबलपूर के कमिश्नर को और इस जनरल को अवश्य कुछ लिखा होगा।'

'फल?'

'कुछ समय मिल गया, यही बहुत है।'

'दूत को रानी की चिट्ठी दे दी गई। दूत गया। उसने प्रस्थान न कर पाया होगा कि पीरअली ने रानी के पास संदेसा भेजा, 'सरकार की आज्ञा हो तो मैं अंग्रेज़ छावनी की खबर ले आऊँ कि कितनी और कैसी सेना है, तथा कितनी तोपें हैं और वे लोग किस ढङ्ग से झांसी पर आक्रमण करेंगे।'

मोतीबाई ने इन बातों का पता लगाने का सामर्थ्य तो प्रकट किया, परन्तु पीरअली के भेजे जाने पर आक्षेप नहीं किया। पीरअली को अनुमति मिल गई।

रानी ने मोतीबाई से कहा, 'तेरा नाम कैसे सुन्दर रूप में अंग्रेज़ों के पास पहुँचा है। मुझको कोई सन्देह नहीं मेरे जासूसी विभाग के सरदार को ही साईं बना लिया गया है।'

मोतीबाई बोली, 'सरकार के सामने गाली नहीं निकालती, परन्तु यदि उस मुँहझोंसे रोज़ को पा गई तो तोप, बन्दूक या तलवार से सच्चा नाम बतलाए बिना न मानूंगी।'

'मैंने तो दरबार में', रानी ने कहा, 'बड़ी कठिनाई से हँसी को रोक पाया। मोतीसांई! मोतीसांई कैसा बढ़िया नाम है।' और वह खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

मोतीबाई भी हँसते हँसते बोली, 'सरकार, मेरी चल नहीं सकती थी, नहीं तो में चिट्ठी के सिरनामे पर लिखवाती 'मेम साहब रोज़ को मोतीसांई का सलाम। चुपचाप हिन्दुस्थान को पीठ दिखाओ और अपनी विलायत में झख मारो।' जब यह चिट्ठी उसकी फौज में चर्चा पाती तब उस मुँहजले को मुँह दिखलाने में लाज आती।

रानी गम्भीर हो गईं।

'पीरअली कल तो लौट आवेगा?'

'यदि उसको किसी ने मार्ग में ही समाप्त न कर दिया तो।'

'आदमी तो चतुर है।'

'बहुत काइयां। मुझको उस पर कभी कभी अविश्वास हो जाता था, परन्तु कुछ दिनों से वह ऐसा जी लगाकर काम करता है कि सन्देह निवृत हो गया।'

'अंग्रेजों के साथ हिन्दुस्थानी सिपाही भी हैं।'

'मैंने भी सुना है। भोपाल और हैदराबाद की रियासतों के दस्ते हैं। कुछ तिलङ्गा पल्टन हैं, बाकी गोरे।'

'सब कितने होंगे?'

'सरकार, ठीक ठीक पता तो नहीं। कई हज़ार हैं। ठीक बात पीरअली के लौटने पर मालूम होगी।'

[६५]

पीरअली इतनी तेज़ी के साथ गया कि उसको जनरल रोज़ का दूत मार्ग में मिल गया। उसने जनरल रोज़ के पास पहुंचने की प्रार्थना की। पीरअली को रोज़ के पास पहुँचा दिया गया। उसके पास नवाब अलीबहादुर का सन्देशा और पीरअली का नाम पहुंच चुका था। पीरअली को पाकर रोज़ प्रसन्न हुआ। पीरअली ने रोज़ को झांसी की पक्की और कच्ची सब बातें सुनाईं। स्त्रियों की सेना का सविस्तार वर्णन सुनकर रोज़ हैरान हो गया। हिन्दुस्थान की स्त्रियां सिपाहीगीरी का काम करती हैं। उसको विश्वास न होता था, परन्तु अलीबहादुर की चिट्ठियों से और उसने बम्बई में आते ही, विप्लवकारियों का जो वर्णन सुना था और उस वर्णन में रानी ने जो स्थान पाया था, उससे वह इस असम्भव बात को मानने के लिए तैयार हो गया।

रोज़ ने पूछा, 'रानी ने अंग्रेज़ बच्चों और स्त्रियों का क़तल करवाया?'

'हर्गिज़ नहीं', पीरअली ने सच्चा उत्तर दिया।

रोज़ को मार्टिन की चिट्ठी की बात जबलपुर के कमिश्नर ने बतलाई थी, और उसने मार्टिन की चिट्ठी पर अपना अविश्वास भी प्रकट किया था। परन्तु रोज़ और उसके साथी अंग्रेज़ रानी की निर्दोषिता को मानने के लिए तैयार ही न थे।

झांसी के कुछ लोगों ने उनके बाल बच्चों का वध किया था, इसलिए उनको सारी झांसी और सारी भूमि से बदला लेना था। रानी झांसी का सजग चिन्ह थीं, इसलिए उनको देशमुक्त कैसे माना जा सकता था! दूत ने रानी का जो उत्तर दिया, वह शिष्ट और मधुर होते हुए भी स्पष्ट था।

रोज़ ने १७ मार्च को तालबेहट से कूच करके बेतवा पार की। पीरअली आगे किस प्रकार जनरल-रोज़ की सहायता करेगा, यह तै हो गया और वह शीघ्र झांसी लौट आया। रोज़ झांसी की ओर सावधानी के साथ बढ़ा। आसपास का प्रदेश दृढ़ता के साथ अपने अधिकार में करने में उसको दो तीन दिन लग गए।

इसी समय रोज़ को प्रधान सेनापति कैम्बैल का आदेश मिला—'तात्या टोपे ने चरखारी के राजा को घेर लिया है। पहले चरखारी सहायता करो।'

रोज़ ने आदेश का उल्लंघन किया—वह झांसी के महत्व को जानता था।

उसने उत्तर दिया, 'मैं आज्ञा की अवज्ञा के लिए क्षमा चाहता हूँ। चरखारी का गिर पड़ना या खड़ा रहना कुछ मूल्य नहीं रखता। मुझको पहले झांसी से निपटना है।'

चरखारी को राजभक्ति का पुरस्कार मिल गया। तात्या टोपे ने चरखारी से २४ तोपें और तीन लाख रुपए छीन लिए, और कालपी लौट आया।

पीरअली ने जो समाचार रानी के पास भिजवाया वह बहुत अनोखा न था, परन्तु उसको काफ़ी महत्व दिया गया।

उसने बतलाया कि पल्टनें अमुक–अमुक नम्बर की हैं और प्रत्येक पल्टन में इतने सिपाही। तोपों की गिनती बतलाई और प्रबन्ध की खूबी को प्रकट किया। रोज़ की कुल सेना सात हज़ार कूती गई।

नाना भोपटकर तक को पीरअली का विश्वास हो गया और वह रहस्य के कार्यों में शामिल किया जाने लगा। जब मोतीबाई को ही पीरअली पर सन्देह न रहा तब रानी को सन्देह हो ही क्यों सकता था?

पीरअली ने नवाब साहब के पास भांडेर समाचार भेज दिया और कहला भेजा कि अब बहुत समय तक कोई खबर न मिल सकेगी। पीरअली भयानक खेल खेल रहा था।

जिस दिन पीरअली लौटकर आया उसी दिन राहतगढ़ के भागे हुए लगभग पांच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुए। रानी ने उनको नौकर रख लिया। उनके एक सरदार का नाम गुलमुहम्मद था। इन लोगों का समाचार पीरअली ने रोज़ को नहीं भेज पाया और इस बात का उसको खेद था।

रानी के पास जब ये पठान आए तब वे बड़ी हीन अवस्था में थे। कपड़े सब फट गए थे न जानें कितने दिन से उनको भरपेट भोजन न मिला था। अच्छे हथियार पास न थे। कुछ के पास तो सिवाय लाठी या छुरी के और कुछ न था। रानी ने उनको सब प्रकार की सुविधाएं दीं। उन्होंने प्रण किया, 'स्वराज्य के लिए रानी के क़दमों में अपने सबके सिर देंगे।' इन पठानों ने अपने प्रण को जैसा निभाया उसको इतिहास जानता है और झांसी की लोकपरम्परा उसको नहीं भूली और न कभी भूलेगी।

पीरअली को कुछ पठान मिले। उसने पूछा,

'तुम्हारा कौम मुल्क है खान ?'

'झांसी अमारा मुलक है बाबा, तुम्हारा मुलक ?'

'मैं झांसी का ही रहने वाला हूँ।'

'तब अम तुम बाई बाई हे बाबा।'

'बाईसाहब का राज्य है खान'

'बेशक हे। और अमारा तुम्हारा बी।'

झांसी नगर के कोट के सब फाटकों पर बड़ी और छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया। बारूद और गोले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे कर दिए गए और निरन्तर युद्ध सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया। फसीलों के छेदों में से बन्दूकों की मार का काम जिन सिपाहियों को दिया गया, उनकी तथा उनके अफ़सरों की उत्कृष्ट व्यवस्था करली गई। सबसे बड़ी बात यह हुई कि एक स्थान से दूसरे स्थान को और सब स्थानों से रानी के पास तथा उनके पास से सब स्थानों, सब मोर्चों को तुरन्त समाचार और आज्ञाएं भेजने का बहुत अच्छा बन्दोबस्त कर लिया गया।

ऐसा विश्वास था कि रोज़ दक्षिण की ओर से आ गया, इसलिए सागर-खिड़की, ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक का खास इन्तज़ाम किया गया।

दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर, पीरअली सागर खिड़की पर कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर, कुँवर सागरसिंह खंडेराव फाटक पर

पूरन कोरी उनाव फाटक पर नियुक्त किए गए। दीवान जवाहरसिंह के हाथ में सम्पूर्ण नगर और नगर के फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। क़िले में हर बुर्ज पर सब मिलाकर इक्कावन बड़ी बड़ी तोपें साजी सम्हाली गईं। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम ग़ौस के सञ्चालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ में पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गईं। क़िले में पठान, चुने हुए बुन्देलखण्डी सैनिक और रानी की स्त्री सेना की नियुक्ति कर दी गई। सब सैनिक लगभग चार हज़ार होंगे। पानी का प्रबन्ध बहुत अच्छा न था, परन्तु सन्तोषप्रद था—क़िले के पश्चिमी भाग में—शंकर-गढ़ में जहां महादेव जी का मन्दिर है—एक कुंआ था उसी से सारी सेना को पानी पिलाने के लिए ब्राह्मण नियुक्त कर दिए गए।

चैत की अमावस हो गई। नवरात्रि का प्रारम्भ हुआ। क़िले में गौर की स्थापना हुई। रानी ने धूमधाम के साथ सिन्दूरोत्सव मनाया।

गौर के सामने चांदी ही चांदी के बर्तनों की तड़क-भड़क और मंदिर के बाहर सबके लिए भीगे चने और बताशों का प्रसाद। नगर की स्त्रियां सजधज के साथ उत्सव में शरीक हुईं।

फूलों की सुन्दरता और सुगन्धि से महादेव जी का मन्दिर भर गया। स्त्रियां थोड़ी देर के लिए आने वाली विपत्ति को भूल गईं। वे अपने क़िले में थीं, अपनी हँसती-मुस्कराती रानी के पास। उनकी तोपें, उनके गोलन्दाज़, उनके सिपाही आसपास और अपनी रक्षा का पुख्ता हौसला अपने मन में। फिर किस बात की चिन्ता थी?

महादेव जी के मन्दिर के समीप पलाश का एक वृक्ष था। उसमें इन दिनों प्रति वर्ष बड़े बड़े लाल फूल लगते थे। और तीक्ष्ण ग्रीष्म ऋतु में उसके हरे चिकने बड़े पत्ते छाया दिया करते थे। जङ्गल का अवशेष और स्मारक, महादेव के मन्दिर का अकेला पड़ौसी—वह वृक्ष काटने से बचा दिया गया था। नवरात्र में वह पलाश लाल फूलों से गस गया। स्त्रियां फूलों की एक एक माला उसकी भी डालों को पहिना दे रही थीं।

मानो सौन्दर्य को सुगन्धि प्रदान की गई हो। लाल फूलों पर बेला, चमेली, गेंदा और जूही की रङ्गबिरङ्गी मालएँ ऐसी लगती थी जैसे प्रभात के समय ऊषा की किरणों ने गुलाल बिखेर दी हो। इस वृक्ष के नीचे कुआँ था और कुएँ के ऊपर एक बारहदरी। इस बारहदरी की रक्षा के लिए ऊंचा परकोटा था। इसके पूर्व में बहुत ऊंचाई पर क़िलेकी पश्चिमी बुर्ज और उसके पीछे ज़रा दूर महल।

पूजन के पश्चात स्त्रियां पलाश के वृक्ष के पास से सीढ़ियों द्वारा बारहदरी में इकट्ठी हो हो जा रही थीं। रानी वहीं थीं। वहीं सिन्दूरोत्सव हो रहा था—हल्की कूँ कूँ। रानी विधवा थीं, इसलिए वह स्वयं सिन्दूर नहीं दे रही थीं, परन्तु वहां भाऊ बख्शी की पत्नी थी और भी अनेक सधवाएँ थीं, जो आपस में सिन्दूर दे रही थां और किसी न किसी बहाने एक दूसरे के पति का नाम लिवाने का हँस हँसकर प्रयत्न कर रही थीं।

मोतीबाई ने भाऊ बख्शी की पत्नी से कहा, 'तुम अपने देवर को क्या कहकर पुकारोगी ?

बख्शिन—'मेरे देवर हैं ही नही।'

मोतीबाई—'होता, तो बख्शिन जू उसको कैसे पुकारतीं ?'

बख्शिन—'लाला कहती।'

रानी और बुन्देलखण्ड में लाला के लिए दूसरा शब्द क्या है ?'

बख्शिन—'सरकार, भउआ।'

सब हँस पड़ीं।

बख्शिन ने क्रोध की मुद्रा बनाकर कहा, 'महारानी साहब की सहायता से हरा लिया, नहीं तो मैं इतना छकाती कि ये सब याद करतीं।'

रानी बोलीं, 'तुम इन सबके लिये अकेली ही बहुत हो।'

बख्शिन मोतीबाई के पीछे पड़ गई। उसे पकड़कर अकेले में ले गई।

बख्शिन—'बतलाओ भगवान का दूसरा नाम क्या है ?'

मोतीबाई—'राम, कृष्ण, मुरारी, परमात्मा, अल्लाह।'

बख्शिन—'और, और ?'

मोतीबाई—'दयासागर, परवरदिगार, रहीम……'

बख्शिन—'मैं तुम्हारा मुँह मीड़ दूँगी। बतलाओ वह नाम जिसको मुसलमान लोग दिन रात जपते हैं, नहीं तो तुम्हारी गत बनाऊँगी।'

मोतीबाई ने धीरे से कहा, 'खुदा।'

बख्शिन ने उसका सिर पकड़कर कन्धे से लगा लिया।

बोली, 'खुदा से दूर हो या उसके पास ?'

मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'दूर हूं दीदी। यदि अच्छे दिन आए तो ब्याह करूंगी।'

रानी के सामने आने को थीं कि मोतीबाई ने बख्शिन से कहा, 'जूही से कुछ मत पूछना। वह सरदार तात्या टोपे को प्राण दिए बैठी है, पर उन्होंने आज तक प्यार की दो बातें उससे नहीं कीं।'

'नहीं पूछूँगी,' बख्शिन ने आश्वासन दिया। रानी ने समझ लिया। छेड़छाड़ नहीं की।

झलकारी नहीं आई थी। रानी ने उसको बुलवाया। उसने आते ही रानी के पैर पकड़ लिए।

रानी ने कहा, 'मैंने इसके लिए नहीं बुलाया था। तू हरसाल आती थी। इस साल अब तक क्यों नहीं आई ?'

'सरकार,' झलकारी ने उत्तर दिया, 'मोसें अपराध हो गओ हतो।'

रानी बोलीं, 'कोई अपराध नहीं हुआ।'

झलकारी—'बछिया घायल तौ हो गई ती।'

रानी—'हो गई होगी। मरी तो नहीं—बच गई!'

झलकारी—'सरकार ने मोय और मोरे आदमी खों बचा लओ, नईंतर कऊँ ठिकानों न हतो।'

रानी—'तुम्हारे आदमी का नाम भूल गई। उसको क्या कहते हैं ?'

झलकारी—'ऊँ…ऊँ…।'

रानी—'ऊँ···ऊँ भी कोई नाम होता है ?'

बख्शिन ने कहा, 'सरकार, इससे बुन्देलखण्डी बोली में बोलें।'

मोतीबाई ने आग्रह किया, 'सरकार के मुँह से यहां की बोली बहुत अच्छी लगती है।'

जूही ने अनुरोध किया।

सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई भी पीछे पड़ गईं।

मुन्दर बोली, सरकार बुन्देलखण्डी में बोलें तो यह अवश्य अपने पति का नाम बतला देगी। बतलाओगी न झलकारी ? बतला देना भला, नहीं तो हम लोगों की बात बिगड़ जायगी।'

झलकारी ने उस बारहदरी के वातावरण को परिहास, सौन्दर्य, सुगन्धि और आग्रह से भरा पाया—उसने हामी का सिर झुकाया।

रानी ने कहा, 'तोरे घर वारे को का नाओ झलकारी ?'

झलकारी—'हओ ऐसें सूदऊँ बताओ जात कऊँ ?'

रानी—'तौ कैसें बताए पनमेसरी ?'

झलकारी—'मोय कौनउँ धोको देओ। जैसें एक बेर पूँछी हती तैसें पूँछो अपुन।'

रानी—'आज कौन मिती है ?'

झलकारी—'पांचें महाराज।'

रानी—'दस दिन पाछें का हूइए ?'

झलकारी—'पूनैं।'

रानी हँस पड़ीं। उन्होंने फूलों की एक माला झलकारी के गले में डाली। सिर पर हाथ फेरा।

विनोद की समाप्ति पर सब स्त्रियां महादेव के मन्दिर के पास उतर आईं। उतरती जाती थीं और पलाश के पेड़ को हिलाती जाती थीं। उसके लाल फूल मालाओं समेत झूम झूम जाते थे।

महादेव का मन्दिर छोटा सा है और आसपास का आंगन भी सकरा ही है, परन्तु उसमें बहुत स्त्रियां इकट्ठी थी।

चहल पहल को बन्द करके रानी ने स्त्रियों से कहा, दो चार दिन के भीतर ही अपनी झांसी के ऊपर गोरों का प्रहार होने वाला है। तुममें से अनेक युद्ध विद्या सीख गई हो। जो जिस कार्य को कर सके वह उस कार्य को हाथ में ले। लड़ने वालों के पास गोला, बारूद, खाना पानी इत्यादि ठीक समय पर पहुँचता रहना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर हथियार भी चलाना पड़ेगा। तुम में से कोई मेरी बहिन के बराबर हो, कोई माता के समान। अपने बाप की, अपने ससुर की, अपने पति की, अपने भाई की लाज तुम्हारे हाथ है। ऐसे काम करना जिसमें अपने पुरखों को कीर्ति मिले। मैंने नगर का प्रबन्ध कर दिया है। तुम्हारी आवश्यकता मुझको क़िले में है। मेरे साथ रहना। बीच बीच में छुट्टी मिल जाया करेगी, तब घर हो आया करो।'

झलकारी बोली, 'मैं सरकार अपने आदमी के पासई रैहों। अपुन ने उनाव फाटक की तोप उनग्वों सौंपी है।'

रानी ने मुस्करा कर कहा, ऐसौइ हुइहै झलकारी। अपने आदमी के पास रइयो, पै ऊकौ नाओ तो बताओ।'

झलकारी घूंघट काढ़कर बोली, 'हूँ -- अबइँ तो बनाओ तो।'

सब स्त्रियां हँस पड़ीं।

रानी ने कहा, अब एक बार सब भगवान का नाम लो, हर हर महादेव!'

सब स्त्रियों के कंठ से ध्वनित हुआ, हर हर महादेव '

उन कोयल, किन्तु दृढ़ कंठों का वह निनाद क़िले की कठोर दीवालों से जा टकराया। उसकी झांई महादेव के मन्दिर में लौट पड़ी। हुआ, 'हर हर महादेव।' अनन्त दिशाओं में 'अनन्त काल में' वह अनन्त, अमर नाद समा गया। महल के पास सिपाहियों के कोठे थे। उनमें नवागन्तुक पठान भी थे। हल्ले को सुनकर हथियार लेकर बाहर निकल आए। बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने उस हल्ले का उनको सविस्तार अर्थ समझाया।

उनका अगुआ गुलमुहम्मद बोला, 'बाई जहां की औरत लड़ने को ऐसा तयार हे, वहां का मरद तो आसमान को चक्कर खिला देगा। और अम लोग–अम लोग—खुदा क़सम इस मुलक के लिए सब मर मिटेगा वक़त आने दो, बाई वक़त।' पठानों ने दांत पीसकर मन ही मन प्रण किया।

[६७]

जनरल रोज़ ससैन्य २० मार्च के सवेरे झांसी के पूर्व दक्षिण कामासिन देवी की टौरिया के पीछे, झांसी से लगभग तीन मील के फ़ासले पर आगया। थोड़ी देर में तम्बू तन गए। इन तम्बुओं को रानी ने क़िले के महल की छत पर से दूरबीन द्वारा देखा। झांसी भर में सनसनी फैल गई, परन्तु वह सनसनी भय की न थी, उत्साह की थी।

क़िले के गोलन्दाज़ों ने भी दूरबीन लगाई। तोपों पर पलीते डालने के लिए हाथ सुरसुरा उठे, परन्तु उस समय की तोपों के लिए अच्छा निशाना मारने के प्रसङ्ग में तीन मील का फ़ासला बहुत था। स्त्री गोलन्दाज़ों ने भी दूरबीन पकड़ी।

मोतीबाई ने उमङ्ग के साथ रानी से कहा, 'सवारों का हमला कर दिया जाय तो ये सब तम्बू कनातें तितर बितर हो जायं।'

रानी बोलीं, 'समझ से काम लो। इन तम्बुओं के बीच बीच में अगल बगल और आगे पीछे तोपें लगी होंगी। एक सवार भी लौटकर न आ सकेगा। लड़ाई क़िले और परकोटे के भीतर से लड़नी पड़ेगी। घिर जायंगे। परन्तु एक दिन तात्या टोपे राव साहब की सेना लेकर आ जावेंगे। तब रोज की सेना पर दुहरी मार पड़ेगी।'

'राव साहब के पास संदेसा भिजवा दिया गया?'

'आज ही भेजती हूँ।'

'पीरअली के हाथ न भेजा जाय। न जानें मन क्यों नहीं बोलता।'

'सोचती हूँ किसको भेजूँ।' रानीने कुछ क्षण सोचकर कहा, 'तू बतला मोती किसको भेजूँ।'

मोतीबाई बोली, 'जो नाम मन में उठते है, वे सब किसी न किसी काम पर लिख लिए गए हैं। मैं सोचती हूँ जूही को सवार के साथ भेज दिया जाय।'

'वह सुकुमार है,' रानी ने कहा।

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से रानी की ओर देखा। बोली, 'सरकार, संसार की जितनी मंजुलता है, वह हमारे मालिक में निहित है। उनसे बढ़कर कोई नहीं। इतनी मृदुल होते हुए भी वे फ़ौलाद से भी बढ़कर कठोर हैं। तब उनकी चाकरनी क्या संवाद वाहक का भी काम न कर सकेगी? और फिर वह दृढ़ भी काफ़ी है। इस कार्य में उसका मन लगेगा। उसी को भेजने की अनुमति दी जाय। उसको तुरन्त शहर छोड़ देना चाहिए। अंग्रेज़ लोग शीघ्र घेरा डालेंगे। सब फाटक बन्द होने ही वाले हैं। फिर कोई भी न आ-जा सकेगा।'

रानी ने स्वीकृति देदी।

कहा, 'मैं जूही को भेजने की अनुमति देती हूं। उसके साथ काशी को भेजना चाहती हू। तुमको उसके साथ कर देती, परन्तु तुम्हारी यहां अधिक आवश्यकता पड़ेगी।'

रानी ने काशीबाई और जूही को उसी समय कालपी के लिए रवाना कर दिया। उन दोनों के घोड़े अच्छे थे। ज़रूरी सामान साथ था। दोनों सशस्त्र युवा के वेष में गईं।

काशीबाई और जूही के चले जाने पर नगर के सब फाटक बन्द कर लिए गए।

झांसी की—अनेक स्त्रियों ने उसी दिन रानी के पास सैनिक वेश में अपना निवास बनाया। ये ही स्त्रियां जो घर पर बात बात में चबड़ चबड़ किया करती थी, ज़रा सा कारण पाने पर परस्पर लड़ बैठती थीं, सन्ध्या के समय वस्त्राभूषणों और फूलों से सुसज्जित होकर, थालों में दिए रख रख कर मन्दिरों में पूजन के लिए जाती थीं, वे ही स्त्रियां सैनिक वेश में तलवार बांधे और बन्दूक़ कन्धे पर साधे, चुपचाप अपना अपना कर्तव्य पालन करने में निरत हो गईं! उनका श्रृंगार और वाक् युद्ध—सब—तलवार के म्यान में समा गया! लोगों की कल्पना थी कि अंग्रेज़ रात को झांसी पर हमला करेंगे। झांसी सचेत थी, परन्तु रात को हमला नहीं हुआ।

२१ मार्च को जनरल रोज़ ने अपने मातहत दलपतियों के साथ दूर से झांसी का चक्कर काटा और भूमि का सूक्ष्म निरीक्षण किया। आक्रमण और रक्षा के स्थानों में सेना की टुकड़ियां और तोपें लगा दीं। शहर और किले के भीतर के लोगों को जिन जिन मार्गों से सहायता या रसद मिल सकती थी, उन सबको उसने अपने अधीन कर लिया। शहर के सब फाटकों की नाकेबन्दी करली। उसी दिन चन्देरी से ब्रिगेडियर स्टुअर्ट अपने दस्ते के साथ लौट आया। रोज़ को और बल मिला।

जहां जहां अंग्रेज़ फ़ौज के दल लगाए गए थे वहां वहां उनकी रक्षा के लिए खाइयां खोद ली गईं। एक स्थान से दूसरे स्थान तक तार लगा दिया गया। कामासिन टौरिया पर एक बड़ी दूरबीन लगाई गई और तार घर क़ायम किया गया। बातकी बात में युद्धक्षेत्र के एक स्थल से दूसरे स्थल को समाचार भेजने की पूरी सुविधा हो गई, और दूरबीन से देखने योग्य क़िले का सब हाल मालूम करना भी सुलभ कर लिया गया।

झांसी के आसपास की सब टौरियों की आड़ से अंग्रेज़ी तोपखाने मृत्यु वमन करने के लिए वैज्ञानिक तौर पर सन्नद्ध हो गए और टौरियों के बीच बीच में जो नीची जगह और खाइयां थीं, उनमें बन्दूक़ चलाने के लिए छेद और नालियां बनाकर सैनिक अपने जनरल की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। रोज़ जैसा योग्य सेनापति था, सेना उसकी उतनी ही सीखी सिखाई हिंसामय और अनुभवी थी।

दूसरे दिन (२२ मार्च को) रोज़ के बीस पच्चीस घुड़सवार निरीक्षण के लिए कोट के कुछ अधिक निकट आगए। सैंयर फाटक के पास दाहनी ओर जहां ऊँची मटीली टौरियां कोट के बाहर और भीतर हैं। यहां से उन घुड़सवारों के ऊपर तड़ातड़ गोलियों की वर्षा हुई। मरा तो उनमें से कोई नहीं, परन्तु घायल अनेक हो गए। रोज़ को तुरन्त समाचार मिल गया। उसने समझ लिया कि झांसी कर्रा मुक़ाबिला करने के लिए तैयार है। रोज़ ने उसी दिन झांसी पर धावा नहीं बोला। अपने सम्पूर्ण साधनों

और उपकरणों का फिर से निरीक्षण किया। जहां जो त्रुटि पाई उसको संभाला।

मंगलवार (२३ मार्च) को रोज़ ने हमले की आज्ञा दी। युद्ध आरम्भ हो गया।

सैंयर फाटक की बाईं तरफ एक टेक पर अंग्रेज़ों का तोपखाना था। वहां से सैंयर-फाटक और ओर्छा फाटक पर तथा उन फाटकों की बीच की दीवार पर गोलों की बरसा हुई। चलते हुए गोलों की चादर के नीचे नीचे गोरी पल्टन सङ्गीनी बन्दूकें लिए दीपक की तरह चली। खुदाबख्श और दूल्हाजू ने उनको बढ़ने दिया। जब मार के काफी भीतर आ गए तब उन्होंने क़हर को मानो उड़ेल दिया। गोरी पल्टन धरती में बिछ गई और फिर खुदाबख्श ने टेक के तोपखाने को अपना लक्ष्य बनाया। अंग्रेज़ तोपची मारे गए और तोपों का मुंह बन्द हो गया। तोपखाने के पीछे वाली सेना पीछे को भागी। उसके ऊपर गुलाम ग़ौस ने 'घनगरज' की मार फेंकी। मुश्किल से कुछ आदमी बचकर रोज़ के पास तक पहुँच पाए। पूर्व की ओर से भी सागर-खिड़की और लक्ष्मी-फाटक पर हमला होता हुआ दिखा, परन्तु उसकी गति धीमी थी—लक्ष्मीताल के दक्षिणी सिरे का छोटा सा चक्कर देना पड़ा, परन्तु भाऊ बख्शी की 'कड़कबिजली' ने पूर्व का मोर्चा ऐसा साध रक्खा था कि पूर्व की ओर से आक्रमण करने की रोज़ की साध मन में समा गई।

रोज़ ने क़िले के दक्षिण में, जीवनशाह की टौरिया के ठीक बग़ल में—पूर्व की ओर—क़िले से तीन सौ गज़ के फ़ासले पर मोर्चा बनाया, परन्तु इस मोर्चे के बनाने में उसको काफ़ी समय और आदमी खर्च करने पड़े। तो सन्ध्या तक वह बहुत कम काम कर पाया। रात में मोर्चा बनकर तैयार हो गया। इसके सिवाय रोज़ ने इस मोर्चे की सहायता के लिए तीन मोर्चे नए और बनाए।

[६८]

झांसी के तोपची और सिपाही रात भर जागते रहे। रानी ने दुहरी कुमुक का प्रबन्ध किया। दिन में अपनी अपनी जगह पर गुलाम ग़ौस, खुदाबख्श, रघुनाथसिंह, भाऊ बख्शी, दूल्हाजू, पूरन और सागरसिंह, रात में उनके स्थानापन्न, रानी के स्त्री गोलन्दाज़।

परन्तु यह बदली सुबह होते ही नहीं हुई। स्त्रियां इन गोलन्दाज़ों के पास पहुंच गईं और काम में मदद करती रहीं। दोपहर के उपरान्त बदली होनी थी।

गुलाम ग़ौस रात भर जागा था, जो स्त्री उसके पास काम कर रही थी उससे ग़ौस का मन नहीं भर रहा था। उसने अपने बदले में लालता ब्राह्मण को मांगा। रानी ने लालता को भेज दिया। लालता के आते ही ग़ौस की खुमारी चली गई।

ग़ौस ने उससे कहा, 'रानी साहब स्त्री—गोलन्दाज़ चपल बहुत हैं, मुझको ठण्डा आदमी चाहिए जो काम करने के समय गाता न हो।'

लालता हँसकर बोला, 'कभी कभी आल्हा गाते गाते तो मै भी काम करता हूँ खां साहब।'

'तब वह गीत याद रखना पंडित जी,' ग़ौस ने कहा, 'जननी जनम दियो तोखां बस आ जांह के लानें।'

लालता ने फ़सील के छेद में होकर देखा कि जीवनशाह की पहाड़ी की आड़ में होकर बग़ल वाली टौरिया के पीछे कुछ तोपें और चढ़ाई जा रही हैं। गुलाम ग़ौस ने भी देखा।

ग़ौस की आंख एक पल के लिए गीध की आंख की तरह सधी।

बोला, 'पंडित जी, एक लोटा जल पिलाओ और मेरी घनगरज तोप और उसकी छोटी बहिनोंका काम देखो। मैं बारह बजे छुट्टी लूँगा। खुदा ने चाहा तो खाना—वाना खाने के बाद शाम को मिलूँगा। फिर रात को सोऊँगा। हाँ तो एकबार वह गीत मन से गादो। एक सतर से ज्यादा नहीं।'

लालता ने स्वर में गाया, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहि के लाने।' गीत की समाप्ति हुई कि ग़ौस ने तोपख़ाने को पलीता छुलाया। 'घनगरज और उसकी छोटी बहिनों' ने इतनी ज़ोर की गरज़ की कि ज़िमीन काँप गई। दक्षिणी सिरे की सब बुर्जों से एक एक क्षण के बाद बाढ़ दगना शुरू हो गई। तोपों के भरने का उत्कृष्ट प्रबन्ध था। एक तोपख़ाने की बाढ़ और दूसरे की बाढ़ के दगने में थोड़ा ही अन्तर पड़ता था। रोज़ के तोपख़ानों ने जवाब दिया, परन्तु जवाब कमज़ोर था। ग़ौस के तोपख़ानों ने ऐसी मार बरसाई कि रोज़ का दम फूल उठा। उसका दक्षिणी दस्ता नष्ट भ्रष्ट हो गया। कुछ तोपख़ाने बन्द हो गए, परन्तु एक तोपख़ाना कोलाहल कर रहा था। समय लगभग दोपहर का हो गया था।

गुलाम ग़ौस ने कहा, 'मुझे भूख लग रही है और गोरों का यह तोपख़ाना मानता नहीं। अच्छा, देखता हूँ।'

गुलाम ग़ौस ने 'घनगरज' को एक अंगुल इधर उधर सरकाया। निशाना बांधा और एक फटने वाला गोला छोड़ा।

बारूद इन तोपों की ऐसी थी कि धुआं न होता था, इसलिए ग़ौस ने अपने निशाने की सफलता तुरन्त देखली। उछल कर बोला, 'वह मारा।' उसके साथियों ने देखा कि गोरे तोपची मारे गए और तोप भी उलट कर बेकार हो गई।

अंग्रेज़ों का दक्षिणी मोर्चा बिलकुल ठंडा हो गया। ग़ौस भोजन और आराम के लिए चला गया। लालता ने स्थान पकड़ा।

पूर्व की ओर से अंग्रेज़ी तोपों के गोले आने लगे। कुछ क़िले से टकराते थे और कुछ शहर में गिरकर घरों का और लोगों का नाश करते थे। भाऊ बख्शी ने कड़कबिजली का स्थान ज़रासा परिवर्तित किया और निशाना साधकर पलीता दिया। थोड़ी देर में रोज़ का पूर्वीय मोर्चा भी ठंडा हो गया। तोपची मारे गए और तोपें बेकार हो गईं। बख्शी अपनी पत्नी को तोपख़ाना सौंपकर भोजन और आराम के लिए चला गया।

सुन्दर ने रघुनाथ सिंह की जगह ली। सुन्दर ने दूल्हा जू की, मोतीबाई ने खुदाबख्श की। दीवान जवाहरसिंह को थोड़ी देर के लिए छुट्टी दे दी गई। रानी घोड़े पर सवार होकर शहर के सब मोर्चों को देखने और सँभालने के लिए चली गईं। तीसरे पहर के अन्त में लौट आईं। जवाहरसिंह फिर अपने काम पर डट गया।

चौथे पहर से लेकर सन्ध्या तक स्त्री तोपचियों ने दृढ़तापूर्वक काम किया। रात को भी उन्हीं को काम पर रहना था। केवल खण्डेराव फाटक और सागर खिड़की पर स्त्रियां काम नहीं कर रही थीं। खण्डेराव फाटक पर सागरसिंह ने अपना नायब स्वयं चुन लिया और सागर खिड़की पर बरहामुद्दीन नाम का एक बुन्देलखण्डी पठान भेज दिया गया।

इसका आना पीरअली को अच्छा नहीं लगा।

पीरअली ने कहा, 'खांसाहब आपको नाहक कष्ट दिया गया। मैं तो दिन रात इस छोटी सी खिड़की को संभालने को तैयार हूँ।'

'मीरसाहब,' बरहामुद्दीन बोला, 'आप थोड़ा आराम कर लें, रात भर के जागे हुए हैं।'

'गई रात तो सभी जागे हैं। आप भी तो न सोए होंगे।'

'हुकुम हैं। पालन करना होगा।'

'ऐसा भी क्या! अरे साहब सोइए। कल रहिएगा मेरी मदद पर।'

नहीं, जनरल साहब सुनेंगे तो नाराज़ होंगे। और रानी साहब सुनेंगी तो मैं अपना मुँह ही न दिखा सकूँगा।'

'तो रहजाइए, मगर एक बात है—किसी को मालूम न हो।'

'मुझे किस्से कहानी कहते फिरने से मतलब ही क्या?'

'बात ऐसी है कि अगर फू-कर बाहर निकल जाय तो मेरे टुकड़े टुकड़े हो जायंगे।'

'आप कहिए। विश्वास करिए।'

अंग्रेजी छावनी में क्या हो रहा है, क्या होने वाला है, कहां कहां नए मोर्चे बनाए गए और किस तरह से हमला ज़ोर का होगा इन बातों की

जासूसी करने का भार मेरे सिर है। अंग्रेजी छावनी में भोपाल रियासत के भी सिपाही हैं। उनमें से एक मेरा रिश्तेदार है। जब मैं थोड़े दिन हुए तालबेहट की ओर गया था तब उसको मैंने मिला लिया था। वह कुछ और लोगों से मिला हुआ है, इसलिए ठीक ठीक खबर मिल जायगी। वह खबर अपने बड़े काम की होगी। इस खबर के लाने के लिए मैं रात को चुपचाप बाहर जाऊँगा। सवेरे के बहुत पहले आ जाऊँगा। यदि अंग्रेज़ों को खबर लग गई, तो मैं मार दिया जाऊँगा और अंग्रेज़ी फ़ौज में मेरा जो रिश्तेदार है, वह, और उसके साथी, सब मारे जायंगे। रानी साहब का नुक़सान होगा।'

'मैं किसी से न कहूँगा, मगर मैं चला जाऊँ या सो जाऊँ तो आपका ठौर खाली हो जायगा। फिर यदि दुश्मन यहां होकर रात में धावा बोलदे तो अपना कितना बड़ा नुक़सान न होगा?'

'यह तो छोटी सी खिड़की है। इसकी खबर भी अंग्रेज़ों को न होगी।'

'जैसा आप उचित समझें। मै सोचता हूँ, हर हालत में मेरा इस ठिए पर रहना आपके लिए लाभदायक होगा।'

'खूब। आप रहिए। मगर जब सब लोग सो जायंगे तब मैं जाऊँगा।'

'लेकिन फाटक नहीं खोलना चाहिए।'

'फाटक पर ताले पड़े हैं। मैं मुहरी के रास्ते जाऊँगा।'

'मुहरी। कौन सी मुहरी?'

'वही जो खिड़की के बग़ल में है।'

जब सब सो गए, पीरअली ने बरहामुद्दीन को मुहरी दिखलाई और उसी में होकर बाहर चला गया।'

आध मील चलने के उपरान्त वह अंग्रेज़ी छावनी के पास पहुँचा। टोका गया। उसने पूर्व निश्चित संकेत को कहा। सन्त्री ने आगे बढ़ने दिया। कई अड्डों पर रोका जाने और अनुमति पाने पर पीरअली रोज़ और उसके मातहत दल नायकों के सामने पहुंचा। दुभाषिए के द्वारा तुरन्त बातचीत हुई।

रोज़--'क़िले में से जो गोलाबारी हुई, उसका प्रधान नायक कौन है ?'

पीरअली--'गुलाम ग़ौसखां और भाऊ बख्शी।'

रोज़ ने बाग़ियों का रजिस्टर लौटवाया, पलटवाया। उसमें ये नाम न थे '

रोज़--'ये लोग कौन हैं ?'

पीरअली--'रानी साहब के नौकर हैं।'

रोज़--'ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक पर कौन है ?'

पीरअली--'दीवान दूल्हा जू ओर्छा फाटक पर हैं और कुँवर खुदा-बख्श सैंयर फाटक पर।'

फिर रजिस्टर देखा गया। ये नाम भी न निकले।

रोज़--'कोई लालता ब्राह्मण है ?'

पीरअली--'है, क़िले में है।'

रोज़ ने दांत पीसे।'

बोला, 'जनरल कौन है ?'

पीरअली--'खुद रानी साहब। उनके नीचे दीवान जवाहरसिंह जागीरदार काम करते हैं।'

रोज़--'कुल कितने गोलन्दाज़ हैं ?'

पीरअली--'बेहिसाब। सैकड़ों। बहुत तो औरतें गोलन्दाज़ हैं।'

रोज़--'बाई जोव! स्टूअर्ट, यह झांसा तो महज़ नरक (हैल) है। औरतें गोलन्दाज़! कल दूरबीन से अच्छी तरह देखूँगा!'

स्टुअर्ट--'बारूद बनाने का कोई कारखाना है या पहले से बनी रक्खी है ?'

पीरअली--'पहले की बनी रक्खी है। और बनाने का कारखाना भी है।'

रोज़--'इट इज़ स्मोक लैस पाउडर स्टुअर्ट (धुआँ न देने वाली बारूद है!) उत्तरी दरवाज़े किसके सुपुर्द हैं ?'

पीरअली--'ठाकुरों, काछियों और कोरियों के हाथ में। दतिया फाटक तेलियों के हाथ में है।'

रोज़—'ओ सिली ! (मूर्ख) जार पहाड़ी से क़िले का बहुत कम नुक़सान होगा ।'

पीरअली—'जी नहीं । क़िले की पश्चिमी दीवाल जो मटीली टौरिया पर है बहुत कम ऊँची है । उसकी दाहिनी बग़ल में शंकरगढ़ क़िले का उत्तर पश्चिम हिस्सा है । इसी में पानी पीने का कुआं और रानी साहब के पूजन का मन्दिर है । तमाम औरतें जो सिपाहीगीरी का काम करती हैं, इसी जगह दोपहरों या शाम को जमा होती हैं । इस जगह के तोड़ने से क़िला हाथ में आ जायगा और शहर की एक इमारत न बचेगी ।'

रोज़—'और उत्तर की ओर से ?'

पीरअली—'उनाव फाटक और भांडेरी फाटक की सीध में मटीले टेकड़े हैं, जिनकी वजह से आपका तोपखाना कामयाब न हो सकेगा ।'

रोज़—'अच्छा, तुम हमको दक्षिण तरफ़ का कोई फाटक वाला मिला दो ।'

पीरअली—'मैंने अर्ज़ की न—कोशिश करूँगा ।

रोज़ ने पीरअली को धन्यवाद देकर वापिस किया ।

पीरअली जब सागर खिड़की पर वापिस आया, उसने बरहामुद्दीन को सावधान पाया ।

पीरअली ने कहा, 'खुदा खुदा करके लौट पाया हूँ । आज बहुत थोड़ा भेद मिल पाया है । कल मौक़ा मिलते ही फिर जाऊँगा ।'

बरहामुद्दीन ने पूछा, 'आज कुछ मालूम हो पाया या इतनी मिहनत सब बेकार गई ?'

'बेकार तो नहीं गई', पीरअली ने उत्तर दिया, 'यह मालूम कर लाया हूँ कि एक भी तोप या तोपखाना हिन्दुस्थानी सिपाही के हाथ में नहीं है । सब तोपें अंग्रेज़ों ने अपने काबू में रख छोड़ी हैं ।'

इतना तो मुझको भी मालूम है कि अंग्रेज़ों ने हिन्दुस्थानियों का भरोसा करना बिलकुल छोड़ दिया है ।'

इस पर भी गोरों के साथ भोपाल, हैदराबाद और ओरछा रियासत के दस्ते हैं और मद्रास की काली पल्टन भी।'

'ओर्छा रियासत का दस्ता उत्तर की ओर अन्जनी की टौरिया पर तैनात है।'

'तुमको कैसे मालूम?'

'क़िले में चर्चा थी। रानी साहब के जासूसों ने खबर दी होगी।'

पीरअली ने सोचा, 'बरहामुद्दीन चतुर मालूम होता है; सावधान होकर काम करना चाहिए।'

[६९]

उसी रात रोज़ ने सतर्कता के साथ जार पहाड़ी पर तोपखानों के मोर्चे बांधे। सुबह होते ही तोपों के मुहरे ठीक किए, निशाने साधे। तोपों पर पलीते पड़े और शहर का विध्वन्स आरम्भ हो गया। लोग बेहिसाब मरने और घायल होने लगे। आगें लगीं। बाज़ार बन्द रहे। साधारण जनता भूखों प्यासों मरने लगी। शहर में हाहाकार मच गया। झांसी की गलियां वीरान दिखने लगीं। क़िले की पश्चिमी दीवार में सूराख हो उठे।

शहर का हाल जानकर रानी दुखी हुईं। तुरन्त सवार होकर क़िले से उतरीं और बरसते हुए गोलों में होकर प्रत्येक मुहल्ले को उत्साह दान किया। आग बुझाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। अन्नक्षेत्र और सदावर्त क़ायम किए। तब क़िले को लौटीं।

लौटते ही गुलाम ग़ौस के पास पहुँची। उसने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

'खां साहब, आज दक्षिण की ओर कोई नया मोर्चा बना है। इसका निरोध होना ही चाहिए,' रानी ने कहा, 'चौथाई नगर बरबाद हो गया है। कल न जानें क्या गति होगी।'

'दक्षिणी मोर्चे का सरकार इन्ज़ाम करदें,' ग़ौस ने निवेदन किया, 'मैं अंग्रेज़ों के उस मोर्चे को देख लूँगा।'

रानी ने कहा, 'मैं मोतीबाई को भेजती हूँ।'

ग़ौस बोला, 'वह कमाल की गोलन्दाज़ हैं सरकार, मगर इस मोर्चे को न सँभाल पावेंगी। अंग्रेज़ लोग दक्षिण के सिवा और किसी ओर से नहीं आ सकते।

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा ऐसा विचार क्यों है ?'

'हुज़ूर' ग़ौस ने उत्तर दिया, 'इसी दिशा से क़िला अत्यन्त निकट पड़ता है।'

रानी ने कहा, 'बख्शिश को यहां भेज दूँ ?'

'भेज दीजिए सरकार, ग़ौस ने सहर्ष स्वीकार किया 'वह बड़े ख़ानदान की हैं।'

रानी की त्योरी बदली, परन्तु उन्होंने तुरन्त नियंत्रण किया। सोचा, 'आत्म त्याग में वह वेश्या–पुत्री किस ख़ानदान वाले से कम है? हे भगवान्, त्याग में भी ऊँचनीच!' और चली गईं।

बख्शिन ने दक्षिणी बुर्ज की 'घनगरज' और उसकी 'छोटी बहिनों' को सँभाला। वह ग़ौस के बतलाए हुए क्रम पर काम करती रही।

गुलाम ग़ौस तुरन्त पश्चिमी बुर्ज पर पहुंचा। यहां लालता काम कर रहा था। ग़ौस ने बारीकी के साथ दूरबीन द्वारा निरीक्षण किया।

बोला, 'पंडित जी अंग्रेज़ों का मोर्चा पहिचाना?'

'वह देखो न काली टोरों के पीछे है।,

'नहीं पंडित जी, काली टोरों के पीछे महज़ बारूद का धुआँ किया जा रहा है जिसमें हम लोग धोखा खाते रहें। वे जो ताज़ा लाल मिट्टी के ढेर लगे हुए हैं, तोपें वहां हैं।'

लालता ने दूरबीन पकड़ी। देखा असहमत हुआ।

'ख़ां साहब,' लालता ने कहा, 'मिट्टी और बजरी के उन ढेरों में तोपें नहीं बिठलाई जा सकतीं।'

'माफ़ कीजिएगा पंडित जी,' ग़ौस बोला, 'तोपें ख़ास मतलब से उन्हीं ढेरों में बिठलाई गई हैं ज़रा ठहरिए।'

ग़ौस ने तोपों पर दूरबीनें कसीं। तोपों को इधर–उधर खिसका कर ठीक किया। निशान बांधे, बारूद और गोले भरे। इस कार्य में उसको अधिक समय नहीं लगा।

इसके बाद इधर ग़ौस ने तोपों को पलीते दिए उधर वे मिट्टी के ढेर उधड़ गए। मरे हुए तोपची नज़र आए। उल्टी हुई और टूटी तोपें। फिर बाढ़ें की गईं।

अंग्रेज़ों के पश्चिमी मोर्चे का जवाब बिलकुल बन्द हो गया। नगर में चैन हो गया। ग़ौस ने जाकर रानी को प्रणाम किया। रानी ने सोने के

चूड़े मँगवा कर ग़ौस को अपने हाथ से पहिनाए। रानी हर्ष में मग्न थी और ग़ौस का खुरदरा चेहरा आँसुओं से तर था। तीसरे पहर के उपरांत कुमुक बदली। स्त्रियों ने तोपें हाथ में लीं और भीषण गोलाबारी शुरू कर दी।

कामासिन टौरिया पर से रोज़ ने दूरबीन में से देखा। बग़ल में उसका फ़ौजी डाक्टर लो था और पास ही मातहत जनरल स्टुअर्ट।

रोज़ ने कहा, 'ओह! स्त्रियां तोप चला रही हैं! स्त्रियां गोला-बारूद ढो रही हैं। कुछ खाना-पानी बांट रही हैं। टूटी हुई दीवारों और कँगूरों की मरम्मत में मदद दे रही हैं। इतनी तरतीब से, इतनी तेज़ी से हिन्दुस्थानियों को काम करते आज देखा! अचरज होता है।'

लो ने दूरबीन हाथ में ली। देखते ही बोला, 'जनरल पेड़ों की छाया में कुछ स्त्री-पुरुष काम कर रहे हैं। हमारा एक गोला उनके बीच में पड़ा। धूल फिकी। फिर भी वे सब वहीं के वहीं!'

रोज़ ने और स्टुअर्ट ने भी निरीक्षण किया। स्टुअर्ट बोला, 'ये सब नेपोलियन हो गए क्या?'

लो ने कहा, 'झांसी हमारा वाटरलू होगा।'

रोज़ ने मुस्कराकर झिड़का, 'हिश, अभी बहुत घोर युद्ध करना पड़ेगा। यह रानी नेपोलियन नहीं, जौन आव आर्क सी जान पड़ती है।'

स्टुअर्ट ने कहा, 'इसको जिन्दा पकड़ सकें तो कमाल होगा।'

उसी समय तार खटखटाया।

मालूम हुआ कि पश्चिमी मोर्चा सबका सब तहस-नहस हो गया। स्टुअर्ट को पश्चिमी मोर्चे को फिर सँभालने की आज्ञा दी। वह चला गया। स्टुअर्ट के ब्रिगेड का अधिकांश दक्षिणी मोर्चे पर था। उसके दलनायक को रोज़ ने तार द्वारा आदेश दिया, 'बहुत ज़ोर के साथ क़िले की दक्षिणी बुर्ज पर गोलाबारी करो। उस व्हिसलिंग् डिक को किसी तरह बन्द करो।'

ग़ौस के 'घनगरज' तोपख़ाने के शोर और मृत्युवमन का नाम गोरों ने व्हिसलिग् डिक—हल्ला करने वाला शैतान रक्खा था।

आज्ञा पाते ही दक्षिणी ब्रिगेड ने अत्यन्त तीव्रता के साथ काम शुरू किया। उनके तोपख़ाने लगातार भयंकर आग और गोले उगलने लगे। बख़्शिन जवाब पर जवाब दे रही थी। बारूद और धुएँ से उसका सुन्दर चेहरा काला पड़ गया था। पसीने की रेखाओं से जितना चेहरा धुल गया था केवल उतना उसके स्वर्ण वर्ण को प्रकट कर रहा था। ब्रिगेड ने तोपों की रक्षा में क़िले की ओर दौर लगाई। घनगरज के तोपख़ाने ने उनका संहार कर दिया। बहुत अंग्रेज़ी फ़ौज मारी गई। उसको लौटना पड़ा। परन्तु उनके तोपख़ाने ने एक काम कर लिया।

एक गोला बुर्ज के कँगूरे को तोड़कर बख़्शिन के कन्धे पर लगा। कन्धा टूट गया, उड़ गया। वह अचेत होकर गिर पड़ी।

बख़्शी को पूर्वी बुर्ज पर समाचार मिला। निर्मम होकर बख़्शी ने उत्तर दिया, 'उससे बढ़कर झांसी और झांसी की रानी है। शाम को देखूँगा। तब तक दाह मत करना।'

बख़्शी अपने काम पर जुट गया। एक बार आकाश की ओर उसने देखा। गीता के कृष्ण को याद किया और अपने को कठोर से कठोर संकट में डालता हुआ तोपों को दुगुनी तेज़ी के साथ चलाने लगा। रोज का पूर्वी मोर्चा बुझ गया।

परन्तु बख़्शी का पलीता सुलगता और आग देता रहा।

बख़्शिन चली गई। रानी तुरन्त आई। बख़्शिन के रक्तमय शव को गोद में रख लिया। गला रुद्ध हो गया, एक शब्द भी मुँह से नहीं निकल रहा था—और न आंख से एक आंसू तोपख़ाना बन्द होगया था। अंग्रेज़ों के गोले धड़ाधड़ बुर्जों और दीवारों से टकरा रहे थे और उनको ढारहे थे। मुन्दर ने दूरबीन से अपनी बुर्ज पर से देखा। दौड़कर आई।

घबराकर बोली, बाईसाहब !'

रानी के मुंह से केवल एक शब्द निकला, 'ग़ौस।'

मुन्दर समझ गई। दौड़कर पश्चिमी बुर्ज से गुलाम ग़ौस को बुला लाई।

ग़ौस ने देखा झांसी की रानी धूल में बैठीं बख्शिन के शव से लिपटी हुई हैं।

ग़ौस ने कहा, 'यह क्या सरकार, अभी न जाने कितने सरदार कुरबान होंगे? हुजूर हम लोगों को समझाती हैं कि स्वराज्य की लड़ाई किसी के मरने-जीने पर निर्भर नहीं है। और फिर बख्शिनजू तो अमर हो गईं। उठिए। देखिए उस जवांमर्द बख्शी को। वह अपने ठिए पर अटल है। आप ऐसा मोह करेंगी तो हम लोग गोरों से कितने दिन लड़ सकेंगे? आप यहां से हट जायँ और दीवान खास में बैठकर हुकुम भेजती रहें। मैं इनको मज़ा चखाता हूँ।'

रानी बख्शिन के शव का आवश्यक प्रबन्ध करके दीवान खास में चली गईं।

ग़ौसखां ने 'बिसमिल्लाह' किया और घनगरज को संभाला। तीन बाढ़ों में ही अंग्रेज़ी मोर्चे का तोपखाना, तोपची और तोपखाने पर काम करने वाले, सब स्वाहा हो गए।

ग़ौसखां ने अपने साथियों से कहा, 'यह तो मेरे साथी सरदार को मारने का बदला हुआ, अब कुछ प्रसाद भी देता हूँ। देखो झोखनबाग के पूर्व में गुसाइयों के मन्दिरों की आड़ से ये लोग सैंयर-फाटक पर गोलाबारी कर रहे हैं। बिचारा खुदाबख्श मन्दिरों के लिहाज़ के कारण जवाब नहीं दे पाता, परन्तु मन्दिरों के बीच में सन्ध है। उसी सन्ध में होकर अंग्रेज़ी तोपखाना काम कर रहा है। वह सन्ध खुदाबख्श की सीध में नहीं हैं, पर घनगरज की सीध में है।'

साथी ने अनुरोध किया, 'मन्दिर पर गोला न पड़े खांसाहब। नहीं तो बड़ा अनर्थ हो जावेगा।'

'अगर मन्दिर की एक ईंट भी मेरे गोले से टूट जाय तो तलवार से मेरी गर्दन क़लम कर देना ।'

ग़ौस ने घनगरज का मुहरा मोड़ा, परन्तु वहां से सीध नहीं बैठती थी और न निशाना जमता था। तोप को ज्यों का त्यों करके वह रघुनाथसिंह वाली बुर्ज पर गया।

'दीवान साहब,' ग़ौस ने विनय की, 'दो पल के लिए तोप मुझे बख्श दीजिए। सैंयर-फाटक के सामने वाला अंग्रेज़ी तोपख़ाना बन्द करना है।'

'तोप खुशी से लीजिए', रघुनाथसिंह ने कहा, 'परन्तु अंग्रेज़ी तोपख़ाने पीछे मिटेंगे, मन्दिर पहले।'

ग़ौस ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'दूरबीन दीजिए, मुझको मन्दिरों की सन्ध से केवल अंग्रेज़ी तोपख़ाना देखना है। मन्दिरों को मैं देखूँगा ही नहीं।'

रघुनाथसिंह को गुलाम ग़ौस की गोलन्दाज़ी का भरोसा था। दूरबीन और तोप उसके हवाले कर दी।

ग़ौस ने तोप के ठिए को सँभाला, सुधारा और दूरबीन लगाकर निश्चिन्तता के साथ गोला छोड़ा। उसका जो कुछ फल हुआ उसे रघुनाथसिंह ने दूरबीन से देखा।

अंग्रेज़ तोपची मारे गए। तोपें नष्ट हो गईं और मन्दिर बच गए।

उसी समय गुलाम ग़ौसखां को रानी ने अपनी तौल भर चांदी का तोड़ा पुरस्कार में दिया। जब लालता ने सुना उसका जी गिर गया।

सन्ध्या समय बख्शिन के शव का दाह किया गया।

बख्शी हर्षोन्मत्त था, परन्तु उसकी आंखों में पागलपन था।

कभी कभी वह असंगत और अप्रसाङ्गिक बात कहता था, 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।' और कोई समझा हो, या न समझा हो, परन्तु रानी इस महावाक्य को समझती थीं।

रात हुई। लड़ाई ने कुछ शांति पकड़ी। पीरअली के पास बरहामद्दीन पहुंच गया।

पीरअली ने तुरन्त कहा, 'देखो मेरे पता लगाने के कारण गोलन्दाज़ों को कितना लाभ हुआ।'

बरहामुद्दीन को शक हुआ। उसको दबाकर बोला, 'बेशक हुआ होगा, मगर मैं क़िले से गोलन्दाज़ी नहीं कर रहा था, इसलिए कुछ कह नहीं सकता।'

पीरअली ने शेखी मारी, 'हमारी खिड़की के सामने अंग्रेज़ों का कोई मोर्चा नहीं पड़ता, नहीं तो दांत खट्टे कर देता!'

बरहामुद्दीन ने खुशामद की, 'मीरसाहब कहिए दांत और सिर तोड़ देते।'

पीरअल ने प्रसन्न होकर कहा, 'एक ही बात है।'

जब कुछ रात बीत गई पीरअली ने बरहामुद्दीन से धीरे से कहा, अब मैं जासूसी पर जाता हूँ, आप यहां होशियार रहना।'

बरहाम ने मंजूर किया।

पीरअली मोहरी के रास्ते से बाहर हो गया! और उसके पीछे पीछे चुपचाप बहराम। आध मील चलने के बाद जब पहले छबीने के संत्री ने टोका तब पीरअली ने संकेत शब्द में उत्तर दिया। पीरअली आराम के साथ अंग्रेज़ छावनी में दाखिल हो गया। बरहाम बहुत उदास धीरे धीरे सागर-खिड़की को लौट आया।'

जब पीरअली लौटा बरहाम ने प्रश्न किया, 'आज की क्या खबर लाए मीरसाहब?'

उसने उत्तर दिया, 'ज्यादा पता नहीं लगा। सिर्फ इतना मालूम कर सका कि कल शहर पर गोलाबारी पश्चिम की तरफ़ से होगी।'

'आज तो सरदार गुलाम ग़ौस ने कमाल कर दिया। जिधर की तोप सँभाली उसी तरफ़ क़हर बरसा दिया।'

'हमारी बारूद भी बहुत अच्छी है। धुआँ होता ही नहीं अंग्रेज़ों को पता नहीं लगता कि तोपखानें किधर लगे हुए हैं।'

'तो भी वे लोग हमारे गोलन्दाज़ पर गोलन्दाज को मार रहे हैं। खैर है कि हमारे यहां तोपचियों की कमी नहीं है वरना झांसी का घण्टे भर भी बचना मुश्किल था।'

'बारूद कहां बनाई जाती है खां साहब ?

'महल के उत्तर में इमली के पेड़ों के नीचे। आपने क्या नहीं देखा!

'नहीं तो मैं उस तरफ़ नहीं गया खाँसाहब।'

'एक बात मुझको भी बतलाइए मीर साहब। आप अंग्रेज़ी छावनी में पहुंच कैसे जाते हैं ?'

कुछ न पूँछो खांसाहब, गड्ढों, खाइयां और झाड़ झंकाड़ की आड़ें लेता हुआ जाता हूं। ज़रा चूकूँ तो गोली सर पर पड़े। बड़ी जोखिम का काम है। सीटी का एक बँधा हुआ इशारा करता हूं। मेरा रिश्तेदार आ जाता है और बातें बतला देता है। मैं लौट आता हूँ। फिर वही मुहरी की मुसीबत। इतना बदबूदार कीचड़ है कि तोबा।'

बरहाम के पैरों में भी कीचड़ लगा हुआ था। पीरअली ने देख लिया।

उसने पूछा, 'खांसाहब तुम्हारे पैरों में कीचड़ कैसा ?'

उसने भोलेपन के साथ उत्तर दिया, 'मैं भी मुहरी में होकर बाहर थोड़ी दूर चला गया था। देखना था कि कैसा रास्ता है। आपके जाने के बाद गया और तुरन्त लौट आया।

पीरअली को सन्देह हो गया। उसने एक निश्चय किया। बरहाम का सन्देह जाग्रत हुआ। उसने भी एक संकल्प किया।

[७०]

सुन्दर को उस रात दूल्हाजू की कुमुक सौंपी गई। उसने दूल्हाजू से गोलन्दाज़ी सीखी थी, इसलिए वह उसका आदर करती थी। सन्ध्या के उपरान्त सुन्दर ओर्छा फाटक के ऊपर दूल्हाजू के पास पहुँच गई।

दूल्हाजू ने दिन में खूब तोप चलाई थी। वह प्रसन्न था और सुन्दर उस दिन के काम पर सन्तुष्ट थी, केवल बख्शिश के देहान्त पर कभी कभी मन कसक उठता था।

दूल्हाजू ने सुन्दर से कहा, 'आज तो बाई मैं बहुत थक गया हूँ। सारा शरीर दुख रहा है।'

'आप विश्राम करिए। मैं रात भर सावधान रहूँगी।'

'दिन भर फिर वही सब करना पड़ेगा।'

'मैं दिन में भी आपकी जगह काम करती रहूँगी।'

'और कल रात?'

'रात को भी काम कर दूंगी। तबतक आप सुस्ता लेंगे। परसों दिन में आप तोपखाना संभाल लेना। मैं सो लूंगी। रात का काम फिर पकड़ लूंगी।'

'सुन्दर तुम बहुत प्रबल हो।'

'आपकी कृपा।'

'और अत्यन्त सुन्दर।'

'इसका उत्तर कुछ नहीं दे सकती। भगवान ने जैसा बनाया वैसी हूं।'

'तुमको देखते ही, तुम्हारे दर्शन करते ही न जानें मेरा चित्त कैसा हो जाता है। तुम तो महल की रानी होने के योग्य हो।'

'रानी तो एक ही हैं—और एक ही हो सकती हैं।'

'सुन्दर मैं तुमको अपने हृदय से लगाना चाहता हूँ। क्या कहती हो?'

'यही कि आप बहुत नीच हैं।'

दूल्हाजू इस उत्तर की आशा नहीं कर रहा था। उसने अपनी ठेस को मुश्किल से संभाला। उत्तेजित हुआ।

बोला, 'जानती हो मैं ठाकुर हूँ।'

सुन्दर ने दृढ़ सुहावने स्वर में कहा, 'जानते हो मैं कुणभी हूँ, जिस जाति की सहायता से छत्रपति ने एकछत्र राज्य स्थापित किया था।'

दूल्हाजू यकायक हँस पड़ा।

बोला, 'मैं सुन्दर बाई तुमसे परम प्रसन्न हुआ। मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही यह सब कहा था।'

सुन्दर ने स्थिरता के साथ कहा, 'हर्ष है कि आपकी परीक्षा शीघ्र समाप्त हो गई।'

दूल्हाजू की आंख से लौ छूट पड़ी, परन्तु सुन्दर ने नहीं देखा।

'तोपखाना संभालो,' दूल्हाजू बोला, 'मैं सबेरे काम पर आजाऊँगा।' और अधिक वह कुछ न कह सका। चला गया।

अब सुन्दर का क्षोभ जाग्रत हुआ। खीझकर उसने अपने मन में कहा, 'दो जूते मुँह पर न लगा पाए। बड़ा सरदार बना फिरता है। मेरे स्त्रीत्व को इतना दुर्बल समझा!'

सबेरा होते ही दूल्हाजू अपने डिग पर आ गया। सुन्दर से कोई बात नहीं हुई। उसने ऐंठ के मारे क्षमा प्रार्थना तक नहीं की। सुन्दर ने रात का सब हाल रानी को सुनाया।

रानी ने सुन्दर को वर्जित किया, 'और किसी से कुछ मत कहना। गोलन्दाज़ बहुत मारे गए हैं। यदि मेरे पास काफ़ी आदमी होते तो दूल्हाजू को अपने हाथ से कोड़े लगाती और झांसी बाहर कर देती, परन्तु इस समय ज़रा सह लेना चाहिए। तुझे अनुमति देती हूं कि यदि वह फिर कोई बेहूदी बात कहे तो अकेले में जूते लगा देना। तू उसको कुश्ती में पछाड़ सकती है।'

सुन्दर को अच्छा लगा। चुप रही। रानी ने समझा कि इतने से सन्तुष्ट नहीं हुई। उन्होंने दूल्हाजू को बुलाया और अकेले में काफ़ी डाटा फटकारा।

कहा, 'अबकी बार तुमको क्षमा किया। अपना काम करो। ऐसा ओछापन न करना।'

दूल्हाजू काम पर शीघ्र लौट गया।

उसने सोचा, 'एक ने नीच कहा, दूसरे ने ओछा। मेरे सच्चे प्रेम को किसी ने न पहिचाना। सुन्दर एक छोटी जाति की स्त्री है। मैं उसको खुल्लम खुल्ला रख लेता। ठकुराइन बन जाती। लेकिन बड़ी पाजी औरत है और रानी औरतों की तरफदार। मैंने कहा ही क्या था? विश्वास दिलाया कि उसकी परीक्षा कर रहा था, परन्तु रानी ने विश्वास नहीं किया। इस प्रकार का बर्ताव तो बड़े बड़े महाराज भी मेरे साथ नहीं कर सकते।'

दूल्हाजू उस बर्ताव को अपना अपमान समझता था। वह उस प्रहर अपना कर्तव्य, शिथिलता और अन्यमनस्कता के साथ करता रहा। कुशल यही थी कि पिछले दिन गुसाइयों के मन्दिरों के पास वाले तोपखाने के मिट जाने के कारण और रोज़ के पश्चिमी मोर्चे पर अधिक ज़ोर देने के कारण, ओर्छा फाटक ने अधिक गोलाबारी का आवाहन नहीं किया।

दोपहर के बाद धूप कड़ी हो गई। लू भी चल उठी। दोनों ओर के तोपखाने और सिपाही अवकाश लेने लगे।

पीरअली दूल्हाजू के पास आया। राम रहीम होने के उपरान्त बात चीत होने लगी। पीरअली चाहता था कि कम से कम एक सरदार को अपने पक्ष में करलूं।

पीरअली—'दीवान साहब आपको तो बड़ा कड़ा परिश्रम करना पड़ता है! आपकी वजह से मेरी खिड़की पर दुश्मन कोई दबाव ही नहीं डाल पाता।'

दूल्हाजू—'परिश्रम तो, सचमुच, मीर साहब मुझको बहुत करना पड़ता है। मारे जाने पर मेरे परिश्रम का कोई मूल्य भी आंका जायगा या नहीं इसमें सन्देह है।'

पीरअली—'रानी साहब तो इनाम खुले हाथ देती हैं। गुलाम गौस को सोने के कड़े, अपनी तौल भर चाँदी का तोड़ा और कुँवर का खिताब बख्शा है।'

दूल्हाजू—'होगा। रानी पठानों और परदेसियों की केवल हेकड़ी पर ही प्रसन्न हो जाती हैं। खज़ाना उनके हाथ में है चाहे जिसको लुटावें। मैं कितनी बार ओर्छा फाटक के सामने से अंग्रेज़ों को हटा चुका हूँ, कितनी बार मैंने उनके तोपखाने नष्ट किए, परन्तु मुझको तो एक पैसा भी पुरस्कार में नहीं मिला। जी चाहता है कि यह लड़ाई समाप्त हो या अवसर मिले तो अपने घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'मैं ही, देखिए दीवान साहब, जासूसी में कितनी जान खपा रहा हूँ। पता लगाने के लिए रात में इधर उधर अकेला भटकता हूँ। एक गोली, या तलवार का वार पड़ जाय कि बस खतम हूँ, मगर कोई पूछने वाला नहीं कि भैया तुम्हारा क्या हाल है। मेरे साथ एक गंवार पठान को और जोड़ दिया है। उसके मारे परेशान रहता हूँ।'

दूल्हाजू—'इधर मेरी भी यही परेशानी है। सुन्दर बाई मेरी नायबी में है। उसकी केवल परीक्षा लेने के लिए एक बात कही कि वह पाजी-पन पर आ गई। मैंने डाटा। उसने रानी से मेरी शिकायत करदी। रानी ने मुझसे ऐसी बातें की हैं आज, कि दिल टूट रहा है।'

पीरअली ने प्रयत्न किया अपने को रानी का जासूस प्रकट करने का, दूल्हाजू ने प्रयास किया अपने को दुखाया सताया निर्दोष सिद्ध करने का, दोनों के मन परस्पर निकट आए, परन्तु एक दूसरे की बात को उनमें से किसी ने नहीं समझा।

दूल्हाजू ने कहा, 'मुझे दिखता है कि हम लोग अंग्रेज़ों को हरा नहीं सकेंगे।'

पीरअली—'उन्होंने दिल्ली और लखनऊ को सहज ही तोड़ लिया। कानपूर को भी पराजित कर लिया है सच्ची बात तो दीवान साहब यह है कि झांसी बिचारी का कोई बिरता नहीं।'

दूल्हाजू—'जी चाहता है कि आज ही इस्तीफ़ा देकर, तुम्हारी मुहरी से घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'इस्तीफ़ा देने की क्या ज़रूरत? वैसे ही चले जाइए, परन्तु चारों तरफ़ तार लगे हुए हैं और सन्त्रियों के छर्रोंने पड़े हुए हैं। उनमें होकर छिपकर निकलना कठिन है।'

दूल्हाजू—'आप पीर साहब, अंग्रेज़ी छावनी में से खबर कैसे लाते हैं?'

पीरअली—'छावनी में मेरे कुछ रिश्तेदार भोपाली दस्ते में हैं। उनकी मदद से पहुंच जाता हूँ। और वहां का हाल ले आता हूँ—और—और दीवान साहब, मैं अंग्रेजों के बड़े जनरल रोज़ साहब के सामने भी हो आया हूँ।'

दूल्हाजू—'आप लड़ाई शुरू होने के पहले गए थे?'

पीरअली—'नहीं, कल रात को ही तो पहुँचा था।'

दूल्हाजू—'फिर बचे कैसे?'

पीरअली—'सीधी सी बात। उनसे कह दिया कि मैं तो आपकी तरफ़ से जासूसी कर रहा हूँ।'

दूल्हाजू—'जनरल मान गया?'

पीरअली—'क्यों न मानता? दो एक बातें बतला दीं, उसको भरोसा हो गया।'

दूल्हाजू—'मैं भी जनरल के पास चलना चाहता हूँ।'

पीरअली—'यदि रानी साहब को खबर लग गई तो?'

दूल्हाजू—'तो जो हाल आपका होगा, वही मेरा भी।'

पीरअली—'मैं तो जासूस हूँ।'

दूल्हाजू—'मुझको भी उसी रंग में रंग लीजिए।'

पीरअली—'मगर जनरल के सामने आप अपने को जासूस नहीं कह सकेंगे।'

दूल्हाजू 'तब क्या कहूँगा ? जाना तो उसके सामने अवश्य चाहता हूँ। शर्त यह है कि बचकर लौट आऊँ और यहां भी कोई गड़बड़ न हो।'

पीरअली – 'जनरल ने यदि आपसे किसी काम के करने के लिए कहा तो ?'

दूल्हाजू—'हां करनी पड़ेगी।'

पीरअली—'तो पहले हमारा आपका ईमान हो जाय और कहीं भी किसी प्रकार भी बात न फूटने पावे।'

पीरअली ने दीन की और दूल्हाजू ने धर्म की पक्की सौगन्द खाई।

पीरअली ने कहा 'यदि अवसर मिला तो आज रात को नहीं तो कल रात को चलेंगे।'

दिन भर पश्चिमी और दक्षिणी मोर्चों पर घोर युद्ध होता रहा। उत्तर में, उनाव, भांडेरी और सूजेखां फाटकों पर भी गोलाबारी हुई। इस दिशा में ओर्छा की सेना रोज़ के दस्ते के साथ काम कर रही थी, परन्तु इस ओर झांसी के सैनिक या गोलन्दाज़ ऐसी मुस्तैदी के साथ कर्तव्य पालन कर रहे थे कि रानी को इस दिशा से अंग्रेज़ों का कोई भय ही न था। दतिया राज्य से अंग्रेज़ों की सहायता के लिए कोई दस्ता नहीं आया था। इस राज्य को चरखारी–पराजय का पता लग गया था। राजा विजय बहादुर का देहान्त हो चुका था। उत्तराधिकारी नाबालिग़ था। रोज़ के आक्रमण के पहले दतिया को रानी का भय था और अब तात्या टोपे का। इसलिए दतिया राज्य भय ग्रस्त तटस्थता में था।

झांसी का दतिया फाटक निर्भय था। क़िले की पश्चिमी बुर्ज का तोपख़ाना इसकी काफ़ी रक्षा किए हुए था। यही हाल खण्डेराव फाटक का था। फिर भी इन फाटकों के तोपची हाथ पर हाथ धरे न बैठे थे।

संध्या हो गई। परन्तु रात में गोलाबारी बन्द न हुई। रात में गोले सर्राती हुई छोटी छोटी लाल गेंदों की तरह मालूम पड़ते थे। इस गोला–बारी से शहर का थोड़ा सा नुक़सान हुआ, परन्तु क़िले का कुछ नहीं

बिगड़ा। उस रात पीरअली बाहर नहीं जा पाया। दूल्हाजू कम सोया। उसने पीरअली की बाट जोही।

दिन निकलने पर फिर ज़ोर का युद्ध हुआ। अब तक गोरी पल्टनें आगे बढ़ बढ़ कर मर रही थीं। अब अधिकांश देशी पल्टनें दिखलाई पड़ीं। परन्तु तोपखाने सब अंग्रेज़ों के हाथ में थे।

दोनों ओर के तोपची मर रहे थे और दूसरे तोपची उनकी जगह पर आ रहे थे। संध्या के समय क़िले के पश्चिमी मोर्चे का तोपखाना बन्द हो गया, कारण था दीवार का धुंस हो जाना।

दीवार के टूट जाने से तोपखाना दिखलाई पड़ने लगा। मुश्किल से तोपों को आड़ में किया गया। जारपहाड़ी की ओर से एक दस्ता झपटा। खण्डेराव फाटक पर से सागरसिंह ने देख लिया। फाटक पर ताले पड़े थे। वैसे भी फाटक खोलने की आज्ञा न थी। सागरसिंह ने तोप चलाई, परन्तु वह जल्दबाज़ था, इसलिए निशाना ठीक न बैठता था। खीझ उठा।

अपने साथियों से बोला, 'आज बुन्देलों की नाक कटती है और कुँवर सागरसिंह की पूँछ जाती है। जो मेरे साथ इन गोरों का सामना कर सके वह तुरन्त नीचे उतरे।'

एक ने कहा, 'रानी साहब की या दीवान जवाहरसिंह की आज्ञा ले लो।'

सागरसिंह ने उत्तर दिया, 'बावले हुए हो ! जब तक किसी की आज्ञा आवेगी तब तक ये लोग क़िले में घुस जायंगे। तब उस आज्ञा को क्या हम चाटेंगे ?'

रस्से की सीढ़ी लगाकर धड़ाधड़ सौ आदमी नीचे उतर गए। सबसे पहले सागरसिंह। ये लोग सपाटे से बग़ल वाली टौरिया की ओट में पहुँच गए। जैसे ही अंग्रेज़ी दस्ता आया इन लोगों ने बन्दूक़ों की बाढ़ छोड़ी। दस्ते ने भी बन्दूक़ दाग़ी। सागरसिंह की टुकड़ी की कोई हानि नहीं हुई, परन्तु अंग्रेज़ी दस्ता छिन्न भिन्न हो गया। इकट्ठा होने ही को था कि सागरसिंह अपने साथियों सहित तलवार लेकर पिल पड़ा। अंग्रेज़ी

दस्ता सब नष्ट हो गया। कुँवर सागरसिंह भी खण्डेराव फाटक के पास ही मारा गया। उसके कुछ आदमी बच गए। भीतर वापिस आ गए।

इन आदमियों की वीरता ने उस दिन झांसी का क़िला बचा लिया।

रात हो गई। रानी को सागरसिंह के शौर्य का समाचार मिल गया। रानी की आंखों के सामने बरवासागर की घटना का पूरा चित्र खिंच गया।

रानी ने मन में कहा, 'जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं वह स्वराज्य से बहुत दिनों वञ्चित नहीं रह सकता।'

रानी ने दीवार की मरम्मत अपने सामने करवाई। कारीगर कम्बल ओढ़कर दीवार की मरम्मत पर चिपट गए और रात भर में दीवार को ज्यों का त्यों कर लिया।

सवेरे पश्चिमी अंग्रेज़ी मोर्चे ने दूरबीन से देखा—जैसे दीवार का कभी कुछ बिगड़ा ही न था।

उस दिन अत्यन्त भीषण युद्ध हुआ। दोनों ओर निरन्तर और तीव्र गोलाबारी हुई। इधर दीवारें टूट रही थीं। उधर अंग्रेज़ों के मोर्चे नष्ट हो रहे थे। इधर तोपची पर तोपची मारे जा रहे थे उधर, तोपखानों पर तोपखाने बन्द हो रहे थे। तुरन्त दूसरे तोपची तोपों को संभाल लेते थे। रानी की स्त्री सेना इस तरह काम कर रही थी जैसे देवी दुर्गा ने अनेक शरीर और अनेक रूप धारण कर लिए हों।

दीवार टूटी कि उसकी मरम्मत हुई। वह भी दिन दहाड़े। मरम्मत करने का काम पुरुष कर रहे थे और पत्थर तथा चूना इत्यादि देने का काम स्त्रियां। गोले बरस रहे थे ऐसे गोले जो फट कर अपने भीतर के कील कांटे चारों ओर सनसना देते थे, परन्तु न तो झांसी की हिम्मत टूट रही थी और न झांसी की रानी की। जैसे जैसे संकट बढ़ता, तैसे तैसे इनका साहस बढ़ता जाता!

यकायक गोला क़िले के भीतर वाले गणेश मन्दिर पर गिरा और वह ध्वस्त हो गया। केवल मूर्ति बची। दूसरा शंकर क़िले में गिरा। उस

समय आठ दस ब्राह्मण पानी भर रहे थे। उनमें से आधे मारे गए, बाकी भाग गए,। ये गोले पश्चिमी मोर्चे से आए थे।

पानी की टूट पड़ी। ३, ४ घंटे लोगों को प्यासा रहना पड़ा। क़िले का पश्चिमी मोर्चा सँभाला गया। अंग्रेज़ी मोर्चे का मुँह बन्द हुआ, तब कुएँ से पानी आ पाया। फिर रात हुई और बहुत कुछ शान्ति। दोनों पक्ष थकावट में चूर थे।

इस रात पीरअली और दूल्हाजू को अवसर मिला।

[७१]

बरहामुद्दीन सागर–खिड़की की तोप पर पीरअली की जगह आ गया। पीरअली ने उससे कहा, 'आज बहुत से पते लगाने के लिए अंग्रेज़ी छावनी में जाना है।'

'शौक़ से जाइए', बरहाम बोला, 'अकेले ही जाइएगा! बड़ा ख़तरनाक काम है।'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'अकेला ही जाऊँगा। दो आदमी होने से ख़तरा बढ़ जायगा।'

पीरअली खिड़की पर से उतरा। थोड़ी देर ही ठहरा था कि दूल्हाजू आ गया। ओर्छा फाटक पर उसकी जगह सुन्दर आ गई थी।

दूल्हाजू को बरहामुद्दीन ने नहीं देख पाया।

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी में घसे। घसते ही दूल्हाजू ने नाक दबाई। धीरे से कहा, 'मीर साहब यह तो बहुत सकरी और गन्दी रास्ता है।'

पीरअली धीरे से बोला, 'दीवान साहब वहां पहुंचने का यही एकमात्र मार्ग है।'

उन दोनों के निकल जाने पर धीरे से बरहामुद्दीन मुहरी में उतरा और आड़ ओट लेते हुए, पहले संत्री के छबीने तक चला गया।

संत्री ने टोका। पीरअली ने बँधे हुए संकेत की भाषा में जवाब दिया। वे दोनों छावनी में चले गए।

बरहामुद्दीन ने सोचा, 'पीरअली अवश्य कोई घातक षड्यंत्र रच रहा है और वह झांसी के लिए शुभ नहीं जान पड़ता। आज दूसरा आदमी इसके साथ कौन है?'

बरहामुद्दीन सावधानी के साथ लौट आया। हाथ पैर धोकर मुहरी की बग़ल में बैठ गया और पीरअली की बाट जोहने लगा।

दूल्हाजू के साथ पीरअली रोज़ के सामने पेश हुआ। स्टुअर्ट पास था। पूछताछ शुरू हुई।

रोज़—'तुम्हारे साथ दूसरा आदमी कौन है ?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ठाकुर साहब। ओर्छा-फाटक का तोपखाना इन्हीं के हाथ में है।'

रोज़—'मैं खुश हुआ। यह किसी राजपरिवार का पुरुष है ?'

पीरअली—'जी हां।'

रोज़—'आप क्या काम करोगे दीवान साहब ?'

दूल्हाजू—'जो कहा जाय।'

पीरअली—'यह सच्चे आदमी हैं साहब। गङ्गाजली की सौगन्ध लेंगे।'

रोज़ समझ गया।

दूल्हाजू के पसीना छूट गया। निकल भागने को जी चाहा, परन्तु वहां बाल बराबर भी सांस न थी।

रोज़ ने एक हिन्दू सिपाही से लोटा भरकर मँगवाया।

रोज़ ने कहा, 'आपको गङ्गाजी की सौगन्ध खानी पड़ेगी।'

दूल्हाजू ने लोटा दोनों हाथों में ले लिया। आंखें बन्द कर लीं।

रानी का कुपित चेहरा सामने फिर गया। उसने आंखें खोल लीं। रोज़ ने सोचा शपथ गम्भीरता पूर्वक ले रहा है।

पीरअली ने अनुरोध किया, 'सौगन्ध ले लीजिए दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'गङ्गाजी मुझको मारें, जो मैं बेईमानी करूं।'

रोज़—'बेईमानी किसके साथ ! शपथ लो कि कम्पनी सरकार के साथ, अंग्रेज़ों के साथ बेईमानी नहीं करूंगा।'

पीरअली—'ले लीजिए सौगन्ध दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'कम्पनी सरकार के साथ, अंग्रेज़ों के साथ बेईमानी नहीं करूंगा।' और उसने लोटा नीचे रख दिया।

रोज़ ने कहा, अभी नहीं। लोटा फिर हाथ में लीजिए और यह कहिए कि ओर्छा फाटक का तोपखाना या तो बेकार कर देंगे या तोपखाने से गोला नहीं छोड़ेंगे और ओर्छा फाटक हमारे हवाले कर देंगे।'

दूल्हाजू ने तदनुसार क़सम खाई।

पीरअली ने विनय की, 'हुजूर को इनाम भी इसी समय बतला देना चाहिए।'

रोज़ ने तुरन्त वरदान दिया, 'दो गांव जागीर में दीवान साहब, हमेशा के लिए।'

दूल्हाजू ने क्षीण मुस्कराहट के साथ स्वीकार किया।

दूल्हाजू ने प्रश्न किया, 'कब ?'

रोज़ ने उत्तर दिया, जब हम झांसी पर अधिकार करके शान्ति स्थापित कर लेंगे।'

'यह नहीं पूछा, दूल्हाजू ने कहा, 'वह काम कब करना होगा !'

रोज़ और स्टुअर्ट ने सलाह की।

रोज़ बोला, 'जब हमारे मोर्चे के पीछे लाल झण्डा देखो। लेकिन जब तक लाल झण्डा न देखो तब तक गोले टेकड़ी के नीचे हिस्से में लगें, हमारे तोपखाने या दस्ते पर गोला न आवे और हमारे तोपखाने का गोला तुम्हारे ऊपर न गिरेगा या तो दीवार की जड़ में पड़ेगा या तुम्हारे बग़ल में जो ऊँचाई पर बुर्ज है उस पर पड़ेगा। यदि तुमने हमारे साथ बेईमानी की तो सबसे पहले तुमको फांसी दी जायगी।'

दूल्हाजू का चेहरा तमतमा गया।

'मैंने बहुत बड़ी क़सम खाई है। इन मीरसाहब को मालूम है कि रानी साहब से मेरा मन बिलकुल फिर गया है।'

पीरअली ने समर्थन किया।

इसके उपरान्त वे दोनों चले गए।

रोज़ ने स्टुअर्ट से कहा, 'राज ख़ानदान के लोगों को हाथ में रखना ज़रूरी है। डलहौज़ी ने इन लोगों को अपमानित करके हिन्दुस्थान को बिलकुल ही खो दिया होता।'

स्टुअर्ट—'लेकिन आगे चलकर इन लोगों को सिर पर भी नहीं बिठलाना है।'

रोज़—नहीं जी। वे सिर पर नहीं बैठना चाहते। वे तो अपनी मखमली गद्दियों पर बैठे रहना चाहते हैं। वहीं अडिग बने रहेंगे।'

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी पर आ गए। दूल्हाजू ने फिर नाक दबाई।

पीरअली ने मुहरी के सिरे पर पहुंच कर कहा, 'दीवान साहब, लाल झण्डे वाली बात याद रखना।'

दुल्हाजू धीरे से 'हूं' करके ओर्छा फाटक की ओर चला गया। उसके चले जाने पर पीरअली ने दीवार से सटा हुआ किसी को देखा। कांप गया।

बोला, 'कौन?'

बहराम ने आगे बढ़कर उत्तर दिया, 'मैं हूँ मीरसाहब।'

हृदय की धड़कन को दबाते हुए पीरअली ने कहा, 'म्यां खां साहब, यहां क्या कर रहे थे?'

'मुहरी में छप छप की आवाज़ सुनकर शक हुआ, इसलिए यहां आ गया। आपके साथ दूसरा आदमी कौन था?'

'होगा। आपको क्या मतलब?', पीरअली ने होश संभालते हुए कहा, 'जासूसी मुहकमें की बातों में दखल नहीं देना चाहिए।'

बरहाम—'आप तो कहते थे कि अकेले ही जायँगे। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जायगा।'

पीरअली—'आपको साथ ले जाता तो खतरा ज़रूर बढ़ जाता।'

बरहाम—'यह दीवान साहब कौन आदमी था?'

पीरअली—'दीवान साहबों और खां साहबों की झांसी में कोई कमी है?'

बरहाम—हां मीरसाहब अलबत्ता बहुत थोड़े हैं।'

पीरअली—अपना काम देखिए। मैं तो जाकर सोता हूं। इतना ख्याल रखिये कि किसी के राज़ में अपना पैर नहीं पटकना चाहिए।'

बरहाम—'मान लिया मीरसाहब, मान लिया। लेकिन इतना तो बतला दीजिए कि आज किस तरह पहुंचे और क्या क्या कर आए?'

पीरअली—'आप पीछे पीछे क्यों न चले आए?'

बरहाम—'गया था, लेकिन लाल झंडे की बात समझमें नहीं आई।'

पीरअली सन्नाटे में आ गया, परन्तु उसको मनोनिग्रह का काफ़ी अभ्यास था।

बोला, 'लाल झण्डे वाली बात रानी साहब को बतलाई जावेगी, आपको नहीं।'

बरहाम ने कहा, 'रानी साहब से मैं भी कुछ अर्ज़ करूंगा।'

पीरअली अपने शयनागार में चला गया। उसको नींद नहीं आई। दो दिन पहले उसने एक निश्चय किया था। सबेरा होते ही वह रानी के पास पहुंचा।

पिछले रोज बहुत तोपची और सैनिक मारे गए थे। रानी ने रात में तोपचियों का प्रबन्ध कर लिया था। तड़के के पूर्व ही वह नए सैनिकों की भर्ती के उपायों में व्यस्थ थीं। जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह भी उसी चिन्तन में वहीं थे।

पीरअली ने तुरन्त निवेदन किया, 'श्रीमन्त सरकार, आज पश्चिमी मोर्चे से बहुत ज़ोर का हमला होगा। जब आपका ध्यान उस ओर अटक जायगा तब दक्षिणी मोर्चे से जो जीवनशाह की टौरिया के बग़ल में है, धावा बोला जायगा। रात की जासूसी का यही समाचार है।'

रानी ने उपेक्षा के साथ कहा, 'देखूंगी। प्रबन्ध हो गया है।'

वह किसी काम के लिए शहर में जाने को उद्यत थीं।

पीरअली हाथ जोड़कर बोला, 'श्रीमन्त सरकार उस बरहामुद्दीन को मेरे ठिए से हटा दिया जाय। वह मेरे काम में बहुत दख़ल देता है।'

'देखूंगी,' रानी ने कहा, 'कुछ और कहना है?'

'हुज़ूर,' पीरअली ने ज़रा थर्राए हुए स्वर में कहा, 'एक लाल झंडे के बारे में निवेदन करना है।'

रानी—'लाल पीले झंडे के विषय में जो कुछ कहना हो जल्द कहो।'

पीरअली—अंग्रेज़ धोखा देने के लिए खूनी झण्डा किसी टेकड़ी पर उठाएँगे और वहां से गोलाबारी भी धूमधाम के साथ करेंगे, परन्तु हमला करेंगे किसी दूसरी दिशा से।'

रानी – 'समझ लिया। कुछ और ?'

पीरअली—'बस हुजूर। केवल यह कि बरहामुद्दीन को मेरी बुर्ज पर से हटा दिया जाय।'

रानी अनसुनी करके जवाहरसिंह के साथ शहर की ओर गईं।

पीरअली दूसरी ओर चला गया।

रानी को मार्ग में बरहामुद्दीन मिल गया। उसने रोक लिया।

अनुनय के साथ प्रार्थना की, 'पीरअली से होशयार हो जायँ सरकार। वह रात को अंग्रेज़ी छावनी में जाते हैं।'

रानी रात को जागीं थीं। सैनिकों का तुरन्त प्रबन्ध करना अत्यन्त आवश्यक था। मार्ग की टोकाटोकी सहन नहीं हो रही थी।

बोलीं, 'तुमको कैसे मालूम ?'

बरहामुद्दीन ने उत्तर दिया।

'मैं पीछे पीछे गया था। अंग्रेज़ सन्त्री ने उनको टोका। इन्होंने इशारे की बोली में जवाब दिया। सन्त्री से तुरन्त छावनी में जाने दिया। यह पहले दिन की बात है सरकार। गई रात वे किसी एक दीवान साहब को साथ ले गये थे। मैं फिर पीछे पीछे गया। सन्त्री ने उसी तरह चिल्ला कर टोका। इन्होंने उसी तरह चिल्लाकर इशारे की बोली में जवाब दिया। दोनों को खट से छावनी में जाने की इज़ाज़त मिल गई। ये लोग देर से लौटकर आए। जब दोनों अलग हुए पीरअली ने दूर से कहा, दीवान साहब लाल झण्डे वाली बात याद रखना। मैंने इन दीवान साहब को नहीं पहचान पाया। हुज़ूर, इस काररवाई में दग़ा है। द्रोह है। खतरा है।'

घोड़ा आगे बढ़ने के लिए लगाम चबा रहा था, पैर पटक रहा था।

रानी ने रुखाई के साथ कहा, 'तुम मूर्ख मालूम होते हो। अपना काम न करके दूसरों के पीछे पीछे घूमते हो। अपना ठिया देखो।'

रानी आगे बढ़ गई। साथ में जवाहरसिंह। जवाहरसिंह ने विनय की, 'सरकार पठान मूर्ख नहीं है। पीरअली की जांच होनी चाहिए।'

रानी ने उत्तर दिया, 'सामने का काम पहले निबटालो और फिर जांच करो। पता लगाना यह कौन दीवान साहब है, जो पीरअली के साथ गया था।'

नये सैनिकों का प्रबन्ध करके रानी क़िले को लौट आई।

जवाहरसिंह शहर के इन्तज़ाम में उलझ गया।

रानी ने ज़रा सा अवकाश मिलने पर मोतीबाई से बरहामुद्दीन वाली बात कही।

मोतीबाई बोली, 'पीरअली बेईमानी कर सकता है। साथ में दीवान दूल्हाजू गए होंगे। आप उनसे रुष्ट हुई थीं।'

रानी ने कहा, 'जब तक जांच नहीं हुई है इन दोनों पर नज़र रखनी चाहिए, परन्तु सहसा ऐसा कोई काम न करना जिसके लिए पीछे पछताना पड़े। पीरअली ने पहले अच्छे कार्य किए हैं और दीवान दूल्हाजू ने ओर्छा फाटक की अच्छी संभाल की है। इस समय हाथ में कोई बढ़िया गोलन्दाज़ दूल्हाजू की जगह भेजने के लिए नहीं है।'

'मेरे मन में आता है,' मोतीबाई बोली, 'सुन्दर को दीवान साहब के साथ दिन के काम के लिए कर दीजिए। रात के काम के लिए किसी और को भेज दिया जायगा।'

रानी ने स्वीकार किया।

सुन्दर रात को जागी थी। सोने के लिए तैयार हुई थी कि उसको यह योजना बतलाई गई। सुन्दर की नींद भाग गई। वह नहा धोकर और थोड़ा सा खा पीकर ओर्छा फाटक पर पहुँच गई।

उस दिन भी घनघोर युद्ध हुआ। दोनों तरफ़ विकट नर संहार। केवल दो बातें विशेष हुईं। ओर्छा फाटक की वह तोप जो दूल्हाजू के हाथ

में थी अच्छी नहीं चली और एक गोला महल के सामने जहाँ बारूद बन रही थी गिरा, फटा और बारूद जल कर धड़ाके के साथ २५, ३० स्त्री पुरुषों को अपने साथ हवा में उड़ा ले गई—उनके अंगों का भी पता न चला कि कहां गए।

बारूद में आग लग जाने के कारण क़िले में खलबली मच गई। भीषण नरसंहार तथा नगर के मकानों के भयानक विध्वन्स के कारण लोगों में निराशा फैलने लगी। किले की दीवारों में जगह जगह छेद हो गए थे। सन्ध्या के उपरान्त रानी शहर में गईं। दीवारों का निरीक्षण किया। मरम्मत कराई। उस समय जब कि अन्य रातों की अपेक्षा इस रात अधिक गोलाबारी हो रही थी। और, इतनी शीघ्रता के साथ मानो कोई कल काम कर रही हो। रात को देर में लौटीं। सीधी महादेव के मन्दिर में गईं। ध्यान के उपरान्त बाग दरी में थोड़ी देर के लिए जा लेटीं। एक झपकी आई। उन्होंने स्वप्न में देखा:—

एक गौरवर्ण युवती, सुन्दर आकृति वाली। बड़े बड़े काले नेत्र लाल रंग की साड़ी का अन्चल बांधे हुए। आभूषणों से लदी हुई। वह स्त्री क़िले की बुर्ज पर खड़ी हुई अंग्रेज़ों के लाल लाल गोलों को अपने कोमल करों में झेल रही है। कह रही है—'लक्ष्मीबाई देख, इन गोलों को झेलते झेलते मेरे हाथ काले हो गए हैं। चिन्ता मत कर। स्वराज्य की देवी अमर है।' रानी की आंख खुली। भयंकर गोलाबारी हो रही थी और होती रही। पर उन्हें न कोई चिन्ता न थकावट। झटपट ज़ीने से उतरीं और स्वप्न का संवाद सेनापति और मुख्य मुख्य दलपतियों को सुनाया। सवेरा होते होते यह सम्वाद सर्वत्र क़िले और नगर में फैल गया। तमाम स्त्री पुरुषों की नसों में बिजली सी कौंध गई। डटकर युद्ध होने लगा। पहले दिन की अपेक्षा भी अधिक घोर। उस दिन पीरअली और बरहामुद्दीन वाले मामले की जाँच-पड़ताल न हो सकी परन्तु सन्ध्या समय रानी को मालूम हो गया कि दूल्हाजू ने अनमने होकर काम किया है।

[७२]

उस दिन तोपों पर रघुनाथसिंह और मुन्दर ने मिलकर काम किया बारूद और धुएं ने दोनों के चेहरे और हाथ काले कर दिए। नित्य ही ऐसा हो जाता था। उस दिन कालोंच कुछ और अधिक चढ़ गई थी। दोनों एक दूसरे को देख देखकर मुस्करा जाते थे।

दोपहर के समय रघुनाथसिंह ने कहा, 'आज अभी तक खाना नहीं आया। मुन्दरबाई, आपको क्या भूख नहीं लगी है ?'

'मैं लाती हूँ,' मुन्दर ने कहा।

'एक घड़ा जल भी,' रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया, 'क्योंकि यहां के घड़े का जल पीने लायक़ नहीं रहा।'

मुन्दर थकी हुई थी। हवा के झोंकों से उसके काले बालों की एक लट कालोंच भरे चेहरे पर फहरा गई थकावट और गहरी लक्षित हुई !

रघुनाथसिंह ने कहा, 'नहीं आप पानी मत लाना। किसी से लिवा लाना। कोई न मिले तो खाना खाकर मैं नीचे उतरकर पी आऊँगा, तबतक आप तोप सँभाले रहना। खा-पीकर आना। कोई जल्दी नहीं है।'

थकी हुई मुन्दर हँसी। जैसे अँधेरी रात में कोई तारा छिटक कर विलीन हो गया हो।

बोली, 'मैं क्या पानी का घड़ा न ला सकूँगी ?'

रघुनाथसिंह—'थक गई हैं आप ?'

मुन्दर—'और आप ?'

रघुनाथसिंह—'मैं तो यहीं बैठा सुस्ता रहा हूं।'

मुन्दर—'यह मेरे प्रश्न का उत्तर है ?'

रघुनाथसिंह—'अच्छा मैं नहीं थका हूँ मुन्दरबाई।'

मुन्दर—'तो मैं भी दीवान साहब दो घड़े उठा ला सकती हूं।'

रघुनाथसिंह—'ऐसा मत करना।'

मुन्दर—'खाना क्या लाऊँ ? लड्डू लाऊँ ?'

रघुनाथसिंह को उस रात के लड्डुओं की याद आ गई।

बोला, 'सुन्दरबाई लड्डू खाऊँगा और उन्हीं हाथों से।'

सुन्दर 'कालोंच भरे हाथों से?'

रघुनाथसिंह—'नहीं तो। गङ्गाजल से धुले हुए हाथों से खा-पीकर आना।'

सुन्दर—'नहीं। यहीं खाऊँगी। नहीं तो आपको देर हो जायगी।'

इतने में बुर्ज की मुड़ेर पर एक गोला आ टकराया।

सुन्दर ने कहा, 'यदि यह गोला मुझे लग जाता तो मैं नहीं बचती। आप मेरे शव को जला देते न?'

रघुनाथसिंह ज़रा तीव्र स्वर में बोला, 'और मुझको लग जाता तो आप मुझको दो लकड़ी दे देतीं या नहीं?'

सुन्दर की आंखों में आंसू आ गए।

कांपते हुए गले से बोली, 'मैं पहले मरूंगी। आप आज गांठ बांध लीजिए। यदि फिर वह बात कही तो लड्डू-बड्डू कुछ नहीं खिलाऊँगी।'

उन आंसुओं के दर्पण में रघुनाथसिंह ने अपने प्राणों की झांकी देखी।

रघुनाथसिंह ने गद्गद् होकर कहा, 'मैं ऐसा कभी नहीं कहूँगा सुन्दरबाई, और न आप कभी ऐसा बोल मुँह से निकालना।'

सुन्दर आंसू पोंछकर धीरे धीरे चली गई।

रघुनाथसिंह को सारा वातावरण नवप्रस्फुटित कलियों से भरा दिखलाई पड़ा। तोप एक खिलवाड़, बारूद और गोले प्यार के खिलौने जान पड़े।

उसने प्रण किया, 'सुन्दर अखण्ड रूप से मेरे हृदय का सम्पूर्ण सम्मान प्राप्त करेगी—कभी समय आवेगा।'

सुन्दर पानी का घड़ा और लड्डू लेकर शीघ्र लौट आई।

रघुनाथसिंह ने रोषपूर्ण स्वर में कहा, 'मैं इस बुर्ज का प्रधान हूँ सुन्दरबाई। जानती हो?'

मुन्दर कुछ आश्चर्य, कुछ कुतूहल और कुछ शरारत के साथ देखने लगी!

रघुनाथसिंह के स्वर का रोष तुरन्त अवरोध में परिणत हुआ। बोला, 'मैंने कहा था कि खा-पीकर आना। वैसे ही क्यों चली आई? मेरी बात की अवज्ञा क्यों की?'

मुन्दर ने मुस्कराकर कहा, 'मैंने भी तो जता दिया था कि यहीं आकर खाऊंगी।'

रघुनाथसिंह के थके हुए चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गई। बोला, 'याद आ गया तो अब हाथ मुंह धोकर खाओ।'

'पहले आप', मुन्दर ने अनुरोध किया।

रघुनाथसिंह ने हठ किया, 'पहले तुम।'

'तुम' शब्द ने मुन्दर को पुलकित कर दिया। बोली, 'मेरे हाथ से खाना हो तो आप आरम्भ करो।'

'नहीं तो?' रघुनाथसिंह ने प्रश्न किया।

'नहीं तो क्या, लड्डू अपने हाथ से खाने पड़ेंगे।' मुन्दर ने उत्तर दिया।

रघुनाथसिंह ने स्वीकार कर लिया। हाथ मुँह धोया। मुन्दर ने एक ओर बैठकर लड्डू खिलाए।

रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया, 'अब मैं तुमको खिलाऊँगा।'

मुन्दर बहुत हँसी।

बोली, 'अरे वाह, ऐसा कहीं होता है! मैं अकेले में बैठकर खाऊँगी।'

रघुनाथसिंह मान गया। उसने सब कुछ पा लिया।

उसको मृत्यु का कोई भय नहीं रहा।

और मुन्दर को?

लक्ष्मीबाई की सहेली को मृत्यु का डर!

[७३]

तात्या टोपे चरखारी को जीतकर कालपी लौटा। उसकी सेना में ग्वालियर का वह यूथ भी था जिसने कानपूर में जनरल विंढम को पराजित करने में हाथ बटाया था। सिपाही विजयोत्सव मना रहे थे और तात्या कालपी के विशाल शस्त्रागार का निरीक्षण कर रहा था। भांति भांति के गोले ढाले जारहे थे। बन्दूकें बनाई और बांधी जा रही थीं। दो हज़ार मन बारूद के होते हुए भी और बारूद तेज़ी के साथ तैयार की जा रही थी। अन्य प्रकार के शस्त्र और उनके अङ्गोपाङ्ग बनाए और खराद मशीनों पर सँभाले जा रहे थे। बहुत सी मशीनें नई विलायती थीं।

उसी समय दो सवार पहरे वालों के पास उतरे। दोनों सुन्दर युवक ज़ुल्फों पर साफ़ा बाँधे हुए।

पहरे वाले से कहा, 'सरदार साहब से इसी समय मिलना है। झांसी की रानी साहब की चिट्ठी लाए हैं।'

उन लोगों ने झांसी के युद्ध की गति के विषय में जिज्ञासा की। युवकों ने संक्षेप में बतला दिया। शीघ्र ही दोनों तात्या के सामने पहुँचा दिए गए।

तात्या ने अकेले में लेजाकर कहा, इन साहब को तो पहिचानता हूँ। दूसरे साहब—?'

जूही ने उत्तर दिया, 'आप काशीबाई जी हैं।'

तात्या ने अभिवादन किया। दोनों से झांसी के युद्ध का वृत्तान्त जितना उनके सामने हो चुका था और जो उन्होंने मार्ग के बटोहियों से सुना था विस्तार पूर्वक सुनाया। रानी की चिट्ठी भी पढ़ी।

तात्या बोला, 'आज ही झांसी की ओर कूच करता हूँ। सेना को चरखारी से लौट कर काफ़ी विश्राम मिल चुका है। आप लोग हमारे साथ चलिए। अब अकेले लौटना ठीक नहीं है।'

काशीबाई ने कहा, 'फाटक बन्द हो चुके हैं। चारों ओर अंग्रेज़ों का कड़ा पहरा है।'

तात्या — 'आप लोग हमारे साथ सुरक्षित रहेंगे।'

काशीबाई—'हम लोग भी लड़ना जानते हैं।'

जूही—'जानती हैं।' और वह मुस्कराई।

तात्या ने हँसकर कहा, 'उसी भाषा में बोलिए। मैं सैनिकों का भी सन्देह जाग्रत नहीं करना चाहता हूं।'

तात्या ने उसी दिन कूच कर दिया। साथ में बीस सहस्र सेना। बाक़ी सेना और कालपी का प्रबन्ध रावसाहब के हाथ छोड़ दिया।

तात्या को झांसी तक पहुँचने में कुछ समय लगा। परन्तु उसके पहुँचने के पहले ही रोज़ को पता लग गया कि एक बड़ी सेना और भारी तोपें लिए हुए तात्या झांसी की सहायता के लिए आ रहा है। रोज़ चिन्तित हुआ। उसने अपने यूथनायकों और दलनायकों की सम्मति से एक योजना बनाई। प्रत्येक मोर्चे के तोपखानों से एक एक तोप ली। केवल जरूरी सेना झांसी के इर्द गिर्द छोड़कर, बाक़ी के कई दस्ते बनाए। कुछ को झांसी कालपी का मार्ग रुद्ध करने के लिए झांसी से सात मील दिगारा की दुतर्फ़ा टौरियों पर भेज कर छिपा दिया। कुछ उत्तर की ओर दस मील पर गढ़मऊ की झील की पहाड़ियों पर। कुछ को कामासिन टौरियों और ओर्छा के मार्ग के अगल बगल जमा दिया।

तात्या ने अपनी सेना का बड़ा भाग अपने पास बेतवा से झांसी की ओर दो मील पर नदी के किनारे नोहट घाट और तिलैथा घाट के बीच में रक्खा और बड़ी बड़ी तोपें। बाक़ी सेना को तीन भागों में विभक्त करके गढ़मऊ की ओर दिगारा की टौरियों की बीच में होकर झांसी की ओर भेजा इन दस्तों के पास छोटी तोपें थीं। साथ में काशी और जूही थीं।

पहली एप्रेल का प्रातः काल हुआ। झांसी पर बन्दूक़चियों के हमले तो बिलकुल नहीं हुए, परन्तु गोलाबारी भयानक हुई। गोलों के ठीक निशानें नहीं पड़ रहे थे। साफ़ था कि अंग्रेज़ी तोपख़ाने अपना बरकाव कर रहे हैं और झांसी वालों को केवल व्यस्त रखना उनका उद्देश्य

है। परन्तु जवाहरसिंह ने इसका यह अर्थ लगाया कि अंग्रेज़ों के निपुण तोपची मारे गए हैं और अब कच्चे आदमी काम कर रहे हैं। रानी सहमत नहीं हुई।

उन्होंने—कहा, 'अंग्रेज़ों के सामने कोई नई दुविधा आगई है। सेना और तोपखानो को बांट दिया गया है, और कोई बात नहीं।'

रानी ने बड़ी दूरबीन उठाई। झांसी की ओर आने वाले तात्या के दस्तों को दूरी पर देखा। मुस्करा कर दूरबीन जवाहरसिंह के हाथ में दी। बोलीं, 'अब झांसी का उद्धार निकट है।'

जवाहरसिंह दूरबीन से देखकर उछल पड़ा। झांसी भर में समाचार फैल गया कि झांसी की सहायता के लिए पेशवा की सेना आ गई।

झांसी से दिन भर गोलाबारी बहुत हलकी रही।

लालता ने सम्मति दी, 'हमारे गोले कहीं पेशवा की सेना पर न पड़ें।'

और गोलन्दाज़ों का भी यही मत था। पूर्व और उत्तर के तोपखाने करीब करीब बन्द रहे। केवल पश्चिम और दक्षिण के तोपखाने कुछ काम करते रहे।

झांसी की दिन भर की आशा सन्ध्या समय निराशा में परिवर्तित होने को थी।

टौरियों के बीचोंबीच आते ही तात्या के दस्तों पर अंग्रेज़ी तोहखानों ने गोले बरसाए। ठोस और पोले भी जो फटकर तात्या के घुड़ सवारों का सर्वनाश कर रहे थे। दस्ते तितर बितर होने लगे। एक ओर काशीबाई पड़ गई, दूसरी ओर जूही को जाना पड़ा।

काशीबाई वाला बचा खुचा दस्ता अंग्रेज़ घुड़सवारों के बीच में फँस गया। पहले पिस्तौलें चलीं, फिर तलवार खिची।

काशीबाई ने 'हर हर महादेव' कहा और पिल पड़ी। उसका स्वर कोयल का सा था। अंग्रेज़ घुड़सवार समझ गए कि पुरुष वेश में स्त्री है।

उनको भ्रम हुआ।

एक बोला, 'रानी है!'

दूसरे ने कहा, 'झांसी की रानी। उसको ज़िन्दा पकड़ो।'

परन्तु काशीबाई की तलवार ने यह मन्सूबा असम्भव कर दिया। ऐसी चलाई कि दो सवार तो अश्व समेत कट गए। कई घायल हो गए। परन्तु एक सवार की तलवार से उसका घोड़ा मारा गया। काशीबाई पैदल लड़ी। उस स्थिति में भी उसने कई सवारों को घायल किया। अन्त में—काशीबाई के सिर पर एक तलवार पड़ी। लोहे की टोपी के कारण सिर बच गया, परन्तु कन्धा कट गया। तो भी काशीबाई शिथिल नहीं हुई। फिर दूसरी तलवार। काशीबाई का अन्त हो गया—उस समय उसके मुँह से निकला—'हर हर महा......'

गोरे प्रसन्न थे। उठाकर रोज़ के पास ले गए।

'यह बहुत लड़ी हुजूर। औरत के शरीर में शैतान है।'

रोज़ ने काशी के शव को पहिचनवाया। पहिचानने वाले ने सिर हिलाकर आश्वासन दिया, 'यह रानी नहीं है। रानी की बहिन हो या सहेली हो या तात्या की कोई नातेदार।'

रोज़ ने काशी का शव सुरक्षित रक्खा, और तात्या की सेना की ओर ध्यान दिया। पेशवा के दस्तों के पैर उखड़ चुके थे। वे भागे। जूही भी भागकर तात्या के पास पहुची।

बोली, 'काशी कहीं फँस गई। मारी गई होगी।'

उसी समय रोज़ के गोले तात्या की बेतवा निकटवर्ती सेना पर गिरे। तात्या ने जवाब दिया। परन्तु रोज़ के दूसरे अनेक दस्तों ने छोटी हलकी तोपों से उस पर कई पार्श्वों से आक्रमण किया। तात्या को अपनी सेना बेतवा पार ले जाना पड़ी। रोज़ ने पीछा नहीं छोड़ा। तात्या की बड़ी बड़ी तोपें अपने बोझ के कारण बेतवा की रेत में धस गईं। न खिच सकीं। तात्या को छोड़नी पड़ीं। हार खाकर भागना पड़ा। रोज़ के दस्तों ने लगभग सोलह मील तक उसका पीछा किया। अंग्रेज़ों के हाथ बहुत सामान और तोपखाने लगे। सन्ध्या तक मैदान साफ़ हो गया। तात्या के पन्द्रह सौ सैनिक मारे गए। वह मुश्किल से एरच घाट होकर कौंच हाता

हुआ, कई दिन बाद कालपी पहुंच पाया। जूही झांसी नहीं लौट सकी। उसको तात्या की टूटी-फूटी सेना के साथ कालपी जाना पड़ा।

दूरबीन की सहायता और तोपों की दूर से हट हटकर सुनाई पड़ने वाली आवाज़ों से झांसी वालों को विश्वास हो गया कि तात्या की सेना हार गई। झांसी में गहरी निराशा के काले बादल छा गए।

रोज़ की सेना के हर्ष का पार न रहा। एक दिन पहले रोज़ की सेना जब तब कर उठी थी। इस रात विजयश्री मुट्ठी के भीतर दिखलाई पड़ने लगी। थकेमांदे सिपाहियों को विश्राम दिया गया। सन्ध्या के समय काशी-बाई का शव फिर पहचनवाया गया। ओर्छे की सेना के कुछ लोग रानी को अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने आश्वासन दिया, 'यह रानी नहीं है।'

काशी का शव जला दिया गया।

रात में थोड़ी बहुत गोलाबारी जारी रही, परन्तु अधिक समय मोर्चों पर तोपों को यथावत जमाने में गया।

जवाहरसिंह ने रानी को शहर की वार्ता सुनाई। रानी ने अपने सरदारों को इकट्ठा किया। उनसे मुस्कराकर कहा,

'पेशवा की सेना आज लौट गई, तो कल फिर वापिस आ सकती है। तात्या असाधारण सेनापति है और पेशवा के अधिकार में असंख्य सेना और तोपें हैं। आप लोगों को घबराना नहीं चाहिए। मानलो कि पेशवा की सेना न आती तो क्या हम लोग हथियार डालकर झांसी के मुँह पर कालिख पोतते? अपने पुरखों का स्मरण करो। स्वराज्य की स्थापना में कितने खप गए। यह आवश्यक नहीं है कि स्वराज्य की स्थापना हम अपने जीवन-काल में ही देख लें। सीढ़ी के एक डण्डे पर पैर रखते ही हम छत पर नहीं पहुँच जाते। एक ही त्याग, एक ही मरण, एक ही जन्म से स्वराज्य नहीं मिलता है। स्मरण रक्खो—हमको केवल कर्म करने का अधिकार है, फल पर नहीं। दृढ़ उद्देश्य और निरन्तर कर्म हमारा केवल ध्येय यह है। जीवन कर्तव्यपालन का नाम है—कर्तव्यपालन

करते हुए मरना जीवन का ही दूसरा नाम है। जो लोग अंग्रेजों से डरते हों, मौत से डरते हों वे हथियार रखकर आराम के साथ अपने घर चले जायँ। जो लोग स्वराज्य के लिए प्राण विसर्जन करना चाहते हों, वे मेरे पास बने रहें।'

रानी फिर मुस्कराईं। सब लोगों की ओर देखा। किसी ने हथियार रखकर आराम के साथ घर जाने की बात नहीं कही। सबने लड़ मरने का रानी को आश्वासन दिया।

'श्रीमन्त सरकार आज रात से ही, अभी से, अपनी घनगरज का काम देखें।' गुलाम ग़ौस ने कहा।

भाऊ बख्शी बोला, 'सरकार को सपने में जो देवी दिखलाई दी थी, वही मेरी तोप पर काम करेगी। कड़कबिजली ने कामासिन पहाड़ी तक को छार छार न कर दिया तो बात काहे की।'

'सरकार,' खुदाबख्श ने कहा, 'सैंयर फाटक पर से अब जो कुछ होगा, उस पर आपको बहुत हर्ष होगा।'

मोतीबाई बोली, 'सरकार, मुझको और मेरी सङ्गिनों को अलग मोर्चे दिए जायँ और फिर देखा जाय कि स्वराज्य की लड़ाई के लिए झांसी की स्त्रियां अकेले क्या क्या कर सकती हैं।'

बाहर से आए हुए पठानों के सरदार गुलमुहम्मद ने कहा, 'अलहमदुलिल्लाह, हुजूर अम न बहुत समझता हे और न बहुत सुनता हे। सिर्फ इतना अरज़ हे कि अम लोग झांसी की मिट्टी में मिलेगा और बहिश्त लेगा। सोराम की आप जानो।'

रानी ने सरदारों को जी खोलकर पुरस्कार बांटे और उनके सिपाहियों के लिए भी इनाम दिए। मुख्य मुख्य लोगों को रणकंकण अपने हाथ से बाँधे और पीठ पर हाथ फेरा। पुरस्कृत केवल तीन व्यक्ति नहीं हुए—वे उस समय क़िले में थे भी नहीं,—दूल्हाजू, पीरअली और बरहामुद्दीन।

निराशा के वातावरण का कुहरा छट गया। उत्साह का तीव्र रवि चढ़ आया। रात भर विकट, तीक्ष्ण, भीषण गोलाबारी क़िले और बाहर

की बुर्जों पर से हुई। रोज़ की सेना ने बहुत हलका जवाब दिया। सैनिक रक्षा के स्थानों में पड़े पड़े विश्राम करते रहे। यदि उस रात झांसी की सेना फाटक खोलकर टूट पड़ती, तो रोज़ की सारी सेना नष्टभ्रष्ट हो जाती। झांसी की गोलाबारी का शोरगुल तो अत्यन्त तीव्र हुआ, परन्तु उससे अंग्रेज़ी सेना को मा क्षेप में हानि बहुत कम पहुँची। रोज़ को आश्चर्य था—झांसी में इतनी युद्ध सामग्री कहां से आरही है!

रानी का वही क्रम जारी था—एक मोर्चे से दूसरे मोर्चे पर पहुँचना निरीक्षण करना और उत्साह प्रदान करना। एक स्थल पर जवाहरसिंह से भेंट हो गई।

रानी ने पूछा, 'उस मामले की जांच पड़ताल की?'

जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'जी हां सरकार, पीरअली बुरी बुरी क़सम खाता है। कहता है कि दीवान दूल्हाजू को रक्षा के लिए साथ ले गया था। रात में जो जासूसी उसने की उससे और कुछ पता तो नहीं लगा, क्योंकि रोज़ ने अपनी योजना केवल अपने मातहत जनरलोंको बतलाई थी, परन्तु यह अवश्य मालूम हो गया है कि अंग्रेज़ों को अभी तक दो लाख रुपये की तो बारूद ही खर्च करनी पड़ी है। उनके पास बारूद की कमी हो गई है और गोले भी बहुत नहीं हैं। शायद कलकत्ते से कुमुक मँगवाई है।'

रानी ने कहा, 'मुझे भासता है अंग्रेज़ लोग कल विकट युद्ध करेंगे। तात्या का जो सामान उन लोगों के हाथ पड़ा होगा उससे उनको बहुत सहायता मिलेगी। न जानें बिचारी काशी और जूही कहां होंगी!

जवाहरसिंह उत्तर ही क्या दे सकता था?

रानी ने एक क्षण सोचकर कहा, 'दीवान दूल्हाजू मिले! उनसे पूछा?'

'नहीं मिले,' जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'कुमुक बदल गई है। सुन्दरबाई ओर्छा फाटक पर हैं। दीवान साहब कहीं चले गए हैं।'

'बरहामुद्दीन?' रानी ने प्रश्न किया।

जवाहरसिंह ने जवाब दिया, 'सागर-खिड़की पर था। मैंने उसको सावधान रहने के लिए चेता दिया है।'

[७४]

दूसरे दिन जैसा युद्ध हुआ उससे रोज़ की सेना के छक्के छूट गए। बहुत उपाय करने पर भी रोज़ उस दिन एक अंगुल बराबर भी सफलता प्राप्त न कर सका। नित्य की वही कहानी—दीवारों में छेद हुए, बुर्जों की मुंडेरें जगह जगह टूटीं, शहर में मकान ध्वस्त हुए, आगें लगीं, कुछ लोग मरे; दीवारों और बुर्जों की मरम्मत तुरन्त कर ली गई, आगें बुझा ली गईं, लोगों के मरने से जीवितों में और अधिक हिंसा जागी और दृढ़ता बढ़ी। रात को भी वही क्रम। युद्ध की भयंकरता ने स्थिरता पकड़ ली। वह झांसी के जीवन में एक नित्य की बात हो गई।

रानी ओर्छा फाटक पर पहुँचीं। दूल्हाजू अभी ठिए से हटा न था। सुन्दर भी मौजूद थी।

रानी ने यकायक पूछा, 'दूल्हाजू, तुम पीरअली के साथ अंग्रेज़ छावनी में कभी गए ?'

'अंग्रेज छावनी में मैं···मैं', रुंधे गले से दूल्हाजू ने जवाब दिया, 'मैं सरकार, कब ?'

रानी—'कभी सही। गए या नहीं ?'

दूल्हाजू—'मैं ! मैं···तो, कभी···कहां···गया !'

रानी—'नहीं गए ?'

दूल्हाजू—'नहीं सरकार।'

रानी—'पीरअली कहता है कि तुम उसके साथ गए थे।'

दूल्हाजू—'वह झूठ बोलता है, सरकार।'

रानी—'सम्भव है। और यह लाल झण्डा क्या है ?'

दूल्हाजू—'लाल झण्डा ! लाल कैसा ? झण्डा क्या सरकार ?'

रानी—'घबराओ मत, 'मैं लाल झंडे की सब बात जानती हूँ।' '

दूल्हाजू—'मैं थक गया हूं सरकार। दिमाग़ काम नहीं कर रहा है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। लाल झंडा ! पीरअली बड़ा बेईमान और झूठा है।'

मुन्दर—'आज इनसे तोप ठीक नहीं चली।'

'ये मुझसे व्यर्थ रुष्ट हैं। इनको बराबर प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता हूं।'

रानी—'कोई बात नहीं। कल ठीक ठीक काम करना। मुन्दर साथ है। वह सहायता करेगी।'

रानी को बरहामुद्दीन याद आगया। वह और अधिक स्तीफ़े नहीं चाहती थीं।

मुन्दर बोली, 'इनको क़िले में रख लीजिए। मैं आज रात और कल दिन भर तोपखाना सँभाले रहूंगी।'

रानी ने कहा, 'आज रात आराम के साथ काम करलो, कल दिन में अवकाश नहीं मिलेगा। कल रात इस मोर्चे का ऐसा प्रबन्ध करूंगी जिसमें तुम दोनों को काफ़ी विश्राम मिल जाय।'

रानी सागर खिड़की पर पहुंचीं। उस समय पीरअली कार्यभार अपने स्थानापन्न को सौंप रहा था।

उनको देखते ही हड़बड़ा गया।

रानी ने कहा, 'दूल्हाजू कहते हैं कि कल तुम्हारे साथ कभी बाहर नहीं गए। तुमने दीवान जवाहरसिंह से कहा कि तुम्हारे साथ गए थे?'

पीरअली ने हिम्मत बांधी। बोला,

'वे मेरे साथ जरूर गए सरकार। डरके मारे उन्होंने सच्ची बात नहीं कही। व्यर्थ झूठ बोले। मैं उनके मुँह पर कह सकता हूँ। दिशा मैदान के बाद हाज़िर हो जाऊँगा।'

रानी ने कहा, 'कोई जल्दी नहीं थोड़ी देर में क़िले पर आओ।'

'बहुत अच्छा हुज़ूर,' पीरअली ने मुक्ति की सांस लेकर कहा।

रानी पूर्वी और उत्तरी फाटकों पर होती हुई उनाव फाटक पर आईं। यहां पूरन कोरी अन्य कोरियों केसाथ तोप पर था। कोरियोंको शाबाशी दी।

पूरन से पूछा, झलकारी कहां है? अच्छी तरह तो है?'

'सरकार,' पूरन ने कहा, 'घरै है । अबईं बुलवाउत दिन भर इतै काम करत रई, अबईं थोरी देर भई जब गई ।'

'नहीं, बुलाओ मत ।' रानी बोलीं, 'वैसे ही पूछा ।'

वे आगे बढ़ गईं ।

सब फाटकों पर से घूमती हुई हलवाई पुरे में आईं । बाज़ार का चौधरी मिला । लखपतियों में से था । यह सवेरे इतने पानी से हाथ-मुँह धोया करता था कि पानी सौ सवासौ गज़ तक बह जाता था !

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'अब भी उतने ही पानी से हाथ धोते हो ?'

'सरकार,' चौधरी ने उत्तर दिया, 'आज कल सब ब्योपार बन्द है । मुँह हाथ धोते धोते इतने ब्योपारियों से बात करनी पड़ती थी कि पानी बहाने का ध्यान ही न रहता था । अब ब्योपार के साथ पानी का बहाना भी बन्द है ।'

उस महा कठिन परिस्थिति में भी रानी की इस बात पर बाज़ार वाले हँसे, हँसते रहे और विपत्ति में धैर्य और साहस पाते रहे ।

जो मिला उससे कोई न कोई मीठी बात कह कर, ढाढ़स बँधाती हुईं रानी क़िले पर लौट आईं । गोलाबारी का वही क्रम ज़ारी था ।

रात समाप्त हुई ।

रानी ने सवेरा होते ही सिपाहियों और उनके सरदारों में समाचार भेजा—'आज मैं स्वयं अपने लोगों के लिए कलेवा तैयार करूँगी । खूब खाओ और डटकर लड़ो ।'

सुनते ही थके मांदे और अर्ध मृत सिपाहियों तक की छातियां फूल उठीं ।

ब्राह्मणों ने आटा रांधा । रानी ने उस में हाथ लगाया । ब्राह्मणों ने ही पूड़ियां सेंकी । रानी ने उसमें भी सहयोग दिया । क़िले के भीतर वाले सरदारों को उन्होंने अपने हाथ से उनके ठियों पर जाजाकर कलेवा वितरित किया ।

हर्ष और अभिमान के मारे वे सबके सब उन्मत्त हो गए। रानी की छुई हुई पूड़ी तक के एक एक टुकड़े को पगड़ी के, अँगरखे के छोर में कसके बांध लिया। और कसकर बांधे—प्राणों की गांठ में प्रण।

रानी को पीरअली का स्मरण आया—भूलती तो वे कभी कुछ थी ही नहीं। बुलवाया। मालूम हुआ कि दिशा मैदान के लिए जाने के बाद फिर नहीं दिखलाई पड़ा; यह भी पता लगा कि दिशा निस्तार के लिए मुहरी के रास्ते से गया था।

रानी एक क्षण के लिए असमंजस में पड़ीं।

उनको विश्वास हो गया कि पीरअली, झूठ बोला है, और कदाचित् दूल्हाजू सच, परन्तु बरहामुद्दीन ने लिखकर दिया था—पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहिएगा। किसी निश्चय पर पहुंच चुकी थीं कि चारों दिशाओं से अंग्रेज़ों ने गोलबारी शुरू कर दी।

[७५]

रानी ने झटपट दलपतियों और गोलन्दाज़ों को यथोचित आज्ञायें दीं।

अंग्रेज़ों का निश्चय जान पड़ता था कि कहीं से भी परकोटे की दीवार को फोड़ें और झांसी में घुस पड़ें और झांसी वालों का निश्चय था कि जब तक शरीर में रक्त है तब तक दुश्मन का पैर झांसी के भीतर न पड़ने देंगे।

झांसी की गोलाबारी से आकाश में जलते हुए गोलों की आग की चादर तन गई। इस चादर में से अंग्रेज़ी सेना के सिर पर फटे हुए गोलों से गोलियां, कीलें किर्चें बरसती थां। भूनकर खाक कर डालने वाली हवाइयां विस्फोट कर रही थीं। दक्षिणी मोर्चे पर, जीवनशाह की टौरिया से लेकर ओर्छा फाटक के सामने वाली टेक * तक अंग्रेज़ी तोपखाने अत्यन्त वेग के साथ जवाब दे रहे थे।

अपने तोपखानों की रक्षा में अंग्रेज़ बन्दूक़ची जीवनशाह की टौरिया से ओर्छा फाटक टेकड़ी के बीच में सतरें बांधकर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक की ओर बढ़े। पर कोटे की बुर्जों और कोट की दीवार के छेदों में से बन्दूकों और हलकी तोपों ने यमराज के शापों को उगला। अंग्रेज़ी पल्टन खिंड़ने लगी। पैर उखड़े। पीछे भागने को हुई। परन्तु उस क्रिया में भी उद्धार न पाकर मार्ग के पत्थरों की ओट में छिप गई। लेकिन एक दस्ता ओर्छा फाटक की ओर बढ़ आया। अंग्रेज़ी तोपखाने ने भीषणतर गोलाबारी आरम्भ की। सैंयर फाटक की ओर भी एक दस्ता बढ़ा।

रानी और मोतीबाई ने दूरबीन से देखा। ओर्छा फाटक के सामने वाली टेक के पीछे लाल झण्डा उठा। ओर्छा फाटक पर का तोपखाना कुछ धीमा पड़ा।

'सरकार', मोतीबाई ने अनुनय किया, 'मुझको उस ओर जाने दीजिए। सुन्दर अकेली है। दूल्हाजू के हाथ पांव ढीले हो गए हैं।'

---

*अब इस पर मैकडानैल हाईस्कूल और बोर्डिंगहाउस बन गए हैं।

'जाओ मोती। हीरा बनकर लौटना' रानी ने कहा।

मोतीबाई चली गई। खुदाबख्श सैंयर फाटक पर था। उसने मोती-बाई को आगे नहीं बढ़ने दिया।

बोला, 'ओर्छा फाटक पर मत जाओ। यहीं मेरे साथ रहो। आज मैं अपने देश और अपनी रानी का नमक अदा करूँगा। मरूँगा। मेरी लाश को ठिकाने लगा देना।'

मोतीबाई का चेहरा कुम्हलाया हुआ था, परन्तु उसके सौन्दर्य की किरणें छुटकी पड़ रही थीं। आंखों में आंसू आ गए।

तोप पर पलीता डालते डालते खुदाबख्श ने चिल्लाकर कहा, 'यह वक्त आंसुओं का है!'

मोतीबाई ने बारूद की कालोंच वाले हाथों से आंसू मसल डाले।

बोली, 'नहीं। अब आंसू नहीं आवेंगे।'

खुदाबख्श ने उमङ्ग के साथ कहा, 'आज मैं आपका हमेशा के लिए कैदी हो गया।'

मोतीबाई आंख मिला कर बोली, 'और हमेशा के लिए मैं आपकी।'

खुदाबख्श ने देखा कि रास्ते पर गोरे फाटक की ओर बढ़े चले आ रहे हैं। तोपों और बन्दूकों की बाढ़ हुई।

खुदाबख्श ने मोतीबाई को आदेश दिया, 'दाहिने हाथ की पूरी सतर तक बन्दूकें, पत्थर, कटे हुए पेड़ों के लक्कड़ इन लोगों के सिर पर पटकवाओ। दौड़ो। अंग्रेज़ वहां से सीढ़ी लगाकर चढ़ाने का उपाय कर रहे हैं।'

मोतीबाई दौड़ी। सीढ़ी लगाने का उपाय करने वाले सब के सब मारे गए—उनके ऊपर गोलियां, पत्थरों के बड़े बड़े ढोंके और कटे हुए पेड़ों के लक्कड़ जो वहां पहले से जमा थे बरसाए गए। शहर और क़िले से ढोल, ताशे और तुरही का कान फोड़ने वाला नाद हुआ। अंग्रेज़ों ने अपनी पैदल पल्टन को वापिस बुलाने का बिगुल बजाया। पल्टन गिरते-मरते लौट पड़ी।

रोज़ जीवनशाह की टौरिया के पीछे घोड़े पर था और उसके मातहत अफ़सर बग़ल में।

रोज़ ने कहा, नाऊ आर नैव्हर (या तो अभी या कभी नहीं)।' तार से यह आदेश ओर्छा फाटक टेक और जार पहाड़ी के तोपखानों को दिया गया। ओर्छा फाटक टेक ने इसका जो अर्थ लगाया वह लाल झण्डे को और ऊँचा करना था।

इधर रोज़ के चार अफ़सर—चारों लैफ्टिनेंट—यौवन प्रमत्त—टेकड़ियों, पत्थरों और अपनी तोपों की बाड़ों की आड़ें लेते हुए सैयरफाटक की दाहिनी बग़ल की टेक की दीवार के नीचे पहुंच गए। उस जगह दीवार थोड़ी देर पहले ही आधी धुस्स हो गई थी। साथ ही उस जगह वाले झांसी के सैनिक मारे गए थे। इन अफ़सरों में से दो ने अपनी देह की सीढ़ी बनाई। उन पर से बाक़ी दोनों चढ़ गए। इन दोनों ने अपनी सेना के एक दस्ते को संकेत किया। दस्ता आगे बढ़ा। इतने में तलवार लिए मोतीबाई टूट पड़ी। लैफ्टिनेंट ने पिस्तौल चलाई। खाली गई। मोतीबाई ने एक वार में ही उसको खतम कर दिया। दूसरे लैफ्टिनेंट ने तलवार के हाथ किए, परन्तु मोतीबाई ने उसको भी समाप्त किया। नीचे वाले दोनों अफ़सर एक पत्थर की आड़ में छिप गए। इतने में झांसी के दूसरे सिपाही वहां आ गए। खुदाबख्श के तोपखाने ने आगे बढ़ते हुए दस्ते को नष्ट कर दिया और मोतीबाई के निकट वाले सिपाहियों ने उन दोनों लैफ्टिनेंटों को बन्दूक़ से समाप्त कर दिया। यह अंग्रेज़ी सेना की दूसरी हार हुई।

उत्तरी फाटकों पर ज़ोर का हमला था, परन्तु ठाकुरों, काछियों, कोरियों और तेलियों की चतुरता तथा बहादुरी केकारण वहां अंग्रेज़ कुछ नहीं कर पा रहे थे।

इधर दक्षिणी मोर्चों पर अंग्रेज़ों ने तीसरा आक्रमण शुरू किया।

रानी ने क़िले पर से देखा कि ओर्छा फाटक का तोपख़ाना बहुत मन्द गति से काम कर रहा है। उन्होने रामचन्द्र देशमुख को तुरन्त भेजा, परन्तु देशमुख को वहां तक पहुंचने के लिए समय चाहिए था।

मोतीबाई खुदाबख्श के पास पहुच गई। ओर्छा फाटक की टेक के पीछे लाल झण्डा और ऊँचा हुआ। खूब हिला और फिर छिप गया। दूल्हाजू ने केवल बारूद भरकर तोप चलाई—उसमें से गोले निकलते ही कैसे?

सुन्दर उससे पश्चिम की ओर ज़रा हटकर ऊँची बुर्ज पर से तोप चला रही थी। उसके साथी गोलन्दाज़ मारे जा चुके थे। केवल उसकी तोप कुछ काम कर रही थी। उसने दूल्हाजू का व्यापार देख लिया।

सामने की टेक के पीछे से गोरी पल्टन टिड्डी दल की तरह उभर पड़ीं और 'हुर्रा' घोष करती हुई भरोसे के साथ ओर्छा फाटक पर दौड़ीं। दूल्हाजू लोहे का एक छड़ हाथ में लेकर बुर्ज से नीचे तुरन्त उतरा। सुन्दर को समझने में एक क्षण की भी देर नहीं लगी। उसने भी तोप छोड़ दी। केवल तलवार उसके पास थी। तलवार खींचकर अपनी बुर्ज से नीचे उतरी। वहां से ओर्छा फाटक ज़रा दूर पड़ता था।

सुन्दर के नीचे उतर पाने के पहिले ही दूल्हाजू फाटक के पास पहुंच चुका था। फाटक पर मोटी सांकलों और कुन्दों में मोटी झर वाले ताले पड़े हुए थे। कुन्जियां किले में थीं, परन्तु दूल्हाजू के हाथ में लोहे की मोटी छड़ तो थी। उसने ज़रा भी विलम्ब नहीं किया।

उछल कर ताले में छड़ डाली। तड़ाक से ताला टूट गया। दूसरे और तीसरे में डाली। सब टूट गए। दो सांकलों को भी तोड़ दिया और तीसरी सांकल खोल दी। फाटक केवल भिड़े रह गए। दूल्हाजू फाटकों को खोलने नहीं पाया था कि नङ्गी तलवार लिए सुन्दर आ पहुंची।

'देश द्रोही, नरक के कीड़े', सुन्दर ने कड़ककर कहा, 'तू अंग्रेज़ों से कुछ नहीं पावेगा।' सुन्दर दूल्हाजू पर पिल पड़ी।

उसकी तलवार का वार दूल्हाजू ने लोहे की छड़ पर झेला। तलवार झन्ना कर बीच से टूट गई। तलवार का जो टुकड़ा सुन्दर की मुट्ठी में बचा था उसी को तान कर सुन्दर दूल्हाजू पर उछली। दूल्हाजू ने छड़ का सीधा हूला दिया। वह ठप से बाएं वक्ष पर लगा। साथ ही बाहर तुमुल 'हुर्रा' घोष हुआ।

चोट की परवाह न करके सुन्दर ने फिर वार किया। दूल्हाजू पीछे हटा। परन्तु उसने सुन्दर के पेट पर छड़ अड़ा दी। उधर गोरों ने धक्के से फाटक खोल लिया। सुन्दर के मुँह से 'हर हर महादेव निकला' था कि एक गोरे की गोली ने सौन्दर्यमयी सुन्दर को अमर कर दिया। गोली उसके सिर पर पड़ी थी।

दूल्हाजू ने छड़ पृथिवी पर टेक दी। दूल्हाजी पर भी गोरों की बन्दूकें सीधी हु परन्तु उनके अफ़सर ब्रिगेडियर ने तुरन्त निवारण किया, 'आवर मैंन' (अपना आदमी है)।

गोरों ने बन्दूकें नीची करलीं। टिड्डी दल की तरह भीतर घुस पड़े।

अफ़सर ने कहा, 'यह रानी है?'

दूल्हाजू ने उत्तर दिया, 'नहीं साहब महज़ नौकरानी।'

अफ़सर ने अपने साथियों से कहा, बट ए सोल्जर। शी विल हैव ए सोल्जर्स आनर। (लेकिन सिपाही है। सिपाही की इज्जत उसको मिलेगी)।

स्वर्गवासिनी सुन्दर की दृढ़ मुट्ठी अभी ढीली नहीं हुई थी। तलवार का छोटा सा टुकड़ा अब भी उसकी मुट्ठी में था। दो गोरे उसके शरीर को बाहर ले गए और पत्थरों से दाब दिया। जहां उनके और नत्थेखां के भी अनेक सिपाही दबे हुए थे। उसके उपरान्त वे लोग सब दिशाओं में, शहर में घुसने लगे।

टेक के पीछे से रोज़ के पास तार द्वारा नगर विजय का संवाद पहुंचा।

रोज़ ने अफ़सरों से कहा, 'उस आदमी को जागीर में दो गांव पक्के हुए।' दूल्हाजू के उस कृत्य का समाचार बहुत शीघ्र चारों ओर फैल गया।

फिर रोज़ ने तुरन्त आदेश दिया कि सैंयर फाटक को तोड़ो शहर में बढ़ो और बागियों का नाश करो !

खुदाबख्श के फाटक पर क़हर पर क़हर बरसने लगे। इसी समय रामचन्द्र देशमुख घोड़े पर आया। उसी समय एक गोली खुदाबख्श को लगी। सैंयर फाटक का तोपखाना बन्द हुआ। एक अंग्रेज़ दीवार पर चढ़ा। मोतीबाई ने तलवार से उसका सिर क़लम कर दिया और खुदाबख्श की लाश को टांग कर नीचे उतर आई। रामचन्द्र ने मोतीबाई को अपने पीछे घोड़े पर बिठलाया और लाश को सामने लाद कर क़िले पर चढ़ आया। उसके क़िले में आते ही क़िले का फाटक बन्द कर लिया गया। लाश को महल के पास रखकर ढक दिया गया। मोतीबाई की आंख से आंसू नहीं निकला।

रानी आगईं।

'मोतीबाई,' रानी ने कहा, 'तुम लोगों का अक्षय कर्म मैंने अपनी आंखों देखा है।'

'सरकार, मोतीबाई ने भर्राए हुए स्वर में कहा, काम देखिए। अपने पास क़िला अब भी है और आप हैं। मैं इनका प्रबन्ध करती हूँ।'

'महल के बिलकुल निकट ही,' रानी कंठ को संयत करके बोलीं, 'कुँवर साहब को दफ़नाया जावे।'

देशमुख ने पूछा, 'सुन्दर ?'

'ओर्छा फाटक पर मारी गई,' मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'दूल्हाजू ने देशद्रोह करके फाटक खोल-दिया।'

रानी ने ओठ सटाए।

धीरे से बोलीं, 'जीवन में यही बड़ा भारी धोखा खाया।'

फिर उन्होंने ज़रा ज़ोर से कहा, 'बरहामुद्दीन ने ठीक कहा था। उसके साथ अन्याय हुआ। कहां है, कुछ जानते हो देशमुख ?'

'नहीं सरकार', देशमुख ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

रानी ने अँगरखे की जेब में हाथ डाला।

बरहामुद्दीन का इस्तीफ़ा जेब में था। उसको उन्होंने वहीं पड़ा रहने दिया।

मोतीबाई ने महल के पास ही क़बर के लिए मिट्टी खुदवानी आरम्भ करदी और बहुत शीघ्र एक बड़ा गड्ढा खुदवा लिया।

रानी दूरबीन लेकर ऊपर की बुर्ज पर चढ़ गईं।

रोज़ नगर की बुर्ज पर बुर्ज अपने अधिकार में करता चला जा रहा था। गोरे शहर भर में फैलते चले जा रहे थे। झांसी की सेना मरती कटती जा रही थी। आगें लगाई जारही थीं। झांसी में हाहाकार हो रहा था और उसके साथ तुमुल 'हुर्रा' घोष। रानी ने देखा कि शहर वाले महल, नाटकशाला और महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय को, गोरे घेरने का प्रयास कर रहे हैं और इन स्थानों के भीतर बन्द झांसी के सैनिक लड़ रहे हैं तब वे बुर्ज से नीचे उतर आईं।

एक पेड़ के नीचें पत्थर पर बैठकर सोचने लगीं, 'झांसी का सर्वनाश होने को है। स्वराज की स्थापना अभी दूर है। परन्तु कर्म करने मात्र का अधिकार है, फल हमको क्या?'

उठ खड़ी हुईं।

जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, ग़ुलामग़ौस, भाऊ बख्शी, गुलमुहम्मद, भोपटकर इत्यादि सरदारों को बुलवाया। उन लोगों को अपना निश्चय सुनायाः—

'बाहर निकल कर लड़ो, गोरों को शहर से निकालो और झांसी की रक्षा करो।'

सलाह सम्मति का न तो समय था और न मौक़ा।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'हुज़ूर को शुक्रिया। फ़ौरन चलें। गोरों को ह्र से निकालें।'

रानी ने आदेश दिया, 'गोलन्दाज़ अपने अपने ठियों पर काम करते रहें।

भाऊ बख्शी ने आगे बढ़कर रानी के पैर पकड़ लिए।

प्रार्थना की, 'सरकार मुझको बाहर साथ जाने की आज्ञा दी जाय। मेरी तोप पर किसी और को कर दिया जाय।'

'अच्छा, गोलन्दाज़ों में से केवल तुम' रानी ने कहा, 'जल्दी करो। विलम्ब का काम नहीं है।'

बख्शी साथ हो गया।

झोपटकर की इच्छा न थी कि रानी बाहर जाकर लड़ें, परन्तु वह स्तब्ध रह गया। रानी फुर्ती के साथ तैयार होकर क़िले के बाहर हो गईं। साथ में पठान, बुन्देलखण्डी इत्यादि पन्द्रह सौ सैनिक। पीछे झोपटकर भी गया। दक्षिण की ओर से आ आकर गोरे महल के पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे।

रानी झंझावात की तरह पहले दक्षिण की ओर झपटीं, जहाँ से अंग्रेज़ी सेना घुसी चली आ रही थी। रानी का छापा इतना प्रचण्ड था कि अंग्रेज़ी सेना भागी। पूर्व की ओर के मकानों की आड़ से बन्दूकें चलाने लगी। तलवारों की मार के सामने वह बिलकुल न ठहर सकी।

रानी ने चिल्लाकर कहा, 'आज प्रमाणित कर दो कि हिन्दुस्थानी सिपाही की तलवार के सामने संसार में कोई योद्धा नहीं टिक सकता।'

उनके दस्ते ने ऐसी तलवार चलाई कि गोरी पल्टन बिखर कर हट गई परन्तु मकानों की आड़ से गोलियां चलाने लगी। पांच सौ पठान दक्षिण और पूर्व दिशाओं में फैलकर फिर भी गोरों को पीछे हटाते रहे—और मरते रहे। रानी के महल और हाथीखाने के आसपास* टकसाल तक गोरी सेना फैली हुई थी और उसके लिए मकानों की आड़ थी। इसका जवाब देने के लिए रानी की सेना भी उसी प्रकार और उसी

---

*अब यहां सदर अस्पताल है अस्पताल के उत्तर में टकसाल मुहल्ला।

दिशा में फैली। गोरी सेना के कुछ सिपाही दबाव पड़ने के कारण पश्चिम दिशा की ओर खण्डेराव फाटक की ओर बढ़े। वहां उनको अटकना पड़ा।

रानी उस ओर बढ़ रही थीं कि उन्होंने देखा एक सिपाही किसी मकान में से निकल पड़ा अकेले उन कई गोरो से भिड़ गया। उसने ऐसी तलवार चलाई कि कई गोरे हताहत हुए। कुछ और गोरे आगए। वह सिपाही घिर गया। तो भी वह अकेला उनको पछेलता गया। रानी ने अपने घोड़े को तेज़ किया। पीछे पीछे उनके सिपाही दौड़े। रानी के पहुंचते पहुँचते वह सिपाही और गोरे पचकुइयां से नीचे की तरफ़ पहुंच गए। उस अकेले सिपाही ने फिर कई गोरां को तलवार के घाट उतारा, परन्तु यकायक उसपर कई वार पड़े और वह गिर गया। इतने में रानी सैनिकों सहित आ पहुंचीं। गोरे भाग गए।

रानी ने पास जाकर देखा—बरहामुद्दीन था। उसके मरने में कुछ क्षण बाक़ी थे। बेचैन था। रानी घोड़े पर से उतरीं। बरहाम के सिरपर हाथ फेरा। बरहाम ने पहिचान लिया। उसने आंखें फाड़ीं। पूरा बल लगाया। लेकिन कठिनाई से बोल पाया, 'हुज़ूर, माफ़ी।'

मुश्किल से रानी के मुँह से निकला, 'तुम सच्चे सिपाही हो। माफ़ किया।'

फिर ज़ोर लगाकर बरहाम ने कहा, 'सरकार, जान नहीं निकलती। मेरी चि···ट्···ठी।'

रानी ने जेब से उसके इस्तीफ़े का काग़ज़ निकाला। 'यह लो,' रानी बोलीं।

'नहीं स···र···का···र,' बड़ी मुश्किल से बरहाम ने कहा, 'फाड़··· डा···लि··ए···तब···जान···नि···क···ले···गी।'

रानी ने तुरन्त चिट्ठी की चिन्दी चिन्दी कर डाली।

बरहामुद्दीन के मुखमंडल पर उस घोर पीड़ा में आनन्द की छाप लग गई। उसके अन्तिम शब्द थे : ज···ल·· वा···अल्ला···ह···

भाऊ ने आकाश की ओर दृष्टि करके कहा,

'आहा कैसा मीठा मरण है यह ! भगवान् मेरी ऐसी ही सद्‌गति हो।'

बरहामुद्दीन का प्राणान्त हो गया।

रानी ने हुक्म दिया इसी स्थान पर इसकी क़बर बनाई जाय।*

पास के रहने वालों को क़बर का प्रबन्ध देकर रानी और उनके सैनिक गोरों पर झपटे। वे भागे। अब पश्चिम से पूर्व होती हुई दक्षिण तक रानी के सैनिकों की पांत सी बन गई। पीठ पर क़िला था।

यकायक वृद्ध नाना भोपटकर रानी के सामने आ गया।

बोला, पहिले इस बूढ़े ब्राह्मण का वध करिए तब आप गोली खाइए।'

नाना साहब, यह क्या ?'

नाना—'आप देखती नहीं हैं, गोरे मकानों की आड़ से गोली चला रहे हैं और आपके सैनिक हताहत हो रहे हैं। आप पर एक गोली पड़ी कि समग्र झाँसी रसातल हो गई। अभी अपने हाथ में क़िला है। लड़ाई जारी रक्खी जा सकती है लौटिए या मेरा वध करिए।'

रानी की समझ में आ गया।

गुलमुहम्मद पास आ गया था। उसने भी कहा, 'सरकार बुड्ढा ठीक बोलता है। अन्दर चलें।'

उत्तरी फाटक से रानी क़िले में भाऊ और नाना भोपटकर के साथ चली गईं। गुलमुहम्मद के साथ तीन सौ पठान ही भीतर जा सके। बाक़ी सब बाहर लड़ाई में मारे गए। बुन्देलखण्डी सैनिक लगभग सब कट मरे। क़िले के फाटक बन्द कर लिए गए।

---

*बरहामुद्दीन की क़बर उसी जगह बा० जादोनाथ चौधरी के बाग़ में और क़बरों के पास है।

[७६]

गोरों ने शहर के सब फाटकों पर अपना प्रबन्ध कर लिया, उनको अपने उन निश्शस्त्र पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के खून का बदला लेना था, जिनको बख्शिशअली इत्यादि बहुत थोड़े से हिन्दुस्थानियों ने मारा था। पांच वर्ष की आयु से अस्सी वर्ष तक के जितने पुरुष मिले उनका क़तल शुरू कर दिया। हलवाईपुरा में आग लगा दी। कुछ स्त्रियां अपने सतीत्व के नष्ट होने के भय से कुओं में गिर कर मर गईं। रोज़ का आदेश था कि स्त्रियों को न मारा जाय, उनको जान बूझ कर गोरों ने नहीं मारा। लेकिन अपने पति की रक्षा के लिए जो स्त्रियां उनकी आड़ बनने के लिए आ गईं, वे गोलियों से मरीं। झांसी के कवि और गायक भी लड़े थे, वे मारे गए या घायल हुए। गवैयों में केवल मुगलखां बचा और नर्तकियों में दुर्गा और एक और।

गोरों ने घर घर में घुसना और सोना चांदी इत्यादि सामान लूटना शुरू किया।

शहर वाले राज महल के चारों ओर अंग्रेज़ी सेना का सबसे अधिक उपद्रव हुआ। नाटकशाला के सामने दक्षिण की ओर रानी का अस्तबल था उस अस्तबल को रानी के बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने क़िले की लड़ाई में परिवर्तित कर दिया। थे लगभग कुल पचास ही। परन्तु जब तक एक भी ज़िन्दा रहा अंग्रेज़ों ने अस्तबल पर कब्जा नहीं कर पाया। एक एक दीवार, एक एक कोठरी, एक एक ईंट पर क़ब्जा करने में अंग्रेज़ों को न जाने कितने सिपाही बलिदान करने पड़े।

इसके बाद महल की एक एक इन्च भूमि के लिए युद्ध हुआ। जब महल के सब सिपाही खतम हो गए तब उस पर भी क़ब्जा हो गया। सब सामान लूटा। एक बक्स में से यूनियन जैक झंडा मिला, जिसे लार्ड विलियम बैंटिक ने रामचन्द्रराव को दिया था। महल के एक सिरे पर वह झंडा लगा दिया गया। महल के केवल उस भाग को छोड़कर,

जिस पर यूनियन जैक फहरा रहा था, बाक़ी महल में आग लगा दी गई। नाटकशाला भी न बची। सुन्दर पर्दे, जिनकी सहायता से शकुन्तला, रत्नावली और हरिश्चन्द्र नाटक खेले जाते थे, खाक कर दिए गए।

और इसके बाद जो कुछ हुआ उससे उन बर्बरों की पाशविकता इतिहास में अमिट अक्षरों में लिख ली गई—महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय में आग लगा दी गई! थोड़ी ही देर में कलाओं का वह भंडार अग्नि की गगनभेदी लौ फेकने लगा। कभी रोम सिकन्दरिया के राजगृह में भी ऐसा हुआ था, परन्तु वह बर्बर युग था! और यह विज्ञान का सभ्य युग!

रानी ने क़िले पर से देखा। उनके हाथ में दूरबीन न होती तो भी दिखलाई पड़ सकता था। पर दूरबीन ने सब कुछ स्पष्ट दृष्टिगोचर करा दिया।

अस्तबल मिटा—फिर बन सकता था। राजमहल जला—उसके बनाने वाले फिर उत्पन्न हो जायंगे। लेकिन पुस्तकालय! वेद, शास्त्र, पुराण, काव्य इतिहास इत्यादि संस्कृत के और अरबी-फ़ारसी के अनेक हस्तलिखित ग्रन्थ जिन की प्रतिलिपि करने के लिए दूर दूर के विद्याव्यसनी आते थे, फिर कौन पैदा करेगा? रानी का माथा घूमने लगा। जिसको किसी कष्ट, किसी समस्या, किसी विपत्ति ने कभी नहीं हिला पाया था, वह जलते हुए पुस्तकालय को देखकर मूर्छित होने को हुई। मुन्दर साथ थी, उसने सँभाल लिया। रानी ने प्रबल प्रयत्न करके मूर्छा को दूर किया। पानी मँगवाया, पिया। इतने में हलवाई पुरा और कोरियों के मुहल्लों की आगों की लपटें दिखलाई दीं। क्रन्दन, पुकार और चीत्कार की समग्र ध्वनियां यकायक सुनाई पड़ीं। जन—बध, क़तल—आम, लोक संहार का प्रत्यक्ष प्रमाण! रानी का हृदय धसने लगा।

'मुन्दर, मुन्दर, मेरी प्यारी झांसी की यह कुगति यह दुर्गति! और मेरे जीतेजी! मेरी आंखों के सामने!! रानी ने भरे गले से कहा। गला फट सा गया। मुन्दर उनको खींचकर नीचे ले आई।

महल की चौखट पर बैठ कर वह रोई। लक्ष्मीबाई रोई! वह जिसकी आंखों ने आंसुओं से कभी परिचय भी न किया था। वह जिसका वक्षस्थल वज्र का और हाथ फ़ौलाद के थे! वह जिसके कोश में निराशा का शब्द न था! वह जो भारतीय नारीत्व का गौरव और शान थी! यानी उस दिन हिन्दुओं की दुर्गा रोई?

मुश्किल से आंसुओं की अविरल धारा टूटी थी कि रामचन्द्र देशमुख ने कर्तव्य वश समाचार दिया, 'सरकार, कुँवर गुलाम ग़ौसखां दुश्मन की गोली से मारे गए।'

रानी सिहनी की तरह उछल कर खड़ी हो गईं। अँगरखे के छोर से आंसू पोंछ डाले। गला साफ़ किया।

आज्ञा दी, 'भाऊ बख्शी को उनकी जगह भेजो और लाश को महल के पास।'

आज्ञा पालने के लिए देशमुख चला गया। रानी मुन्दर को साथ लेकर दक्षिणी बुर्ज के नीचे, जहां खुदाबख्श के शव के लिए क़बर तैयार हो चुकी थी आईं। मोतीबाई वहीं थी।

पश्चिमी बुर्ज से भाऊ बख्शी अंग्रेज़ी शिविर पर धड़ाधड़ गोलाबारी कर रहा था। केन्द्रीय बुर्ज से रघुनाथसिंह। दक्षिणी बुर्ज शान्त थी।

'मोतीबाई', रानी ने कहा, 'मैं दफ़नानें का प्रबन्ध करती हूं, तुम तब तक इस बुर्ज के तोपखाने को तो जगादो।'

खुदाबख्श के शव के मोह में मोतीबाई ज़रा ठमठमाई।

रानी बोलीं, 'अभी विलम्ब है। कुँवर गुलाम ग़ौशखां का भी शव यहीं आ रहा है।'

विस्फारित लोचन मोतीबाई ने विस्मय के साथ कहा, 'क्या उस्ताद मारे गए?'

'हां मोती', रानी ने उत्तर दिया। मोतीबाई तोप पर चली गई। पहली बाढ़ दाग़ी थी कि उसपर नज़दीक से गोलियों की बौछार हुई। अंग्रेज़ क़िले के सदर फाटक के पास आ गए थे और उनको पास से

निशाना लेने का सुअवसर था। बुर्जों की मुड़ेरें उस दिन के युद्ध में टूट गई थीं और उनकी मरम्मत न हो पाई थी। अन्य गोलियां तो मोतीबाई के आसपास से निकल गईं, परन्तु एक ने कन्धा नीचे से फोड़ दिया। हृदय उसका बच गया, मृत्यु अवश्यम्भावी थी।

उधर से गुलामग़ौस की लाश आई। इधर से एक सैनिक मोतीबाई को उठा लाया। उसको पानी पिलाया गया। रुधिर बहुतायत से जारी था, परन्तु वह अचेत न थी।

सुन्दर ने रानी से दक्षिणी बुर्ज के तोपखाने को सँभालने की अनुमति चाही।

रानी दृढ़तापूर्वक इनकार किया, 'नहीं। यहीं ठहर। तुझको अब सहज ही नहीं खोऊँगी।'

मोतीबाई का सिर रानी ने अपनी गोद में रख लिया।

मोतीबाई की आंखों में आंसू भर आए। बोली, 'इस गोद में सिर रक्खे हुए मरना किसी और के भाग्य में नहीं, बाईसाहब।'

रानी ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, 'मेरी मोती तू आज हीरा हुई।'

'सरकार, मोतीबाई ने व्याकुल स्वर में कहा, 'मैं कुछ भी हूँ परन्तु शुद्ध हूँ।'

'नहीं तू शुद्ध ही नहीं', रानी बोलीं, 'तू पवित्र है। देख, हीरा एक दिन सब को मरना हैं, परन्तु सत्कार्य में प्राण देना, भगवान का ध्यान करते करते मरना, यह जन्म भर की अच्छी कमाई से ही प्राप्त होता है।'

मोतीबाई ने आंख मीची उसका चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने कहा, 'आत्मा अमर है। शरीर का चाहे जो कुछ हो, वही एक प्रकाश शेष रहता है।

मोतीबाई अचेत हो गई।

रानी ने दो क़बरें और तैयार करने के लिए आज्ञा दी। क़बरें तुरन्त तैयार हो गईं।

रानी की गोदी मोतीबाई के खून से तर हो गई। मोतीबाई का पीला मुर्झाया चेहरा एकदम प्रदीप्त हुआ। आंखें अधमुदी हुई। ओठ फड़के। उसके मुँह से निकला—'रानी ··उजाला ··ला ··' और वह मुर्झाया हुआ फूल अनन्त विकास पाकर खुल गया।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार, इनको और कुंवर खुदाबख्श को एक ही क़बर में रक्खा जावे।'

रानी बोलीं, 'ऐसा नहीं होना और फिर यह कुमारी थी।'

तीनों को अलग अलग क़बरों में, परन्तु पास पास दफ़ना दिया गया अन्त्येष्टि क्रिया गुलमुहम्मद ने की। रघुनाथसिंह ने उन तीनों वीरों को तोप की सलामी दी।

सन्ध्या होने को आ रही थी। इसलिए जल्दी जल्दी में चबूतरा इन तीनों का पक्का और एक ही बांध दिया गया। चबूतरे के ऊपर निशान इन तीनों के अलग अलग बना दिए गए। ❀

इसके उपरान्त रानी ने नहाया-धोया। कपड़े बदले वेश वही पुरुष सैनिक का।

महल के नीचे के खण्ड में मुख्य मुख्य लोगों को इकट्ठा किया।

बोलीं, 'आज तक आप लोगों ने अप्रतिम वीरता से झांसी की रक्षा की। प्राणों की होड़ लगा दी। परन्तु अब चिन्ह अच्छे नहीं देख पड़ते हैं। हमारे लगभग सभी शूरमा और वीर दलपति और गोलन्दाज़ काम आ गए दीवारों और फाटकों के रक्षक मारे गए। क़िले की चार सहस्त्र सेना में से उतने सौ भी नहीं बचे हैं! अंग्रेज़ों ने क़िला घेर लिया है। वे एकाध दिन में ही भीतर आ जावेंगे। आप लोगों में से जो लड़ते

❀यह चबूतरा महल के दक्षिणी कोने पर अब भी स्थित है। उसकी जियारत होती है। और चादरें चढ़ती हैं—लेकिन साल भर में केवल शिवरात्रि के दिन जब क़िले का यह भाग हिन्दुस्थानियों को सुलभ हो जाता है।

लड़ते बचेंगे उनको क़ैद और फांसी होगी। मैं पकड़ी तो नहीं जा सकती परन्तु शव को फिरङ्गी स्पर्श करेंगे। इतने से ही मेरे पुरखों का, मेरे विख्यात ससुर का अपमान हो जायगा। अब शिवराम भाऊ की बहू के लिए केवल एक साधन शेष है। बारूद की कोठी में सैकड़ों मन बारूद है। मैं वहां जाती हूँ और पिस्तौल के धड़ाके के साथ अपने पुरखों में मिली जाती हूं। क़िले से बाहर जाने के लिए कई गुप्त मार्ग हैं। आप लोग उनसे निकल जायं। अभी संध्या होने में कुछ देर है। रात का काफ़ी अंधेरा आप लोगों को मिल जायगा।'

भाऊ बख्शी भर्राते हुए कण्ठ से बोला, 'मैं भी उसी बारूद के साथ, सरकार की सेवा के लिए यात्रा करूँगा।'

नाना भोपटकर ने तुरन्त कहा, 'आप आत्मघात करने जा रही हैं। यही न? कृष्ण का पूरा गीता जिसको कंठाग्र याद है और जो गीता के अठारहवें अध्याय को अपने जीवन में बर्तती चली आई है और जो प्रत्येक परिस्थिति स्वराज्य की स्थापना के लिए यज्ञ की वेदी पर संकल्प कर चुकी है, वह आत्मघात करेगी! अंग्रेज़ों ने हमारे पुस्तकालय को भस्म करके जो आघात हमारे कृष्ण को नहीं पहुंचा पाया है, वह आपका आत्मघात पहुंचावेगा। करिए कृष्ण का, गीता का अपमान। आप स्वामी हैं। आपकी आज्ञा का पालन तो सबको करना ही है। परन्तु आपके उपरान्त देश की जनता आपके लिए क्या कहेगी—जिसकी रक्षा के लिए आपने बीड़ा उठाया था?'

रानी ने सिर नीचा कर लिया।

वृद्ध भोपटकर कहता गया, 'आप राजमाता हैं। आपके नन्हा सा दामोदरराव पुत्र है। वह आपके पुरखों का प्रतीक, झांसी की आशा है। कालपी में अभी पेशवा की सेना मौजूद है। दिल्ली, लखनऊ, कानपूर इत्यादि के पतन हो जाने पर भी जनता का पतन नहीं हुआ है। विन्ध्यखण्ड, महाराष्ट्र और अवध अक्षय है। क़िले के भीतर वाले और

क़िले से बाहर दूर दूर वाले पठान देश के लिए कट मरने को कटिबद्ध हैं। आप क़िले के बाहर होइए अंग्रेज़ों की सेना को चीरते हुए निकल जाइए और कालपी पहुँच कर पुनश्च हरि ओ३म् कीजिए।'

रानी सोचने लगीं। भोपटकर ने मुन्दर को दामोदरराव को लिवा लाने के लिए इशारा किया। वह उसको लेने के लिए चली गई।

रानी की आंखों के सामने एक दृश्य घूम गया:—

'कुरुक्षेत्र का मैदान है। कौरव पांडवों की सेनाएँ एक दूसरे के सामने डटी हुई हैं। अर्जुन ने कृष्ण से कहा, 'भगवान् मेरा साहस डिग गया है। मेरा सामर्थ्य हिल गया है। मैं असमर्थ हूँ। लड़ना नहीं चाहता। भगवान् कृष्ण ने उद्बोधन किया। अर्जुन ने फिर गांडीव धनुष हाथ में ले लिया!'

आंखों के भीतर ही रानी को एक चमत्कार की अभिव्यक्ति हुई।

इतने में दामोदरराव वहां आ गया। दौड़ कर रानी की गोद में बैठ गया।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'सरकार अमारा सारा क़ौम मुलक वास्ते कट मरेगा।'

रानी उठीं। उन्होंने नाना भोपटकर के पैर छुए। कहा, 'एक दिन मैंने आपकी राजनीति पर आक्षेप किया था। मुझको क्षमा करना नाना साहब।' फिर एक क्षण बाद बोलीं, 'भाइयो, मेरी इस क्षणिक दुर्बलता को भूल जाना। मैं लड़ूंगी। आज सब के सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अंग्रेज़ों का मुझको सामना करना पड़े, तो करूंगी।'

उस अत्यन्त हीन परिस्थिति में भी क़िले के भीतर वाले नर-नारियों में उमङ्ग का उजाला भर गया।

रानी ने कहा, 'थोड़ा सा खा-पी लो। जो लोग शस्त्र ग्रहण नहीं कर सकते वे गुप्त मार्ग से निकल जायं। शेष सब मेरे साथ उत्तरी द्वार से भांडेरी फाटक होते हुए कालपी की ओर चलें। भांडेरी फाटक का प्रबन्ध कौन करेगा?'

भाऊ बख्शी ने जिम्मा लिया। उसका मकान कोरियों के मुहल्ले के निकट था। और वह उन लोगों को अच्छी तरह जानता था।* बख्शी गुप्त मार्ग से क़िले के बाहर चला गया। रानी ने अपने पुराने सेवक सेविकाओं को पुरस्कार देकर विदा किया। वे पैर छू छूकर, रो रोकर वहां से चले गए। नाना भोपटकर भी चला गया।

जवाहरसिंह को रानी ने आज्ञा दी, 'आप अपने इलाक़े में जाकर सैन्य संग्रह करिए और कालपी आ जाइए।'

जवाहरसिंह ने प्रार्थना की, 'मैं आपको सुरक्षित स्थान में पहुंचाकर लौटूँगा अन्यथा नहीं। केवल इस आज्ञा का जीवन में उल्लंघन किया है। इस अपराध के लिए क्षमा चाहता हूँ।'

रानी ने स्वीकार किया।

थोड़े समय उपरान्त रानी और मुन्दर महादेव के मन्दिर में गईं। बन्दना की। ध्यान किया।

समाप्ति पर रानी ने मुन्दर से कहा, 'वह पलाश अब भी फूल रहा है। सिन्दूरोत्सव के दिन की मालाएं अब भी उससे लिपटी होंगी।'

मुन्दर बोली, 'एक बार उसको भेंट लीजिए बाईसाहब।'

'अवश्य', रानी ने कहा, 'वह हर साल फूलेगा और झांसी हर साल सिन्दूरोत्सव मनाएगी। झांसी का सिन्दूर अमर हो।'

उन दोनों ने उस पलाश से भेंट की।

मुन्दर बोली, 'फूल की मालाएं सूख गई हैं।'

रानी ने कहा, 'उनकी आत्मा तो हरी भरी है। ये उनके चढ़ाए फूल हैं जो इस युद्ध में वलिदान हो गई हैं।'

इसके बाद वे दोनों महल पर आ गईं।

---

*बख्शी की हवेली के नाम से वह मकान अब भी प्रसिद्ध है। सेठ जिन्दास जी कोचर के अधिकार में है।

मोरेपन्त ताम्बे ने बहुत सा द्रव्य और जवाहर इकट्ठे किए। क़िले के उत्तरी भाग में नीचे की ओर द्वार की बग़ल में एक हवेली, हाथीख़ाना और घुड़सार थी। लड़ाई के दिनों में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह इसी हवेली में रहते थे। मोरोपन्त ने एक हाथी पर जवाहर और अशर्फ़ियां लादीं। और लोगों ने कमर में अशर्फ़ियाँ बांधी। रानी और मुन्दर पुरुष वेश में घोड़ों पर सवार हुईं।

उस समय रात बहुत नहीं गई थी। पूर्व दिशा में बड़ा तारा ऊपर चढ़ आया था। घना अंधेरा केवल शहर की आगों से फटफट जा रहा था। अंधेरे के ऊपर बड़े छोटे तारे दमदमा रहे थे। नीचे शहर के अंधेरे पर उन आगों के बड़े बड़े लाल-पीले छपके से पड़ पड़ जाते थे।

रानी ने एक चादर से दामोदरराव को पीठ पर कसा और अपने तेजस्वी सफ़ेद घोड़े को क़िले के उत्तरी भाग से निकल कर आगे किया। पीछे पीछे पठान, मुन्दर, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि। द्वार से निकलते ही उन्होंने क़िले को नमस्कार किया, झांसी को नमस्कार किया। कण्ठ में कुछ अवरोध सा अवगत किया। इस भय से कि कहीं आंख में आँसू न जाय उन्होंने उत्तर दिशा की ओर मुँह मोड़ा और क़िले के उतार के नीचे आ गईं। क़िला बिलकुल सूना छोड़ा।

मरोपन्त का हाथी बीच में था। सवार अधिक न थे। उनकी रक्षा के हेतु बाक़ी सैनिक पैदल थे। नंगी तलवारें लिए हुए।

यह टोली टकसाल के पश्चिम वाले मार्ग से भांडेरी फाटक की ओर अग्रसर हुई। जैसे ही कोतवाली की बराबरी पर आई अंग्रेज़ी सेना से भिड़ा भिड़ी हो गई। रानी 'हर हर महादेव' उच्चार करती हुईं उनको चीरती फाड़ती मुन्दर सहित निकल गईं। पठान शत्रुओं से बेतरह लड़े। बहुत से मारे गए बाक़ी आगे बढ़े।

जगह जगह जलते हुए मकानों से उजाला हो रहा था। रानी और उनके संगी द्रुतगति भांडेरी फाटक के निकट पहुँच गए। वहां बख्शी कोरियों को लिए हुए अंग्रेज़ी फ़ौज की एक टुकड़ी को तलवार के युद्ध

में उलझाए हुए था। इधर से रानी की टुकड़ी पहुंची। जलते हुए मकानों के प्रकाश में थोड़ी देर के लिए बिकट युद्ध हुआ। बख्शी ने फाटक खोल दिया और फिर अपने कोरी सैनिकों को लेकर अंग्रेज़ी टुकड़ी पर टूट पड़ा। जान पड़ता था कि उसको जीवन का कोई मोह नहीं। वैसे ही निर्मोही-पठान् थे। बख्शी फाटक की बग़ल में मारा गया। उसने मरने के पहले रानी को देख लिया था। मरने के पहले उसने 'हर हर महादेव' और 'झांसी की रानी की जय' घोष किया था। उसके शरीर पात को रानी ने देखा, परन्तु इतना समय भी न था कि मुँह से 'धन्य' भी कह पातीं।

थोड़े से लोगों के साथ रानी बाहर हो गईं। मरने से बचे हुए अंग्रेज़ सैनिक भाग गए। कोरियों ने भांडेरी फाटक फिर बन्द कर लिया* और भाऊ बख्शी को जलते हुए मकान के अंगारों में डालकर उसकी अन्त्येष्टि करदी।

रानी और उनके साथियों को कोट के बाहर की भूमि का राई रत्ती पता था। अन्धेरे में वह सहज ही बढ़ती चली गईं। बात चीत बिलकुल धीरे धीरे होती थी। अन्जनी की टौरिया के पास ओर्छे की सेना का पहरा था और एक अंग्रेज़ी छावनी का। यहां रोक टोक हुई। लड़ाई भी। यहां से रानी के साथ केवल दस बारह सवार रह गए और मुन्दर।

आगे निर्मम मार्ग। अगाध अँधेरा। झींगुर झंकार रहे थे। उनके ऊपर घोड़ों की टापों की आवाज़ हो रही थी। सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था। पीछे झांसी में आगें जल रही थीं और आवाजें आ रही थीं। आगे अन्धकार में जङ्गल और गढ़मऊ का पहाड़ लिपटे हुए, दबे हुए से दिखलाई पड़ रहे थे। चिड़ियां पेड़ों पर से भड़भड़ा कर उड़तीं और घोड़ों को चौंका देतीं। घोड़े जल्दी चलाए जाने के कारण ठोकर ले ले पड़ते

---

*यह फाटक ७५ वर्ष तक ज्यों का त्यों बन्द रहा। १९३३ के जाड़ों में खोला गया।

रानी लक्ष्मीबाई अंग्रजी सेना में से मार्ग बना कर जवाहर सिंह, रघुनाथ सिंह, गुलमुहम्मद आदि चुने हुए सरदारों के साथ झांसी छोड़ रही हैं ।

थे। आगे का मार्ग अन्धकार पूर्ण और भविष्य तिमिराच्छन्न। ज्यों त्यों करके आरी नामक ग्राम के पास से यह टोली आगे बढ़ गई। पहूज नदी मिली। लोगों ने चुल्लुओं से पानी पिया और फिर आगे बढ़े। कभी धीमी गति से कभी तेज़ी के साथ। जब दस बारह मील निकल आए तब ये लोग कुछ क्षण के लिए ठहरे।

रानी ने जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से कहा, 'अब आप लोग लौट जाओ और सेना एकत्र करके मुझे कालपी में आकर मिलो।'

रघुनाथसिंह ने तुरन्त कहा, 'यह कार्य दीवान जवाहरसिंह अच्छा कर सकते हैं। मैं तो साथ चलूँगा।'

रानी मान गईं। जवाहरसिंह ने उनके पैर छुए और कटीली की ओर चला गया।

रानी की टोली आगे बढ़ी। इसमें गुलमुहम्मद और उसके कुछ पठान भी थे।

जनरल रोज़ को रानी के निकल जाने का पता बहुत शीघ्र लग गया। उसने तुरन्त लैफ्टनेंट बोकर नामक अफ़सर को कुछ गोरों और निज़ाम हैदराबाद के एक दस्ते के साथ रानी का पीछा करने के लिए भेजा।

मोरोपन्त भांडेरी फाटक से निकल कर अन्जनी की टौरिया तक आया, परन्तु जैसे ही वहां लड़ाई छिड़ी, उसने समझ लिया कि हाथी महान संकट का कारण होगा। उसने दतिया की दिशा में हाथी को मोड़ दिया और जितनी तेज़ी संभव थी उतनी तेज़ी में साथ भागा। कुछ अंग्रेज़ सवारों ने पीछा किया। उसकी जांघ में किसी घुड़सवार की तलवार का घाव भी लगा, परन्तु वह निकल गया और सवेरे दतिया में पहुँच गया एक तंबोली के यहां ठहरा। परन्तु छिपाए छिप नहीं सकता था। राज्याधिकारियों को मालूम हो गया। राज्य ने हीरे जवाहर सब ज़ब्त कर लिए और मोरोपन्त को पकड़ कर तुरन्त झांसी भेज दिया।

रोज़ ने दिन के दो बजे जलते हुए महल और भस्मीभूत पुस्तकालय के बीचों बीच मोरोपन्त को फांसी दे दी।

[७७]

जैसे ही झलकारी को मालूम हुआ कि रानी भांडेरी फाटक से बाहर निकल गईं उसने चैन की सांस ली। घर के एक कोने में थोड़ी देर पड़ी रही। पूरन बाहर से आया।

बोला, 'अब इतैं सें भगने परें।'

झलकारी—'तुम चले जाओ। मैं घरैं हों। गोरा लुगाइयन सें नईं बोल हैं।'

पूरन—'मैं कहत इतैं सें चल। जिद् जिन कर। तैं मारी जैय और मैं मारो जैओं।'

झलकारी—'देखौ मोसें हठ न करौ। कऊँ जा दुकौ। मै घर न छोड़ हों, न छोड़ हों, बालाजी की सौगन्ध।'

पूरन उसके हटीले स्वाभाव को जानता था। वह एक लोटा पानी लेकर एक खंडहल में जा छिपा।

थोड़ी देर में झलकारी को अपने दरवाज़े के सामने घोड़े की टाप का शब्द सुनाई पड़ा। झांक कर देखा। बिना सवार का बढ़िया घोड़ा ज़ीन लगाम समेत। ज़ीन से जान पड़ता था कि झांसी की सेना का है। झलकारी समझ गई कि सवार मारा गया और घोड़ा भाग खड़ा हुआ है।

झलकारी ने किवाड़ खोले। घोड़े को पकड़ा। और घर के पास वाले पेड़ से बांध दिया। फिर भीतर चली गई।

उसने एक योजना सोची और उसको कार्यान्वित करने का निश्चय किया। जब उसने निश्चय किया तब वह सीधी तनकर खड़ी हो गई थी।

झलकारी ने अपना शृंगार किया। बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहिने—ठीक उसी तरह जैसे लक्ष्मीबाई करती थीं। गले के लिए हार न था, परन्तु कांच के गुरियों का कण्ठा था। उसको गले में डाल लिया। प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगी।

प्रातःकाल के पहले ही हाथ मुँह धोकर तैयार हो गई।

पौ फटते ही घोड़े पर बैठी और बड़ी ऐंठ के साथ अंग्रेज़ी छावनी की ओर चल दी। साथ में कोई हथियार न लिया। चोली में केवल एक छुरी रख ली।

थोड़ी ही दूर पर गोरों का पहरा मिला। टोकी गई।

झलकारी को अपने भीतर भाषा और शब्दों की कमी पहले पहल जान पड़ी। परन्तु वह जानती थी कि गोरों के साथ चाहे जैसा भी बोलने में कोई हानि न होगी।

झलकारी ने टोकने के उत्तर में कहा, 'हम तुम्हारे जंडैल के पास जाउता हैं।'

यदि कोई हिन्दोस्थानी इस भाषा को सुनता तो उसको हँसी बिना आए न रहती।

एक गोरा हिन्दी के कुछ शब्द जानता था। बोला, 'कौन?'

'रानी—झांसी की रानी, लक्ष्मीबाई', झलकारी ने बड़ी हेकड़ी के साथ जवाब दिया।

गोरों ने उसको घेर लिया।

उन लोगों ने आपस में तुरन्त सलाह की।

'जनरल रोज़ के पास अविलम्ब ले चलना चाहिए।'

उसको घेरकर गोरे अपनी छावनी की ओर बढ़े।

शहर भर के गोरों में हल्ला फैल गया कि झांसी की रानी पकड़ ली गई। गोरे सिपाही खुशी में पागल हो गए। उनसे बढ़कर पागल झलकारी थी।

उसको विश्वास था कि मेरी जांच-पड़ताल और हत्या में जब तक अंग्रेज़ उलझेंगे तब तक रानी को इतना समय मिल जावेगा कि काफ़ी दूर निकल जावेंगी और बच जावेंगी।

झलकारी रोज़ के सामने पहुंचाई गई। वह घोड़े से नहीं उतरी। रानियों की सी शान, वैसा ही अभिमान, वही हेकड़ी। रोज़ भी कुछ देर के लिए धोखे में आ गया।

शक़ल सूरत वैसी ही सुन्दर। केवल रङ्ग वह नहीं था।

रोज़ ने स्टुअर्ट से कहा, 'हाउ हैन्डसम, दो डार्क एएड टैरीबिल! (कितनी सुन्दर है, यद्यपि श्यामल और भयानक)

स्टुअर्ट बोला, 'लैफ्टिनेंट बोकर को सदल व्यर्थ ही भेजा।'

परन्तु छावनी में राव दूल्हाजू था। वह खबर पाकर तुरन्त एक आड़ में आया। उसने बारीकी के साथ देखा।

रोज़ के पास आकर दूल्हाजू बोला, 'यह रानी नहीं है, जनरल साहब। झलकारी कोरिन है। रानी इस प्रकार सामने नहीं आ सकतीं।'

झलकारी ने दूल्हाजू को पहिचान लिया। उसको क्रोध आ गया और वह अपना अभिनय नितान्त भूल गई।

क्रुद्ध स्वर में बोली, 'अरे पापी, ठाकुर होकें तैनें जो का करौ।'

दूल्हाजू ज़िमीन में गड़ सा गया।

रोज़ को झलकारी की वास्तविकता समझाई गई।

रोज के मुँह से निकला, 'यह औरत पागल हो गई है।

रोज़ ने झलकारी को घोड़े पर से उतरवाया।

रोज़—'तुम रानी नहीं हो। झलकारी कोरिन हो। तुमको गोली मारी जायगी।'

झलकारी ने निर्भय होकर कहा, 'मार दै, मैं का मरबे खां डरात हों? जैसें इत्तें सिपाई मरे, तैसें एक मैं सई।'

रोज़ ने झलकारी के पागलपने का कारण तलाश किया।

मालूम होने पर दङ्ग रह गया।

स्टुअर्ट बोला, 'शी इज़ मैड (वह पागल है)।'

रोज़ ने सिर हिलाकर कहा, 'नो स्टुअर्ट। इफ़ वन परसेंट आव इण्डियन वीमन बिकम सो मैड एज़ दिस गर्ल इज़ वी विल हैव टु लीव आल दैट वी हैव इन दिस कन्ट्री। (न स्टुअर्ट, यदि भारतीय स्त्रियों की एक प्रतिशत भी ऐसी पागल हो जायँ जैसी यह स्त्री है तो हमको हिन्दुस्थान में अपना सब कुछ छोड़कर चला जाना पड़ेगा।'

स्टुअर्ट की समझ में नहीं आया।

रोज़ ने समझाया, 'यह स्त्री हम लोगों को अपने धोखे में उलझाकर रानी के भाग निकलने का समय पाने के लिए यह प्रपञ्च रचकर आई है, परन्तु बोकर पीछे पीछे गया है। आशा है कि वह इस धोखे से बच गया होगा।'

जनरल रोज़ ने झलकारी को तङ्ग नहीं किया। केवल क़ैद में डाल दिया और एक सप्ताह उपरान्त छोड़ दिया।

[७८]

सबेरा होते होते रानी भांडेर के नीचे बहने वाली फिर पहूज नदी के किनारे पहुँच गईं। तुरन्त नहाया धोया, दामोदरराव को कलेवा करवाया। उनके साथियों ने भी थोड़ा सा जल पान किया। रानी ने केवल कुछ अन्जली पानी पिया। झांसी की दुर्दशा और अपने स्नेहपात्रों के मारे जाने के कारण, उनका कलेजा इतना भरा हुआ था कि कलेवा के नाम से उनको अरुचि हुई।

अन्तिम अन्जली का पानी मुँह में डाला था कि झांसी की ओर से धूल उड़ती हुई दिखलाई पड़ी। रानी ने समझ लिया कि पीछा करने वाले लोग आ रहे हैं।

गुलमुहम्मद ने दूरबीन से देखा। बोला, 'ये अंग्रेज़ लोग अमारा इधर बी पिच्छा करता है। हुजूर आगे बढ़ें। अम लोग देखता है।'

'नहीं,' रानी ने कहा, और झटपट दामोदरराव को पीठ पर कसा, घोड़े पर सवार होकर बोलीं,

'इस तरह हम लोग सब बीन बीन कर मारे जायँगे। यहां आसपास छोटी छोटी टौरियां हैं। इनके पीछे खड़े हो। जैसे ही बैरी का दस्ता निकट आवे पिस्तौलें दाग़ो। दस्ता बन्दूक़ या पिस्तौल से जवाब देगा, जवाब चुकने पर तुरन्त तलवार से आक्रमण करो।'

गुलमुहम्मद ने समझ लिया—थोड़े से आदमियों को लेकर रानी कितने बड़े दस्ते का मुक़ाबिला कर सकती हैं!

रानी की टोली ने उसी आदेश के अनुसार काम किया।

लैफ्टिनेंट बोकर का दस्ता घुड़सवारों का था। ठोस पांत में वे लोग घोड़े दौड़ाते हुए चले आ रहे थे। जैसे ही पिस्तौल की मार में आए रानी की टोली ने आड़ से पिस्तौलों की बाढ़ दाग़ी। बाढ़ का भयंकर प्रभाव हुआ। बोकर के दल के पास पिस्तौलें और बन्दूकें भी थीं, परन्तु बन्दूक़ें आवरों में पड़ी हुई थीं। उन्होंने घबराकर पिस्तौलें ख़ाली करदीं। रानी ने तुरन्त तलवार से हमला किया। अंग्रेज़ी दस्ते के दो दो तीन तीन

सवार रानी के साथियों के पल्ले पड़े। एक सवार को तो रानी ने कमाल की सवारी करके घोड़े समेत चीर दिया। बोकर रानी के ऊपर घोड़े को ज़ोर की एड़ लगाकर लपका। रानी ने विलक्षण चतुरता के साथ अपने घोड़े को पीछे हटाकर बोकर के सपाटे को व्यर्थ कर दिया। फिर वह उसपर झपटीं और तलवार का वार किया।

बोकर घायल होकर गिरा। शेष दस्ता अपने प्राण लेकर भागा। रानी पर भागते हुए सवारों में से एक ने गोली चलाई। रानी बच गई, गोली घोड़े का पिछला हिस्सा छीलती हुई चली गई।

रानी की गांठ में अब केवल मुन्दर, गुलमुहम्मद, देशमुख और रघुनाथसिंह बचे—बाक़ी सब मारे गए। परन्तु इन बहादुरों ने बोकर के दस्ते को कुंठित कर दिया, लौटा दिया। बोकर को उसके सगी झांसी उठा ले गए। उसके लौटने पर रोज़ को झलकारी के कृत्य का पूरा मर्म और अच्छी तरह समझ में आ गया।

रानी पहूज पार करके कालपी की ओर तेज़ी के साथ चल पड़ीं।

मार्ग में उनका प्यारा घोड़ा यकायक रुका। उसके घाव से बहुत ख़ून निकल चुका था, और उसको दिल तोड़ परिश्रम करना पड़ा था। मर गया। एक गांव वाले ने उनको अपना अच्छा घोड़ा दे दिया। रानी केवल पानी पीती हुई आधीरात के लगभग कालपी पहुंची। एकसौ दो मील का मार्ग तै करके! दिन भर कुछ भी न खाकर उस तेज़ धूप में इस पर भी पहुचते ही उन्होंने काशीबाई और जूही के सम्बन्ध में तात्या से प्रश्न किया।

तात्या ने उत्तर दिया, 'काशीबाई झांसी के संग्राम में मारी गई। जूही बच गई। इस समय वह शिविर में रावसाहब के रनवास के साथ है। आज्ञा हो तो बुलवाऊँ?'

'नहीं' रानी ने निषेध किया, 'कल संध्या समय मिलूँगी।'

इसके उपरान्त तात्या ने सविस्तार अपनी झांसी वाली लड़ाई का वृत्तान्त थोड़े ही समय में सुना दिया। उन्होंने धैर्य के साथ सुना।

फिर उन्होंने स्नान किया। कपड़े बदले और केवल शर्बत पीकर सो गईं।

इधर उस दिन झांसी में जो कुछ हुआ वह एक अत्यन्त बीभत्स कांड है। इङ्गलैंड के माथे का अमिट कलंक। झांसी उसको कभी न भूली।

क़िले पर अधिकार करने के बाद असंख्य मकान जलाए गए। बालक, युवा, वृद्ध गोलियों से उड़ाए गए। बेहद लूट मार की गई। लाशों के ढेर लग गए। गाएँ और बछड़े अनाथ होकर भटकने और जलने लगे। सात दिन तक लाशें सड़ती रहीं। लगभग तीन सहस्र निरपराध व्यक्तियों का वध किया गया।

महालक्ष्मी का मन्दिर लूटा गया।

अंग्रेज़ी सेना के नायकों और ऊँचे अफ़सरों तक ने एक अत्यन्त बर्बर कृत्य में भाग लिया। शेक्सपियर, मिल्टन, स्काट और बर्क के देश के शिक्षित तथा विज्ञान विदग्ध अफ़सरों ने, मन्दिरों की मूर्तियां, सिंहासनों पर से उठाईं, झोलों में रक्खीं और अपने शराबखानों को सजाने के लिए सदा के लिए ले गए। और इस कुकृत्य को अंग्रेज़ इतिहास लेखक ने इस प्रकार प्रकट किया, 'मूर्तियों का चुराना 'लूट' नहीं थी, यह तो कुतूहल जनित जिज्ञासा की पूर्ति मात्र थी!'

मुरलीमनोहर के मन्दिर की मूर्ति बचा दी तो बुड्ढे पुजारी को मन्दिर के भीतर ही मार डाला। उसके जवान लड़के को पकड़कर मन्दिर के बाहर लाए। एक गोली चली। फिर उसकी बुड्ढी माँ को कभी पता न चला कि लड़का कहां गया।*

पहले दिन अंग्रेज़ों ने लूटमार की। दूसरे दिन मद्रासी दस्ते को अवसर दिया गया। तीसरे दिन निज़ाम हैदराबाद की पल्टन की बारी आई। अनाज, बर्तन, कपड़े तक न छोड़े गए।

---

*वृद्ध पुजारी का नाम रामचन्द्र गोलवलकर और लड़के का नाम कृष्णराव था।

केवल एक स्थान वध से बचा। वह था बिहारी जी का मन्दिर। कदाचित इस कारण कि वह एक कोने में था और उसपर कोई शिखर न था।

आरम्भ के क़तल के बाद कुछ लोग माधवराव भिड़े के बाग़ में आ छिपे। एक अंग्रेज़ अफ़सर के हृदय के किसी कोने में कुछ मानवता बाक़ी थी। उसने इन लोगों का वध नहीं होने दिया। इस बाग़ की चौड़ी दीवारें पोली थीं। पूना के पास का एक शास्त्री उन दिनों अपने दुर्भाग्य से झांसी में आ फसा था। वह दीवार की एक खोल में रात भर ठुसा रहा। पीठ से पीठ सटाकर वहीं एक स्त्री भी प्राणों की खैर मनाती रही। समय पाकर शास्त्री किसी प्रकार अपने निवास स्थान पर पहुँचा। तमाखू खाने की आदत थी, पर लुटेरे घर में से उसे भी गत दिवस की लूट में उठा ले गए थे। उसी समय कुछ मद्रासी दस्ते वाले फिर घुस आए। उन्होंने बचे खुचे बर्तन भी खसोटे। शास्त्री ने भी अपनी एक ज़रूरत पूरी की।

लुटेरों से कहा, 'थोड़ी खाने की तमाखू हो तो दिए जाओ।'

बर्तनों के बदले में थोड़ी सी तमाखू मिल गई! विदेशी होते तो शायद खाने को संगीन मिलती!

रोज़ का एक दस्ता घूमता भटकता, टक्करें लेता देता मऊरानीपूर होकर निकला। झांसी के पतन का समाचार पाने पर भी काशीनाथ भैया और आनन्दराय इस दस्ते से भिड़ गए।

मऊ की गढ़ी छोटी सी थी। तोपें गांठ में न थीं। इसलिए ये लोग अपना छोटा सा बन्दूक़ची दल लेकर मऊ के बाहर की टौरियों की आड़ में पहुंचे और मुक़ाबिला किया। खूब डटकर लड़े और सब मारे गए। आनन्दराय का लड़का भी साथ था। मरने के पहले आनन्दराय ने लड़के से कहा,

'यदि कभी रानी साहब के दर्शन हों, तो कहना कि मऊ झांसी से पीछे नहीं रही।'

लड़का कुछ महीने बाद गिरफ्तार हो गया। परन्तु उन्हीं दिनों विक्टोरिया की क्षमा घोषणा हुई और वह फांसी से बच गया। इस प्रकार की घटनाएँ झांसी ज़िले के उन सब गांवों में हुई जहां एक छोटी मोटी भी गढ़ी थी, और जनता को हथियार पकड़ने की सांस मिली थी।

आठवें दिन झांसी में रोज़ का ऐलान हुआ, 'खलक़ खुदा का, मुलक बादशाह का, अमल कम्पनी सरकार का।'

परन्तु इन सात दिनों हवा में जो स्तब्ध घोषणा घूमी थी वह यह थी—

'खलक़ शैतान का, मुलक शैतान का, अमल शैतान का।'

रोज़ को झांसी ज़िले में 'कम्पनी सरकार का अमल' क़ायम करने में करीब एक महीना लग गया।

[७९]

कालपी खासा नगर था। यमुना नदी के किनारे। एक ओर मज़बूत किला। तीन ओर परकोटा, और चौथी ओर यमुना नदी। क़िले के पश्चिम की तरफ़ एक मैदान, उसके बाद नगर। नगर से कुछ दूर चौरासी गुम्बज का क्षेत्र। छत्रसाल के पीछे कालपी का भूखंड गोविन्दपन्त के अधिकार में आया। सन् १८०६ की सन्धि द्वारा अंग्रेज़ों ने गोविन्दपन्त के वंशजों से कालपी को पाया। सन् १८२५ में इसी वंश के एक नाना पंडित ने कालपी को फिर अपने हाथ में कर लिया, परन्तु झांसी के राजा रामचन्द्रराव की सहायता से अंग्रेज़ों ने कालपी को वापिस ले लिया। सन् १८५७ के विप्लव में कालपी की छावनी ने कानपूर से आए हुए विप्लवकारियों का साथ दिया। थोड़े समय उपरान्त राव साहब अपनी सेना लेकर यहां आगया और कालपी-नगर विप्लवकारियों का एक प्रधान अड्डा बन गया!

जब रानी कालपी पहुँची राव साहब—नाना का भाई—और तात्या वहीं थे।

दूसरे दिन रानी की इन लोगों से भेंट हुई। रानी का इन लोगों ने जी खोलकर आदर सत्कार किया।

परन्तु रानी आदर की भूखी न थीं। वे काम चाहती थीं। लेकिन वह कालपी में अस्तव्यस्त था! तात्या सरीखे उत्कृष्ट सेनापति के होते हुए भी सेना का प्रबन्ध अव्यवस्थित था। कारण तात्या का एक स्वभावगत दोष था---वह था रावसाहब को अपने तनमन का सम्पूर्ण स्वामी मानना और अपने सैनिकों के व्यसनों को क्षमा करते रहना। रावसाहब का और सैनिकों का, वह अत्यन्त स्नेहभाजन था, परन्तु इससे सेना की अनुशासन-हीनता की पूर्ति नहीं हो सकती थी।

रानी की सूक्ष्म दृष्टि ने इस बात को शीघ्र देख लिया।

विश्राम करने के बाद सन्ध्या समय रानी उन लोगों से मिलीं।

'जूही, तपस्या में क्षय पहले है और अक्षय पीछे। यह युद्ध स्वराज्य की अन्तिम साधना नहीं है और न हम लोग उसके अन्तिम साधक।'

फिर रानी ने अपने स्त्री-पुरुष वीरों के बलिदानों की कथा सुनाई।

जूही ने कहा, 'मोतीबाई के साथ मैं भी घायल होती, तो इसी गोद में प्राण जाते।'

'सहज ही प्राण त्याग मत करो जूही, रानी बोलीं,' 'अभी बहुत काम करने को पड़ा है।'

दूसरे ही दिन पेशवा की सेना को व्यवस्थित करने की योजनाएँ बनानी प्रारम्भ करदीं, कुछ कार्यन्वित हुईं। अनेक पेशवा की ढील-ढाल में यों ही पड़ी रहीं।

कालपी की सेना का शिथिल सङ्गठन देखकर रानी का जी दुख दुख जाता था।

[८०]

अप्रैल के तीसरे सप्ताह में बानपूर, शाहगढ़ और बांदा की सेनाएँ कालपी में आगई। झांसी का कड़ा प्रबन्ध करके रोज़ ने अप्रैल की पचीस तारीख को कालपी पर चढ़ाई की आज्ञा दी। इसी समय उसको खबर मिली कि रानी कोंच होती हुई झांसी पर फिर आने वाली हैं। रोज़ का एक दस्ता पूँछ पहाड़ गांव पर पहुंचा। विद्रोहियों से कड़ी मुठभेड़ हुई। अंग्रेज़ी दस्ता सफल हुआ। फिर एक युद्ध सैदनगर कोटरा पर हुआ। अंग्रेज़ी दस्ता हारा।

कात्र पर अधिकार करने के लिए रोज़ ने लुहारी के क़िले को लेने का पहले प्रयत्न किया। कोंच में पेशवा का काफ़ी सेना इकट्ठी हो गई। बानपूर और शाहगढ़ के राजा तथा बांदा के नवाब भी यहीं आगए। पुनः बीस सहस्र सैनिक इकट्ठे हो गए। रानी और तात्या सरीखे सेनापति। किस बात की कमी थी? जिस बात की कमी थी उसको रानी जानती थीं। इस सेना में बहुत से लुटेरे और बदमाश भी इकट्ठे हो गए थे। उनको स्वराज्य या युद्ध में उतनी रुचि न थी। जितनी विजय या पराजय के उपरान्त लूट खसोट करने में थी, वे इतने पतित थे कि मौक़ा मिलने पर अपनी ही छावनी को लूट सकते थे! इस सेना में बहुत से तो क़वायद परेड ही नहीं जानते थे और अनुशासन का नाम न सुना था। वे केवल अपने सरदारों का, या जिन्होंने उनको भर्ती किया था उनका, आदेश मानने को तैयार थे। सो भी उतना, जितना उनके मन के अनुकूल होता। रानी का बस चलता तो वे कम से कम आधी संख्या को अपने अपने घर लौटा देतीं।

केवल कल्पना में इस सेना का प्रधान संचालक रावसाहब था। वास्तव में अपनी अपनी ढपली अपना अपना राग था। पूर्ण सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में न थी। और युद्ध को सफलता-पूर्वक लड़ने के लिए, सैन्य संचालन एकाधिपत्य चाहता है, वह इस सेना में न था।

उधर रोज़ लुहारी के क़िले को, कोंच का पहला मोर्चा समझ कर ले लेने के प्रयत्न में था। इधर कोंच में रात को रावसाहब, बानपूर और शाहगढ़ के राजा तथा बांदा के नवाब की इच्छा नाच देखने की हुई! इन लोगों ने सुना था कि झांसी की जूही, जो उस समय कोंच में रानी के शिविर में थी, बहुत अच्छा नाचती है। इसलिए भंग पीने के उपरान्त उसके बुलाने का हट किया गया।

रावसाहब को सरूर आ चुका था, परन्तु ज़बान ढीली नहीं हुई थी। तात्या को बुलाया। वह भङ्ग नहीं पिए था। और न पीता ही था।

रावसाहब ने कहा, 'आज दिन में बहुत गरमी रही। अब ठंडक है। सब लोग मज़े में हैं। युद्ध पर युद्ध होते रहते हैं। बीच बीच में कुछ आनन्द भी चाहिए।'

तात्या ने खीझ को दबाकर निवेदन किया, 'आज्ञा हो।'

'अरे यार मेरे,' बांदा के नवाब ने कहा, 'और आज्ञा होगी ही क्या! किसी को नाचने गाने के लिए बुलालाओ।'

बानपूर का राजा बोला, 'सरादर साहब, माफ़ करना आप शंकर की बूटी का सेवन नहीं करते, इसलिए इस मज़े को नहीं जानते, परन्तु हम लोगो के मन तो चढ़ावे पर, इन्हीं कमानों पर आते हैं।'

शाहगढ़ का राजा ज़रा और अग्रसर हुआ, 'भाई टोपे साहब, वह जो झांसी का तुहफ़ा छावनी में है, उसका नृत्यगान फिर कब देखने को मिलेगा?'

तात्या सन्नाटे में आगया।

रावसाहब ने कहा, 'उसका नाम जूही है। बड़ा सुन्दर नाम है। सिपाहगरी भी करती है और नृत्यगान भी। झांसी की नाटकशाला में बढ़िया अभिनय करती थी। बेढब हाव भाव। जब से यहां आई, उदास बनी रही। मातमसा मनाती रही। अब उसकी स्वामिनी आगई हैं, प्रसन्न है। नाचने गाने की नाहीं करने का. कोई कारण नहीं। रात भी

बहुत नहीं गई है। घन्टे आध घन्टे के लिए यह दरबार रसीला रंगीला हो जाय बुला लाओ।'

तात्या ने माथे का पसीना पोंछा।

बोला, 'जो आज्ञा, परन्तु रानी साहब—'

नवाब—'क्यों किन्तु परन्तु क्या!'

रावसाहब—'रानी साहब पूजा में होंगीं। बुला भी लाओ।'

तात्या गया। उस मंडली का सरूर और बढ़ा।

तात्या ने जूही को एकान्त में बुलाया।

जूही बहुत प्रसन्न थी।

जूही—'सरदार साहब आपने क्यों कष्ट किया?'

तात्या—'एक बात कहने आया हूं।'

जूही—'मैं उस बात को सुनने के लिए बरसों से तरस रही हूँ।'

तात्या—'एक प्रार्थना करने के लिए आया हूँ।'

जूही—'मेरे सरदार मुझसे प्रार्थना करें! जिस एक शब्द के सुनने के लिए बरसों तपस्या की, अपने तन और मन की रक्षा की, उस एक शब्द के सुनने के लिए आपकी जूही के भाग्य का आज उदय हुआ, परन्तु—'

तात्या—'परन्तु क्या जूही!'

जूही—'परन्तु सरदार साहब, मेरी रानी का स्वराज्य संग्राम पहले सफल हो और मैं आपकी जन्म संगनी बनकर रहूँ। बहुत दिनों से इस बात को कहने के लिए संकल्प पर संकल्प किए, परन्तु आज लाज-संकोच त्याग कर कह पा रही हूँ। आपने अवसर देने की कृपा की।'

पेशवा के प्रधान सेनापति का सिर नीचा पड़ गया। कुछ क्षण में हिम्मत बांधकर बोला, 'मेरी प्रार्थना यह है। मेरी प्रार्थना—'

जूही ने टोककर कहा, 'आपके मुँह से प्रार्थना का शब्द नहीं सुहाता। आज्ञा हो, आपकी जूही का सिर चरणों में पहुँचेगा, परन्तु जिस शर्त का निवेदन कर चुकी हूँ, वह अटल है।'

तात्या का दिल धड़का। उसने धड़कन दबाई। मुट्ठी बाँधी और हिम्मत को कड़ा किया।

तात्या—'अभी तो केवल यह प्रार्थना है कि आप रावसाहब के शिविर में चलें। वहां बांदा के नवाब साहब, मदनपूर और बानपूर के राजा साहब बैठे हुए हैं। आपके नृत्य गान का रसास्वादन करना चाहते हैं।'

जूही—'ओह, यह बात! यह प्रार्थना! सरदार साहब मैं आपको मन ही मन अपना हृदय भेंट कर चुकी हूं, परन्तु आपको इतना स्मरण रहे कि मैं झांसी की रानी की सिपाही हूँ और किसी राजा या नवाब से अपने को कम नहीं समझती। ये लोग समझते होंगे कि मैं वेश्या पुत्री हूं। परन्तु वेश्या नहीं हूँ, और, न नाचने गाने का पेशा करती हूँ। मेरा प्रस्ताव उस मण्डली में किसने किया, सरदार साहब? और आपके मुँह से यह प्रस्ताव निकला कैसे?'

तात्या—'मैंने नहीं किया जूही। आप मेरा विश्वास करो। मैं रावसाहब की आज्ञा को देवता की आज्ञा के समान समझता हूं। उन्हीं के कहने से आपके पास आने का साहस किया।'

जूही—'आप, आप कहकर मेरा अपमान मत कीजिए। मैं आपके लिए तुम हूँ। उन लोगों से कह दीजिए कि मैं उनके लिए उस रानी की कर्नल हूं, जो जनरल रोज़ के परदादों को क़ब्र में हिला डालने की हिम्मत और तरकीब रखती है।'

तात्या चला गया। जब तक वह पेशवा के सामने पहुंचा तब तक भंग ने अपना गहरा रंग चढ़ा दिया था। वे लोग अपनी पहली धुन को इस बीच में भूल गए थे और किसी दूसरी धुन को पकड़ लिया था। इसलिए तात्या को बात बनाने की ज़रूरत नहीं पड़ी।

जूही रानी के शिविर में लौट आई। रानी गीता के परायण से उसी समय फारिग हुई थीं।

रानी ने साधारण प्रश्न किया, 'कहां हो आई जूही?'

जूही ने भर्राए हुए स्वर में उसांस लेकर उत्तर दिया, 'सरदार साहब आए थे।'

रानी—'कौन सरदार साहब ? यहां तो मुझको सब सरदार ही दिखते हैं। संसार की किसी भी सेना की ऐसी अस्त व्यस्त स्थिति न होगी जो मुझको इस सेना की दिखलाई पड़ रही है।' कोई भी एक ऐसा नहीं जिसकी सब कोई माने।'

जूही—'सरदार तात्या साहब आए थे।'

रानी—'क्या कहते थे ?'

जूही—'कहते थे कि श्रीमन्त रावसाहब पेशवा नृत्य गान के लिए बुला रहे हैं। महफ़िल बांदा, बानपूर और शाहगढ़ के रईसों की है।'

रानी—'हां ! यह मौज ! तूने क्या उत्तर दिया ?'

जूही—'मैंने कह दिया सरकार कि मैं रानी साहब की कर्नल हूँ, नाचने गाने वाली नहीं।'

रानी—'जूही, तूने अपने योग्य ही उत्तर दिया। दो एक दिन में ही कोंच में लड़ाई होने वाली है। और इन लोगों का यह हाल है ! जी चाहता है कि इसी समय इनको कुछ खरी खोटीं सुनाऊँ, परन्तु अवसर उपयुक्त नहीं है। किसी समय कहना अवश्य पड़ेगा। और कुछ...दंड...'

[८१]

दूसरे दिन समाचार मिला कि लुहारी के क़िले का पतन हो गया और रोज़ कोंच ग्रसने के लिए आ रहा है।

पेशवा इत्यादि की सेना को अपने अग्रभाग का सुदृढ़ और सुसंगठित प्रबन्ध करके लड़ने का अभ्यास सा पड़ गया था रोज़ जानता था कि इनकी सेना का पृष्ठ भाग उतना व्यवस्थित नहीं रहता। इसलिए उसने विरोधी सेना पर आक्रमण करने के लिए अपनी सेना के तीन भाग किए। दो को कोंच की सेना के पीछे दाएं बाएं भेज दिया और एक को सामने ले चला।

पेशवा की सेना को उसके केवल सामने वाले दस्ते का पता लगा और उसी से तात्या को भिड़ा दिया। रानी को पीछे की ओर रक्खा। दोनों ओर से विकट युद्ध हुआ।

बँधे इशारे पर रोज़ के पीछे वाले दस्तों ने धावा किया और उनकी तोपों के प्रहार से कोंच की सेना बुरी मार खाकर भागी। तात्या और रानी ने अपने कौशल से उसको रोज के व्यूह से बचा निकाला। रोज़ ने कोंच को ले लिया। आठ तोपें हाथ आईं और बहुत सी युद्ध सामग्री। रोज़ को बहुत आश्चर्य इस बात पर था कि सबके सब सरदार और बाक़ी सेना तथा सामान किस हिकमत से और कौन निकाल ले गया। उसका सन्देह बार बार झांसी की रानी और तात्या टोपे पर जाता था।

तात्या कोंच से निकल कर कालपी नहीं गया। वह अपने पिता के पास चला आया। उसने उस समय, कदाचित् केवल उस समय, पेशवा की भी अनसुनी करदी!

पेशवा ने अपनी सेना के साथ कालपी में आकर दम लिया। शायद उस रात भंग नहीं छनी! दूसरे दिन पेशवा ने आगे की योजना बनाने के लिए सरदारों का दरबार किया। रानी भी दरबार में थीं।

रावसाहब ने कोंच की हार का किसी पर भी दोषारोपण नहीं किया और बचकर निकल आने के चातुर्य पर प्रशंसा बरसाई। इसके उपरान्त आगे की योजना की बात छिड़ी।

रानी अपने आसन से उठीं। कमर से तलवार निकाल कर पेशवा के सामने मूठ की ओर से रख दी और आसन पर बैठ कर बोलीं, 'आपके पूर्वजों ने यह तलवार हम लोगों को दी थी। भगवान की दया से मेरे पूर्वजों ने और मैंने भी इसका उचित उपयोग किया। परन्तु अब आपकी कृपा से यह तलवार वंचित हो गई है, इसलिए इसे वापिस लीजिए।'

दरबार में उपस्थित सब सरदार स्तम्भित रह गए।

रावसाहब ने कहा, 'आपके पुरखों ने और आपने स्वराज्य की स्थापना के लिए जो कुछ किया है वह चिरस्मरणीय है। आपने झांसी में अंग्रेजों का जैसा करारा मुक़ाबिला किया वह अवर्णनीय है। कोंच से हमारी सेना और युद्ध सामग्री को बचाकर ले आने में आपका बहुत बड़ा हिस्सा है। आप सरीखा निपुण सेनापति शायद ही कोई हो। आप जो योजना बतलावें हम लोग शिरोधार्य करेंगे। आप इन सब रणशूर रईसों को अपना सहयोग देने की कृपा कीजिए और अपने स्वराज्य के प्रण का स्मरण करिए।'

रानी बोलीं, 'कोंच की लड़ाई में आपका प्रबन्ध बहुत रद्दी था। सेना में कोई व्यवस्था नहीं है। अंग्रेज़ी सेना अपनी अच्छी व्यवस्था के कारण ही विजय प्राप्त करती है। हमारे सैनिक शूरवीरी और पराक्रम में अंग्रेज़ों से बढ़े चढ़े हैं, परन्तु व्यवस्था और दूरदर्शी योजना की कमी के कारण उनका शौर्य विफल हो जाता है। झांसी की सहायता के लिए आपकी इतनी बड़ी सेना आई, परन्तु अव्यवस्था के कारण हार खाकर लौट गई। जब तक आप अपनी सेना का अच्छा प्रबन्ध नहीं करेंगे और संयम से काम न लेंगे, युद्ध में यश प्राप्त न होगा। अव्यवस्था का कारण है एक व्यक्ति को मुख्याधिकारी न मानना और अपनी अपनी मनचाही योजना को काम में लाना तथा समय को व्यर्थ बातों में नष्ट करना।'

रावसाहब तलवार लेकर उठा। रानी के सामने विनम्र भाव से खड़ा हुआ।

'आप कृपापूर्वक तलवार ग्रहण करें', रावसाहब ने कहा, आपकी सम्मति बिलकुल उचित है और मानी जायगी।

रानी ने तलवार ले ली और म्यान में डाल ली।

उपस्थित सरदारों ने रावसाहब को प्रधान सेनापति नियुक्त किया। उसने स्वीकृत कर लिया। सरदारों ने रानी को प्रधान सेनापति न बनाकर इतिहास में अपनी पराजय पेशगी लिख दी। परन्तु योजना बनाने के लिए रानी से अनुरोध किया। रानी ने योजना बतलाई। उसके अनुसार मोर्चे बनाए गए। तोपें रक्खी गईं। गोलन्दाज़ नियुक्त और सरदार विभक्त किए गए। रानी को लालकुर्ती वाले ढाई सौ सवार दिए गए और वाम पार्श्व की रक्षा का भार।

[८२]

रानी ने निर्देशन किया था : 'जो सरदार जिस मोर्चे को बांधे हो वहीं डटकर लड़े, किसी प्रलोभन या उत्तेजन में आकर अपने स्थान को छोड़कर अंग्रेज़ी सेना के ऊपर न झपटे। जब रिसाले या पैदल पल्टन को आदेश हो तभी वह बतलाई हुई दिशा में हमला करे।'

रावसाहब ने समर्थन करते हुए कहा था, 'ऐसा ही होगा; ऐसा हो। सब लोग गांठ बांध लेना।'

रावसाहब सहज सन्तोषी और परम महत्वाकांक्षी था। यदि नाना साहब लखनऊ के जय-पराजय के क्रमावर्त में न फँसा होता और कालपी में होता तो वह, लक्ष्मीबाई और तात्या, रोज़ सरीखे अत्यन्त योग्य और रणकुशल सेनापति के लिए भी काफ़ी से अधिक प्रबल बैठते। परन्तु रावसाहब की लोकप्रियता, उसकी उदारता, शिथिलता और सहजवर्ती स्वभाव के कारण थी, न कि योग्यता के कारण। वह प्रधान सेनापति की आज्ञाओं का विधिवत पालन करा ही नहीं सकता था। इस कार्य के लिए तो रानी का सा तेजस्वी और तपस्वी व्यक्तित्व ही ठीक बैठ सकता था।

रोज़ को इस मोर्चाबन्दी का पता आसानी से लग गया। उसने अवगत कर लिया था कि जहां मोर्चादारों से उनका ठिया छुटवा पाया कि गड़बड़ फैल जायगी।

कोंच की मार और रानी की भर्त्सना के कारण पेशवाई सेना अंग्रेज़ों को मार मिटाने के लिए दांत पीस रही थी, अपनी वासना को सहायता पहुंचाने के लिए सेना ने भंग भी खूब पी! रानी का निषेध न चला।

रोज़ का एक छोटा सा दस्ता हल्का तोपखाना लिए आगे आया। कालपी की सेना ने समझा कि रोज़ की सम्पूर्ण सेना आ गई। ठिए छोड़ छोड़ कर उस पर दौड़ पड़े! गोलाबारी हुई। असमय मार काट शुरू हो गई। रानी ने मना करवाया, परन्तु राव नियन्त्रण न कर सका। रोज़ ने मौक़ा ताककर इर्द गिर्द वाले अपने दस्तों द्वारा गोलाबारी शुरू कर दी और

कालपी की सेना का टिए छोड़ देने के कारण अविलम्ब सर्वनाश होने लगा। रईस सेनापतियों ने भागने का विचार किया। रानी ने डाटना-फटकारना व्यर्थ समझ कर उनको धैर्य धराया, कहा, 'अब जहां हो वहीं बने रहो, भगदड़ मत मचाओ मैं इनके तोपखाने को बन्द करती हूं। जिस समय तोपख़ाने बन्द हो जायँ, दो पार्श्वों से घुड़सवार और बीच में पैदल बन्दूक़ची भेजना।'

रानी को केवल ढाई सौ सवार दिए गए थे। ये सवार अपने नेता को पहचान गए थे और उन लोगों की उनके प्रति अपार भक्ति थी। रानी ने इन लोगों के पांच भाग किए और एक एक को देशमुख, गुलमुहम्मद, रघुनाथसिंह, जूही और अपने अधीन रक्खा। मुन्दर उनके साथ उनकी नायबी में रही। रानी ने यमुना के एक टीले की ओट से दूरबीन लगाकर रणक्षेत्र का निरीक्षण, कुछ क्षण किया। वे रोज़ के कमज़ोर बाज़ू को ताड़ गईं।

रानी ने अपने पांचों दस्तों को रोज़ के दाहिने पार्श्व की ओर कुछ दूर जाकर घुमाया, और फिर टूट पड़ीं। जैसे चिड़ियों के ऊपर बाज़। यह आक्रमण अंग्रेज़ों को तूफ़ान की तरह लगा और वे एक दम पीछे हटे। अंग्रेज़ अफ़सर और सिपाही कट कट कर गिरने लगे। रानी ने ऐसे शौर्य, ऐसे विवेक और ऐसे कौशल के साथ युद्ध किया कि अंग्रेज़ों का तोपख़ाना थोड़ी देर के लिए बिलकुल बन्द हो गया। गोलन्दाज़ उस तूफ़ानी हमले से स्तब्ध रह गए! रानी तोप के मुहानों पर बीस फ़ीट के फ़ासले तक मारती काटती पहुंच गईं!! अब कालपी की सेना आगे बढ़ी। परन्तु सैनिक इतनी भंग पिए हुए थे कि आज्ञाओं का ठीक ठीक पालन ही नहीं कर सकते थे। केवल रानी का एक अद्भुत पराक्रम इन सैनिकों के नशे को और उनके सरदारों की मूर्खता को कुछ ढक रहा था—रानी ने अपने घोड़े की लगाम मुँह में दाबी और दोनों हाथों से तलवारों के बज्रपात करने लगीं। पेशवा—सेना बहादुरी के साथ लड़ने

लगी। जो अंग्रेज़ गोलन्दाज़ रानी और उनके दस्तों द्वारा कटने से बचे, वे मैदान छोड़कर भागे। ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ने देखा कि बाज़ी खिसकी। तुरन्त वह हलके तोपखाने लिए पीछे से आगे आया। गोलाबारी की। भागते हुए गोलन्दाज़ों को उत्साहित किया। रोज़ एक जगह ऊँट-तोपखाना लिए डटा था।

अपनी सेना की भगदड़ का समाचार पाते ही वह इस तोपखाने को लेकर दौड़ा आया और छोटे गोलों की बौछार पर बौछार की। कालपी की सेना तितर-बितर होने लगी। अपने दस्तों को लेकर रानी ने रोज़ के निरोध का प्रयत्न किया, परन्तु भंगेड़ी सिपाहियों को भंग ने भागने की सुझाई। उनके पैर उखड़ गए। विवश होकर रानी को अपने दस्ते रण-भूमि से हटाने पड़े। अपेक्षाकृत उनके सैनिक कम हताहत हुए। जो बचे उनको लेकर रानी पेशवा की छावनी में लौट आईं।

दो दिन और मारकाट हुई, परन्तु उसको लड़ाई नहीं कह सकते। पेशवा की सेना के काफ़ी सिपाही अन्तिम विजय से निराश होकर अपने अपने गांवों को भाग गए।

दो दिन पेशवा ने लष्टम-पष्टम गोलाबारी अंग्रेज़ों से बदली। इस सेना में अधिकतर लुटेरे और बदमाश रह गए थे। जैसे ही उन्होंने देखा कि पेशवा हारे, कालपी की लूट शुरू कर दी और शकर की दूकानों को पहले घात लगाई।

पेशवा ने कालपी छोड़ी। थोड़ी सी सेना उनके साथ लगी गई। रानी अपने पांच दलपतियों तथा अपनी बची बचाई छोटी सी लालकुर्ती सेना सहित निकल गईं। यह हारा थका दल गोपालपुरा में, जो ग्वालियर के नैऋत्य में ४६ मील की दूरी पर था, जा टिका। कांच की पराजय के उपरान्त तात्या अपने पिता के पास जालौन चला आया था। कालपी के पराभव का वृत्तान्त सुनकर उसको ग्लानि हुई और वह पेशवा के पास गोपालपुरा पहुंच गया। बांदा का नवाब भी इधर उधर भटकता हुआ

गोपालपुरा आ गया। राजा मर्दनसिंह और राजा बखतबली इसके उपरान्त लड़ाई के नक़शे में फिर नहीं आते। कुछ समय बाद राजा बखतबली को अंग्रेज़ों ने क़ैद करके लाहौर भेज दिया। मर्दनसिंह भी क़ैद हो गया।

रोज़ को कालपी में पेशवा की बहुत बहुमूल्य युद्ध सामग्री मिली। पन्द्रह तोपें, सात सौ मन बारूद, असख्य बन्दूकें और तलवारें और नए तर्ज के हथियार ढालने-बनाने की विलायती मशीनें हाथ लगीं। रोज़ को यह विजय चौबीस मई के दिन मिली। यही दिवस विक्टोरिया के जन्म का था। इसलिए अंग्रेज़ों ने धूमधाम के साथ कालपी पर अपना झण्डा चढ़ाया और क़तल तथा लूट से पाई हुई शकर के प्रसाद के जशन मनाए। और फिर तीन दिन कालपी को मुस्तैदी के साथ लूटा।

जनरल रोज़ ने नर्मदा के उत्तर भाग को कालपी तक अपने अधीन कर लिया। नर्मदा के उत्तर पूर्वीय भाग को दबाता हुआ करवी, महोबा, बांदा इत्यादि को लूटता-कुचलता विटलाक रोज़ से कालपी में आ मिला। राजपूताने की ओर से कर्नल स्मिथ अपनी सेना लिए हुए आगरा, ग्वालियर की दिशा में आ रहा था। 'बलबाइयों' के पकड़े जाने के लिए गांव गांव में इनामी इश्तहार बांटे जा रहे थे।

रावसाहब के पास रईस और सरदार काफ़ी थे, परन्तु सेना बहुत कम थी। तोपें नहीं थीं, सामान नहीं बचा था। और व्यवस्था तो कभी भी न थी।

दिन भर लू चली। रात को भी काफ़ी गरम हवा चल रही थी। तारे धूल की पतली चादर से ढके हुए थे। गोपालपुरा के एक बगीचे में रावसाहब, तात्या, बांदा के नवाब इत्यादि आगे की योजना के आकार-प्रकार बना-बिगाड़ रहे थे। रात अँधेरी थी। पास में कोई उजाला न था। इसलिए किस के चेहरे पर क्या गुज़र रही थी, कोई नहीं देख सकता था।

रानी लक्ष्मीबाई अपने शिविर में थीं। उस दरबार में न थीं।

रावसाहब ने कहा, 'किसी प्रकार नागपूर की ओर पहुंच पावें तो शीघ्र सैन्य संग्रह हो। इन्दोर की छावनी से भी सहायता मिले।'

बांदा के नवाब ने अपनी घबराहट प्रकट की, 'हैदराबाद के निज़ाम के मारे नागपूर के पड़ौस में ठहर पाना दूभर हो जायगा।

तात्या बोला, 'निज़ाम का कोई भय नहीं। वहां की जनता तुरन्त हमारा साथ देगी।'

रावसाहब—'वहां से महाराष्ट्र सरक जाने में बड़ा सुभीता रहेगा। पहाड़ियां, क़िले, घाटियां और नदियां बारगी और भूँबी—दोनों प्रकार की लड़ाइयां के लिए बहुत उपयोगी हैं।'

नवाब - परन्तु वहां तक पहुंचेंगे कैसे ?'

तात्या—'पहुंचाने का ज़िम्मा मैं लेता हूँ।'

नवाब—'जासूसों से जो खबरें मिली हैं, उनसे हर हालत में इस नतीजे पर पहुंचने के लिए विवश हूँ कि हम लोग पिंजड़े में फँस गए हैं।'

रावसाहब—'अवध की तरफ चलना ज्यादा अच्छा होगा। अवध पास है। मार्ग सीधा है। वहां की जनता अदम्य है। लखनऊ का पतन हो गया तो क्या हुआ। नाना साहब अभी वहां हैं। बेगम साहब भी हैं।'

तात्या—'अवध में हम लोग बहुत काम कर सकते हैं। एक बाधा अवश्य है।'

रावसाहब—'वह क्या ?'

तात्या—'उस प्रदेश में क़िले बहुत कम हैं।'

नवाब—'एक बड़ी बाधा और है। अंग्रेज़ों की बेशुमार पल्टनें अवध में फैल गई हैं, और ज्यादा कलकत्ते से आ रही हैं।'

एक सरदार—मेरी समझ में तो यह आता है कि छोटी छोटी टुकड़ियों में बटकर, इधर-उधर फैल जाओ और अंग्रेज़ी इलाक़े की लूटमार शुरू करदो।'

दूसरा सरदार—'और नये नये लोगों को इन टुकड़ियों में भर्ती करते जाओ। एक दिन काफ़ी बड़ी सेना बिना परेशानी के अपने पास हो जावेगी तब हम लोग अंग्रेज़ों को चित कर देंगे।'

तात्या—'इसमें दिन कितने लगेंगे?'

रावसाहब—'समय की चिन्ता क्या है? अंग्रेज़ी सेना में फिर कोई बलवा होगा। तोपें हाथ आजायेंगी और काम बन जायगा।'

नवाब—'लेकिन तोपें अब हिन्दुस्थानी फ़ौज के हाथ में कभी नहीं आवेंगी। तोपखानों को अंग्रेज़ अपने हाथ में रखने लगे हैं।'

एक सरदार—'परन्तु जनता के पास तो हथियार हैं।'

नवाब—'जब तक आप फ़ौज इकट्ठी करेंगे तब तक अंग्रेज लोग सारी जनता के हथियार अपने मालखाने में रखवा लेंगे।'

रावसाहब—'कहीं कालपी फिर वापिस मिल जाय तो सब दिक्कतें दूर हो जाँय।'

नवाब—'हम तो चाहते हैं कि दिल्ली और लखनऊ भी हाथ में आ जांय, मगर चाहने से होता क्या है?'

सरदार—'मेरा कहना मानिए। टुकड़ियों में बटकर लूटमार शुरू कर दीजिए।'

तात्या—'जनता साथ न देगी।'

रावसाहब—'तुम अवध के लड़ाकों को भर्ती करके यहां ले आओ।'

तात्या—'जो आज्ञा।'

नवाब—'लेकिन इसमें तो वक्त लगेगा, और, तब तक हम आप क्या करेंगे?'

रावसाहब—'तो फिर राजा बखतबली और राजा मर्दनसिंह को बुन्देलखण्डी सेना सहित फिर बुलवाओ।'

नवाब—'उनको हमारा साथ देना होता तो गोपालपुरा में आज कभी के आ जाते।

रावसाहब—'तब फिर क्या किया जाय?'

सरदार—'राजपूताने की तरफ़ चलिए। वहां की छावनियों ने अभी तक कुछ नहीं किया है।'

तात्या—'वहां की छावनियां बहुत करके अपना साथ देंगी।'

रावसाहब—'मेरा मन दक्षिण भारत के लिए बहुत बोलता है।'

नवाब—'परन्तु वहां तक पहुंचेंगे कैसे?'

तात्या—'मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ कि पहुँचा मैं दूँगा।'

नवाब—'मैं भी ज़रा पहले अर्ज कर चुका हूँ कि झांसी, सागर, सीहोर वग़ैरह में बहुत सी अंग्रेज़ी फ़ौज है और हम यहां पिंजड़े में फँस गए हैं।'

सरदार—'तब फिर अंग्रेज़ों के हाथ अपने को सौंप दिया जाय?'

नवाब—'यह तो मैंने हरगिज़ नहीं कहा।'

रावसाहब—'तब फिर किसी अंग्रेज़ छावनी पर एकदम टूट पड़ें और उसको चीरते हुए आगे बढ़कर भाग्य की परीक्षा करें।

नवाब—'परन्तु बिना बड़ी तोपों की मदद के छावनी के ऊपर हमला करना मौत के मुँह में जाना है।'

रावसाहब—'यदि तात्या महाराष्ट्र में जाकर जनता जाग्रत कर दे तो अंग्रेज़ वहां उलझ जायँगे और तब हम सरपट महाराष्ट्र में पहुंच सकते हैं।'

नवाब—'लेकिन फिर वही सवाल उठता है कि तब तक हम लोग यहां क्या करें।

तात्या—'रानी साहब की राय ली जाय।'

रावसाहब—'मैं रानी साहब की राय की बहुत क़दर करता हूँ। वे बहुत अच्छी सैनिक हैं और लड़ाई के मैदान में विजय भी प्राप्त करा सकती हैं, परन्तु स्त्री हैं और जितना संसार हम लोगों ने नापा है उतना उन्होंने नहीं।'

नवाब—'इस पर भी उन्होंने दस महीने खूबी के साथ झांसी का राज्य किया। ऐसा कि प्रजा उनपर कुरबान हो गई।'

रावसाहब—'यह ठीक है, बिलकुल ठीक है। सलाह लेने में कोई हर्ज़ नहीं। मानना न मानना अपने हाथ में है।'

तात्या—'उनको सवेरे लिवा लाऊँ?'

सरदार—'सवेरे के ज़रा बाद। सवेरा होने में बहुत देर भी नहीं है। वे अपने भजन-पूजन से निवृत्त हो जायँगी, तब तक अपुन लोग ज़रा नशा-पत्ता करेंगे। कई दिन से नहीं छनी है। कहीं से कोई अच्छी सलाह न मिली तो विजया भवानी सिर पर चढ़कर सब कुछ बोल-बता देंगी।'

रावसाहब—'बड़ा अच्छा है। अभी अंग्रेज़ हम लोगों से काफ़ी दूर हैं। हवा पर बैठकर तो आए नहीं जाते। परन्तु भाई गहरी न छने। नहीं तो रानीसाहब कुछ ज्यादा डाट-फटकार करेंगी।'

इस तरह रात भर यह विवाद जारी रहा, परन्तु ये लोग किसी भी निश्चय पर न पहुच सके।

प्रातःकाल के उपरान्त तात्या रानी को लिवा लाया। तात्या ने उनको रात के अधिवेशन का संक्षेप में वृत्तान्त सुना दिया था।

लोग भंग पीकर निवृत्त हो गए थे। हुक्के गुड़गुड़ा रहे थे कि वे आ गईं। लोग उनका अदब करते थे, इसलिए हुक्के हटा दिए गए।

पेशवाई सेना की अधोगति का उनको पता था। तो भी उन्होंने अपने क्षोभ को दबाकर परिस्थिति को भली भांति समझने के लिए प्रश्न किए। जो उत्तर मिले उनका निचोड़ वही था जो रात की बैठक में बांदा के नवाब ने बतलाया था—'हम लोग पिंजड़े में फँस गए हैं।'

रानी ने कहा, अब तक हम लोग जहां जहां अंग्रेज़ों से जम कर लड़ पाए, वहां वहां क़िलों का आश्रय लेकर। फिर किसी मज़बूत क़िले को हाथ में करना चाहिए। तोपें सहज ही ढल जायँगी। काम चालू हो जायगा।'

रावसाहब—'परन्तु झांसी और कालपी के क़िले तो फिर नहीं मिल सकते-कम से कम अभी हाल हाथ नहीं आ सकते।'

रानी—'इनको कुछ दिनों विचार से अलग रखिए।'

तात्या—'नरवर का क़िला बहुत अच्छा है। निकट सिन्ध नदी है। आसपास पहाड़ और जंगल हैं।

नवाब—करेरा का भी क़िला अच्छा है।'

रानी—'न।'

रावसाहब—'तब फिर कौनसा क़िला ?'

रानी—'ग्वालियर का। वही यहां से अत्यन्त निकट है।'

रावसाहब—'ग्वालियर का क़िला !'

नवाब—'ग्वालियर का !'

रानी—'हां ग्वालियर का। ग्वालियर की वस्तुस्थिति का पुनः अनुसन्धान करके तुरन्त ग्वालियर पर आक्रमण कर देना चाहिए। राजा और वहां के दो तीन सरदार अंग्रेज़ कम्पनी के पक्षपाती हैं। परन्तु सेना और जनता नहीं है। सेना यदि हमारा पक्ष प्रबलता के साथ न भी पकड़ेगी तो ढुलमुल अवश्य रहेगी। ग्वालियर में बनी बनाईं, सजी सजाईं, बढ़िया तोपें, गोले, गोली, सैकड़ों मन बारूद और अन्य प्रकार की युद्ध सामग्री तथा अटूट कोष है।'

नवाब—'लेकिन···'

रावसाहब—'हां, परन्तु···'

रानी—'किन्तु, परन्तु कुछ नहीं। बिना क़िले के कोई भी प्रयास आत्म-वध के समान होगा, और सिवाय ग्वालियर के क़िले के हमारे लिए और सब क़िले इस समय स्वप्न हैं।'

रावसाहब—'बात तो ठीक कह रही हैं बाईसाहब, आप भी सोचिए नवाब साहब। क्यों तात्या ?'

नवाब—'मैं रानी साहब की राय को मानने के लिए तैयार हूँ। लेकिन ग्वालियर की सेना या कुछ सरदारों को, चढ़ाई के पहले मिला लेना चाहिए।'

तात्या—'वहां का हाल मुझको मालूम है। माहुरकर, बलवन्तराव और दिनकरराव दीवान के सिवाय और सब सरदार स्वराज्य-स्थापना के पक्ष में हैं। सेना का काफ़ी अंश हमारा साथ देगा।'

रानी—'एक बार फिर जाओ। शीघ्र जाओ और पूरा पता लगा कर शीघ्र आओ।'

रावसाहब—'शीघ्रता के लिए तो तात्या शेरों का शेर है।'

आज्ञा पाकर तात्या तुरन्त ग्वालियर की ओर रवाना हुआ।

[८३]

सन्ध्या होते ही रानी थोड़ी देर के लिए ध्यान मग्न हुईं। ध्यान के उपरान्त वे शिविर के बाहर निकली थीं कि रामचन्द्र देशमुख, रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद आगए।

रानी के पास उस समय लाल कुर्ती वाले केवल दो सौ सवार रह गए थे। हिन्दू और मुसलमान। इस रिसाले की प्रधान सेनाध्यक्ष रानी थीं और उनके अधीन यूथपति ये तीनों पुरुष और वे दो स्त्रियां—जिनमें मुन्दर तो रानी के साथ छाया की तरह रहती थी। यह छोटी सी सेना उनकी परम भक्त थी और संयमनिष्ठ।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'सरकार दीवान जवाहरसिंह अपने इलाके के बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। उन्होंने कुछ सेना इकट्ठी की थी। कम्पनी के दस्ते उनको पछिया रहे हैं। वे अब इस ओर शायद ही आ सकें।'

गुलमुहम्मद बोला, 'सरकार अम अपने मुलक पहुंच पाए तो इतना पठान लाए कि दुश्मनों को कच्चा चबा जाए।

देशमुख ने कहा, 'सिपाही आगे के हुकुम की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

रानी बोलीं, 'प्रधान सेनापति रावसाहब पेशवा हैं। मैं इस समय कुछ नहीं बतला सकती। परन्तु शीघ्र कुछ होगा, यह कह सकती हूँ।'

देशमुख—'अपना रिसाला लड़ने के लिए उकता रहा है।

रानी –'यह सैनिक का एक दोष है, गुण नहीं। उकताना नहीं चाहिए। उनको समय पर भोजन, आराम, वेतन मिलता जा रहा है?'

उन तीनों ने हां में उत्तर दिया।

रानी ने कहा, 'किसी समय भी, तनिक सी भी कमी जान पड़े, मुझसे तुरन्त कहना। मेरे पास अभी बहुत से हीरे जवाहर हैं। तुम लोगों को और तुम्हारे रिसाले को किसी प्रकार का कष्ट न हो, मैं यही चाहती हूँ।'

'कभी नहीं हो सकता,' कहकर वे लोग चले गए। भोजन करने के उपरान्त रानी ने शयन किया। मुन्दर पैर दाबने लगी।

रानी ने पैर खींचकर कहा, 'तेरी यह आदत न जानें क्यों नहीं जाती। मेरा शरीर नहीं दूख रहा है। उस दिन नहीं दूखा जब झांसी से कालपी आई थी। आज तो कोई परिश्रम ही नहीं किया है।'

'हां, नहीं जाती,' मुन्दर ने हठपूर्वक और इठला कर कहा, 'चाहे जैसी पीड़ा सिर पर आजाय आप कभी कहती थोड़े ही हैं।'

मुन्दर पैर दाबने लगी।

'तो तू क्या जन्म भर मेरे पैर दाबा करेगी?'

'जी हाँ, जन्म भर।'

'रिसाले की कर्नल होकर?'

'जी हाँ, जब एक दिन जनरल हो जाऊँगी, तब भी इन पैरों का दाबना नहीं छोड़ूँगी।'

'पैरों के दाबने वाले जनरल का नाम सुनकर लोग क्या कहेंगे?'

'जिन लोगों को यह न मालूम होगा कि इन चरणों की धूल में जनरल बनाने का गुण है, वे भले ही कुछ कहें!'

'कदाचित् ऐसा हो, परन्तु मेरी वाणी में यह गुण नहीं है। इन लोगों को सम्मति देती हूं। हाँ—हाँ कर देते हैं, परन्तु करते मन मानी हैं। कालपी का युद्ध क्या हारने योग्य था?'

'इनमें कोई रण–पण्डित है ही नहीं।'

'एक है—तात्या टोपे, परन्तु उसकी चलती नहीं और वह आवश्यकता से अधिक आज्ञानुवर्ती है। प्रतिवाद करना जानता ही नहीं।'

'वे कालपी के युद्ध में नहीं थे। घर चले गए थे।'

'उस समय उसको क्षोभ हो गया था। कारण को उघारना व्यर्थ है। तू जानती है, यदि इन असंख्य सेनापतियों में गांठ की कोई बुद्धि होती तो इनके व्यसन न खटकते, परन्तु व्यसनी हैं और मूर्ख हैं।'

'यही बात जूही कहती है। अपने अन्य सरदार भी कहते हैं।'

'गुलमुहम्मद बात करने में जैसा लट्ठ जान पड़ता है वैसा वास्तव में नहीं है। वह चतुर और वीर दलनायक है। वैसे ही देशमुख और रघुनाथसिंह हैं।'

'हाँ सरकार !'

'एक बात बतला मुन्दर।

'आज्ञा सरकार।'

'तू संसार में सबसे अधिक किसको चाहती है ? सच सच कहना।'

'सच कहती हूं। भगवान जानते हैं—'मैं आपको सबसे अधिक चाहती हूँ।'

'मेरे उपरान्त किसको ?'

मुन्दर ने उनके पैर पकड़ लिए। सिर नीचा कर किया।

'और कौन है सरकार ?'

'नाम बतलाऊँ ?'

'नहीं।

'मुन्दर, तू विवाह करना।'

'जब सरकार स्वराज्य स्थापित कर चुकगा तब।'

'स्वराज्य तो देर सवेर स्थापित होगा ही। तू विवाह के लिए क्यों रुके ?'

'वह जीवन का मुख्य कार्य नहीं है।'

'यह तेरी इच्छा पर निर्भर है, परन्तु मेरी अनुमति है।'

'असंभव सरकार। मेरा प्रण है।'

'जूही ने भी प्रण किया है। उस पर मुझको दया आती है।

'उसने मरणपर्यन्त कौमार्य व्रत का प्रण किया है।'

'असंभव नहीं है।'

'मैं सरकार से एक बात पूछना चाहती हूं।'

'पूछ'

'जितनी निर्भय आप हैं, क्या और कोई भी हो सकता है ?'

'अवश्य। कुछ कठिन नहीं।'

'सो कैसे?'

'सहज ही। काफ़ी शरीरिक श्रम कर, सहज ही ध्यान और विश्वास से सहज हो जायगा।'

मुन्दर गद्गद् हो गई। कुछ क्षण चुप रहने के बाद यकायक बोली,

'बाईसाहब, मैं आपके समक्ष मर जाऊँ, तो मुझे बड़ा सुख होगा। मोतीबाई की सी मृत्यु की आराधना करती हूँ।'

'जो बात मैंने बतलाई वह इससे कहीं बढ़कर है।'

[८४]

सन् १८४४ में अंग्रेज़ों ने सिन्धिया की सेना को, जो होलकर सिन्धिया के परस्पर युद्धों के कारण पहले ही क्षीण हो चुकी थी, पराजित किया था। तब से ग्वालियर को केवल दस सहस्र सिपाही रखने का अधिकार रह गया था और तब से लगातार अंग्रेज़ रेज़ीडैंट ग्वालियर का शासन सूत्र अपने हाथ में रक्खे रहा था। सन् १८५३ में जयाजीराव को शासनाधिकार मिल गए, परन्तु सूत्र रेज़ीडेंट के ही हाथ में रहा। बची खुची सलाह सम्मति के लिए आगरा में लैफ्टिनेंट गवर्नर था ही !

ग्वालियर में सिन्धिया की दस सहस्र सेना के अतिरिक्त, पोषित एक अंग्रेज़ी सेना भी थी। इस पोष्य (सबसीडियरी) सेना ने भी सन् ५७ के विद्रोह में भाग लिया। तात्या यहां आया-जाया ही करता था। यह सेना तात्या के साथ कानपूर पहुंच गई। परन्तु इस सेना ने जयाजीराव और दीवान दिनकरराव के कौशल के कारण ग्वालियर स्थित अंग्रेज़ों का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाया और वे सुरक्षित आगरा पहुँचा दिए गए, जयाजीराव ने किसी प्रकार अपनी सेना को शान्त रक्खा। यदि ग्वालियर राज्य अंग्रेज़ों के विरुद्ध हो जाता, तो निज़ाम और सिक्ख राजाओं के कम्पनी-भक्त रहते हुए भी, अंग्रेज़ी राज्य हिन्दुस्थान में किसी प्रकार भी नहीं टिक सकता था। ग्वालियर कोई बड़ा प्रबल राज्य नहीं था, परन्तु ग्वालियर के विरुद्ध होते ही, अंग्रेज़ी राज्य के ख़िलाफ़ स्वराज्य का संक्रामक गुण इतनी प्रचंडता और वेग के साथ आसपास के राज्यों, विन्ध्यखंड और दक्षिण भारत में, फैलता कि अंग्रेज़ी राज्य उससे बच ही नहीं सकता था।

जब तात्या ग्वालियर पहुंचा-तब उसने वहां की सेना के एक बड़े अंग और अधिकतर सरदारों को रानी तथा पेशवा के बहुत कुछ अनुकूल पाया। सिन्धिया सरकार को, पेशवाई सेना के गोपालपूर में आजमने की सूचना मिल गई थी। गवर्नर जनरल को तुरन्त समाचार दिया गया और अपनी दृढ़ तथा प्रबल राजभक्ति का पक्का आश्वासन।

गवर्नर जनरल लार्ड कैनिंग ने इङ्गलैंड को तार दिया, यदि सिन्धिया बलवाइयों में शामिल हो जाय तो मुझको कल ही बँधना बोरिया बांधकर यहां से चल देना पड़ेगा।'*

तात्या ने रावसाहब इत्यादि को ग्वालियर का हाल दूसरे दिन लौटकर सुनाया। रानी ने तुरन्त आक्रमण कर देने की सलाह दी।

रावसाहब ने सिन्धिया सरकार को एक पत्र लिखा जिसका तात्पर्य यह था कि हम दक्षिण की ओर स्वराज्य–स्थापना के प्रयत्न में जारहे हैं। आप हमारे पुराने नाते का स्मरण करिए और हमें सहायता दीजिए।

दिनकरराव ने जो उत्तर दिया, वह गोल मटोल था। न उसमें हामी थी और न इनकार। दिनकरराव ने रेज़ीडेंट को सूचना भेज दी।

पेशवा की सेना कालपी के युद्ध के चार दिन बाद ग्वालियर राज्य में धस गई। सिन्धिया सरकार का एक अफ़सर चारसौ पैदल और डेढ़सौ घुड़–सवार लेकर रोकने के लिए पहुंच गया। वह ज़रा सी डाट फटकार में ही पीछे हट आया। दो दिन बाद रावसाहब की सेना ग्वालियर से नौ मील की दूरी पर एक गांव के पास ठहर गई। रावसाहब ने सिन्धिया को एक पत्र फिर सहायता के लिए लिखा। इस पर ग्वालियर की राजसभा में विवाद हुआ। राजा का इरादा था 'बलवाइयों' पर तुरन्त हल्ला बोल देने का। दीवान की नीति थी ह्यूरोज़ के आने तक 'बलवाइयों' को किसी बहाने अटकाए रखना। और अपनी सेना को किसी प्रकार क़ाबू में रखना। राजा ने नहीं माना और पहली जून को मुरार के पूर्व बहादुरपुर गांव के निकट पेशवा का मुक़ाबिला करने के लिए छः हजार पैदल, बारह सौ भड़कीले सवार और आठ आधुनिक बड़ी तोपें लेकर मोर्चा जा पकड़ा। प्रातः काल होते ही सिन्धिया ने पेशवा की ओर गोले फेकने शुरू कर दिए। जब तक सिर पर गोले नहीं पड़े,

---

*"If the Scindhia joins the mutiny, I shall have to pacy-off to-morrow."

रावसाहब और तात्या ने भी समझा कि ग्वालियर की तोपें पेशवा की अगवानी के लिए सलामी दाग़ रही हैं! उस क्षण पेशवा की सेना में लड़ाई की कोई तैयारी न थी। रानी की आज्ञा पर रघुनाथसिंह ने तुरन्त तैयार हो जाने का बिगुल भी बजाया, परन्तु उस नक्कारखाने में इस तूती की आवाज़ को कौन सुनता था? जब सिन्धिया के गोलन्दाज़ों ने पेशवा की छावनी पर ताक ताक कर गोलाबारी की, तब भगदड़ मच गई।

परन्तु रानी, उनके दलपति और सवार पहले से कमर कसे तैयार थे। तात्या टोपे को छावनी का बरकाव करने के लिए कहकर रानी लक्ष्मीबाई सिन्धिया सरकार की सेना पर केवल दो सौ सवार लेकर टूट पड़ीं। कुछ गोलन्दाज़ मारे गए, कुछ तोपें छोड़कर भागे। तात्या ने तुरन्त अपनी छावनी के दो भाग करके उसको गतिवान किया और उसे एक ओर हटा ले गया—वह इस विद्या में अत्यन्त निपुण था। लक्ष्मीबाई के पराक्रम को, और तात्या की दोनों टुकडियों को दूसरी दिशा से आता हुआ देखकर, सिन्धिया के वे छः हज़ार पैदाल मैदान खाली कर गए, परन्तु बारह सौ भड़कीले सवार अब भी हाथ में थे। इनपर लक्ष्मीबाई के उन कसदार दो सौ सवारों का सपाटा पड़ा। थोड़ी देर तक तलवार चली और ख़ूब चली, परन्तु वे रानी के सवारों की टक्कर को न झेल सके; कटने और भागने लगे। जयाजीराव को तुरन्त मैदान छोड़कर भागना पड़ा। पहले राजमहल का रास्ता पकड़ा, फिर वह और दिनकरराव, दो एक विश्वसनीय सरदारों को लेकर धौलपूर होते हुए आगरा पहुंचे। वहाँ क़िले में उन लोगों को शरण मिली।

[८५]

राजा के आगरा चले जाने पर रानियां नरवर के क़िले में चली गईं। पेशवाई सेना ने हर्ष और गर्व के साथ नगर में प्रवेश किया। ग्वालियर की बिखरी हुई फ़ौज एकत्र हो गई, उसने पेशवा को तोपों की सलामी दी और उसकी अधीनता में आगई। पेशवा बड़े ठाट के साथ माङ्गलिक वाद्य बजवाता हुआ, सिन्धिया के राजमहल में पहुंचा और वहीं डेरा डाला। रानी लक्ष्मीबाई ने अपना शिविर नौलखा बाग़ में रक्खा। पेशवा के साथी सरदार शहर के भिन्न भिन्न महलों में जा उतरे। तात्या के दस्ते के लिए क़िले वालों ने फाटक खोल दिए। बहुत सी सामग्री हाथ आ गई। क़िले पर पेशवा का झण्डा फहराने लगा। सिन्धिया का ख़ज़ाना कब्ज़े में आ गया। अब पेशवा के बराबर था ही कौन?

पेशवाई सेना की कम्पनी-विद्रोही भाग ने रेज़ीडेन्सी में आग लगाई और उसका माल-असबाब लूट लिया। दीवान दिनकरराव, सरदार बलवन्तराव और सरदार माहुरकर की हवेलियों को भी, जो अंग्रेज़ों के पक्षपाती थे, खाक कर दिया। एक बार मन का बन्धेज उठा कि फिर उसमें सीमाओं की पहिचान न रही—शहर का लूटना भी आरम्भ कर दिया। परन्तु पेशवा को ठीक समय पर मालूम हो गया। उसने तात्या को भेजकर यह लूटमार बन्द करवा दी।

ग्वालियर के दरबारी पेशवा के अनुकूल थे और जनता का मन उसके साथ था। विजय के हर्ष और गर्व ने उसकी छाती और दिमाग़ को फुला दिया था, इसलिए क़ायदे के साथ सिंहासनारूढ़ होने का निश्चय किया। ज्योतिषियों ने मुहूर्त शोध दिया। पेशवा की स्वराज्य-कामना अपने निज के उत्थान के रूप में पलट गई।

तीसरी जून को फूलबाग़ में एक विशाल दरबार किया गया।

पेशवा ने राजसी कपड़े पहिने। कानों में मोतियों के चौकड़े, गले में मोती-जवाहरों के कंठे। शान के साथ चोबदारों के प्रणाम लेता हुआ,

मङ्गलध्वनि के साथ सिंहासनारूढ़ हो गया! सरदारों ने ताज़ीम दी। पेशवा ने उनका अभिनन्दन किया और खिलतें बख्शीं। अष्टप्रधान और एक प्रधान मन्त्री मुक़र्रर किए। तात्या टोपे को प्रधान सेनापति। अपने फ़ौजियों को बीस लाख रुपया इनाम बांटा। असंख्य ब्राह्मणों के भोजन का प्रबन्ध करवाया। सहस्त्रों व्यक्तियों को तो रसोई बनाने के लिए ही नियुक्त करना पड़ा! भङ्ग-बूटी और शक्कर बादाम की पूरी योजना कार्यान्वित हुई!

आनन्द के इस तूफ़ान में यदि कोई नहीं पड़ा तो लक्ष्मीबाई और उनके पांच नायक—उनकी लालकुर्तीसेना अवश्य इनाम की भागी बनी।

ग्वालियर का गायन—वादन शताब्दियों से प्रसिद्ध रहा है। इसलिए उसका अखण्ड उपयोग किया जाने लगा। नृत्य और गायन से दिन और रात ओतप्रोत हो गए। ग्वालियर की ऐसी कोई भी नर्तकी और गायिका न थी, जिसको अपने कलाकौशल के दिखलाने का क़ाफ़ी अवसर और समय न मिला हो। कवि–सम्मेलन और मुशायरे भी हुए, जिनमें कवि–कल्पना ने शब्दों के पुल बाँध बाँधकर, ज़मीन आसमान एक कर दिए। कोई पेशवा की तुलना रामचन्द्र जी के साथ कर रहा था और कोई इन्द्र के साथ। दूसरी ओर भांडों की नक़लें जारी थीं, जिनसे परिहास और अट्टहास के फ़व्वारे छूट रहे थे।

रानी किसी उत्सव में शामिल नहीं होती थीं। इस वैराग्य वृत्ति के कारण उनको उत्सवों में बुलाया ही नहीं जाता था।

तात्या के मन के कोने में से एक दबी हुई वासना उभड़ पड़ी और वह भी अपने स्वामी पेशवा के साथ नृत्य–गान के रस में डूब गया।

नृत्य–गान के एक बड़े उत्सव में रानी के सरदारों को हठपूर्वक बुलाया गया। रानी ने अनुमति दे दी। मुन्दर नहीं गई। बाक़ी गए।

उत्सव में ग्वालियर की चुनी हुई प्रसिद्ध नर्तकियाँ और गायिकाएँ बुलाई गईं। गायन के साथ साथ नृत्य भी हुआ।

पेशवा ने आज्ञा दी, 'गायन और नृत्य के साथ पूरा हाव–भाव तो दिखलाओ।'

उन्होंने ब्योरे के साथ विविध प्रकार का हावभाव प्रदर्शन आरंभ किया।

जूही मन लगाकर देख रही थी। गायन के तोड़ों को वह सूक्ष्मता के साथ जाँच रही थी। ताल के परनों के साथ उसके पैर की उँगलियाँ घूम जाती थीं और समपर सिर हिल जाता था। एक जगह नर्तकी, पखावजी के विलक्षण कौशल के कारण क्षण के एक अंश के पहले ही समपर घुँघुरू ठुमका गई। जूही ने त्योरी बदल कर मुँह बिचकाया। तात्या ध्यान के साथ नर्तकी के सुन्दर रूप, कलापूर्ण नृत्य, और मन–मोही हावभाव प्रदर्शन पर आँख गड़ाए था। जूही ने तात्या के इस ध्यान को परखा। एक बड़ी ग्लानि उसके मन में उठी।

देशमुख, रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद पास पास बैठे थे।

गुलमुहम्मद ने धीरे से कहा, 'बाई यह सब बड़ा अजीब है। अमारे यहाँ तो ऐसा कोई नईं नाचता।'

देशमुख—'ग्वालियर इन बातों के लिए मशहूर है।'

गुलमुहम्मद—'लेकिन अगर अंग्रेज़ इस वक़्त आजाय तो?'

देशमुख—'तो सबको भागना पड़ेगा।'

रघुनाथसिंह—'और बचेगा कोई नहीं।'

गुलमुहम्मद—'बहुत देख लिया। अमारा तो पेट भर गया। अमारा रानी सोगया होगा। छावनी अकेला हे। चलबी बाई।'

जूही ने सुन लिया। चलने के प्रस्ताव का समर्थन किया।

पेशवा से माफ़ी माँगी। इजाज़त ली। तात्या ने जूही की ओर देखा। उसने एक करारी त्योरी ली और अभिमान के साथ सिर फेर लिया। ये सब वहाँ से अपनी छावनी चले आए।

थोड़े क्षण के लिए उत्सव बन्द हो गया। बीच के इस विक्षेप के कारण रसिकों को बहुत बुरा लगा था।

किसी ने पूछा, ये लाल कुर्ती वाले कौन थे?'

पेशवा ने धीरे से कहा, 'कुछ बात नहीं। अपने ही लोग हैं। बुन्देलखण्ड के केन्द्र झांसी के हैं। जरा गंवार हैं।'

तात्या को रानी की याद आ गई और वह कांप गया, परन्तु उसने कहा कुछ नहीं–कह भी क्या सकता था? उत्सव रात भर होता रहा। सवेरे खूब भंग छनी। डटकर लड्डुओं का और श्रीखण्ड का भोजन हुआ और दिन भर सोना और रात को नाचरङ्ग। जब ज़रा फ़ुरसत मिली तो पूछताछ हो गई कि ब्राह्मण भोजन यथाविधि चल रहा है और सेना भी खूब आनन्द मना रही है या नहीं।

बस यही अबाध क्रम।

लड्डू और श्रीखण्ड खाते खाते बहुत ब्राह्मण बीमार पड़ गए। उनमें से एक नारायण शास्त्री था।

छोटी ने उसकी इतनी सेवा सुश्रूषा की कि वह शीघ्र अच्छा हो गया।

गांठ में थोड़ा सा पैसा कर लेने की इच्छा से छोटी ने भी पेशवा के दरबार में नृत्य करने का निश्चय किया।

नारायण ने मना किया, 'मैं अच्छी तरह चलने फिरने योग्य होते ही बहुत धन कमा लूँगा। तुम इन सरदारों के उत्सव में नाचने मत जाओ। ये लोग बड़े कुरुचिपूर्ण हैं।'

छोटी ने प्रश्न किया, 'मुझ पर आपको क्या भरोसा नहीं है?'

नारायण—'भरोसा तो पूरा है छोटी, परन्तु यह काम जघन्य है।'

छोटी—'जब पल्टनों में नाचती गाती थी, तब वह काम श्रेष्ठ था!'

नारायण—'उसका मतलब ऊचा था।'

छोटी—'पास में रुपया पैसा कुछ नहीं है। आप चलने फिरने लायक़ कुछ देर में हो पावेंगे। मैं आज के ही नाच में काफ़ी पैसा ले आऊगी। मन ऊँचा बना रहे तो कोई काम नीचा नहीं।'

शास्त्री को छोटी का हठ निभाना पड़ा। छोटी सुन्दर वेश में पेशवा के उत्सव में पहुँच गई और उसका नाच गान हुआ।

गाना उसका बहुत साधारण श्रेणी का था। उसकी विशेषता केवल उसका सुरीला और मधुर कंठ था। नृत्य भी उसका एक बँधे हुए प्रकार का था। लय ज़रूर बहुत द्रुत थी। सुन्दरी थी, इसलिए उसको टोका नहीं गया।

उसके सीधे साधे गाने और नाचने पर रावसाहब मुग्ध हो गया। अच्छा पुरस्कार दिया। बोला, 'तुम क्या यहीं की रहने वाली हो! तुम्हारा नृत्य शास्त्रीय ढङ्ग का न होने पर भी निराला है! तुम बराबर नाचने आया करो।'

छोटी ने उत्तर दिया, 'सरकार मैं झांसी की रहने वाली हूँ। लश्कर में कुछ समय से हूं।'

तात्या छोटी को बड़ी देर से देख रहा था। पहिचानने की चेष्टा कर रहा था। अब उसको भ्रम न रहा।

तात्या ने रावसाहब से कहा, 'यह जाति की मेहतरानी है श्रीमन्त।'

पेशवा—'मिहतरानी!'

तात्या—'सरकार।'

पेशवा—'तो भी क्या हुआ? उसके पास विद्या है। नाचती क्या है, जादू डालती है।'

तात्या—'यह नारायण शास्त्री के साथ झांसी से भागी थी।'

पेशवा—'नारायण शास्त्री के साथ ब्राह्मण को पतित करके!'

रावसाहब का कला-प्रेम समाप्त हो गया। क्रुद्ध स्वर में बोला, 'तूने यहाँ आने की कैसे हिम्मत की?'

छोटी—'जैसे पल्टनों में जाने की, देश का कार्य करने की करती थी।'

पेशवा ने तात्या की ओर देखा।

तात्या ने कहा, 'पल्टनों में जागृत फैलाने का काम तो इसने ग्वालियर में बहुत किया है।'

पेशवा—'तो क्या हुआ? अब जो कुछ कर रही है और जो कुछ इसने झांसी में किया, वह दंडनीय है।'

छोटी ने अदम्य भाव से कहा, 'मुझको दंड और इनाम जो कुछ मिलना था, पा चुकी।'

पेशवा—'तू ग्वालियर में नहीं रह सकती। यह मेरा राज्य है। तुरन्त खाली कर।'

छोटी—'कहाँ जाऊँ ?'

पेशवा—'चाहे जहाँ। अंग्रेज़ों के राज्य में।'

छोटी—'जाती हूँ। परन्तु अंग्रेज़ों के राज्य में नहीं जाऊँगी, क्योंकि वे लोग क्षमा नहीं करेंगे।'

छोटी चली आई। नारायण को पुरस्कार के रुपए दिए और सब हाल सुनाया।

पहले तो उसको बहुत क्षोभ आया। बोला, 'इन अपवित्र रुपयों को नहीं लूँगा। चलो छोटी ऐसी जगह चलें जहां पेशवा का अत्याचार पीछा न कर सके।'

छोटी ने कहा, 'रुपए अपवित्र नहीं हैं। पसीना बहाकर लाई हूँ। पेशवा का राज्य सारे संसार में नहीं है।'

नारायण—'परन्तु जातपांत का राज्य तो है।'

छोटी—'आप कहा करते हैं कि वैष्णव हो जाने पर जातपांत का भूत भाग जाता है।'

नारायण—'मैं ग़लत नहीं कहता हूं। चलो। यही वेश हमारी रक्षा करेगा।'

वे दोनों चले गए, और फिर पेशवा को उनका पता नहीं लगा।

उधर रोज़ को पहली जून के दिन ही खबर मिल गई कि 'बलवाई' ग्वालियर की ओर बढ़ते जा रहे हैं। कालपी की जीत के उपरान्त वह छुट्टी लेकर बम्बई जारहा था। इस खबरके पातेही उसने अपनी छुट्टी काट दी और जगह जगह से दलपतियों को ग्वालियर की ओर बढ़ने का आग्रह-समाचार भेज दिया। चार जूनको उसे समाचार मिला कि ग्वालियर का पतन हो गया और राजा तथा दिनकरराव आगरा भाग गये।

सन्नाटे में आगया। कालपी की इतनी बड़ी और बुरी पराजय के उपरान्त भी ग्वालियर हस्तगत करने का विचार और साहस कौन कर सकता था? कौन इतना बड़ा मन्सूबा गांठ सकता था? किसमें इतना बड़ा हौसला था?

रोज़ ने सोचा, 'झांसी की रानी के सिवाय और कोई नहीं हो सकता। जब तक रानी को नहीं पकड़ा या मारा तब तक हिन्दुस्थान में हमारे राज्य की खैरियत नहीं।'

दृढ़ता के साथ रोज़ अपने काम में जुट गया।

[८६]

इन उत्सवों का प्रतिरोध करने के लिए रानी ने पेशवा से भेंट करने का प्रयत्न किया, परन्तु वहां नाच से छुट्टी मिली तो भंग और निद्रा, और भंग तथा निद्रा से निस्तार पाया तो नाचरंग। तात्या इस नाचरंग में डूब तो गया ही, उसको यह घमण्ड भी हो गया कि कोई भी अंग्रेज़ जनरल उसका मुक़ाबिला नहीं कर सकता।

निदान एक दिन तीसरे पहर रानी को ऐश्वर्य प्रमत्त पेशवा से थोड़ी देर की भेंट प्राप्त हो गई। रानी उदास थीं और क्षुब्ध। पेशवा सोकर उठा था। रात की खुमारी और सबेरे की भंग की छाया अब भी शेष थी। आंखें लाल थीं और शरीर अंगड़ाइयाँ चाहता था। अभिवादन के बाद उसने रानी से कहा,

'बड़ी गरमी पड़ रही है। न दिन चैन, न रात।'

'कभी कभी बदली हो जाती है। दस, पांच दिन में वर्षा हो उठेगी।'

'अभी तो नक्षत्र तप रहे हैं।'

'परन्तु इन्हीं दिनों में छत्रपति और पंत प्रधान सबसे अधिक पराक्रम दिखलाया करते थे।'

'आपने भी तो इन्हीं दिनों वह कर दिखलाया जो ग्वालियर के महाराज और अंग्रेज़ कभी न भूलेंगे।'

'और इन्हीं दिनों हमारे आपके ऊपर विपद के वे बादल उठ रहे हैं, जो थोड़े दिनों में कष्टों को मूसलाधार बरसावेंगे।'

'हमारी सेना डटकर लड़ेगी। तब तक पानी बरस पड़ेगा। नदी—नाले ऐसे चढ़ेंगे कि दुश्मन हमारा कुछ भी न कर सकेंगे।'

'ये ही नदी नाले हम लोगों को भी निरुपाय और असमर्थ कर डालेंगे। सेना में वैसे ही काफ़ी अव्यवस्था है फिर तो वह अकर्मण्य होकर निस्तेज ही हो जायगी।'

'अपने पास इतना बड़ा क़िला तो है, बाईसाहब।'

'और यदि क़िला छिन गया तो ?'

'तब निस्सन्देह हम लोग सब व्यर्थ हो जायँगे ।'

'अंग्रेज़ों की पल्टनें सब दिशाओं से अपने ऊपर टूटने के लिए आरही हैं । थोड़ा सा ही समय रह गया है । अपनी सेना को छावनी-बंद कीजिए । क़ायदा बर्तिए । क़िले में बन्द होकर लड़ने की बात मत सोचिए । अंग्रेज़ी फ़ौज का आगे बढ़कर सामना कीजिए । और सबसे प्रथम सिन्धिया की इस सेना को अपने सरदारों में बांटकर कड़ा अनुशासन जारी कर दीजिए ।'

'हो जायगा बाईसाहब, सब हो जायगा । इस समय भी कुछ आवश्यक काम ही हो रहा है । धर्म की नीव पर ही सब कुछ टिकता है । धर्म ही विजय का कारण होता है । इसलिए धर्म कराया जा रहा है । ब्राह्मण भोजन से विजय का आशीर्वाद मिलेगा । दूर दूर के ब्राह्मण, भोजन और दक्षिणा के लिए उमड़े चले आ रहे हैं । इनका आशीर्वाद क्या विफल जायगा ?'

'मैं नहीं कहती कि ब्राह्मण भोजन मत करवाइए, परन्तु सेना के सुप्रबन्ध और आगे बढ़कर अंग्रेज़ों से मोर्चे ले लेने के संगठन को उतना ही तो महत्व दीजिए ।

'आप हैं । तात्या है । बांदा के नवाब साहब हैं । आप लोगों के रहते अंग्रेज़ हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं ?'

'अंग्रेज़ अत्यन्त चालाक और उद्योग शील हैं । जो समय आप नाच रङ्ग को देते हैं, उस समय को वे लोग अपनी योजनाओं के सृजन में व्यय करते हैं ।'

'अपनी योजनाएं तो बनी बनाई रक्खी हैं । और क्या करना है ? एक बात शेष थी, वह हो गई । जनता और फ़ौज राजा के सिवाय और किसी का नायकत्व ग्रहण नहीं करती, सो मैंने पेशवाई स्वीकार करली है । जब तक ऐसा न करता तब तक जनसामान्य मुझको एक साधारण जन समझता और हम लोगों के नायकत्व को मानता ही नहीं ।'

'आपमें ये बड़े परिवर्तन देख कर मुझको अचम्भा होता है।'

'कौन से परिवर्तन?'

'भंग, नाच-रङ्ग, दिन में दीर्घ निद्रा।'

'बाईसाहब, पेशवाई स्वीकार करने के बाद उत्सवों का, दरबारों का करना अनिवार्य हो गया। अन्यथा लोग कहते, ये कैसे राजाओं के राजा' जो चुप चाप सिंहासन पर बैठकर, चुप चाप महल में जा बैठे! यहां के सरदार नृत्य गान के लालची हैं। उनका मन भरना आवश्यक था। करना पड़ा। इन सरदारों की सहनुभूति के बिना काम नहीं बन सकता।'

'कितने दिन और चलेगा यह सब?'

'बस थोड़े दिन, बहुत थोड़े दिन। परन्तु ब्राह्मण भोजन दान पुण्य निरन्तर जारी रहेगा। धर्म के आशीर्वाद से जो स्वराज्य स्थापित होगा वह अक्षय होगा। छत्रपति भी कर्मकांड को बहुत मानते थे, सो आप भी जानती हैं, और धर्म के विषय में आपसे बात करने का मैं अधिकारी हूं। क्या हूँ?'

'धर्म की गति को तो महात्मा लोग ही जानते हैं। मैं तो केवल यह कह सकती हूँ कि ब्राह्मण भोजन दान पुण्य इत्यादि के साथ सेना का तुरन्त अच्छा प्रबन्ध करिए। उन्हें कुछ काम दीजिए और उत्सव इत्यादि तुरन्त बन्द कर दीजिए।'

[८७]

रानी के समझाने पर भी रावसाहब न माना। भंग और नाचरंग का वही क्रम जारी रहा। लड्डुओं और श्रीखंड के लिए इतनी शकर खर्च होने लगी कि सिपाहियों को भंग के लिए उसका मिलना दुर्लभ हो गया। श्रीखण्ड के लिए दही की इतनी मांग हो गई कि मट्ठा अप्राप्य हो गया।

ब्राह्मण भोजन और दान-पुन्य की आड़ में बेहिसाब भिखमङ्गी बढ़ गई। कोई प्रतिबन्ध या प्रबन्ध न था, इसलिए अनेक सिपाही भी इस मुफ्तख़ोरी में सन गए।

रानी लक्ष्मीबाई ने देखा कि जब वे अपने क़िले में घिर गई थीं तब स्वतन्त्र थीं, और ग्वालियर में स्वच्छन्द होते हुए भी उनकी दशा एक क़ैदी की सी है।

रानी का स्वभाव था कि वे जहां जाती थीं, उसके चौगिर्द का बारीकी के साथ निरीक्षण करती थीं। इस निरीक्षण से उनको युद्ध के लिए मोर्चे बनाने में बड़ी सुविधा होती थी। उनकी रणनीति में इस क्रिया का विशेष स्थान था!

उन्होंने देखा कि ग्वालियर का क़िला और पश्चिम-दक्षिण की पहाड़ियां ग्वालियर की बस्ती और लश्कर के नगर की अच्छी रक्षा कर सकती हैं। पूर्व की ओर पहाड़ियों का सिलसिला लश्कर से लगभग दो मील पड़ता था—यह भी रक्षा का साधन हो सकता था, परन्तु उत्तर-पूर्व में मुरार की ओर दिशा खुली पड़ी थी। उसको ढकने के लिए सोनरेखा नाम का केवल एक नाला था, जो लश्कर को तीन ओर से घेरकर कतराता हुआ मुरार की ओर चला गया था। परन्तु यह कोई बड़ा साधन न था, उल्टे कुछ अड़चन डाल सकता था। इसके सिवाय दक्षिणवर्ती पहाड़ियों का क्रम, जिसके अगले भाग पर दुर्गा का मन्दिर था, शत्रुओं के लिए भी लाभदायक हो सकता था, और, पूर्व की ओर की

रानी—'इसीलिए आपके पास आई। आप टाल नहीं सकेंगे। बतलाना होगा। आपने अकेले अपने मन को शान्त कर लिया तो क्या हुआ? हम लोगों को भी शान्ति दीजिए।'

बाबा—'पूछो बेटी। यदि समझ में आजायगा तो बतला दूँगा।'

रानी—'यहां थोड़े दिनों में युद्ध होने वाला है। आपकी कुटी का स्थान रक्षित नहीं है। किसी सुरक्षित स्थान में न चले जाइए।'

बाबा—'सुरक्षित है। बात पूछो।'

रानी—'इस देश को स्वराज्य कैसे प्राप्त होगा?'

बाबा—'इस प्रश्न का उत्तर तो राजा लोग दे सकते हैं।'

रानी—'नहीं दे सकते, तभी आपसे पूछने आई हूँ।'

बाबा—'जैसे प्राप्त होता आया है, वैसे ही होगा।'

रानी—'कैसे बाबा जी?'

बाबा—'सेवा, तपस्या, बलिदान से।'

रानी—'हम लोग कैसे स्वराज्य स्थापित कर पावेंगे?'

बाबा—'गड्ढे कैसे भर जाते हैं? नींव कैसे पूरी जाती है? एक पत्थर गिरता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा और चौथा, इसी प्रकार। और तब उसके ऊपर भवन खड़ा होता है। नीव के पत्थर भवन को नहीं देख पाते। परन्तु भवन खड़ा होता है उन्हीं के भरोते—जो नीव में गड़े हुए हैं। गड्ढा या नीव एक पत्थर से नहीं भरी जाती। और, न एक दिन में। अनवरत प्रयत्न, निरन्तर बलिदान आवश्यक है।'

रानी—'हम लोगों के जीवनकाल में स्वराज्य स्थापित हो जायगा?'

बाबा—'यह मोह क्यों? तुमने आरम्भ किए हुए कार्य को आगे बढ़ा दिया है। अन्य लोग आयँगे। वे इसको बढ़ाते जायँगे। अभी कसर है। स्वराज्य स्थापना के आदर्शवादी अपने अपने छोटे छोटे राज्य बनाकर बैठ जाते हैं। जनता और उनके बीच का अन्तर नहीं मिटता—घटता ही बहुत कम है। जनता त्रस्त बनी रहती है। जब जनता का पूरा

सहयोग राज्य को प्राप्त हो जाय और राजा टीमटाम तथा विलासता का दासत्व छोड़कर प्रजा का सेवक बन जाय तब जानो स्वराज्य की नींव भर गई और भवन बनना आरम्भ हो गया। शाश्वत धर्म का रूप बिगड़ गया है। इसके सुधार के बिना वह भवन खड़ा न हो पायगा।'

रानी—'हम लोग प्रयत्न करते रहें?'

बाबा—'अवश्य। तुम तो भगवान कृष्ण और गीता की भक्त हो।'

रानी—'आपने कैसे जाना?'

बाबा मुस्कराए।

बोले, 'सब कहते हैं।'

रानी—'मैं पाठ करती हूं, परन्तु समझते तो आप महात्मा लोग ही हैं।'

बाबा—'गृहस्थ से बढ़कर कोई साधू नहीं। मुझसे कुछ और नहीं हो सका, इसलिए कुटी बना ली।'

सूर्यास्त होने को आया। रानी को सन्ध्या-ध्यान का स्मरण हुआ।

कहा, 'बाबा जी, फिर कभी दर्शन करूँगी। आपकी इतनी बात से चित्त को बहुत शान्ति मिली।' और नमस्कार करके चली गईं।

मार्ग में मुन्दर ने कहा, 'सरकार भी इन्हीं बातों को बतलाया करती हैं।'

'परन्तु' रानी बोलीं, 'बाबा के समान होने में बहुत देर है।'

[८८]

रावसाहब पेशवा का ऐश–आराम और ब्राह्मण–भोजन जारी रहा। जनरल रोज़ के उद्योग ने पहले की अपेक्षा और अधिक सबलता पकड़ी।

रोज़ ने अपनी सेना के कई भाग करके अनुभवी अफ़सरों के सुपुर्द किया। ब्रिगेडियर स्मिथ को ग्वालियर के पूर्व की ओर पांच मील पर कोटे की सराय भेजा। एक अफ़सर को ग्वालियर और आगरे के मार्ग पर स्वयं एक प्रबल दल लेकर कालपी से ग्वालियर की ओर ६ जून को बढ़ा। मार्ग में उसको ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ससैन्य मिल गया। १६ जून को जनरल रोज़ बहादुरपूर ग्राम पर आ गया, जहां जयाजीराव की हार हुई थी। जनरल रोज़ के साथ मध्यभारत और ग्वालियर के पोलिटिकल एजेण्ट भी थे। इन्होंने इस बीच में एक चाल खेली—जयाजीराव और दिनकरराव को आगरे से बुलवा लिया।

मुरार में पेशवा की सेना काफ़ी थी, बाक़ी इधर उधर बिखरी हुई पड़ी थी। इन में से अधिकांश सैनिक सिंधिया की सेना के ही नौकर थे। यदि ये बारह तेरह दिन नष्ट न किए गए होते और यदि इन सैनिकों को विभक्त करके अपने विश्वसनीय दलपतियों की अधीनता में, शुरू से ही उनका अनुशासन मय संसर्ग स्थापित कर दिया गया होता, तो बात न बिगड़ती।

जनरल रोज़ ने दो घंटे की कड़ी लड़ाई में पेशवा की मुरार वाली सेना को हरा दिया और मुरार को कब्जे में कर लिया। पेशवा की यह पराजित सेना भाग कर ग्वालियर आई। अब रावसाहब पेशवा का नशा फ़रार हुआ!

रोज़ ने जयाजीराव द्वारा पेशवा के उन सैनिकों को, जो उनकी ग्वालियर फ़ौज के थे, माफ़ी का आश्वासन दिलवाया और यह लिखित घोषणा प्रकाशित करवाई कि अंग्रेज़ ग्वालियर के राजा को पुनः गद्दी दिलवाने के लिए ही लड़ने आए हैं। सरदारों और सैनिकों में फूट पड़ गई। उनके मन फिर गए। उत्सवों की रिश्वत बेकार गई!

पेशवा, बांदा के नवाब किंकर्तव्य विमूढ़ हो गए। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें।

तब झांसी की रानी याद आईं, परन्तु उनके पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी—कैसे मुँह दिखलाएँ!

तात्या को भेजा।

तात्या कलेजा साधकर उनके सामने गया। उस समय उनके पास जूही और मुन्दर थीं। तात्या नमस्कार करने के उपरान्त हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया।

'क्या बात है, सरदार साहब?' रानी ने व्यङ्ग किया, 'ये तोपें कहां चल रही थीं?'

तात्या ने विनीत भाव से कहा, 'अब क्षमा प्रार्थना तक का समय नहीं है, बाईसाहब।'

रानी बोलीं, 'क्या भंग छानने का भी समय नहीं? एक तान भी सुनने के लिए समय नहीं?'

तात्या उनके पैरों पर गिरने को हुआ, 'रक्षा करो देवी।'

रानी ने उसको बीच में ही पकड़ लिया।

जूही बोली, 'सरकार क्षमा कर दीजिए।'

रानी मुस्कराईं।

'तात्या,' उन्होंने कहा, 'तुमसे मुझको बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं। अब भी बहुत कुछ कर सकोगे, परन्तु दृढ़ हो जाओ तो।'

तात्या बोला, 'जो जो आज्ञा होगी उसका तनमन से पालन करूँगा। आपको कभी उलहने का अवसर न दूंगा।'

रानी ने उठती हुई सांस को दबाकर कहा, 'मेरा कदाचित् यह अन्तिम युद्ध होगा। क्यों मुन्दर, स्मरण है बाबा गङ्गादास ने क्या कहा था?'

जूही बोली, 'कदापि नहीं सरकार।'

रानी ने गंभीर स्वर में कहा, 'स्वराज्य के भवन की नीव एक दो पत्थरों से नहीं भरेगी।'

तात्या अधीर होकर कातरता के साथ मुँह ताकने लगा।

रानी फिर मुस्कराई। तात्या को आश्वासन दिया, 'घबराओ नहीं। पेशवा से कहो कि धैर्य से काम लें। जो योजना बतलाती हूँ, उसके अनुसार काम करें। कदाचित् विजय प्राप्त हो जाय। न भी हो तो युद्ध सामग्री और सेना को दक्षिण की ओर ले चलने का प्रबन्ध रखना। तुम इस क्रिया के आचार्य हो।'

रानी ने तात्या को थोड़े समय में ही अपनी योजना विस्तार पूर्वक समझादी और फिर अपने पांचों सरदारों की बुद्धि में बिठलादी।

ग्वालियर की पूर्वीय ओर की रक्षा का भार रानी ने स्वयं लिया। पूर्वीय पहाड़ियों पर जहां तक अंग्रेज़ों का अधिकार नहीं हो पाया था, तोपखानें, पीछे पैदल और रिसाले का यत्र तत्र क्रमिक मोरचा रक्खा गया। सबसे आगे और बीच बीच में अपनी लालकुर्ती के सवार। अगल बगल की पहाड़ियों पर तोपें—दक्षिण दिशा तक। उत्तर का भार तात्या के जिम्मे किया गया। उसने रुहेली और अवधी सेना के भग्नावशेष पर अपना दस्ता बनाया था। इस दस्ते को तोपों सहित तात्या ने जमाया। पश्चिम का भार रावसाहब के ऊपर रक्खा गया। इसके साथ अधिकांश सिन्धिया वाली फ़ौज़ थी। शहर के भीतर बाहर की रक्षा का प्रबन्ध बांदा के नवाब के हाथ में दिया गया। क़िले की खास रक्षा के लिए ज्यादा चिन्ता में नही पड़ना पड़ा। तोपें गोलन्दाज़ और कुछ सिपाही काफ़ी समझे गए, क्यों कि बिना किसी बड़े और विशेष कारण के क़िले में बन्द होकर लड़ना मराठी युद्ध प्रणाली के विरुद्ध था।

रानी ने अपने सवारों की क़वायद ली, और उनको काम की सब बातें समझा दीं।

१७ जून को सवेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने लड़ाई का बिगुल बजाया। लड़ाई आरम्भ हो गई। ब्रिगेडियर स्मिथ का आक्रमण कोटा की सराय

से शहर होना था, पूर्व दिशा से, जहां लक्ष्मीबाई का मोर्चा था। जैसे ही अंग्रेज़ी सेना रानी की तोपों की मार के भीतर आई, रानी ने गोलन्दाज़ों को संकेत दिया। गोलाबारी होते ही अंग्रेज़ सेना की दुर्गति हुई और वह पीछे पटी। रानी के लालकुर्ती सवारों ने तुरन्त छापा मारा। स्मिथ ने एक चतुर चाल खेली—उसने अपनी उस टुकड़ी को और अधिक पीछे खींचा और रानी के सवारों को आगे बढ़ने दिया। इन सवारों के ज्यादा आगे निकल जाने से उनका स्थान खाली हो गया। स्मिथ ने कई दिशाओं से रानी के मोर्चों पर आक्रमण किया। घमासान युद्ध हुआ। तलवार चली। लोहे ने लोहे से चिनगारियां छुटकाईं। स्मिथ ने रानी के पार्श्वपर अपनी दो पल्टनें और फेकीं जो अभी तक चुपचाप खड़ी थीं। रानी के सवारों को पीछे हटना पड़ा। ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने सामने की पांतों को फोड़ कर रिसाले समेत बढ़ने का संकल्प किया। उद्देश्य था फूल बाग़ पर अधिकार करने का।

अपने सवारों को पीछे हटता देखकर रानी घोड़े को तेज करके तुरन्त उनके समीप पहुँचीं। गुलमुहम्मद दिखलाई दिया। उसके पास घोड़ा दौड़ा कर बढ़ते हुए अंग्रेजों की ओर तलवार की नोंक करके बोलीं, 'ख़ान, आज हाथ ढीला क्यों पड़ रहा?'

गुलमुहम्मद चिल्लाकर बोला, 'हुज़ूर अमारा हाथ अब मुलाहिज़ा करे।'

पठान सरदार चिल्लाता हुआ रेलपेल करता हुआ, लालकुर्तियों को बढ़ावा देता हुआ, आगे झिका। रानी साथ में।

गुलमुहम्मद ने प्रखर स्वर में रानी से प्रार्थना की, 'हुज़ूर जूही सरदार का तोपख़ाना ठीक करे।'

रानी लौट पड़ीं। एक टौरिया के पीछे जूही तोपख़ाना की मार को जारी किए थी, परन्तु लालकुर्ती को पीछे हटा देख कर हड़बड़ा गई थी। गोरा रिसाला उसकी ओर बढ़ रहा था।

'जूही,' रानी ने आदेश किया, 'तोप का मुहरा एक अंगुल नीचा कर।'

'जो आज्ञा उसने उत्साहित होकर कहा, और अपने साथियों की सहायता से तुरन्त वैसा ही किया।

'मार,' रानी ने दूसरा आदेश दिया। तोप ने धाँय किया। गोरे सवार बिछ गए। लौट पड़े।

रानी दूसरे स्थल पर पहुंची। वे जहां पहुंचती वहीं अपने सिपाहियों पर तेज छिटक देतीं।

यद्यपि उनके योधाओं की संख्या कम थी, परन्तु वे उनके प्रति अटल विश्वास रखते थे। फिर बढ़े। उनकी रानी उनके साथ। दोनों हाथों एक समान कौशल और शक्ति के साथ तलवार चलाने वालों।

अंग्रेज वीरता के साथ लड़े और बहुत मरे। रानी के उन थोड़े से लालकुर्ती सवारों ने तो कमाल ही कर दिया। यथावत् आज्ञा का पालन करते हुए उन लोगों ने अंग्रेज़ों के छक्के छुटा दिए। ब्रिगेडियर स्मिथ को रानी ने उस दिन की चालों में और शूरवीरी में मात दी। स्मिथ उनके व्यूह को न भेद सका। उसको लक्ष्मीबाई के मुक़ाबिले में हार कर लौटना पड़ा। अंग्रेज़ों ने उस दिन का युद्ध बन्द करके दम ली।

रानी ने उस दिन निरन्तर परिश्रम किया था और उनके सरदारों ने भी। इस पर भी उन्होंने रात को काफ़ी समय तक अथक परिश्रम किया योजनाएँ सुधारीं, परिवर्तित कीं, सलाह सम्मति दी, उनके जिन योधाओं ने उस दिन के युद्ध में कोई विशेष कार्य किया था, उनको शाबाशी दी, और पुरस्कार दिए। और गुलमुहम्मद को कुँवर की उपाधि प्रदान की।

ग्वालियर की सेना पर जयाजीराव की उस घोषणा के कारण प्रभाव पड़ चुका था, परन्तु उस दिन उस सेना ने कोई ऐसा स्पष्ट काम नहीं किया जिससे उस पर तात्या या पेशवा को अविश्वास होता, परन्तु रानी को सन्देह था। तात्या और रावसाहब ने निवारण किया। अविश्वास करने से अब होता भी क्या था ? लाचार होकर दूसरे दिन के युद्ध में वे ही साधन काम में लाने पड़े जो उनको उपलब्ध थे।

[८९]

अठारह जून आई। ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी। शुक्रवार। सफ़ेद और पीली पौ फटी। ऊषा ने अपनी मुस्कान बिखेरी। रानी स्नान-ध्यान और गीता के अठारहवें अध्याय के पाठ से निबट चुकीं। झींगुरों की झंकार पर एकाध चिड़िया ने चहक लगाई। रानी ने नित्यवत अपने रिसाले की लालकुर्ती की मर्दाना पोशाक पहिनी। दोनों ओर एक एक तलवार बांधी और पिस्तौलें लटकाई। गले में मोतियों और हीरों की माला—जिससे संग्राम के घमासान में उनके सिपाहियों को उन्हें पहिचानने में सुविधा रहे। लोहे के कुले पर चंदेरी का ज़रतारी लाल साफ़ा बांधा। लोहे के दस्ताने और भुजबन्द पहिने। इतने में उनके पांचों सरदार आ गए।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार घोड़ा लँगड़ाता है। कल की लड़ाई में या तो घायल हो गया है या ठोकर खा गया है।'

रानी ने आज्ञा दी, 'तुरन्त दूसरा अच्छा और मज़बूत घोड़ा ले आ।'

मुन्दर घोड़ा लेने गई और उसने अस्तबल में से एक बहुत तगड़ा और देखने में पानीदार घोड़ा चुना।

अस्तबल के प्रहरी ने कहा, 'हमारे सिन्धिया सरकार का यह ख़ास घोड़ा है!'

मुन्दर बोली, 'ख़ास ही चाहिए। हमारी सरकार की सवारी में आवेगा।'

प्रहरी—'झांसी की रानी साहब की सवारी में?'

मुन्दर—'हां।'

प्रहरी—'ख़ैर ठीक है। हमारे सरकार जब इस पर बैठते थे बहुत ऊबते थे। इसके जाने से कुछ रञ्ज होता है।'

मुन्दर—'क्यों?'

प्रहरी—'जब सरकार इसको न पावेंगे, दुखी होंगे।'

मुन्दर जल्दी में थी। घोड़ा लेकर चली आई।

रानी ने अपने सरदारों को हिदायतें दीं।

रानी ने कहा, 'कुँवर गुलमुहम्मद, आज तुमको अपने जौहर का जौहर दिखलाना है। कल की लड़ाई का हाल देखकर आज जीत की आशा होती है। परन्तु यदि पश्चिम या उत्तर का मोर्चा उखड़ जाय तो उसको सँभालना और दक्षिण चल पड़ने की तैयारी में रहना।'

'सरकार,' गुलमुहम्मद बोला, 'अम सब पठान आज कट जाने का कसम खाया हे। जो बचेगा वो दखन जायगा। आप दखन जाना सरकार। अमारा राहतगढ़ लेना। अमारा बोत पठान वहां मारा गया। उनका यादगार बनवाना।'

'नहीं कुँवर साहब हम जीतेंगे,' रानी ने कहा, 'दक्षिण जाने की बात तो तब उठेगी जब यहां कुछ हाथ न रहे। फ़ौजदार के विचार में जीतने की बात पहले उठना ही चाहिए, परन्तु दूसरी बात जो तै की जावे वह बच निकलने और फिर कहीं जमकर युद्ध करने की है।'

मुन्दर बोली, 'सरकार, कुछ जलपान करलें। इसी समय से हवा में कुछ कुछ गरमी है। दिखता है लू बहुत चलेगी।'

रानी ने कहा, 'तुम लोग कुछ खालो। दामोदर को खूब खिला-पिला लो। पीठ पर पानी का प्रबन्ध रखना। मैं केवल शर्बत पिऊंगी।'

जूही—'मैं भी शर्बत ही पियूंगी।'

रानी—'देशमुख, तुम?'

देशमुख—'मैं तो कुछ खा-पी आया।'

रानी—'रघुनाथसिंह?'

रघुनाथसिंह—'मैं कुछ खाऊँगा।'

रानी—'तुम और मुन्दर कुछ खा-पीकर झटपट शर्बत बना लाओ।'

मुन्दर और रघुनाथसिंह गए। दामोदर आ गया। रानी ने उसको खिलाया-पिलाया।

रानी ने जूही से कहा, 'आज तेरी सुगन्धि ऐसी बरसे कि वैरी खिल जाएँ।'

जूही प्रसन्न होकर बोली, 'आज मैं जो कुछ कर सकूँ, कह नहीं सकती, परन्तु आंख खुलते ही जो कुछ प्रण किया है उसके अनुसार अवश्य काम करूँगी।'

रानी— परन्तु जो कुछ करे, ठंडक के साथ करना। केवल उत्तेजना से बहुत सहायता नहीं मिलेगी।'

जूही—'तभी तो सरकार मैं हँस रही हूँ। एक हसरत मनमें रही जाता है - आपको गाना न सुना पाया।'

रानी —'किसी दिन सुनूँगी।'

जूही—'हां सरकार, अवश्य।' जूही ज़रा ज्यादा हँस पड़ी।

रानी—'तेरी हँसी आज कुछ भीषण है।'

जूही—'काम इससे अधिक भीषण होगा सरकार।'

[१०]

मुन्दर और रघुनाथसिंह ने कुछ भी न खाकर जेबों में कलेवा डाला और पीठ पर पानी का बर्तन कस लिया। झटपट शर्बत बनाया।

'मुन्दरबाई,' रघुनाथसिंह ने कहा, रानी साहब का साथ एक क्षण के लिए भी न छूटने पावे। वे आज अन्तिम युद्ध लड़ने जा रही हैं।'

मुन्दर 'आप कहां रहेंगे ?

रघुनाथसिंह—'जहां उनकी आज्ञा होगी। वैसे आप लोगों के समीप रहने का प्रयत्न करूँगा।'

मुन्दर—'मैं चाहती हूं आप बिलकुल निकट रहें। मुझे लगता है मैं आज मारी जाऊँगी। आपके निकट होने से शांति मिलेगी।'

रघुनाथसिंह—'मैं भी नहीं बचूँगा। रानी साहब को किसी प्रकार सुरक्षित रखना है। मैं तुम्हें तुरन्त ही स्वर्ग में मिलूंगा। केवल आगे पीछे की बात है।' वह ज़रा सूखी हँसी हँसा।

मुन्दर ने रघुनाथसिंह की ओर आंसू भरी आंखों से देखा। कुछ कहने के लिए ओठ हिले। रघुनाथसिंह की आखें भी धुंधली हुईं।

दूर से दुश्मन के बिगुल के शब्द की झाईं कान में पड़ी। मुन्दर ने रघुनाथसिंह को मस्तक नवाकर प्रणाम किया और उस ओट में जल्दी आंसू पोछ डाले। रघुनाथसिंह ने मुन्दर को नमस्कार किया फिर तुरन्त शर्बत लिए हुए रानी के पास पहुँचे।

मुन्दर ने जूही को पिलाया, रघुनाथसिंह ने रानी को। अंग्रेज़ों की बिगुल का साफ़ शब्द सुनाई दिया। तोप का धड़ाका हुआ गोला सन्नाकर ऊपर से निकल गया। रानी ने दूसरा कटोरा नहीं पी पाया।

रानी ने रामचन्द्र देशमुख को आदेश किया, 'दामोदर को आज तुम पीठ पर बाँधो। यदि मैं मारी जाऊँ तो इसको किसी तरह दक्षिण सुरक्षित पहुंचा देना। तुमको आज मेरे प्राणों से बढ़कर अपनी रक्षा की चिन्ता करनी होगी। दूसरी बात यह है कि मारी जाने पर ये विधर्मी मेरी देह को छूने न पावें। बस। घोड़ा लाओ।'

मुन्दर घोड़ा ले आई। उसकी आंखें छलछला रही थीं। पूर्व दिशा में अरुणिमा फैल गई। अब की बार कई तोपों का धड़ाका हुआ।

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'यह तात्या की तोपों का जवाब है।'

मुन्दर की छलकती हुई आंखों को देखकर कहा, 'यह समय आंसुओं का नहीं है, मुन्दर। जा, तुरन्त अपने घोड़े पर सवार हो।'

अपने लिए आए हुए घोड़े को देखकर बोलीं। यह अस्तबल को प्यार करने वाला जानवर है। परन्तु अब दूसरे को चुनने का समय ही नहीं है। इसी से काम निकालूंगी।'

जूही के सिर पर हाथ फेरकर कहा, 'जा जूही अपने तोपखाने पर। छक्का तो दे इन बैरियों को आज।'

जूही ने प्रणाम किया। जाते हुए कह गई, 'इस जीवन का यथोचित अभिनय आपको न दिखा पाया। खैर।'

अंग्रेज़ों के गोलों की बरसा हो उठी। रानी के सब सरदार और सवार घोड़ों पर जम गए। जूही का तोपखाना आग उगलने लगा।

इतने में सूर्य का उदय हुआ।

सूर्य की किरणों ने रानी के सुन्दर मुख को प्रदीप्त किया। उनके नेत्रों की ज्योति दुहरे चमत्कार से भासमान हुई। लाल वर्दी के ऊपर मोती-हीरों का कण्ठा दमक उठा। और, चमक पड़ी म्यान से निकली हुई तलवार।

रानी ने घोड़े को एड़ लगाई। पहले ज़रा हिचका फिर तेज़ हो गया। रानी ने सोचा कई दिन का बँधा होगा। थोड़ी देर में गरम हो जायगा।

उत्तर और पश्चिम की दिशाओं में तात्या और रावसाहब के मोर्चे थे। दक्षिण में बांदा के नवाब का, रानी ने पूर्व की ओर झपट लगाई।

गत दिवस की हार के कारण अंग्रेज़ जनरल सावधान और चिन्तित हो गए थे। इन लोगों ने अपनी पैदल पल्टनें पूर्व और दक्षिण की बीहड़ में छिपा लीं और हुज़र* सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण करने

*Hussars

की योजना की। तोपें पीठ पर रक्षा के लिए थीं ही। हुज़र सवारों ने पहला हमला कड़ाबीन बन्दूकों से किया। बन्दूकों का जवाब बन्दूकों से दिया गया। रानी ने आक्रमण पर आक्रमण करके हुज़र सवारों को पीछे हटाया। दोनों ओर के सवारों की बेहिसाब दौड़ से धूल के बादल छा गए। रानी के रण-कौशल के मारे अंग्रेज़ जनरल थर्रा गए। काफ़ी समय हो गया, परन्तु अंग्रेज़ों को पेशवाई मोर्चों में से निकल जाने की गुन्जायश न मिली।

जूही की तोपें ग़ज़ब ढा रही थीं। अंग्रेज़ नायक ने इन तोपों का मुँह बन्द करना तै किया। हुज़र सवार बढ़ते जाते थे, मरते जाते थे, परन्तु उन्होंने इस तरफ़ की तोपों को चुप करने का निश्चय कर लिया था। रानी ने जूही की सहायता के लिए कुमुक भेजी। उसी समय उनको ख़बर मिली कि पेशवा की अधिकांश ग्वालियरी सेना और सरदार अपने महाराज की शरण में चले गए।

मुन्दर ने रानी से कहा, 'सवेरे अस्तबल का प्रहरी रिस रिस कर अपने 'सरकार' का स्मरण कर रहा था। मुझे सन्देह हो गया था कि ग्वालियरी कुछ गड़बड़ करेंगे।'

'गांठ में समय न होने के कारण कुछ नहीं किया जा सकता था,' रानी बोलीं, 'अब जो कुछ संभव है वह करो।'

इनकी लालकुर्ती अब तलवार खींचकर आगे बढ़ी। उस धूल धूसरित प्रकाश में भी तलवारों की चमचमाहट ने चकाचौंध लगा दी।

कुछ ही समय उपरान्त समाचार मिला कि ग्वालियरी सेना के परपक्ष में मिल जाने के कारण रावसाहब के दो मोर्चे छिन गए और अंग्रेज़ उनमें से घुसने लगे हैं। रानी के पीछे पैदल पल्टन थी। उसको स्थिति सँभालने की आज्ञा देकर वह एक ओर आगे बढ़ीं। उधर हुज़र—सवार जूही के तोपख़ाने पर जा टूटे। जूही तलवार से भिड़ गई। घिर गई और मारी गई। मरते समय उसने आह तक नहीं की। चिर गई थी। परन्तु शत्रु की तलवार चीरने में, जिस बात में असमर्थ रही—वह थी जूही

की क्षीण मुस्कराहट जो उसके ओठों पर अनन्त दिव्यता की गोद में खेल गई ।

वर्दी के कट जाने पर हुज़रो ने देखा कि तोपखाने का अफ़सर गोरे रङ्ग की एक सुन्दर युवती थी ! और उसके ओठों पर मुस्कराहट थी !!

समाचार मिलते ही रानी ने इस तोपखाने का प्रबन्ध किया ।

इतने में ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने छिपे हुए पैदलों को छिपे हुए स्थानों से निकाला । वे संगीनें सीधी किए रानी के पीछे वाली पैदल पल्टन पर दो पार्श्वों से झपटे । पेशवा की पैदल पल्टन घबरा गई । उसके पैर उखड़े । भाग उठी । रानी ने प्रोत्साहन, उत्तेजन दिया । परन्तु उनके और उस भागती हुई पल्टन के बीच में गोरों की संगीनें और हुज़रों के घोड़े आचुके थे ।

अंग्रेज़ों की कड़ाबीनें, संगीनें और तोपें पेशवाई सेना का संहार कर उठीं । पेशवा की दो तोपें भी उन लोगों ने छीन लीं । अंग्रेज़ी सेना बाढ़ पर आई हुई नदी की तरह बढ़ने और फैलने लगी ।

रानी की रक्षा के लिए लालकुर्ती सवार अटूट शौर्य और अपार विक्रम दिखलाने लगे । न कड़ाबीन की परवाह, न संगीन का भय और तलवार तो मानो उनकी ईश्वरीय देन थी । उस तेजस्वी दल ने घन्टों अंग्रेज़ों का प्रचण्ड सामना किया । रानी धीरे धीरे पश्चिम–दक्षिण की ओर अपने मोर्चे का शेष सेना से मिलने के लिए मुड़ीं । यह मिलान लगभग असंभव था, क्योंकि उस भागती हुई पैदल पल्टन और रानी के बीच में बहुसंख्यक हुज़रा सवार और संगीन बरदार पैदल थे । परन्तु उन बचे खुचे लालकुर्ती वीरों ने अपनी तलवारों की आड़ बनाई ।

रानी ने घोड़े की लगाम अपने दांतों में थामी और दोनों हाथों से तलवार चलाकर अपना मार्ग बनाना आरम्भ कर दिया । दक्षिण–पश्चिम की ओर सोनरेखा नाला था । आगे चलकर बाबा गङ्गादास की कुटी थी । कुटी के पीछे दक्षिण और पश्चिम की ओर हटती हुई पेशवाई पैदल पल्टन ।

मुन्दर रानी के साथ थी । अगल–बग़ल रघुनाथसिंह और रामचन्द्र देशमुख । पीछे कुँवर गुलमुहम्मद और केवल बीस–पचीस अवशिष्ट लाल सवार । अंग्रेज़ों ने थोड़ी देर में इन सबके चारों तरफ़ घेरा डाल दिया । सिमट सिमटकर उस घेरे को कम करते जा रहे थे ।

परन्तु रानी की दुहत्थू तलवारें आगे का मार्ग साफ़ करती चली जा रही थीं । पीछे के वीर सवारों की संख्या घटते घटते नगण्य हो गई । उसी समय तात्या ने रुहेली और अवधी सैनिकों की सहायता से अंग्रेज़ों के व्यूह पर प्रहार किया तात्या कठिन से कठिन व्यूह में होकर बच निकलने की रणविद्या का । पारङ्गत पण्डित था । अंग्रेज़ थोड़े से सवारों को लालकुर्ती का पीछा करने के लिए छोड़कर तात्या की ओर मुड़ गए । सूर्यास्त होने में कुछ विलम्ब था ।

लालकुर्ती का अख़ीर सवार मारा गया । रानी के साथ केवल चार सरदार और उनकी तलवारें रह गईं । पीछे से कड़ाबीन और तलवार वाले दस–पन्द्रह गोरे सवार । आगे सङ्गीन वाले कुछ गोरे पैदल ।

रानी ने पीछे की तरफ़ देखा—रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद तलवार से अंग्रेज़ सैनिकों की संख्या कम कर रहे हैं ! एक ओर रामचन्द्र देशमुख दामोदरराव की रक्षा की चिन्ता में बरकाव कर करके लड़ रहा था । रानी ने देशमुख की सहायता के लिए मुन्दर को इशारा किया, और वह स्वयं संगीनबरदारों को दोनों हाथों की तलवारों से खटाखट साफ़ करके आगे बढ़ने लगीं । एक संगीनबरदार की हूल रानी के सीने के नीचे पड़ी । उन्होंने उसी समय तलवार से उस संगीनबरदार को ख़तम किया । हूल करारी थी, परन्तु आंतें बच गईं ।

रानी ने सोचा, 'स्वराज्य की नींव का पत्थर बनने जा रही हूँ ।' रानी के ख़ून बह निकला ।

उस संगीनबरदार के ख़तम होते ही बाक़ी भागे । रानी आगे निकल गईं । उनके साथी भी दाएँ, बाएँ और पीछे । आठ–दस गोरे घुड़सवार उनको पछियाते हुए ।

रघुनाथसिंह पास था। रानी ने कहा, 'मेरी देह को अंग्रेज न छूने पावें।'

गुलमुहम्मद ने भी सुना—और समझ लिया। वह और भी ज़ोर से लड़ा।

एक अंग्रेज़ सवार ने मुन्दर पर पिस्तौल दाग़ी। उसके मुँह से केवल ये शब्द निकले : 'बाईसाहब मैं मरी। मेरी देह···भगवान।' अन्तिम शब्द के साथ उसने एक दृष्टि रघुनाथसिंह पर डाली और वह लटक गई।

रानी ने मुड़कर देखा।

रघुनाथसिंह से कहा, 'संभालो उसे उसके शरीर को वे न छूने पावें।' और वे घोड़े को मोड़कर अंग्रेज़ सवारों पर तलवारों की बौछार करने लगीं। कई कटे। मुन्दर को मारने वाला मारा गया।

रघुनाथसिंह फुर्ती के साथ घोड़े से उतरा। अपना साफ़ा फाड़ा। मुन्दर के शव को पीठ पर कसा और घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ा।

गुलमुहम्मद काफ़ी सवारों से उलझा। रानी ने फिर सोनरेखा नाले की ओर घोड़े को बढ़ाया। देशमुख साथ हो गया।

अंग्रेज़ सवार चार पांच रह गए थे। गुलमुहम्मद उनको बहकावा देकर रानी के साथ हो लिया। रानी तेज़ी के साथ नाले की ढी पर आ गईं।

घोड़े ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया—बिलकुल अड़ गया। रानी ने पुचकारा। कई प्रयत्न किए, परन्तु सब व्यर्थ।

वे अंग्रेज़ सवार आ पहुंचे।

एक गोरे ने पिस्तौल निकाली और रानी पर दाग़ी। गोली उनकी बांई जंघा में पड़ी। वे गले में मोती-हीरों का दमदमाता हुआ कंठा पहिने हुई थीं। उस अंग्रेज़ सवार ने रानी को कोई बड़ा सरदार समझकर विश्वास कर लिया कि अब वह कण्डा मेरा हुआ। रानी ने बाएँ हाथ की तलवार फेंक कर घोड़ेकी अयाल पकड़ी और दूसरी जांघ तथा हाथ की सहायता से अपना आसन सँभाला। इतने में वह सवार और भी निकट

आया। रानी ने दाएँ हाथ के वार से उसको समाप्त कर दिया। उस सवार के पीछे से एक और आगे निकल पड़ा।

रानी ने आगे बढ़ने के लिए फिर एक पैर की एड़ लगाई।

घोड़ा बहुत प्रयत्न करने पर भी अड़ा रहा। वह दो पैरों से खड़ा हो गया। रानी को पीछे खिसकना पड़ा। एक जांघ काम नहीं कर रही थी। बहुत पीड़ा थी। खून के फ़व्वारे पेट और जांघ के घाव से छूट रहे थे।

गुलमुहम्मद आगे बढ़े हुए अंग्रेज़ सवार की ओर लपका।

परन्तु अंग्रेज़ सवार ने गुलमुहम्मद के आ पहुँचने के पहले ही तलवार का वार रानी के सिर पर किया। वह उनकी दाईं ओर पड़ा। सिर का वह हिस्सा कट गया और दाईं आंख बाहर निकल पड़ी। इसपर भी उन्होंने अपने घातक पर तलवार चलाई! और उसका कंधा काट दिया।

गुलमुहम्मद ने उस सवार के ऊपर कसकर भरपूर हाथ छोड़ा। उसके दो टुकड़े हो गए।

बाक़ी दो तीन अंग्रेज़ सवार बचे थे। उनपर गुलमुहम्मद बिजली की तरह टूटा। एक को घायल कर दिया। दूसरे के घोड़े को लगभग अधमरा। वे तीनों मैदान छोड़कर भाग गए। अब वहां कोई शत्रु न था। जब गुलमुहम्मद मुड़ा तो उससे देखा—रामचन्द्र देशमुख घोड़े से गिरती हुई रानी को साधे हुए है।

दिन भर के थके मांदे, भूखे-प्यासे, धूल और खून में सने हुए गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुँह फेरकर कहा, 'खुदा, पाक परवर-दिगार, रहम, रहम।'

उस कट्टर सिपाही की आंखें आंसुओं को मानो बरसाने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक हिलक कर रोने लगा।

रघुनाथसिंह और देशमुख ने रानी को घोड़े पर से सँभाल कर उतारा। आवेश में आकर उस अड़ियल घोड़े को एक लात मारी। वह अपने अस्तबल की दिशा में भाग गया।

रघुनाथसिंह ने देशमुख से कहा, 'एक क्षण का भी विलम्ब नहीं होना चाहिए। अपने घोड़े पर इनको होशियारी के साथ रक्खो और बाबा गङ्गादास की कुटी पर चलो। सूर्यास्त हुआ ही चाहता है।'

देशमुख का गला रुँधा हुआ था। बालक दामोदरराव अपनी माता के लिए चुपचाप रो रहा था।

रामचन्द्र ने पुचकार कर कहा, 'इनकी दवा करेंगे, अच्छी हो जायँगी; रोओ मत।'

रामचन्द्र ने रघुनाथसिंह की सहायता से रानी को संभाल कर अपने घोड़े पर रक्खा।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुँवर साहब, इस कमज़ोरी से काम और बिगड़ेगा। याद करिए, अपने मालिक ने क्या कहा था। अंग्रेज़ अब भी मारते काटते दौड़धूप कर रहे हैं। यदि आगए तो रानी साहब की देह का क्या होगा?'

गुलमुहम्मद चौंक पड़ा। साफ़े के छोर से आंसू पोंछे। गला बिलकुल सूख गया था। आगे बढ़ने का इशारा किया। वे सब द्रुतगति से बाबा गङ्गादास की कुटी पर पहुंचे।

[९१]

बिसूरते हुए दामोदरराव को एक ओर बिठला कर रामचन्द्रराव ने अपनी वर्दी पर रानी को लिटाया और बचे हुए साफ़े के टुकड़े से उनके सिर के घाव को बांधा। रघुनाथसिंह ने अपनी वर्दी पर मुन्दर के शव को रख दिया। गुलमुहम्मद ने घोड़े को ज़रा दूर पेड़ों से जा अटकाया।

बाबा गङ्गादास ने पहिचान लिया। बोले, 'सीता और सावित्री के देश की लड़कियां हैं ये।'

रानी ने पानी के लिए मुंह खोला। बाबा गङ्गादास तुरन्त गङ्गा जल ले आए। रानी को पिलाया। उनको कुछ चेत आया।

मुँह से पीड़ित स्वर में धीरे से निकला, 'हर हर महादेव।' उनका चेहरा कष्ट के मारे बिलकुल पीला पड़ गया। अचेत हो गईं।

बाबा गङ्गादास ने पश्चिम की ओर देख कर कहा, 'अभी कुछ प्रकाश है। परन्तु अधिक विलम्ब नहीं। थोड़ी दूर घास की एक गन्जी लगी हुई है। उसी पर चिता बनाओ।

मुन्दर की ओर देखकर बोले, 'यह इस कुटी में रानी लक्ष्मीबाई के साथ कई बार आई थी। इसका तो प्राणान्त हो गया है!'

रघुनाथसिंह के रुद्ध कण्ठ से केवल 'जी' निकला।

उसके मुँह में भी बाबा ने गङ्गाजल की कुछ बूंदें डालीं।

रानी फिर थोड़े से चेत में आईं। कम से कम रघुनाथसिंह इत्यादि को यही जान पड़ा। दामोदरराव पास आ गया। उसको अवगत हुआ कि मां बच गईं और फिर खड़ी हो जायंगी। उत्सुकता के साथ उनकी ओर टकटकी लगाई।

रानी के मुंह से बहुत टूटे स्वर में निकला, 'ओ३म् वासुदेवायनमः'

इसके उपरान्त उनके मुँह से जो कुछ निकला वह अस्पष्ट था। ओठ हिल रहे थे। वे लोग कान लगाकर सुनने लगे। उनकी समझ में केवल तीन टूटे हुए शब्द आए......'

'...द्...ह...ति...नै...यं...पावकः' । मुख मण्डल प्रदीप्त हो गया ।

सूर्यास्त हुआ । प्रकाश का अरुण पुन्ज दिशा की भाल पर था । उसकी अगणित रेखाएं गगन में फैली हुई थीं ।

देशमुख ने बिलख कर कहा, 'झांसी का सूर्य अस्त हो गया ।'

रघुनाथसिंह बिलख बिलख कर रोने लगा ।

दामोदरराव ने चीत्कार किया ।

बाबा गङ्गादास ने कहा, 'प्रकाश अनन्त है । वह कण कण को भासमान कर रहा हैं । फिर उदय होगा । फिर प्रत्येक कण मुखरित हो उठेगा ।'

[९२]

बाबा गङ्गादास ने सचेत किया, 'झांसी की रानी के सिधार जाने को अस्त होना कहते हो! यह तुम्हारा मोह है। वह अस्त नहीं हुई। वह अमर हो गई। कायरता का त्याग करो। उस घास की गन्जी' पर इन दोनों देवियों के शवों का दाह संस्कार करो। अंग्रेज़ इन लोगों की खोज में आते होंगे। शीघ्रता करो।'

वे दोनों सँभले।

देशमुख ने कहा, 'घास की गन्जी बड़ी है?'

बाबा गङ्गादास ने उत्तर दिया, 'गन्जी तो छोटी सी है।'

देशमुख कष्ट पूर्ण स्वर में बोला, 'झांसी की रानी के दाह के लिए आज लकड़ी भी सुलभ नहीं! घास की अग्नि तो इन दो शवों को केवल झोंस देगी। सवेरे शत्रु इनके अर्धदग्ध शरीर देखेंगे हँसेंगे और शायद कहीं फेक देंगे।'

बाबा ने सिर उठाकर अपनी कुटिया को देखा।

बोले, 'इस कुटिया में काफ़ी लकड़ी है। उधेड़ डालो। अन्त्येष्टिका आरम्भ करो।'

रघुनाथसिंह ने प्रार्थना की, 'आपकी कुटी की लकड़ी! आप एक कृपा करें तो।'

बाबा ने पूछा, 'क्या?'

रघुनाथसिंह ने उत्तर दिया, 'फिर से कुटी बनाने में आपको असुविधा होगी, 'इसलिए कुछ भेंट ग्रहण करली जावे।'

बाबा मुस्कराए।

बोले, 'यह लकड़ी मेरी नहीं है। जिन्होंने पहले दे दी थी वे फिर दे देंगे। देर मत करो। कुटिया को उधेड़ो।'

देशमुख ने कहा, 'उसमें का सामान बाहर निकाल लिया जाय।'

बाबा भीतर से एक कम्बल, तूंबी, चटाई और लंगोटी उठालाए।

बोले, 'बस और कुछ नहीं है। जल्दी करो।'

दोनों शवों को बाहर रखकर, दामोदरराव को एक ओर बिठलाया और वे तीनों सिपाही कुटी को उधेड़ने में लग गए। बात की बात में कुटी को तोड़कर लकड़ी इकट्ठी कर ली।

गन्जी की कुछ घास घोड़े को डाल दी और कुछ से चिता का काम लिया।

रानी का कंठा उतार कर दामोदरराव के पास रख दिया। मोतियों की एक छोटी कण्ठी उनके गले में रहने दी। उनका कवच और तवे भी।

चिता चुनने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई और मुन्दर बाई के शवों को चिता पर देशमुख ने रख दिया और अग्नि संस्कार कर दिया। अपनी और रघुनाथसिंह की वर्दियां भी चिता पर रख दीं।

आधी घड़ी में चिता प्रज्वलित हो गई।

उस कुटी की भूमि पर रक्त बह गया था। उसको देशमुख ने धो डाला।

परन्तु उन रक्त की बूंदों ने पृथ्वी पर जो इतिहास लिख दिया था वह अमिट रहा।

[९३]

कुछ दूरी पर रिसाले की टापों का शब्द सुनाई पड़ा। वह रिसाला अंग्रेज़ों का था।

देशमुख—'रानी साहब की तलाश में बैरी घूम रहे हैं।'

रघुनाथसिंह—'आप दामोदरराव को लेकर तुरन्त निकल जाइए।'

देशमुख—'आप दीवान साहब क्या झांसी की ओर जायेंगे ?'

रघुनाथसिंह—'झांसी में मेरा अब क्या रक्खा है। मैं इन सवारों को मार कर मरूँगा। ये लोग चिता की ओर आयंगे। इसे उसेलेंगे। जाइए तुरन्त जाइए। रात को कहीं छिप जाना। विश्राम करना।'

देशमुख—'कंठे का क्या होगा ?'

रघुनाथसिंह—'मृत सिपाहियों के बाल बच्चों में बांट देना या कुछ भी करना।' देशमुख ने दामोदरराव को पीठ पर बांधा और घोड़े पर सवार होकर चल दिया।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुंवर साहब, आप भी जाइए। मेरे घोड़े को छोड़ दीजिए उस बिचारे को कोई न कोई रख लेगा। आवरे में से मेरी बन्दूक़ और गोली बारूद का झोला लाने की कृपा करिए।'

गुलमुहम्मद घोड़ों के पास गया। दोनों के आवरों में से गोली बारूद और बन्दूकें निकाल लीं। और, दोनों घोड़ों को ज़ीन सहित छोड़ दिया।

गुलमुहम्मद ने रघुनाथसिंह को बन्दूक़ और गोली बारूद देते हुए कहा, 'दीवान साहब, अम कहां जायगा ? अम राहतगढ़ से जब चला तब पांचसौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहां जायगा ? अम भी मारेगा और मरेगा। बाई, अमको मत हटाओ।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'मैं चाहता हूँ आप ज़िन्दा रहें, और इनकी पवित्र हड्डियों और भस्म को किसी ग़ैर को न छूने दें। रहा मैं सो जाने की बहुत जल्दी पड़ रही है। वे अभी रास्ते में होंगीं उनसे जल्दी मिलना है।' और बन्दूकें भरने लगा।

रघुनाथसिंह पागलों का सा हँसा।

गुलमुहम्मद ने एक क्षण सोचा। बोला, 'यह फ़क़ीर साहब हड्डियों की हिफ़ाज़त करेगा।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'फ़कीर नहीं करेगा। आप चाहें तो कर सकते हैं।'

'अच्छा,' गुलमुहम्मद बोला, 'अम ज़िन्दा रहेगा। खाक और हड्डियों पर चबूतरा बना देगा।'

'अपनी बन्दूक़ भी मुझको देदो कुंवर साहब,' रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया।'

गुलमुहम्मद ने प्रस्ताव किया, 'अब कुंवर साहब नहीं। अम फ़क़ीर बनकर रहेगा। गुलसांई नाम होगा।'

उसने अपनी बन्दूक़ देदी।

'इसको भर दीजिए,' रघुनाथसिंह ने अनुरोध किया।

'बस बाई। अब बन्दूक या कोई हथियार नहीं छुएगा। अम खुदापाक की याद में बाक़ी जिन्दगी खतम करेगा।'

एक तरफ़ जाकर गुलमुहम्मद ने अपनी वर्दी जलती हुई चिता पर फेककर खाक करदी—केवल साफ़ा रक्खा। उसके एक टुकड़े की लँगोटी लगाई। बाक़ी ओढ़ने बिछाने को रख लिया।

खूब हँसकर बोला, 'अब अम बिलकुल आज़ाद हो गया बाई।'

रघुनाथसिंह ने दोनों बन्दूकें भरली। गोली बारूद के झोले लटकाए।

गुलमुहम्मद के पास गया। उसको देखकर विस्मित हुआ।

बोला, 'आप तो सचमुच फ़क़ीर होगए! अच्छा सलाम कुंवर—साईं साहब। भूल चूक ग़लती माफ़ कीजिए।'

जिस ओर से टापों का शब्द आ रहा था रघुनाथसिंह उसी दिशा में गया। पास जाकर एक आड़ ली। लेट गया। प्रतीत करली कि अंग्रेज़ों का रिसाला है और कुटी की ओर आ रहा है।

'धांय' 'धांय' बन्दूक चलाई।

'धांय' 'धांय' अंग्रेज़ी रिसाले का जवाब आया।

काफ़ी समय तक रिसाले के सैनिकों को हताहत करता रहा। फिर एक गोली से मारा गया।

चिता 'सांय'–'सांय' जलती रही।

गुलमुहम्मद चिता से कुछ दूर जाकर लेट गया। साफे के टुकड़े से अपने को ढका। बेहद थका हुआ था, सो गया। सवेरे जब आंख खुली देखा कि चिता के स्थान पर कुछ जली हड्डियां बाक़ी रह गई हैं।

उसके मुंह से निकल पड़ा, 'ओफ़ रानी साहब का सिर्फ़ यह हड्डी रह गया है। और उस हसीन लड़की का!'

फिर तुरन्त उसने अपने मन में कहा, 'ओः कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कबी नईं मरेगा। वो मुर्दों का जान बख्शता रहेगा।

चिता के ठंडे हो जाने पर गुलमुहम्मद ने उस स्थान पर एक चबूतरा बांधा और कहीं से फूल लाकर उस पर चढ़ाए।

अंग्रेज़ी सेना का एक दल रानी की ढूंढ खोज में वहां पर आया।

चबूतरा, अभी सूखा न था। उस दल के अगुवा का कुतूहल जागा। गुलमुहम्मद से उसने पूछा, 'यह किसका मज़ार है साईं साहब?'

गुलमुहम्मद ने उत्तर दिया, 'अमारे पीर का, वो बौत बड़ा बली था।'

परिशिष्ट

(१)

कई दिन तक अंग्रेज़ों को रानी के शरीरान्त का पता न लगा ! जब लगा तब जनरल रोज़ ने कहा था, 'यह थी उनमें सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्कृष्ट वीर ।'*

अठारह जून के सूर्यास्त के पहले ही रावसाहब के मोर्चे छीन लिए गए थे । थोड़ी देर तक तात्या ने बिगड़े को बनाने का अथक परिश्रम किया, परन्तु अन्त में दोनों को रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा । रावसाहब छिपते भटकते चार वर्ष बाद साधु वेश में पकड़ा गया और उसको बिठूर में फांसी दी गई । उसके सम्पूर्ण जीवन में उसका परिणाम ही महान् था, और अंग्रेज़ों की प्रतिहिंसा की बिराटता थी उसको बिठूर में ले जाकर फांसी पर चढ़ाना । तात्या ने निस्सन्देह कभी हार नहीं मानी । वह लक्ष्मीबाई के ऊँचे राजनैतिक आदर्श तथा रणपांडित्य का सच्चा अनुयोगी और उत्तराधिकारी था । जब अंग्रेजों ने १८५८ के अन्त तक सारे हिन्दुस्थान को अपने फ़ौजी शिकन्जे में जकड़ लिया, तब भी तात्या आंधी और बिजली की तरह तड़पता और तड़कता रहा और अंग्रेज़ों को भूल भुलैयां खिलाता रहा । तात्या को आशा थी कि इतना सब खोजाने पर भी मैं देश को जगा दूँगा और खड़ा कर लूँगा, परन्तु जैसे कि इस अभागे देश में होता चला आया था, राजपूताने के एक उसके मित्र राजा ने विश्वासघात करके पकड़वा दिया । तात्या को शिवपुरी में अप्रैल सन् १८५९ में फांसी दी गई ।

तात्या का मरण उसके जीवन से भी बढ़कर ज्वलन्त था । फांसी पर चढ़ने के समय वह योगियों की तरह शान्त था । उसने कहा था,

*She was best & the bravest of them all

'मैंने जो कुछ किया अपने स्वामी पेशवा की आज्ञा से किया और कुछ बुरा नहीं किया ।' नाना साहब का कोई पता नहीं चला । पहली नवम्बर सन् १८५८ को विक्टोरिया का विख्यात घोषणा पत्र जारी किया गया । बांदा के नबाव ने आत्मसमर्पण किया और उनको कुछ पेन्शन मिल गई । कम्पनी का, थोड़े से अंग्रेज़ पूँजीपतियों और व्योपारियों का, राज्य समाप्त हुआ, और, यह पुराना देश नए इंगलैंड के समग्र पूँजीततियों और व्योपारियों के केन्द्रस्थ शासन के समक्ष होगा ।

झांसी के हृदय में झांसी की रानी का राज्य सदा बना रहा—लावनियों में, फागों में, दादरों और सेहरों में किसान और मज़दूर उनके सम्बन्ध में अपने निजत्व को प्रकट करते रहे हैं । उनकी एक स्मृति झांसी नगर में आज भी जनता को पकड़े हुए है—होली जलाने के बाद की प्रथमा के दिन झांसी वाला होली नहीं मनाता, वह दिन उसके लिए सूतक का है !

यदि हैदराबाद के निज़ाम और ग्वालियर के सिन्धिया अंग्रेजों का पक्ष न लेते, तो अंग्रेज़ १८५८ के बाद इस देश में बिलकुल नहीं ठहर सकते थे ।

उनके उस समय चले जाने के पश्चात् यहां क्या होता यह देश के विवेक और अविवेक के लिए एक बहुत बड़ी समस्या होती ।

उसी समय से अंग्रेज़ों ने समझ लिया कि हिन्दुस्थानी सेना में चुने हुए लोग भर्ती किए जाने चाहिए, मारके के ऊँचे पदों से उनको दूर रखना, सारे देश को निश्शस्त्र कर देना, और मृग—मरीचिकाएँ दिखलाते रहना चाहिए ।

परन्तु राजाओं और नवाबों को हाथ में रखना सदा आवश्यक समझा गया ।

गोद का क़ानून स्वीकार किया गया । धार्मिक स्वतन्त्रता मानली गई । मानो हिन्दुस्थान को बड़ी ग़नीमत मिली ।

झांसी की रानी, तात्या, बहादुरशाह इत्यादि के पीछे जो लोग हुए,

भारतीय आत्मा की अमरता के साथ उनका अटूट क्रम रहा है। केवल थोड़ों के ही नाम बतलाए जा सकते हैं······

'परमहंस रामकृष्ण, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, महात्मा···और, और······

(२)

झांसी में जनेऊ का आन्दोलन घोर रूप पकड़ता, परन्तु बिठूर के मिहमानों का लिहाज़ करके राजा गङ्गाधरराव थोड़े नरम पड़ गए थे। तमेरां ने जनेऊ पहिने थे और वे अपने जनेऊ की आन पर मर मिटने को तैयार थे। उपन्यास में जाति का नाम नहीं दिया गया।

(३)

पजनेश ने जिस स्त्री को प्रेम के वशीभूत होकर रख लिया था, उसकी जाति उन्होंने अपनी कविता में लिख दी थी। उनका छन्द कवि की स्वछन्दता और उस समय की अवस्था का द्योतक है। पूरा छन्द इस प्रकार है:—

सिवि चूके सची सें अप्सरा सें इन्द्र चूके
कृष्ण चूके कुबजा सें सुरत न संभारी है।
बड़े बड़े देव और दानव से चूक जात
तुमहू न चूको तो सकल का तुम्हारी है?
भन पजनेस एक खत्रानी सें हमहुँ चूके
चूक जात जग में बिना सक नर नारी है।
कोमल तन ललित नैन बसत निस बासर मन
प्यारी हमारी की लाज गंग धारी है।

(४)

हृदयेश ने अपनी कविता जितनी लिख पाई थी वह पूरी की पूरी नीचे दी जाती है। मेरे पास हृदयेश की कविता उन्हीं के हाथ की लिखी है, जो मुझको भाई श्री भगवानदास की कृपा से प्राप्त हुई:—

बड़े बड़े असराफ़ गरद कर ऐसौ कलजुग झाला
बिभचारिन बिस्वन के उर में वर मुक्तन की माला
मन हृदेश पंडित गुनमंडित ते धारे मृगछाला
गानतान वारे धन वारे ओढें फिरें दुसाला ।१।
महाबीर बीरन के बेटा बैठे गहै किनाला
खसिया भंडुआ रांड मिलावे बांधें फिरें तिपाला
कीमखाब के पैरन वारे भोगें अन्न कसाला
घोड़िन की खिज़िमत कर तिनके परे कान में बाला ।२।
पतिब्रता लरकन कों तरसें बिभचारिन घर लाला
झूँठे के मुख लाली देखी सांचे के मुख काला
सत्य बचन परमान चलन को परे दुष्ट के जाला
चुगलखोर धन चोर मसखरा परे सेज सुखसाला ।३।
देव मंदिरिन दिया न गाती गोरन पै उजियाला
भूमदेव विप्रन के देखो कोंड़ी देत कसाला
रंडिन कों भोजन को सिन्नी ऊपर पान मसाला
साधुन कों नहिं चून चनन को सेवें देव दिवाला ।४।
चतुर नरन कों बदसूरत की कूरन के घर बाला
मूरख बैठे मौज उड़ावे परबीनन पग छाला
भूपत कृपा करत नाचन पै कर अनीत प्रतिपाला
जबर जोर कलिकाल काल कौ गुन को चले न चाला ।५।
मुसलमान सीतापति सुमरें हिन्दू मुख हकताला
मुसलमान मौसी कर टेरें हिन्दू टेरें खाला
सांची कहैं सुनै को बिनती भयो नीच बल वाला
अधरम प्रगट भयो भूतल पै धसगो धरम पताला ।६।
जगतगुरू विप्रन कों निन्दित बनिक पुत्र घर वाला
मुछमुंडन की इच्छा लैं लें फेरें तुलसी माला ।७।

मालपुवा हलुआ भोजन दै गुपत खिलावत लाला
अधरम नाम जपत सीतापत डार गोमुखी माला
दीसें भक्त बड़े ठाकुर के तिलक सरसरे भाला
जाचत देख विप्र साधुन को होत क्रोध को जाला ।८।
कासीपुरी अजुध्या मथुरा इनको जात कसाला
दोम दोम कर जात मदारन दाब कांख में लाला
पूजत प्रेत गुरैया बाबा छोड़े देव विसाला
निजपति मुच्छ तुच्छ कर जारत उपपति हित प्रतिपाला ।९।
बिछिया हगन कोर भर काजर अंग आभरन जाला
मुलकट कंचुक कसत कुचन पै उर धारें बनमाला
अधरम...............

यहां तक कवि ने लिख पाया ।

(५)

नारायण शास्त्री की प्रेमिका छोटी का असली नाम लोग मछरिया बतलाते हैं । उपन्यास में जितने नाम आए हैं सब वास्तविक हैं । मैंने केवल मछरिया का नाम बदलकर छोटी कर दिया है । झांसी में नारायण शास्त्री के तंत्रबल को जो रूप जनपरम्परा में मिला है वह बड़ा संकेतपूर्ण है । कहते हैं कि एक रात नारायण शास्त्री काली का पूजन करके मांस और मदिरा का सेवन करना ही चाहते थे कि राजा गङ्गाधरराव टोह लगाकर आ पहुचे । राजा ने पूछा, 'बोतल में क्या है ?'

शास्त्री ने उत्तर दिया, 'दूध ।'

'और कटोरे में क्या है शास्त्री जी ?'

'गुलाब के फूल ।'

राजा ने बोतल और कटोरे का निरीक्षण किया तो बोतल में दूध और कटोरे में गुलाब के फूल पाए । जब नव्वे वर्ष के भीतर ही जन-परम्परा ने एक वास्तविकता को यह रूप दे दिया तो अपने बड़ों के

स्वाभाविक किन्तु लोकाचार विरुद्ध कृत्यों को, उसने गाथाओं में जो रूप दे दिए हैं उनको, समझने में बहुत बाधा नहीं रहनी चाहिए।

(६)

गङ्गाधरराव अत्यन्त क्रोधी थे। उनके अत्याचारों की बहुत सी कहानियां प्रसिद्ध हैं। उनके प्रति जनता की घृणा रानी लक्ष्मीबाई के नाम के कारण नरम पड़ गई थी और अब भी नरम है।

(७)

झांसी में हरदी कूंकूं उत्सव महाराष्ट्रों में बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता था। झांसी की साधारण जनता भी उसको मनाया करती थी। अब भी यह सुन्दर उत्सव मनाया जाता है, परन्तु उसमें अब वह ओज नहीं रहा। जीवन के संघर्षों और वर्तमान उदासीनता में वह घिस गया है। रानी लक्ष्मीबाई इस उत्सव को कितनी उमङ्ग के साथ मनाती थीं उसका ब्योरेवार वर्णन विष्णुराव गोडशे के 'माझा प्रवास' में है।

(८)

पेशवा के साथ अंग्रेज़ों ने सन् १८०२ में जो सन्धि की थी उसको पारसनीस ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है।

(९)

भग्गी दाउजू जाति के सुनार थे। वे झांसी के गंदीगर मुहल्ले में रहते थे। नत्थेखां की लड़ाई पर उन्होंने तीन चार पृष्ठों में एक रायसा लिखा था। वह श्री नारायणदास शृङ्गीऋषि के पास है। उन्हीं की कृपा से रायसा मुझको प्राप्त हुआ। मन्जु छन्द में है। प्रत्येक छन्द का चौथा चरण है—

'झांसी की जो लटी तकै तिहि खाएँ कालका माई।'

भग्गी ने 'रानी की जो लटी तकै' नहीं लिखा है; उन्होंने 'झांसी' शब्द प्रयुक्त किया है और उसकी सार्थकता बहुत द्योतक है। झांसी १८५७ के विप्लव के जमाने में जोश से उमड़ पड़ी थी। किसी जाति के लिए भी नहीं कहा जा सकता कि उसमें लड़ाई के लिए कम जोश था।

यह ऐतिहासिक सत्य है कि उनाव दरवाज़े पर कोरियों की तोप थी और तोपखाने का संचालक पूरन कोरी था। उसके पौत्र ने मुझको सारी घटनाएँ बतलाईं और झलकारी के विकट और निर्भीक पराक्रम का हाल सुनाया। जनरल रोज़ ने अपनी डायरी में झलकारी की घटना का वर्णन नहीं किया है, परन्तु कोरियो में घटना विख्यात है—४ एप्रिल १८५८ की रात को रानी के निकल जाने पर, पांच के बड़े सवेरे झलकारी घोड़े पर बैठकर रोज़ के सामने पहुंची और उससे कहा, 'रानी को कहां ढूँढ़ते फिरते हो? 'मैं हूं रानी, पकड़लो मुझको।' झलकारी बहुत उमर पाकर मरी। मुझको उसके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो पाया। उसके मरने का पता तब लगा, जब रानी की बातों का पता लगाते लगाते मैं कोरियों के सम्पर्क में आया। झांसी में ऊँची जाति के कहलाने वाले लोग कोरियों के हाथ का पानी पीते हैं, घर तो उनके इतने स्वच्छ हैं कि जान पड़ता है कि अभी अभी किसी यज्ञ को समाप्त करके निबटे हों। कोई आश्चर्य नहीं यदि रानी ने हरदी कूँ कूँ के उत्सव में झलकारी को अपने अङ्क में भर लिया हो।

(१०)

अंग्रेज़ इतिहासकारों ने रानी के वाक्य को, जिसका उच्चार उन्होंने अंग्रेज़ों द्वारा झांसी के अपहरण के समय किया था रूप दे दिया है—

'मेरा झांसी देंगा नहीं।'

इसकी नक़ल बहुत से भारतीय लेखकों ने की है।। रानी हिन्दी और मराठी दोनों जानती थीं। इतनी कुशाग्र बुद्धि थीं कि झांसी आकर उन्होंने बुन्देलखण्डी भी सीख ली थी। उनके वाक्य का तोड़ मरोड़ एलिस ने अपने लेख में किया और भारतीय लेखकों ने बिना जाने बूझे उसकी नक़ल करदी। १८५७ के लगभग के अंग्रेज़ खासी हिन्दी भाषा को बोल लेते थे, परन्तु हिन्दी भाषा को कुरूप करना उनकी राष्ट्रीय और स्वभावनिहित उपेक्षा का एक उदाहरण है। वे आज भी फ्रेंच, जर्मन

और रूसी शब्दों का तोड़ मरोड़ करते हैं। यहां तक कि एमेरिका में बोली और लिखी जाने वाली अंग्रेज़ी तक पर नाक भौंह सिकोड़ लेते हैं। रानी के मुँह से निकले हुए हिन्दी के प्रतिवाद वाक्य को सुरक्षित रखने में एलिस या किसी भी अंग्रेज़ को रुचि हो ही क्यों सकती थी ?

(११)

रानी ने सूरमाओं की एक कुँवरमंडली स्थापित की थी। वे स्त्री-पुरुषों की सूक्ष्म जांच करने की बड़ी क्षमता रखती थीं। झांसी की रक्षा के लिए उनको ऐसे लोगों की ज़रूरत थी जो अपने को होम देने के लिए सदा तैयार रहते हों। जिसको उन्होंने सुपात्र समझा उसको 'कुँवर' का सम्बोधन मिल जाता था। रानी ने जितनों को यह उपाधि दी, उनमें से किसी ने भी अपने बलिदान में कसर नहीं लगाई।

(१२)

रानी ने जो स्त्री सेना बनाई थी वह भारत का एक अचम्भा है। जनरल रोज़, जनरल स्टुअर्ट, डाक्टर लो इत्यादि ने जो रानी के मुक़ाबिले में लड़ने वाली अंग्रेज़ी सेना में झांसी आए थे दूरबीनों द्वारा इस सेना का नियम संयम, शौर्य पराक्रम, और दुश्मन का होश ठिकाने लगाने वाली दृढ़ता को देखा था। इस सेना में महाराष्ट्र स्त्रियां बहुत कम थीं। बुन्देलखण्डी स्त्रियां बहुत ज्यादा और विवध जातियों की। यदि लक्ष्मीबाई स्वराज्य स्थापना के प्रयत्न में सफल हो जातीं तो भारत की नारी उस गिरी हालत में कदापि न होती जिसमें उसका एक बड़ा अंश आज है। माझा प्रवास का लेखक विष्णुराव गोडशे जब झांसी आया तब झांसी की स्त्रियों की स्वाधीनता को देखकर विस्मित हो गया—उसको तो ग़ुस्सा भी आया। स्त्रियां शान और हेकड़ी के साथ सन्ध्या समय मन्दिरों में जाती थीं, यह बात विष्णुराव को बहुत खटकी, क्यों कि उसने अन्यत्र न देखी थी। पर क्या अन्यत्र स्त्रियों की कोई बैटालियन थी ? कोई रेजीमेंट था ? उनमें से कोई कर्नल या कप्तान थीं ? सबेरे परेड में मर्दों को सबक़

सिखलाने वालीं, और घुड़सवारी में मर्दों का कान पकड़ने वालीं स्त्रियां, क्या शाम को मन्दिर जाने के समय झेंपतीं शरमाती और घूंघट डालकर नायिका भेद को प्रोत्साहन देतीं ? परन्तु 'माझा प्रवास' का लेखक असली बात समझा न था।

मेरी दादी परदादी कहा करती थीं कि रानी जिस मिट्टी के ढेले को छू देती थीं वह सोना हो जाता था, जिस काठ के टुकड़े को स्पर्श कर देती थीं वह फ़ौलाद बन जाता था ! मुझको आश्चर्य होता था। पर बात लगती बहुत अच्छी थी। सोचता था यदि मैं उस ज़माने में होता तो डलियों ढेले उनके पास ले जाता और उनसे स्पर्श करवाकर सोना बनवा लेता, फिर दादी परदादी से पैसे मांगने की ज़रूरत ही न रहती। और वे काठ के टुकड़ों को फ़ौलाद बना देती थीं ! यह उतना अच्छा नहीं लगता था। और आज ? आह ! उस रानी का स्पर्श तो प्राप्त नहीं है, मिट्टी के ढेलों को स्वर्ण बना दिया और काठ के टुकड़ों को वज्र और जब तक भारत भारत है वह नाम यह काम करता ही रहेगा।

यही कारण है कि अंग्रेज़ पल्टन के बलवाइयों के सामने लक्ष्मीबाई महल के झरोखे पर चिनौती देती हुई अकेली खड़ी होगई ! यही कारण है कि सदाशिवराव नेवालकर के झांसी नरेश बन जाने की घोषणा पर कोई भी सीखी सिखाई सेना हाथ में न होते हुए भी लक्ष्मीबाई कुछ मिट्टी के ढेलों और काठ के टुकड़ों को लेकर करेरा में भिड़ गई और सदाशिवराव को परास्त कर दिया ! यही कारण है कि लक्ष्मीबाई नत्थेखां के बीस-हज़ार सिपाहियों का मुक़ाबिला झांसी के अधकचरे स्त्री पुरुष सिपाहियों को लेकर कर गई ! और उसको मार भगाया !

सागरसिंह डाकू से जनरल बना और खंडेराव फाटक की रक्षा में मरकर अनन्त गौरव पागया !

(१३)

जान रसल ने जो आवेदन पत्र दिल्ली १७१२ में भेजा था उसका अनुवाद पारसनीस की पुस्तक में है। उसका सारांश मैंने इस उपन्यास में दिया है।

(१४)

सर जान मालकम सन् १८२५ के लगभग मध्यदेश का प्रधान सेनापति और गवर्नर था। उसने एक पुस्तक Memoirs of Central India लिखा है। अब यह पुस्तक अप्राप्य है। मुझको कलकत्ते की Imperial Library से उधार मिल गई थी। मालकम ने लिखा है कि वह ज़माना चाहे दूर हो, पर आवेगा अवश्य, जब हमको हिन्दुस्थानियों का देश उन्हें वापिस करना पड़ेगा।

(१५)

ग्वालियर से नाटक मण्डली लगभग जनवरी सन् १८५८ में आई थी। रानी यदि फ़ौज की विकट तैयारी और पराक्रम दे सकतीं थीं तो कलाओं को प्राण देने की भी साध रखती थीं।

ग्वालियर से आई हुई नाटक मण्डली को हरिश्चन्द्र नाटक का अभिनय करने के उपलक्ष में उन्होंने चार हज़ार रुपया पुरस्कार में दिया था। गवैए, बीनकार, पखावजी इत्यादि सब उनका आश्रय पाए हुए थे। सुखलाल चित्रकार जाति का काछी था! उसकी चित्रकला को वे पुरस्कृत करती रहती थीं। मुखपृष्ठ पर दिया गया रानी का, और गङ्गाधरराव का चित्र उनका ही बनाया है।

(१६)

विष्णुराव गोडसे पूना की दिशा से, ग्वालियर होता हुआ आया था। वह भट्टभिक्षुक था। रानी ने जब झांसी में यज्ञ किया तब वह मौजूद था और युद्ध के दिनों में क़िले में ही था। उसने उन दिनों का आंखों देखा हाल अपने 'माझा प्रवास' में लिखा है। उपन्यास की

कुछ घटनाऐं 'माझा प्रवास' के आधार पर हैं। उनके सत्य का निर्धार किम्वदन्तियों और जनरल रोज़ के खरीतों से होता है। पारसनीस ने अपनी पुस्तक में बहुत सामग्री विष्णुराव की पुस्तक से ली है। परन्तु पारसनीस ने विष्णुराव की पुस्तक का कोई हवाला नहीं दिया है। कम से कम हिन्दी के अनुवाद में मुझको नहीं मिला।

यज्ञ के समय यज्ञ विधान की एक समस्या खड़ी हो गई। समस्या का ज़िक्र उपन्यास में है। उसको विष्णुराव ने अपने शास्त्र ज्ञान से सुलझाया था। उसने ज़रा दंभ से—और शायद वह दंभ ग़लत भी न था—अपने पांडित्य का वर्णन 'माझा प्रवास' में किया है।

(१७)

रानी लक्ष्मीबाई का महल १८५८ में पुस्तकालय के साथ जलाया गया था। पुस्तकालय तो बिलकुल खाक हो गया था, परन्तु महल बच गया था। इसमें सन् १८९६ के लगभग फिर आग लगी। मैं उस समय पांच छः वर्ष का था। मेरे सामने जल रहा था और न जाने मै क्यों वहां खड़ा खड़ा रो रहा था। शायद मेरे आसुओं की जिम्मेदारी परदादी की बतलाई हुई कहानियों पर थी; ऐसी रानी की कहानियां जिसके छूने से मिट्टी के ढेले सोना हो जाते थे और काठ के टुकड़े फ़ौलाद!

बख्शी की हवेली का पता मुझको १९१६ में लगा था, परन्तु उसका इतिहास १९३२ के उपरान्त मालूम हुआ। बख्शी का नाम उसकी जाति में अब तक इतना प्रिय है कि बच्चों के नाम भाऊ रख दिये जाते हैं! बख्शी की हवेली अच्छी हालत में है और श्री जिनदास कोचर के अधिकार में है।

(१८)

अभी हाल में श्री सी० ए० किंकेड, पैन्शन प्राप्त आई० सी० एस० ने एक पुस्तक अंग्रेज़ी में लिखी है Lakshmi Bai, Rani of Jhansi. पुस्तक में कुल १०२ सफ़े हैं, परन्तु लक्ष्मीबाई को कुल १४ सफ़े दिए हैं, और, नाम है 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई!' इन १४ पृष्ठों में भी

(२१)

जूही की कोई क़ब्र नहीं बनी और न काशीबाई का कोई चैत्य। झांसी वालों के हृदय में जो आसीन हों उनको क़ब्र या चैत्य की क्या ज़रूरत ? सौन्दर्य और शौर्य का सम्मेलन संसार में बहुत नहीं दिखलाई पड़ता, परन्तु उनमें बहुत था।

(२२)

रानी घोड़े की अद्भुत पहिचान रखती थीं। एक बार एक सौदागर दो घोड़े लाया। दोनों का दाम एक एक हज़ार बतलाया। रानी ने जल्दी जांच कर ली। जांच पड़ताल करने के बाद एक का दाम उन्होंने एक हज़ार रुपए कूता और दूसरे का पचास रुपया ! दोनों घोड़े एकसे थे। देखने वाले दङ्ग रह गए। सौदागर तो अपने घोड़ों को जानता ही था, परन्तु उसने कुतूहल शान्ति के लिए रानी से प्रश्न किया।

'इस घोड़े का दाम एक हजार और दूसरे का पचास क्यों, श्रीमन्त ?'

उत्तर मिला, 'जिसके दाम पचास रुपए बतलाए हैं उसकी छाती के भीतर एक पुरानी चोट है।'

सौदागर ने स्वीकार किया।

वर्मा जी की कृतियों पर
कुछ सम्मतियां

डा० अमरनाथ झा—वाइस चान्सलर काशी विश्वविद्यालय—वर्मा जी की कृति प्रशंसा की अपेक्षा नहीं रखती। आजके सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार वे हैं।

डा० धीरेन्द्र वर्मा—यह निश्चित है कि हिन्दी के यह सर्वश्रेष्ठ मौलिक लेखक हैं।

डा० श्री बाबूराम सक्सेना—हिन्दी साहितकारों में वर्मा जी का स्थान बहुत ऊँचा है। उपन्यासकार तो उनकी तुलना का कोई है ही नहीं।

श्री वियोगी हरि—साहित्कार वृन्दावनलाल वर्मा को पाकर हमारे भारत राष्ट्र का मस्तक ऊँचा हुआ है।

माननीय श्री पंतजी–प्रधान मंत्री, यू० पी०–वृन्दावनलाल जी वर्मा का ऐतिहासिक उपन्यासकारों में विशिष्ट स्थान है।

N. C. MEHTA, I. C. S., Chief Commissioner, Himachal Pradesh, Simla writes :— "I have read some of the books by Shri Brindaban Lal Varma with great pleasure. I have always found complete mastery of the language and unusual power of vivid description. His knowledge of Bundelkhand, its people and its folklore is unique and he deserves the warmest congratulations for putting before the public this exceptional knowledge so efficiently and vividly......"

प्रेस में—

कलाकार का दण्ड

(कहानी संग्रह)

मूल्य लगभग २॥) रु०